ब्रिटिश संविधान

महादेव प्रसाद शर्मा, एम० ए०, डी० लिट०,

प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, राजनीति विभाग, सागर विश्वविद्यालय,
सागर

कि ता ब म ह ल इ ला हा बा द : दि ल्ली

प्रथम संस्करण, १९५३
द्वितीय संस्करण, १९५५
तृतीय संस्करण, १९५८

प्रकाशक—किताब महल ५६ ए, जीरो रोड, इलाहाबाद।
मुद्रक—जीवन कल्याण प्रेस, त्रिवेणी रोड, इलाहाबाद।

प्रस्तावना

ब्रिटिश संविधान पर यह पुस्तक विश्वविद्यालयों के बी० ए० के छात्रों के उपयोग के लिये प्रस्तुत की गई है। उच्च शिक्षा के हिन्दी माध्यम द्वारा दिये जाने के लिये उक्त भाषा में विभिन्न विषयों के पाठ्य ग्रन्थों का होना परमावश्यक है। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये लेखक का यह प्रयास है। वैसे इस विषय पर हिन्दी में कुछ पुस्तकें वर्तमान हैं, परन्तु विश्वविद्यालय के छात्रों को किसी भी पाठ्यक्रम के विषय में अनेक पुस्तकें उपलब्ध हो सकें, तो उसे अपने ज्ञान को विस्तृत और सर्वतोमुखी बनाने की सुविधा रहती है। इस पुस्तक में यह चेष्टा की गई है कि ब्रिटिश संविधान सम्बन्धी सभी आवश्यक बातें इसमें आ जायँ और आज तक के हुए सभी संशोधन-परिवर्तन दे दिये जायँ। आशा है कि छात्र इसे उपयोगी पायेंगे।

यों तो हिन्दी में लिखने में पारिभाषिक शब्दों की कठिनाई का सर्वत्र ही सामना करना पड़ता है, पर ब्रिटिश संविधान के सम्बन्ध में यह समस्या अपेक्षाकृत अधिक गम्भीर है। प्रथम तो ब्रिटिश संविधान के कुछ ऐसे शब्द हैं जो अर्थ-विशेष में रूढ़ हो गए हैं और उनका उपयुक्त शाब्दिक या अर्थात्मक अनुवाद असम्भव-सा जान पड़ता है। क्राउन, कामन लॉ, इक्विटी, सिविल-लिस्ट आदि ऐसे शब्दों के कुछ उदाहरण हैं। ऐसे शब्दों के अनुवाद की चेष्टा न करके उपयुक्त स्थल पर उन्हें एक बार सविस्तार समझा दिया गया है और आगे फिर उन्हीं अँग्रेजी शब्दों का ही प्रयोग किया गया है। दूसरी समस्या है व्यक्तिवाचक संज्ञाओं की, जैसे हाउस आफ लार्डस, हाउस आफ़ कामन्स, प्रिवी काउन्सिल आदि। ये विशेष संस्थाओं के नाम हैं, परन्तु सार्थक शब्दों से बने हैं और इस कारण इनका अनुवाद संभव नहीं है। पर यदि इनका अनुवाद कर दिया जाय तो विद्यार्थी का ब्रिटिश संविधान के इन मौलिक नामों से संपर्क जाता रहता है जो कि अवाञ्छनीय है। विदेशी भाषाओं के अनुवादक भी बहुधा ऐसे नामों का अनुवाद न करके उन्हें ज्यों का त्यों रहने देते हैं। अँग्रेजी की पुस्तकों में जर्मनी की भूतपूर्व व्यवस्थापिका सभा रायस्टैग का नाम ज्यों का त्यों ही प्रयुक्त होता है। अतः ऐसे शब्दों का भी अनुवाद या तो नहीं किया गया है अथवा अँग्रेजी पद्धति का वाक्य विन्यास बचाने की इच्छा से अर्धानुवाद मात्र किया गया है जैसे हाउस आफ़ लार्ड्स का लार्ड सभा अथवा हाउस आफ कामन्स का कामन्स सभा। तीसरे स्थान में वे शब्द हैं जिनका अनुवाद हो सकता है और होना चाहिये, पर जिनके सर्वसम्मत और प्रचलित पर्यायवाची अपनी भाषा में नहीं मिलते। ऐसे

शब्दों के विषय में विद्वानों के निर्मित शब्द-सूचियों और कोषों से सहायता ली गई है, पर जहाँ इनके शब्द अनुपयुक्त प्रतीत हुए, वहाँ अपने शब्द गढ़ने का भी दुःसाहस किया गया है। इस प्रकार लेखक के पारिभाषिक शब्द सम्बन्धी दृष्टिकोण को यदि सिद्धान्त-शून्य अथवा अवसरवादी कहा जाय, तो उसके लिये सामग्री प्रस्तुत है, पर जिस विषय पर उसने लेखनी उठाई है—ब्रिटिश संविधान—वह भी वैसा ही है। तर्क और सिद्धान्त के आधार पर वह नहीं बना। व्यावहारिक सुविधा के अनुसार ही उसका विकास हुआ है। कदाचित् यह तथाकथित सिद्धान्तों की अपेक्षा उच्चतर श्रेणी की वस्तु है। अन्त में एक परिशिष्ट में पारिभाषिक शब्दों की सूची दे दी गई है। ये शब्द अब अकारादि क्रम से न रख कर विषयानुसार संग्रहीत हैं।

ब्रिटिश संविधान को अन्य संविधानों की जननी कहा गया है। अपने देश में भी ब्रिटिश पद्धति के संसदीय संविधान की ही संस्थापना हुई है। अतएव देश के भावी नागरिकों के लिए ब्रिटिश संविधान की बारीकियों को हृदयङ्गम कर लेना बहुत ही आवश्यक है। पुस्तक में इस बात का ध्यान रक्खा गया है कि अपने नवजात प्रजातंत्र के सामने जो वैधानिक समस्याएँ बहुधा उठा करती हैं, उन पर ब्रिटिश अनुभव के दृष्टिकोण से कुछ प्रकाश पड़ सके। इसलिये ऐसी समस्याओं—जैसे राजनैतिक दलों की आन्तरिक समस्याओं—पर कुछ अधिक विस्तार से लिखा गया है।

पुस्तक न तो मौलिक है और न किसी पुस्तक का अनुवाद ही। अनेक पुस्तकों से, जिन्हें लेखक को समय-समय पर पढ़ने का अवसर मिला है, इसकी सामग्री संकलित की गई है। इन ग्रन्थों की सूची एक परिशिष्ट में दे दी गई है। विद्यार्थियों के लिये कदाचित् इसी प्रकार की पुस्तक उपयोगी होती है।

जो पाठक पुस्तक की त्रुटियों की ओर लेखक का ध्यान आकर्षित करने की कृपा करेंगे उनके प्रति वह कृतज्ञ होगा।

नागपुर विश्वविद्यालय
२७—६—५२ } महादेव प्रसाद शर्मा

दो शब्द

इस नवीन संस्करण में पुरानी त्रुटियों को दूर कर दिया गया है। साथ ही साथ पुस्तक को उपयोगी बनाने के लिए अनेक आवश्यक संशोधन एवं संवर्द्धन भी कर दिये गये हैं। अब पुस्तक पूर्णतया समीचीन है और अपने में पूर्ण है, ऐसा मुझे विश्वास है।

लेखक

विषय-सूची

लेखक की अन्य कृतियाँ

1. भारतीय गणतन्त्र का संविधान ।
2. राजनीति के सिद्धान्त ।
3. आधुनिक राजनीति के विभिन्न वाद ।
4. Government of the Indian Republic.
5. Local Government in India.
6. Local Government and Finance in the U. P.
7. Evolution of Rural Local Government and Administ-tion with special reference to the U. P.
8. नागरिक शास्त्र के सिद्धान्त ।
9. Public Administration and its Indian Setting (InPres

अध्याय १

ब्रिटिश संविधान का विकास

अँग्रेज जाति के पूर्वज—आंग्ल-सैक्सन जाति द्वारा स्थापित राज्य—आंग्ल-सैक्सन जाति की राजनैतिक संस्थाएँ—राजतन्त्र—स्थानीय शासन व्यवस्था—नार्मन-एञ्जिवेन काल में शासन व्यवस्था का विकास—राजा और केन्द्रीय सरकार की शक्ति में वृद्धि—मैगनम कांसीलियम और क्यूरिया रेजिस—वृहत् अधिकार पत्र (मैगनाकार्टा)—शासन और न्याय-व्यवस्था का विकास—पार्लमेण्ट का उदय—मध्यकालीन प्रतिनिधित्व व निर्वाचन—पार्लमेण्ट का दो सभाओं में विभक्त होना—पार्लमेण्ट के अधिकारों का विकास—ट्यूडर काल में ब्रिटिश संविधान—स्टुअर्ट काल, गृहयुद्ध और गणतंत्र—बिल आफ राइट्स—ब्रिटिश संविधान का १६८६ के बाद का विकास—सम्राट् के अधिकारों का ह्रास—कैबिनेट का उदय—कामन्स सभा का प्रजातंत्रात्मक संगठन—लार्ड्स सभा के अधिकारों का ह्रास—कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण परिवर्तन।

<u>अँग्रेज जाति के पूर्वज</u>—आजकल जो देश ब्रिटेन या ग्रेट ब्रिटेन के नाम से प्रसिद्ध है उसमें इङ्गलैण्ड, वेल्स और स्काटलैण्ड के प्रदेश सम्मिलित हैं। किसी समय ये पृथक् राज्य थे, पर बाद में सब मिल-जुल कर एक हो गये। आयरलैण्ड का भी थोड़ा-सा उत्तरी भाग (अलस्टर की छः काउण्टियाँ) इसी में सम्मिलित हैं और इस राज्य का नाम है ग्रेट ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैण्ड का राज्य। इसका एक दूसरा नाम 'यूनाइटेड किंगडम' (United Kingdom) भी प्रसिद्ध है। बोलचाल की भाषा में 'इंगलैण्ड', 'ब्रिटेन', 'ग्रेट ब्रिटेन', 'यूनाइटेड किंगडम' आदि का समानार्थक शब्दों-सा प्रयोग होता है और इसी प्रकार यहाँ के निवासियों को भी समान रूप से ही 'अँग्रेज जाति' अथवा 'ब्रिटिश जाति' कहा जाता है।

आजकल की अंग्रेज अथवा ब्रिटिश जाति कई जातियों के सम्मिश्रण से बनी है। ये जातियाँ समय-समय पर बाहर के देशों से आई और अपनी पूरवर्ती जातियों को पराजित करके यहाँ बस गई और उससे मिल-जुल गई। ब्रिटेन के संविधान के विकास पर भी इनमें से अनेक जातियों की संस्थाओं का प्रभाव पड़ा है।

ब्रिटेन के आदिम निवासियों के विषय में कुछ अधिक ज्ञात नहीं है। केवल इतना ही ज्ञात है कि ये लोग जंगली और असभ्य दशा में रहते थे। अनेक अन्य जंगली

जातियों की भाँति ये लोग अपने शरीर को काले या नीले रङ्ग से रङ्ग लिया करते थे। इन्हें खेतीबारी का कुछ ज्ञान न था और ये शिकार द्वारा अपना निर्वाह करते थे।

इस जाति पर ईसवी सन् से ७०० वर्ष पूर्व केल्ट (Celt) जाति ने आक्रमण किया और इसे पश्चिम की ओर भगा दिया। केल्टों की एक शाखा का नाम 'ब्रिटन' था। इसी के नाम पर इस देश का नाम 'ब्रिटेन' और जाति का नाम 'ब्रिटिश' पड़ा।

केल्ट अथवा ब्रिटेन जाति पर ईसा से ५४ वर्ष पूर्व सुप्रसिद्ध रोमन सेनापति (और बाद में सम्राट) जुलियस सीजर ने आक्रमण किया। लगभग सौ वर्ष बाद रोम का दूसरा आक्रमण हुआ और देश का दक्षिणी भाग जो इङ्गलैंड कहलाता है, रोम के साम्राज्य का एक प्रान्त बन गया। रोम वाले लगभग ४५० वर्षों तक इङ्गलैंड पर शासन करते रहे। इसी समय यहाँ इसाई धर्म का भी प्रवेश और प्रचार हुआ। ४०७ ई० में जब रोमन साम्राज्य पर विदेशियों के आक्रमण के कारण आपत्ति आई, तो रोम वालों ने इङ्गलैंड को खाली कर दिया।

विद्वानों का कहना है कि प्रारम्भ की इन विजेता जातियों का ब्रिटेन के संविधान के विकास में कुछ भी भाग नहीं है। वास्तव में आजकल जो ब्रिटिश संविधान है उसका प्रारम्भ रोमवालों के चले जाने के बाद हुआ और उसकी नींव डालने का श्रेय आंग्ल तथा सैक्सन जातियों को है जिन्होंने ब्रिटेन पर पाँचवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आक्रमण किया था। सैक्सन और आंग्ल जातियाँ उत्तरी योरप से आई थीं और प्राचीन जर्मन जाति की शाखाएँ थीं। इनके बाद ब्रिटेन पर दो बाहरी आक्रमण और हुए, एक तो १०१६ ई० में डेन्मार्क वालों का और दूसरे १०६६ में फ्रांस के नार्मण्डी प्रदेश वाले नार्मनों का।

ब्रिटिश या अँग्रेज जाति मुख्यतः केल्ट (प्रधानतः उनकी ब्रिटेन नामक शाखा), सैक्सन, आंग्ल, डेनिश और नार्मन जातियों के सम्मिश्रण से बनी हुई है और ब्रिटेन के संविधान के विकास पर प्रधानतः आंग्ल, सैक्सन और नार्मन लोगों की राजनैतिक संस्थाओं की छाप पड़ी है।

आंग्ल-सैक्सन जाति द्वारा स्थापित राज्य—ब्रिटेन पर विजय प्राप्त करने के बाद जब आंग्ल-सैक्सन जाति के लोग वहाँ बसे, तो उनके युद्ध के समय जो सेनापति लोग थे वे ही स्थान-स्थान में राजा बन बैठे। इस प्रकार प्रारम्भ में आंग्ल-सैक्सनों के अनेक छोटे-छोटे राज्य बने। परंतु, कुछ समय और बीत जाने पर इन राज्यों को मिला-जुलाकर सात अपेक्षाकृत बड़े राज्य बने। ये राज्य थे—ईस्ट ऐङ्गलिया, मर्सिया, नार्दम्बरलैंड, केन्ट, ईसेक्स, वेसेक्स और ससेक्स। इतिहास में इस सप्तधा विभाजित राज्य-व्यवस्था का नाम राज्य-सप्तक अथवा सप्ततन्त्र (Heptarchy) है। अन्त में ईसा की नवीं शताब्दी में वेसेक्स के राजा ने अन्य छः राज्यों को पराजित करके अपने राज्य

में मिला लिया और पूरे इंगलैण्ड में एकच्छत्र राज्य हो गया। सन् ८२६ ई० में एगबर्ट (Egbert) इस अखिल देशीय राज्य का प्रथम सम्राट बना। एगबर्ट ही से इंगलैंड के सम्राटों की परम्परा प्रारंभ होती है।

आंग्ल और सैक्सन जातियों की राजनैतिक संस्थाएँ—अब से कुछ वर्ष पूर्व तक इतिहासकारों का यह मत था कि प्रतिनिधि प्रणाली की प्रजातान्त्रिक राज्य-व्यवस्था का जन्म प्राचीन जर्मन जाति में हुआ और आंग्ल और सैक्सन जाति वाले (जो जर्मन जाति ही की एक शाखा थे) उसे इंगलैंड में लाये। अब यह मत भ्रान्त सिद्ध हो चुका है, पर यह निर्विवाद है कि आंग्ल और सैक्सन जातियों ने ब्रिटेन की शासन-पद्धति को दो महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ दीं अर्थात् (१) राजतंत्र और (२) स्थानीय शासन-व्यवस्था। ये दोनों संस्थाएँ ब्रिटिश संविधान की सदैव दो महत्त्वपूर्ण स्तम्भ रही हैं।

आंग्ल-सैक्सन राजतंत्र—आंग्ल-सैक्सन जातियों में राजा के पद का विकास इंगलैंड में ही आकर हुआ। युद्ध के समय के सेनापति ही बाद में राजा मान लिये गये। इसी कारण राजा का पद पैतृकाधिकारमूलक न था, किंतु निर्वाचन द्वारा दिया जाता था। राजा का निर्वाचन प्रमुख व्यक्तियों की एक सभा करती थी जिसका नाम 'वाइटेनेजमोट' (बुद्धिमान लोगों की सभा) थी। इसके सदस्यों की संख्या नियत न थी, पर इसमें राज्य के प्रधान कर्मचारी, बड़े-बड़े जमींदार, पादरी आदि सम्मिलित होते थे। यह सभा राजा का चुनाव साधारणतया वंशक्रम से ही करती थी, पर यह आवश्यक न था कि एक राजा के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र ही राजा हो। उसके अनुपयुक्त होने पर वाइटेन किसी अन्य को भी राजा चुन सकती थी। वाइटेन राजा को पदच्युत भी कर सकती थी।

आंग्ल-सैक्सन राजा निरंकुश सत्ताधारी न होता था। वह वाइटेन सभा की सम्मति से ही कानून बनाता था। न्याय-कार्य में उसे जनता के रीति-रिवाजों का ध्यान रखकर निर्णय देना पड़ता था। वह धार्मिक सभाओं का भी सभापतित्व करता था। पर उसका प्रधान कर्तव्य था युद्ध के समय अपने राज्य की सेना का संचालन करना।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नियंत्रित राजतन्त्र जो ब्रिटेन की शासन-व्यवस्था की आज भी एक प्रधान विशेषता है, आंग्ल और सैक्सन जातियों की ही देन है। इसी प्रकार वाइटेन को भी हम पार्लमेन्ट का एक प्रकार का पूर्वरूप कह सकते हैं। राजा मनमानी न करके योग्य व्यक्तियों के परामर्श से काम करे—यह प्रणाली ब्रिटेन में सैक्सन काल से ही चली आ रही है।

आंग्ल-सैक्सन काल की स्थानीय शासन-व्यवस्था—आंग्ल-सैक्सन लोग छोटे-छोटे गाँवों में रहते थे जिन्हें 'टनशिप' अथवा 'टाउनशिप' (tunship or township) कहा जाता था। प्रत्येक ग्राम या टनशिप के स्थानीय प्रबन्ध के लिए ग्राम

वासियों की एक सभा होती थी जिसका नाम 'मोट' (Mote) था और कुछ निर्वाचित कर्मचारी होते थे जिनमें प्रधान था 'रीव' (Reeve)। इस व्यवस्था की तुलना हम प्राचीन भारत की ग्राम-पंचायतों और उनके कर्मचारियों से कर सकते हैं। इन गाँवों में से कुछ अपनी सुविधाजनक स्थिति के कारण अधिक बड़े हो गये और बर्ग या बरो (burgh or borough) अर्थात् नगर कहलाने लगे।

गाँवों के ऊपर की शासन की इकाई का नाम हंड्रेड (hundred) था। इसका यह नाम कदाचित् इसमें सौ गाँवों के सम्मिलित होने या सौ की संख्या से सम्बन्धित किसी अन्य विशेषता के कारण पड़ा होगा। हंड्रेड की भी अपनी सभा अथवा 'मोट' होती थी, और उसका प्रधान कर्मचारी 'हंड्रेडमैन' कहलाता था जो कहीं-कहीं निर्वाचित और कहीं-कहीं उस भू-खण्ड के स्वामी अथवा जमींदार द्वारा नियुक्त होता था। हंड्रेड की सभा की साधारणतया प्रति मास बैठक होती थी और वह दीवानी, फौजदारी तथा धार्मिक—सभी प्रकार के मुकदमों का निर्णय करती थी।

हंड्रेड से भी ऊपर की शासन-इकाई का नाम 'शायर' (shire) था। शायर की भी अपनी सभा या मोट होती थी जिसमें गाँवों के रीव और अन्य प्रधान व्यक्ति—जैसे बड़े-बड़े जमींदार, पादरी आदि—सम्मिलित होते थे। इसकी साल में दो बैठकें होती थीं और हंड्रेड की सभा की ही भाँति इसका भी प्रधान कार्य न्याय करना ही था, यद्यपि कुछ मात्रा में यह कानून-निर्माण और शासन-प्रबन्ध भी करती थी। शायर का प्रधान कर्मचारी 'एल्डरमैन' अथवा 'आल्डरमैन' (Elderman or alderman) कहा जाता था। इस शब्द का अर्थ होता है वयोवृद्ध अथवा अनुभवी व्यक्ति। प्रारंभ में 'आल्डरमैन' स्थानीय शासन का एक प्रकार से स्वतन्त्र कर्मचारी था, परन्तु बाद में उसकी नियुक्ति राजा द्वारा होने लगी। अन्त में उसका स्थान राजा द्वारा नियुक्त 'शायर', 'रीव' अथवा 'शेरिफ' (Shire, reeve or sheriff) ने ले लिया। शेरिफ राज्य का प्रधान स्थानीय कर्मचारी बन गया। वह शायर में राजकीय भूमि का प्रबन्ध करता, भूमिकर इकट्ठा करता, सरकारी जुर्मानों को वसूल करता और स्थानीय सैन्यदल का प्रबन्ध करता था।

शायर देश के धार्मिक संगठन की भी महत्वपूर्ण इकाई थी। प्रत्येक शायर में एक 'बिशप' (महन्त) होता था। वह शायर की सभा में सम्मिलित होता और धर्म सम्बन्धी मुकदमों के निर्णय में प्रधान भाग लेता था।

नार्मन-विजय के बाद शायर का नाम बदल कर काउन्टी (county) हो गया, पर ब्रिटेन के उपविभागों और काउन्टियों के नाम में यह शब्द आज भी बहुधा पाया जाता है जैसे लङ्काशायर, यार्कशायर इत्यादि।

नियंत्रित राजतन्त्र की भाँति ही आंग्ल-सैक्सन काल की यह दूसरी देन—

स्थानीय शासन व्यवस्था—भी ब्रिटेन की शासन-पद्धति की एक स्थायी परंपरा अथवा विशेषता बन गई। निरंकुश से निरंकुश राजाओं के शासनकाल में भी वहाँ पूर्ण केन्द्रीकरण कभी नहीं हो सका और गाँवों, नगरों, काउन्टियों आदि की स्थानीय स्वतन्त्रता बहुत कुछ देश में सदा बनी रही। ब्रिटिश जाति की स्वातंत्र्य-भावना की जड़ें स्थानीय शासन की ही उपजाऊ भूमि में परिपुष्ट हुई हैं।

नार्मन-एञ्जिवेन काल में ब्रिटेन की शासन-व्यवस्था का विकास—ब्रिटेन में आंग्ल-सैक्सन जाति का प्रभुत्व पाँचवीं शताब्दी के मध्य से ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य तक लगभग ६०० वर्षों तक बना रहा और उसमें देश की शासन-व्यवस्था की जो रूप-रेखा बनी, उसका वर्णन ऊपर किया गया है। इस जाति का अन्तिम राजा हेरोल्ड था। उस पर १०६६ ई० में नार्मण्डी के राजा विलियम ने आक्रमण किया और उसे हेस्टिंग्स (Hastings) नामक स्थान में हरा दिया। इस हेस्टिंग्स की लड़ाई के फलस्वरूप ब्रिटेन में नार्मन राज्य की स्थापना हुई। नार्मन वंश और उसकी शाखाओं और प्रशाखाओं का राज्य लगभग ४०० वर्षों तक १०६६ ई० से १४८५ ई० तक रहा। इस समय में ब्रिटिश शासन-पद्धति का जो विकास हुआ, अब हमें उसका संक्षिप्त विवरण देना है।

नार्मन-एञ्जिवेन काल के ब्रिटिश राज-व्यवस्था पर प्रभाव के विषय में दो मत हैं। इतिहासकार फ्रीमैन का मत था कि ब्रिटेन की शासन-व्यवस्था की जो रूपरेखा आंग्ल-सैक्सन काल में बन गई थी उसी का विकास आगे भी चल कर होता रहा और नार्मन-विजय का उस पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। इसके विपरीत दूसरा मत अमेरिकन लेखक ऐडम्स का है जिसकी राय में ब्रिटेन के संविधान का इतिहास नार्मन-विजय की तिथि से ही प्रारम्भ होता है। आजकल फ्रीमैन का मत मान्य नहीं है और अब विद्वानों की राय यही है कि अँग्रेजी शासन-व्यवस्था का वर्तमान रूप अधिकांश में उसे नार्मन विजय के बाद ही प्राप्त हुआ, पर इससे यह न समझना चाहिये कि आंग्ल-सैक्सन काल का प्रभाव बिल्कुल ही जाता रहा। यदि केन्द्रीय सरकार की रूपरेखा नार्मन-एञ्जिवेन काल में निर्धारित हुई है, तो स्थानीय शासन का ढाँचा वही रहा है जो आंग्ल-सैक्सन काल में प्राप्त हो चुका था। संविधान में केन्द्रीय और स्थानीय दोनों ही प्रकार की राज्य-व्यवस्था सम्मिलित समझी जानी चाहिये।

अस्तु, नार्मन-एञ्जिवेन काल का ब्रिटेन के संविधान के विकास पर मुख्यतः दो प्रकार का प्रभाव पड़ा। पहले तो इस काल में राजा और केन्द्रीय सरकार की शक्ति पहले से कहीं अधिक बढ़ गई और दूसरे, आंग्ल-सैक्सन काल की वाइटेन के रूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन होकर उसके स्थान में दो सभाओं—मैगनम कान्सीलियम (Magnum concilium) अथवा वृहत् सभा, और क्यूरिया रेजिस (Curia ragis) अर्थात् राज-सभा का उदय हुआ।

राजा और केन्द्रीय सरकार की शक्ति में वृद्धि—आंग्ल-सैक्सन काल के राजाओं की शक्ति नियंत्रित और सीमित थी। उन पर केवल वाइटेन सभा का अंकुश रहता था, किन्तु उन्हें अपने अधीन सरदारों के विद्रोह का भी निरन्तर भय लगा रहता था। नार्मन विजेता विलियम अपने देश नार्मण्डी में अपना प्रबल केन्द्रीय शासन स्थापित कर चुका था और ब्रिटेन में भी वह यही करना चाहता था। ब्रिटेन के विद्रोह-शील सरदारों को निर्बल और अशक्त करने के अभिप्राय से विलियम ने उनकी रियासतें उनसे छीन लीं और समस्त भूमि अपने अनुयायी और विश्वासपात्र नार्मन सामन्तों में इस शर्त पर बाँट दी कि वे उसके प्रति राजभक्त बने रहें और आवश्यकता के समय उसे सैनिक सहायता दें। इस प्रकार के भूमि-प्रबन्ध को पारिभाषिक भाषा में सामन्तशाही अथवा फ्यूडलिज़्म (Feudalism) कहा जाता है और इसमें भूमि पर अधिकार का राजभक्ति तथा राजसेवा से अटूट सम्बन्ध होता है। इस प्रथा के द्वारा राजा को सरदारों के विद्रोह का भय जाता रहा। जो सरदार राजा के विरुद्ध जाता वह अपनी जागीर खो बैठता। अतः राजा की शक्ति बहुत बढ़ गई।

सामन्तशाही की स्थापना के अतिरिक्त विजेता विलियम ने राजशक्ति को अपने हाथ में केन्द्रित करने के लिए एक दूसरे उपाय का भी सहारा लिया। यह उपाय था न्याय और शासन-व्यवस्था में स्थानीय न्यायालयों और निर्वाचित कर्मचारियों के स्थान में स्वयं अपने न्यायाधीशों और कर्मचारियों को नियुक्त करना। सैक्सन काल में हंड्रेड और शायर के स्थानीय और कई अन्य प्रकार के भी न्यायालय न्याय-कार्य करते थे। विजेता विलियम ने इनके ऊपर स्वयं अपने न्यायाधीश नियुक्त किये जो काउन्टी-काउन्टी में दौरा करके न्याय करते थे। इनका न्याय एक ही प्रकार के नियमों द्वारा होता था। इन्होंने स्थानीय रीति-रिवाजों की भिन्नता को दूर करके उनका सामंजस्य किया और इस प्रकार एक अखिल देशीय कानून की नींव पड़ी जो आगे चलकर 'कामन लॉ' (Common Law) अर्थात् लोक-विधि के नाम से प्रसिद्ध हुआ। शासन के क्षेत्र में यही कार्य शेरिफों की नियुक्ति द्वारा हुआ। शेरिफ राजा का स्थानीय प्रतिनिधि था। वह राजकीय करों और जुर्मानों को वसूल करके उन्हें राजकोष में जमा करता, राजा की भूमि का प्रबन्ध करता और बहुधा काउन्टी के न्यायालय के न्यायाधीश का भी काम करता था। संक्षेप में नार्मन काल में शेरिफ की वैसी ही महत्वपूर्ण स्थिति थी जैसे ब्रिटिश शासनकाल के भारत में जिले के कलेक्टर या डिप्टी कमिश्नर की। राजा इन न्यायाधीशों और शेरिफों के द्वारा देश के प्रत्येक भाग में शासन-सूत्र का संचालन कर सकता और अपनी आज्ञा को मान्य बना सकता था। इस प्रकार एक सुदृढ़ अखिल देशीय केन्द्रीय सरकार की सृष्टि हुई।

मैग्नम कान्सीलियम और क्यूरिया रेजिस—एक बड़े राज्य की देख-रेख का

कार्य कोई भी राजा अकेले नहीं कर सकता। नार्मन-एञ्जिवेन काल में राजा को परामर्श देने और उसकी सहायता करने के लिये दो संस्थाओं का विकास हुआ जो मैगनम कान्सीलियम (बृहत्सभा) और क्यूरिया रेजिस (राजसभा) के नाम से प्रसिद्ध हैं।

मैगनम कान्सीलियम तो अपनी पूर्ववर्ती वाइटेनेजमोट सभा की स्थानापन्न थी। इसमें राज्य के प्रमुख व्यक्ति सम्मिलित होते थे जैसे प्रधान सामंत, बड़े राजकर्मचारी, प्रमुख पादरी और इसी प्रकार के अन्य लोग। ये लोग इस सभा में किसी प्रकार के निर्वाचन द्वारा नहीं आते थे। राजा जिसे चाहे उसी को बुला सकता था। इनमें से अधिकांश राजा से जागीरप्राप्त सामंत ही होते थे। राजा इस सभा का सभापति था और इसका काम था राज्य की नीति को निश्चित करना, शासन की देख-रेख करना, आवश्यकतानुसार कानून बनाना और सर्वोच्च न्यायालय की हैसियत से न्याय करना। इसकी बैठक वर्ष में साधारणतया तीन बार होती थी, पर राजा जब चाहे तभी इसका अधिवेशन बुला सकता था।

साल में तीन अधिवेशन वाली यह संस्था राज्य के अधिक महत्त्वपूर्ण कुछ ही कार्यों का भार ग्रहण कर सकती थी। दिन-प्रति-दिन का कार्य क्यूरिया रेजिस द्वारा होता था। वास्तव में क्यूरिया रेजिस मैगनम कान्सीलियम से कोई सर्वथा पृथक् सभा न थी। यह मैगनम कान्सीलियम के उन सदस्यों को मिलाकर बनी थी जो राजदरबार में सदैव उपस्थित रह सकते थे, जैसे चेम्बरलेन, चान्सलर, स्टेवार्ड और राज-सदन के अन्य प्रमुख कर्मचारी। इसके और मैगनम कान्सीलियम के बीच कार्यों या अधिकारों का भी कोई निश्चित विभाजन न था। दोनों ही सभी प्रकार के कार्य कर सकती थीं। यह राजा की इच्छा पर था कि कौन कार्य किस सभा द्वारा हो। पर साधारणतया अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न बड़ी सभा ही के सामने रक्खे जाते थे। इन संस्थाओं के अधिकार राजा की इच्छानुसार न्यूनाधिक किये जा सकते थे। राजा जिस बात में चाहे, इनकी सलाह ले या न ले। ऐसा अनुमान किया जाता है कि नार्मन-एञ्जिवेन वंश के राज्य-काल में इन संस्थाओं का प्रभाव अधिक न था, पर इसके द्वारा इस परम्परा की रक्षा होती रही कि राजा देश के मुख्य व्यक्तियों का परामर्श लेकर ही राज-काज करे। कालान्तर में क्यूरिया रेजिस से प्रिवी काउन्सिल और कैबिनेट (मंत्रिमंडल) का उद्भव हुआ और मैगनम कान्सीलियम से पार्लमेण्ट का।

मैग्नाकार्टा (वृहत् अधिकार-पत्र)—विजेता विलियम की १०८७ ई० में मृत्यु हुई। उसकी बनाई राज्य-व्यवस्था लगभग सौ वर्ष तक ठीक-ठीक चलती रही, पर बाद में अदूरदर्शी और अयोग्य राजाओं के कारण वह बिगड़ गई। ११९९ ई० में राजा जॉन सिंहासनारूढ़ हुआ। यह बड़ा ही निकम्मा और अत्याचारी शासक था। उसने

अपने सामंतों को तंग करना प्रारंभ किया। उसका फल यह हुआ कि सामंतों ने संगठित होकर जॉन को चुनौती दी कि या तो वह उसके द्वारा तैयार किये अधिकार-पत्र को स्वीकार करे, अथवा उनके विद्रोह का सामना करे। राजा जॉन को १५ जून सन् १२१५ ई० को इस अधिकार-पत्र को रनीमेड नामक स्थान में स्वीकार करना पड़ा। अपने ऐतिहासिक महत्त्व के कारण यह 'वृहत् अधिकार-पत्र' के नाम से प्रसिद्ध है।

वृहत् अधिकार-पत्र में ६६ धाराएँ थीं, पर इनमें की मुख्य-मुख्य बातें ये थीं:—

(१) वृहत् सभा की सम्मति बिना राजा सामंतों पर नये कर न लगायेगा।

(२) कोई नागरिक अपराध सिद्ध हुए बिना बन्दी या निर्वासित न किया जायगा।

(३) किसी व्यक्ति पर उसकी हैसियत या अपराध की मात्रा से अधिक जुर्माना न किया जायगा।

(४) साधारण अदालत (Court of Common Plea) नियत स्थान में कार्य करेगी, और राजा के साथ दौरे पर न जायगी।

(५) राजा धार्मिक संगठन (Church) या उसके कर्मचारियों (पादरियों, बिशपों) की नियुक्ति में हस्तक्षेप न करेगा।

(६) बड़े सामन्त और पादरी वृहत् सभा में सदैव बुलाये जायँगे।

(७) विदेशी व्यापारी युद्धकाल के अतिरिक्त और सभी समय देश में स्वतंत्रतापूर्वक आ-जा सकेंगे।

(८) समस्त राज्य में नाप और तौल के एक ही पैमाने प्रयोग में लाये जायँगे।

इस विवरण से यह विदित होगा कि मैग्नाकार्टा में उन अधिकारों का जिन्हें आजकल हम लोग नागरिकों के मौलिक अधिकार अथवा फंडामेन्टल राइट्स (Fundamental rights) कहते हैं, उल्लेख नहीं है। इसमें न तो भाषण या प्रकाशन की स्वतंत्रता की कोई बात कही गई है और न सभा या शस्त्र-धारण की स्वतंत्रता की। वास्तव में यह वृहत् अधिकार-पत्र न तो जनता के आन्दोलन द्वारा प्राप्त किया गया था और न इसमें उसके अधिकारों का वर्णन ही है। इसे तो इंगलैण्ड के असन्तुष्ट सामन्तों या बैरनों ने राजा से प्राप्त किया और इसमें सामन्तशाही प्रथा के अन्तर्गत सामन्तों के जो मुख्याधिकार माने गये उन्हीं की रक्षा का राजा से वचन लिया गया। फिर यह भी बात है कि इसमें वर्णित अधिकार नये न थे। सामंतों ने राजा से उन्हीं अधिकारों की पुनरुक्ति कराई जो उनकी राय में परम्परागत थे और जिन्हें स्वेच्छाचारी सम्राट जॉन ने भंग किया था।

यह सब होते हुए भी ब्रिटेन के वैधानिक इतिहास में मैग्नाकार्टा को बहुत ही महत्त्व दिया जाता है। इंगलैंड का समस्त वैधानिक इतिहास मैग्नाकार्टा की ही व्याख्या मात्र है। साधारण बोलचाल में जब किसी विषय के अधिकार-पत्र का महत्त्व प्रदर्शित करना

होता है तो लोग कहते हैं कि "यह तो अमुक विषय का 'मैग्नाकार्टा' है। अब प्रश्न यह है कि जब मैग्नाकार्टा में जनसाधारण के मौलिक अधिकारों का उल्लेख भी नहीं है तो उसे इतना महत्त्व क्यों दिया जाता है। प्रोफेसर ऐडम्स ने अपनी पुस्तक 'इंगलैण्ड का वैधानिक इतिहास' में इसका यह कारण बतलाया है कि राज्य-संगठन के कुछ मूलभूत ऐसे नियम हैं जिनका उल्लंघन राजा (अथवा सरकार) भी नहीं कर सकता और दूसरे, यह कि यदि राजा या सरकार उनका उल्लंघन करे, तो प्रजा को यह अधिकार है कि उसे उन नियमों को मानने को बाध्य करे, यहाँ तक कि यदि आवश्यक हो, प्रजा सरकार या राजा को पदच्युत करके उसके स्थान में दूसरे राजा या सरकार को स्थापित कर सकता है। ब्रिटिश जाति के इतिहास में जब-जब प्रजा की स्वतन्त्रता पर संकट आया है, तब-तब लोगों ने इन्हीं दो सिद्धान्तों का आश्रय लेकर अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की है। मैग्नाकार्टा द्वारा ही इन सिद्धान्तों की स्थापना हुई और इसी कारण उसका इतना महत्त्व है।

शासन और न्याय-व्यवस्था का विकास—मैग्नाकार्टा के बाद की दो-तीन शताब्दियों में ब्रिटेन के संविधान का मुख्यतया दो दिशाओं में विकास हुआ। एक तो क्यूरिया रेजिस से मुख्य न्यायालयों और प्रिवी काउन्सिल का उद्भव हुआ और दूसरे मैगनम कान्सीलियम से क्रमशः पार्लमेण्ट विकसित हुई।

हम ऊपर बतला आये हैं कि क्यूरिया रेजिस राजा को स्थायी रूप से दिन-प्रतिदिन के राजकाज में परामर्श और सहायता देती थी। इसके सामने मुख्यतः दो प्रकार के कार्य आते थे अर्थात् न्याय सम्बन्धी और शासन सम्बन्धी। कालान्तर में न्याय कार्य के लिए इसमें से चार मुख्य न्यायालयों का जन्म हुआ—(१) कोर्ट आफ एक्सचेकर, (२) कोर्ट आफ कामन प्ली, (३) किंग्स बेञ्च और (४) चान्सरी। अनेक परिवर्तनों और संशोधनों के साथ ये न्यायालय अँग्रेजी शासन-पद्धति में आज भी पाये जाते हैं।

इस प्रकार क्यूरिया का एक भाग तो न्यायालयों के रूप में उससे पृथक् हो गया। अब बचा शासन और परामर्श का काम। उसे बहुत समय तक क्यूरिया ही 'स्थायी समिति' (Permanent Council) के नाम से करती रही। इसके सदस्यों की संख्या क्रमशः इतनी बढ़ गई कि काम-काज में असुविधा होने लगी और जैसे मैगनम कान्सीलियम के कुछ सदस्यों को लेकर किसी समय क्यूरिया रेजिस उससे प्रस्फुटित हुई थी, उसी तरह अब क्यूरिया रेजिस अथवा परमानेण्ट काउन्सिल की भी एक अन्तरंग गोष्ठी बन गई जिसका नाम प्रिवी काउन्सिल (गुप्त समिति) पड़ा। यह घटना पन्द्रहवीं शताब्दी में छठे हेनरी के राज्यकाल (१४२२-६१ ई०) में हुई। अठारहवीं शताब्दी तक प्रिवी काउन्सिल का आकार भी बहुत बढ़ गया और तब

इसकी भी अपेक्षा एक और छोटी अन्तरंग संस्था का इसी के कुछ सदस्यों को लेकर संगठन हुआ जो कैबिनेट या मन्त्रिमंडल के नाम से प्रसिद्ध है। इस विकास-क्रम को नीचे दिये हुए चित्र से सहज ही हृदयङ्गम किया जा सकता है।
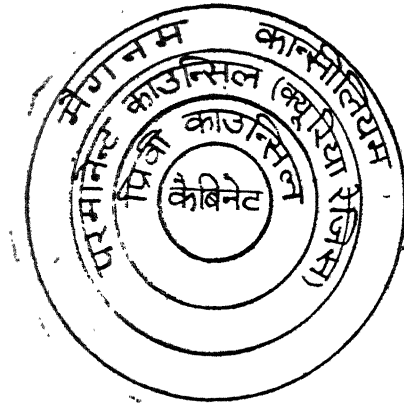
पार्लमेण्ट का उदय—जब राजा को परामर्श देने और शासन में सहायता देने का काम मुख्यतः क्यूरिया रेजिस के हाथों में आ गया तो बृहत् सभा (मैगनम कान्सीलियम) के हाथ में दो प्रकार के काम बच रहे—कानून-निर्माण और राजकीय आय-व्यय का नियंत्रण। जैसा हम देख चुके हैं, प्रारम्भ में इस सभा में राज्य के उच्चतर वर्गों के लोग—बड़े जमींदार, राजकर्मचारी और पादरी आदि ही सम्मिलित होते थे, पर कालान्तर में आवश्यकतावश इसमें अन्य वर्गों के प्रतिनिधि भी जोड़ने पड़े। इसके परिवर्द्धित रूप से ही पार्लमेण्ट का जन्म हुआ।

इस परिवर्तन का सूत्रपात्र यों हुआ कि १२१३ ई० में अनेक आन्तरिक और बाह्य कठिनाइयों का सामना होने के कारण सम्राट जॉन ने आज्ञा दी कि बृहत्सभा में अन्य सदस्यों के अतिरिक्त प्रत्येक काउन्टी के चार प्रतिनिधि भी बुलाये जायँ। इसका उद्देश्य यह था कि काउण्टियों के ये प्रतिनिधि राजा द्वारा लगाये जाने वाले नये करों को अपने-अपने क्षेत्र के लोगों के नाम में स्वीकार करें। इसके बाद यह प्रथा चल पड़ी कि जब-जब राजा को युद्ध या किसी अन्य कार्य के लिये विशेष धन की आवश्यकता पड़ती थी, तभी वह जनता के प्रतिनिधियों को बुला कर उनसे आर्थिक सहायता माँगता था। १२५४ में हेनरी तृतीय ने भी इसी उपाय का सहारा लिया, पर इस बार राजा और सरदारों में झगड़ा होकर युद्ध छिड़ गया। १२६४ ई० में सरदारों की विजय हुई और उनका नेता साइमन डि माण्टफोर्ड राज्य का अभिभावक (Regent)

बन बैठा। पर माएटफोर्ड को भी धन की आवश्यकता पड़ी और उसने १२६५ ई० में जो पार्लमेंट बुलाई उसमें सामन्तों, पादरियों और काउन्टियों के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त २१ नगरों (Boroughs) में से भी प्रत्येक के दो-दो निवासी (Burgess) आमंत्रित किये गये। इस प्रकार १२६५ ई० की पार्लमेएट में ही पहली बार राज्य के सभी वर्गों के लोग सम्मिलित हुए और इसी समय से पार्लमेंट का वास्तविक जन्म माना जाता है।

इसके बाद के ३० वर्षों में कई पार्लमेंट बुलाई गई, पर इनमें से किसी में नगरों के प्रतिनिधि सम्मिलित नहीं किये गये। अन्ततः १२९५ ई० में एडवर्ड प्रथम ने पुनः एक ऐसी पार्लमेंट बुलाई जिसमें सभी वर्गों के लोग उपस्थित थे। कहा जाता है कि इसमें आर्कबिशप, १८ बिशप, ६६ ऐबट ३ अन्य धर्माधीश, ९ अर्ल, ४१ बैरन, ६१ काउन्टियों के नाइट, और १७२ नगर-निवासी आये थे। सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व होने के कारण इस पार्लमेंट को 'आदर्श पार्लमेंट' (Model Parliament) की उपाधि मिली। इसके बाद से पार्लमेएट ब्रिटिश राज्य-व्यवस्था का एक स्थायी अङ्ग बन गई।

मध्यकालीन प्रतिनिधित्व व निर्वाचन—इस समय की पार्लमेंट आजकल के अर्थ में जनता की प्रतिनिधि संस्था न थी। इसके अधिकांश सदस्य निर्वाचित न थे, किन्तु अपने धन, पद या आर्थिक महत्व के कारण बुलाये जाते थे। यह सत्य है कि काउन्टियों और नगरों के प्रतिनिधि प्रारंभ ही से एक प्रकार से चुनाव द्वारा ही भेजे जाते थे, पर तब के और अब के चुनाव में जमीन-आसमान का अन्तर है। आजकल लोग पार्लमेंट की सदस्यता के लिए लालायित रहते हैं और कितना धन-व्यय तथा अन्य प्रयत्न करते हैं। पर जैसा प्रोफेसर मुनरो ने लिखा है, 'मध्ययुग के प्रतिनिधियों को तो जबर्दस्ती भेजना पड़ता था।' कोई अपनी इच्छा से प्रतिनिधि होना स्वीकार न करता था। इसका कारण यह था कि उन दिनों प्रतिनिधि बनना खतरे का काम था। एक तो यात्रा करना ही सुरक्षित न था और दूसरे यह भी भय बना रहता था कि कहीं राजा किसी बात से अप्रसन्न होकर कैद में न डाल दे अथवा बध न करा डाले। उन दिनों के चुनाव के एक चित्र में यह दिखलाया गया है कि चुने हुए प्रतिनिधि महाशय छुटकारा पाने के लिए घोड़े पर सवार होकर भागे जा रहे हैं और उनके निर्वाचक उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ रहे हैं। अतः मध्यकालीन प्रतिनिधित्व जनता की कोई वांछनीय वस्तु न थी, किन्तु राजा द्वारा धन ऐंठने के अभिप्राय से उन पर लादी गई थी। स्वराज्य या स्वातन्त्र्य की भावना से उसकी उत्पत्ति नहीं हुई थी।

पार्लमेएट का दो सभाओं में विभक्त होना—१२९५ ई० की आदर्श पार्लमेन्ट के सदस्य पहले तो साथ ही साथ एकत्रित हुए, पर इसके बाद परामर्श

करने के लिए वे तीन समूहों में विभक्त हो गये। ये समूह थे—सामन्तवर्ग (nobility), पादरी वर्ग (clergy) और लोक-प्रतिनिधि वर्ग (commons)। ये समूह राजा की धन सम्बन्धी माँग पर अपनी अलग-अलग राय देते थे। कुछ समय तक यही प्रथा चलती रही और यदि यह स्थायी हो जाती तो अन्य यूरोपीय देशों की भाँति इंगलैंड की पार्लमेंट का भी त्रिसदनात्मक (Tricameral) रूप हुआ होता। परन्तु कुछ समय बीतने पर बड़े-बड़े सामन्त और पादरी तो एक साथ मिलकर विचार करने लगे और छोटे सामंत तथा छोटे पादरी, काउंटियों और नगरों से आये हुए लोक-प्रतिनिधियों के साथ। इसका कारण यह था कि बड़े सामन्तों और पादरियों के स्वार्थ में समानता थी, क्योंकि दोनों ही वर्गों के लोग बड़े-बड़े जमींदार थे और छोटे पादरियों, जमींदारों और साधारण जनता के प्रतिनिधियों का आर्थिक हित भी समान था। इसका फल यह हुआ कि तीन सभाओं में विभक्त होने के बदले पार्लमेन्ट में दो सभाएँ ही रह गईं। इनमें से बड़े पादरियों और सामन्तों की सभा का नाम लार्ड्स सभा (House of Lords) और छोटे पादरियों, जमींदारों और साधारण जनता के प्रतिनिधियों की सभा का नाम कामन्स सभा (House of Commons) पड़ा। एडवर्ड तृतीय के शासन-काल के अन्त तक (१३१७ ई०) पार्लमेंट का द्विसदनात्मक (bicameral) रूप स्थायी हो गया। यह किसी योजना व सिद्धान्त के द्वारा नहीं हुआ, किन्तु सामाजिक और आर्थिक आवश्यकताओं के अनुसार हुआ। यह सुप्रसिद्ध बात है कि समान सामाजिक और आर्थिक स्तर के लोगों में विचार-साम्य पाया जाता है और आपस में मिलने-जुलने की प्रवृत्ति भी। विधान-मंडलों की यह द्विसदनात्मक पद्धति (bicameral system) कालान्तर में अन्य देशों में भी फैल गई और यद्यपि आजकल कुछ विचारक इसे अच्छा नहीं समझते, परन्तु तो भी संसार के सभी प्रमुख देशों के विधान-मंडल द्विसदनात्मक ही हैं।

पार्लमेंट के अधिकारों का विकास—यह बतलाया जा चुका है कि राजा अथवा राज्य की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ही—करों की स्वीकृति देने के लिये ही—पार्लमेंट का जन्म हुआ। मैग्नाकार्टा ही में यह बात स्वीकार की गई थी कि नये कर बृहत्सभा की स्वीकृति के बिना न लगाये जायँगे। आगे चलकर यह ब्रिटिश संविधान का मूलभूत नियम बन गया कि प्रतिनिधियों की स्वीकृति बिना किसी भी वर्ग या समुदाय पर कर नहीं लगाये जा सकते। इस नियम को अँग्रेजी भाषा में संक्षेप में यों कहा जाता है 'No taxation without representation'—अर्थात् प्रतिनिधित्व के अभाव में कर नहीं लगाये जा सकते।[१] पार्लमेंट के द्विसदनात्मक रूप के

[१] इस नियम का उपरोक्त अँग्रेजी सूत्र के समान ही सुन्दर और संक्षिप्त संस्कृतानुवाद यों कर सकते हैं कि "प्रतिनिधित्वाभावे कराभावः।"

निश्चित हो जाने के थोड़े ही समय बाद १४०७ ई० में सम्राट चतुर्थ हेनरी ने वचन दिया कि अब से धन की माँगों को पहले कामन्स सभा विचार करके स्वीकृत करेगी, और उसके बाद ही लार्ड्स सभा उन पर विचार कर सकेगी। इस प्रकार पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही अर्थ सम्बन्धी अधिकार मुख्यतः कामन्स सभा के हाथों में आ गया। अर्थाधिकार ही अन्य अधिकारों का मूल है; क्योंकि धन के अभाव में कदाचित् ही कोई कार्य सम्पन्न हो सकता है। अतः अर्थाधिकार की स्वामिनी होने के कारण कामन्स सभा पार्लमेण्ट की प्रधान बन गई, और लार्ड्स सभा गौण, यद्यपि यह प्रक्रिया कई शताब्दी बाद सम्पूर्ण हुई। पन्द्रहवीं शताब्दी से ही अर्थ-विधेयकों के पारित करने का सूत्र हो गया है "लौकिक और धार्मिक सामन्तों की सम्मति और स्वीकृति से, कामन्स सभा द्वारा"—"by the commons with the advice and assent of lords spiritual and temporal'

पार्लमेण्ट के दूसरे प्रधान अधिकार—पार्लमेण्ट के कानून-निर्माण के अधिकार की उत्पत्ति उसके कर स्वीकृत करने के अधिकार से ही हुई। प्रारंभ में राजा ही वृहत्सभा के परामर्श से कानून बनाता था। पार्लमेण्ट की उत्पत्ति के बाद भी, बहुत समय तक राजा ही उसकी बैठकों का सभापतित्व करता था, और वही पार्लमेण्ट को आज्ञा देता था कि अमुक-अमुक बातों पर विचार करना या अमुक कार्य करना है। उसके बाद सदस्य पृथक-पृथक सदनों या दलों में विभक्त होकर उन बातों पर विचार और निर्णय करते थे। प्रारंभ में अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न कामन्स सभा के सामने आते भी नहीं थे। लार्ड लोग ही उनका निर्णय कर लेते थे। कामन्स सभा को केवल अपनी राय व्यक्त करने का अधिकार था जो कि वह अपने ही लोगों में से किसी चुने व्यक्ति के द्वारा सूचित कर देती थी। इस व्यक्ति का ही नाम आगे चलकर प्रवक्ता या स्पीकर (Speaker) पड़ गया।

परन्तु शीघ्र ही पार्लमेण्ट और विशेषतः कामन्स सभा के सदस्यों ने यह बात समझ ली कि जब उन्हें राजा को धन प्रदान करने का एकमात्र अधिकार है, तो वे इस अधिकार का उपयोग अपनी-अपनी शिकायतों को दूर कराने और अपने अनुकूल कानून बनवाने के लिए कर सकते हैं। राजा को धन की आवश्यकता थी। पार्लमेण्ट कह सकती थी कि अच्छा हम आपको धन तो देंगे, पर हमारी ये शिकायतें हैं इन्हें दूर करिये, अथवा अमुक कानून में जो हमारे लिए असुविधाजनक है, अमुक-अमुक परिवर्तन करने की कृपा कीजिये। अपनी गरज होने के कारण राजा को ये बातें माननी पड़ती थीं नहीं तो धन न मिलता। इस प्रकार पार्लमेण्ट को कानून-निर्माण में प्रस्ताव करने का अधिकार मिला। बहुत समय तक इसका रूप यह रहा कि पार्लमेण्ट—मुख्यतः कामन्स सभा—प्रति अधिवेशन में राजा से आवेदन-पत्र (Petition) द्वारा प्रार्थना

करती थी कि अमुक-अमुक कानून बनाये जायँ और राजा उन पर लार्ड्स सभा की सम्मति लेकर उन्हें बनाता था। क्रमशः यह नियम स्थापित हो गया कि कामन्स सभा की इच्छा के विरुद्ध कोई कानून बनाये ही न जायँ। षष्ठम हेनरी के राज्यकाल में (१४२२-६१) में यह नियम बना कि आवेदन-पत्र के स्थान में अब से निश्चित रूप वाले विधेयक ही पार्लमेण्ट के सम्मुख रक्खे जायँ। अब से कानून पारित होने का यह सूत्र प्रयोग में आने लगा कि "इस वर्तमान संसद् में उपस्थित धार्मिक और लौकिक सामन्तों तथा सामान्य सदस्यों को राय, सम्मति और अधिकार से महामहिम सम्राट (अथवा सम्राज्ञी) द्वारा...।[१] १९११ तक किसी भी कानून के पारित होने के लिए दोनों ही सभाओं की स्वीकृति अनिवार्य थी, परन्तु उक्त वर्ष से पार्लमेण्ट ऐक्ट १९११ (१९४९ में संशोधित) में दी हुई प्रक्रिया के अनुसार केवल कामन्स सभा की स्वीकृति से भी कानून बन सकते हैं। यदि कोई कानून इस रीति से बनना है तो उसके प्रस्तावना-सूत्र में "धार्मिक और लौकिक सामन्तों"—ये शब्द नहीं लिखे जाते।

ट्यूडर काल में ब्रिटिश संविधान—ऊपर दिये विवरण से यह स्पष्ट है कि हेनरी षष्टम के राज्यकाल के अन्त अर्थात् १४६१ ई० तक ब्रिटिश संविधान के प्रधान अंगों—सम्राट, प्रिवी काउन्सिल, द्विसदनात्मक पार्लमेण्ट, स्थानीय शासन आदि की रूप-रेखा और उनके अधिकार निश्चित हो चुके थे। इसके बाद के ३०-३५ वर्षों में ब्रिटेन में गृह-युद्ध और अशान्ति का साम्राज्य रहा। लंकास्टर और यार्क वंशों में से किसका राज्य हो, इसी प्रश्न को लेकर युद्ध चला। देश के सामन्त (Baron) लोग दो दलों में विभक्त होकर इस या उस पक्ष की ओर से आपस में लड़ने लगे। इतिहास में यह युद्ध वार आफ रोज़ेज़ (War of Roses) के नाम से प्रसिद्ध है। अन्त में १४८५ ई० में लंकास्टर के हेनरी ट्यूडर ने अपने यार्किस्ट प्रतिद्वन्द्वियों को बासवर्थ की लड़ाई में पूर्णरूप से हरा दिया और सप्तम हेनरी के नाम से सिंहासनारूढ़ हुआ। इस सम्राट से ट्यूडर वंश का राज्य प्रारंभ होता है जो कि १४८५ से १६०३ ई० तक रहा। इस वंश के ५ राजा और रानी हुए जिनमें अन्तिम सम्राज्ञी एलिजाबेथ थी।

ट्यूडर वंश का राज्य प्रारंभ होने के समय ब्रिटेन के लोग लंबे गृह-युद्ध, अशांति, और सामन्तों की लूट-मार से उकता गये थे और जैसे भी हो, शान्ति और सुव्यवस्था के इच्छुक थे। ट्यूडर राजाओं ने प्रजा की इस मनोवृत्ति को पहचाना और अपने निरंकुश शासन द्वारा उन्हें शान्ति और सुव्यवस्था दी। इस वंश के तीन शासक—सप्तम हेनरी,

[१] "By the King's (or Queen's) most Excellent Majesty by and with the advice and consent of the Lords Spiritual and Temporal and the Commons in this present Parliament assembled and by the authority of the same.. "

अष्टम हेनरी और एलिजाबेथ—बड़े कुशल और बुद्धिमान शासक थे। वास्तविक शक्ति उन्होंने अपने हाथ में रक्खी, परन्तु पार्लमेंट से परामर्श लेते रहने का स्वाँग बनाये रक्खा। उन्होंने इस बात का प्रयत्न किया कि पार्लमेंट उनकी स्वामिनी न बन कर दासी के रूप में काम करे और इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए वे साम, दाम, दण्ड, भेद सभी युक्तियों को काम में लाते। जो नगर राजा के अनुकूल होते थे, केवल उन्हीं के प्रतिनिधि बुलाये जाते थे; राजा के गुमाश्ते चुनाव में बराबर हस्तक्षेप करते थे; इस पर भी यदि स्वतन्त्र मनोवृत्ति के कुछ प्रतिनिधि चुनकर आ गये तो उन्हें डरा, धमका या दण्ड देकर वश में लाया जाता था। यदि अनुकूल पार्लमेंट हुई तो उसे बहुत वर्षों तक भंग ही न किया जाता था और यदि प्रतिकूल हुई तो उसे या तो बहुत कम बुलाया जाता था या बुला कर शीघ्र ही बिदा कर दिया जाता था। अँग्रेज जनता इस प्रकार के शासन को इसलिए स्वीकार किये हुए थी कि सुदृढ़ राज-व्यवस्था के हट जाने पर उसे अराजकता फैल जाने का भय था। प्रतिनिधि-प्रणाली का शासन भी सुव्यवस्था और शान्ति दे सकता है, इस बात का अभी तक ठीक-ठीक पता न था। इस प्रकार वैधानिक दृष्टिकोण से ट्यूडरकाल एक प्रतिक्रियागामी काल था, परन्तु शान्ति और सुशासन के कारण साहित्य, कला और आर्थिक क्षेत्रों में देश की पर्याप्त उन्नति हुई और लोग इसी से सन्तुष्ट थे।

स्टुअर्ट काल, गृह-युद्ध और गणतन्त्र की स्थापना—१६०३ ई० में एलिजाबेथ की मृत्यु के बाद स्टुअर्ट वंश का राज्य प्रारम्भ हुआ। इसका पहला राजा जेम्स (१६०३-२५) प्रथम था। ट्यूडर राजा जितने ही शक्तिशाली और बुद्धिमान थे, स्टुअर्ट राजा उतने ही कमजोर और निकम्मे थे। फल यह हुआ कि शीघ्र ही उनमें और पार्लमेंट में संघर्ष चलने लगा। जेम्स प्रथम ने पार्लमेंट की अनुमति के बिना अपनी ही आज्ञा से कुछ नये कर लगाने का प्रयत्न किया। उसने दैवी अधिकार से शासक होने का दावा किया। उसके उत्तराधिकारी चार्ल्स प्रथम (१६२५-४६ ई०) ने ग्यारह वर्षों तक पार्लमेंट को बुलाया ही नहीं। अन्त में १६४० में उसे स्काटलैंड की लड़ाई के लिए धन की आवश्यकता हुई और पार्लमेंट को बुलाना पड़ा। इस अवसर पर राजा और पार्लमेंट में जो विवाद प्रारम्भ हुआ उसने शीघ्र ही गृह-युद्ध का रूप धारण कर लिया। पार्लमेंट के दल की विजय हुई और १६४६ ई० में चार्ल्स प्रथम को प्राणदण्ड दिया गया। इसके उपरान्त क्रामवेल की संरक्षता में देश में गणतन्त्र (Republic) की स्थापना की घोषणा की गई और लार्ड सभा का अन्त कर दिया गया। पर यह व्यवस्था स्थायी न हो सकी और १६५८ ई० में क्रामवेल की मृत्यु के साथ ही इसका अन्त हो गया। १६६० ई० में स्टुअर्ट वंश के उत्तराधिकारी को जो योरप में निर्वासित था, वापस बुलाया गया और वह चार्ल्स द्वितीय (१६६०-

८५) के नाम से सम्राट बना। चार्ल्स द्वितीय ने तो किसी प्रकार पार्लमेंट से मेल बनाये रक्खा, पर उसके उत्तराधिकारी जेम्स द्वितीय (१६८५-८८) से पार्लमेंट का फिर झगड़ा हुआ। बात यह थी कि अष्टम हेनरी के समय से ही प्रोटेस्टैंट मत ब्रिटेन का राजधर्म बन चुका था और पार्लमेंट ने कानून द्वारा कैथलिक मत वालों पर कई प्रकार के प्रतिबन्ध लगा रक्खे थे। जेम्स द्वितीय का झुकाव कैथलिक धर्म की ही ओर था। अतः उसने इन कानूनों को रद्द करने की चेष्टा की। इस बात पर झगड़ा हुआ और जेम्स द्वितीय को भागना पड़ा। इसके उपरान्त १६८६ ई० में पार्लमेंट के प्रमुख सदस्यों ने हालैंड के राजकुमार विलियम को (जो आरेञ्ज के कुमार के नाम से प्रसिद्ध है और जो जेम्स की बड़ी कन्या मेरी से विवाहित था) बुला कर राजा बनाया। अँग्रेजी इतिहास में यह घटना 'रक्तहीन क्रान्ति' और 'शानदार क्रान्ति' (Bloodless Revolution and Glorious Revolution) के नाम से प्रसिद्ध है।

बिल आफ़ राइट्स—जिसमें आगे चल कर सम्राट और पार्लमेंट में पुनः संघर्ष न हो और दोनों के अधिकार स्पष्ट रहें, पार्लमेंट ने १६८६ ई० में एक अधिकार-पत्र या बिल आफ़ राइट्स (Bill of Rights) तैयार करके उसे कानून का रूप दिया। इसमें स्टुअर्ट राजाओं के नियम-विरुद्ध कृत्यों का वर्णन करके भविष्य के लिए उनका निषेध किया गया। इसकी मुख्य बातें ये थीं :—

(१) सम्राट को कानूनों को रद्द या स्थगित करने का अधिकार नहीं है।

(२) बिना पार्लमेंट की सम्मति के कर नहीं लगाये जा सकते।

(३) सम्राट को अपनी इच्छानुसार विशेष प्रकार के न्यायालय या कमीशन बनाने का अधिकार नहीं है।

(४) शान्ति के समय में पार्लमेंट की अनुमति बिना स्थायी सेना नहीं रक्खी जा सकती।

(५) प्रजा को आवेदन-पत्र द्वारा अपनी शिकायतों को राजा के सामने रखने का अधिकार है।

(६) पार्लमेंट के सदस्यों को भाषण और वाद-विवाद की पूर्ण स्वतन्त्रता है।

(७) पार्लमेंट के चुनाव स्वतन्त्र रीति से होने चाहिये और उसकी बैठकें शीघ्र-शीघ्र बुलाई जानी चाहिये।

(८) किसी कैथलिक या कैथलिक से विवाहित व्यक्ति को सम्राट्-पद को ग्रहण करने का अधिकार न होगा।

संक्षेप में, बिल आफ़ राइट्स में १६८८ की राज्यक्रान्ति के परिणामों का सारांश दिया हुआ है। प्रोफेसर ऐडम्स ने लिखा है कि यदि ब्रिटेन में लिखित संविधान की

प्रकार की कोई वस्तु है तो वह बिल आफ राइट्स ही है। इसमें पूरे संविधान का तो नहीं, पर उसके प्रधान मूलभूत नियमों का अवश्य उल्लेख है, जैसे पार्लमेंट की सर्वोच्च प्रभुता, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता आदि का। यह सत्य है कि ब्रिटेन का आज का संविधान १६८६ ई० की व्यवस्था से बहुत कुछ भिन्न है, पर उसका मौलिक आधार वही है, जो तब था। विस्तार की बातों में अवश्य बहुत परिवर्तन-संशोधन हुआ है।

ब्रिटिश संविधान के १६८६ ई० के बाद के विकास का सिंहावलोकन—संक्षेप में १६८६ के बाद ब्रिटिश संविधान प्रधानतया निम्नलिखित दिशाओं में विकसित हुआ है :—

(१) सम्राट् के अधिकारों में कमी।
(२) कैबिनेट अथवा मंत्रि-मंडल का उदय।
(३) कामन्स सभा का प्रजातन्त्रात्मक संगठन।
(४) लार्ड्स सभा के अधिकारों की अवनति।
(५) राजनैतिक दलों का उदय।

नीचे इनमें से प्रत्येक का संक्षिप्त वर्णन दिया जाता है :—

१. सम्राट के अधिकारों में कमी—बिल आफ़ राइट्स द्वारा नियंत्रित होने पर भी १६८६ ई० में सम्राट के अधिकार पर्याप्त रूप से विस्तृत थे। शासन उसी के हाथ में केन्द्रित था। पार्लमेंट की प्रभुता को दिन प्रति दिन के शासन में व्यक्त करने के उपायों का अभी आविष्कार नहीं हुआ था। विलियम और मेरी और उनके बाद सम्राज्ञी ऐन का राजकाज में प्रमुख भाग रहता था, पर अठारहवीं शताब्दी में जब राजसिंहासन हैनोवर वंश के राजाओं के हाथ में गया, तो एक विशेष कारण से उनके अधिकार कम हो गये। यह वंश जर्मनी से लाया गया था और इसके प्रथम दो राजा जार्ज प्रथम और द्वितीय अँग्रेजी भाषा जानते ही न थे। अतएव उन्होंने मंत्रिमण्डल की बैठकों का सभापतित्व करना छोड़ दिया। परिणाम यह हुआ कि राजकार्य से उनका निकट और घनिष्ठ सम्पर्क जाता रहा। तृतीय जार्ज ने अपनी खोई हुई प्रमुखता को पुनः प्राप्त करने के लिए बहुत कुछ प्रयत्न किया, पर उसके उत्तराधिकारी चतुर्थ विलियम और चतुर्थ जार्ज ने झंझट में पड़ना पसन्द न करके पुनः उसी मार्ग का अनुसरण किया। इस प्रकार सम्राज्ञी विक्टोरिया के सिंहासनारूढ़ होने के समय तक यह प्रथा चल पड़ी कि राजा का राज-कार्य में सक्रिय भाग न होकर गौण स्थान ही रहेगा। इस प्रथा को तोड़ने का साहस अब किसी सम्राट को न हो सकता था, क्योंकि उसका परिणाम होता सिंहासनच्युत होना।

२. कैबिनेट प्रथा का उदय—सम्राट के जो-जो अधिकार कम होते गये वे उसके हाथ से निकल कर मंत्रियों के हाथों में पहुँचे। मंत्रिमंडल का विकास क्रमशः और एक प्रकार से अज्ञात रूप से हुआ। हम देख चुके हैं कि सम्राट को परामर्श देने का काम पहिले क्यूरिया रेजिस करती थी, और जब उसका आकार बहुत बढ़ गया तो यह काम उसके सदस्यों से बनी हुई प्रिवी काउन्सिल करने लगी। कालान्तर में प्रिवी काउन्सिल का भी आकार पर्याप्त बड़ा हो गया और उससे भी अपेक्षाकृत छोटी समिति की आवश्यकता का अनुभव होने लगा। अतः १६६७ ई० में द्वितीय चार्ल्स ने परामर्श के लिये प्रिवी काउन्सिल के लगभग आधे दर्जन सदस्यों को, जो विशेष रूप से उसके विश्वासपात्र थे, परामर्श के लिए बुलाना प्रारंभ किया। ये सदस्य थे क्लिफोर्ड, ऐशले, बकिंघम, आरलिंगटन और लान्डरडेल। इनके नामों के प्रथम अँग्रेजी अक्षरों को मिलाने से Cabal (कबाल) शब्द बनता है। अतः सम्राट की परामर्शदात्री यह छोटी समिति Cabal के नाम से पुकारी जाने लगी। सम्राट इस समिति की बैठक महल के एक छोटे कमरे में करता था। अँग्रेजी भाषा में किसी कमरे से पीछे बने हुए छोटे कमरे को कैबिनेट (Cabinet) कहते हैं। अतः यह समिति कैबिनेट भी कहलाने लगी। प्रारम्भ में केवल या कैबिनेट का बड़ा विरोध हुआ। लोग समझते थे कि इसकी गुप्तमन्त्रणा के द्वारा सम्राट की ओर से कोई षड्यंत्र रचा जा रहा है। चार्ल्स के समय की यह केवल आजकल के अर्थ में पूर्णतया कैबिनेट थी भी नहीं।

हम लोग जिस रूप में कैबिनेट या मंत्रिमंडल को आजकल जानते हैं उसके मुख्य लक्षण तीन हैं अर्थात् (१) कैबिनेट के सब सदस्य पार्लमेंट के सदस्य हों, (२) वे एक ही राजनैतिक विचार और एक ही राजनैतिक दल के हों जिसका कामन्स सभा में बहुमत हो और (३) वे कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायी हों और वहाँ अपने दल का बहुमत न रह जाने पर पद-त्याग कर दें। प्रारंभ में कैबिनेट में ये कोई लक्षण न थे और इनका क्रमशः विकास हुआ।

जहाँ तक पहिले लक्षण की बात है, उस संबंध में तो १७०१ ई० एक कानून द्वारा पार्लमेंट ने यह बन्धन लगाना चाहा कि सम्राट का कोई वेतनभोगी मंत्री या कर्मचारी पार्लमेण्ट का सदस्य हो ही न सके। यदि यह कानून प्रचलित हो जाता तो कैबिनेट जैसी संस्था का विकास ही न हो सकता। परन्तु शीघ्र ही यह कानून रद्द हो गया और सिक्योरिटी ऐक्ट १७०५ और प्लेस ऐक्ट (Place Act) १७०७ के द्वारा केवल यह बन्धन रक्खा गया कि जो लोग मंत्रिपद स्वीकार करें, वे पार्लमेंट की सदस्यता का त्याग करके पुनः निर्वाचन के उम्मेदवार बनें और यदि फिर निर्वाचित हो जायँ तभी मन्त्री और पार्लमेंट के सदस्य साथ-साथ बने रह सकते हैं। यह नियम

१६१६ तक प्रचलित था, फिर हटा दिया गया। इस प्रकार १७०७ ई० में मंत्रियों के पार्लमेंट के सदस्य होने के मार्ग की बाधा दूर हुई।

दूसरा लक्षण भी, कि सभी कैबिनेट मंत्री एक ही दल के हों जिसका कि कामन्स सभा में बहुमत हो, बहुत समय तक अनुपस्थित था। सम्राट विलियम तृतीय अपने मंत्रियों को ह्विग और टोरी दोनों ही दलों में से चुनता था। क्रमशः जब यह बात स्पष्ट हो गई कि विभिन्न दलों से लिये गये मंत्री मिल-जुल कर काम नहीं कर सकते तो उसने १६६३ ई० में पहिली बार अपने सब मंत्री एक ही दल—ह्विग—से नियुक्त किये। तब से एक दलीय मंत्रिमंडलों की प्रथा चल पड़ी। तृतीय जार्ज ने इस प्रथा का उल्लंघन करना चाहा, पर उसका फल यह हुआ कि कोई मंत्रिमंडल अधिक समय तक ठहर ही न सका। क्रमशः मंत्री लोगों के एक ही दल से नियुक्त होने का नियम सर्वमान्य हो गया।

तीसरा लक्षण भी प्रारंभ के मंत्रिमंडलों में नहीं पाया जाता था। मंत्रियों का उत्तरदायित्व राजा के प्रति था न कि पार्लमेंट के। क्रमशः यह बात स्पष्ट हो गई कि पार्लमेंट की इच्छा के विरुद्ध कोई मंत्रिमंडल कार्य नहीं कर सकता, क्योंकि न तो वह आवश्यक कानून बनवा सकेगा और न आवश्यक धन की मंजूरी ही ले सकेगा। मंत्रियों के पार्लमेंट के प्रति उत्तरदायित्व के नियम की स्थापना १७४२ ई० में हुई जब कि राबर्ट वालपोल ने प्रधान मंत्रित्व के पद से केवल इस कारण इस्तीफ़ा दे दिया कि कामन्स सभा में उनके दल का बहुमत न था।

इस प्रकार १७४२ तक कैबिनेट के आधारभूत लक्षण और नियम निश्चित हो चुके थे, परन्तु वह एक ऐसी सारगर्भित संस्था थी कि उसका समग्र अभिप्राय लोगों को उसी समय स्पष्ट न हो सका। उसे पूर्णतया स्पष्ट होने में उन्नीसवीं शताब्दी के लगभग तीन चतुर्थांश लग गये। कारण यह है कि कैबिनेट संस्था का आधार कोई लिखित कानून न था जिसमें उसकी सब बातें लिखी होतीं। वह तो रीति-रिवाजों की एक परम्परा पर आश्रित थी और अधिकांश में आज भी है। रीति-रिवाज को स्थिर होने में समय लगता है। इस सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त है कि अँग्रेजी संविधान विषयक पहिला ग्रन्थ जिसमें कैबिनेट का वर्णन है, बेगॉट का 'इंगलिश कांस्टीट्यूशन' नामक ग्रन्थ है जो १८६७ ई० में प्रकाशित हुआ। इससे यह प्रकट होता है कि १८६७ तक लोगों को कैबिनेट सम्बन्धी तत्वों का यथार्थ बोध न था।

३. कामन्स सभा का प्रजातन्त्रात्मक संगठन—१६८८ के बाद पार्लमेंट और विशेषतः कामन्स सभा में दो परिवर्तन हुए। पहले तो कामन्स सभा का संगठन प्रजातन्त्रात्मक रीति से हुआ और दूसरे, पार्लमेंट के कार्यों का केन्द्र लार्ड्स सभा से

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम तृतीयांश अर्थात् १८३२ ई० तक कामन्स सभा देश की जनता की किसी वास्तविक अर्थ में प्रतिनिधि न थी। मताधिकार बहुत थोड़े से लोगों को प्राप्त था और भिन्न-भिन्न स्थानों में उसके लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की योग्यतायें आवश्यक थीं। प्रतिनिधियों का देश के विभिन्न क्षेत्रों में वितरण विचित्र था। कहीं-कहीं तो उजाड़ या १० ही ५ व्यक्तियों की आबादी वाले स्थानों को कामन्स सभा में दो प्रतिनिधि भेजने का अधिकार था और अन्यत्र हजारों की जनसंख्या वाले नगरों को प्रतिनिधित्व ही प्राप्त न था। इस व्यवस्था से लोगों में बड़ा असन्तोष था। १८३२ ई० के रिफार्म ऐक्ट से इस स्थिति में सुधार होना प्रारंभ हुआ और उसके बाद १८६७, १८८४, १९१८ १९२८, १९४५ और १९४८ ई० में अन्य सुधार कानून बने। इनमें से प्रत्येक कानून दो दिशाओं में सुधार करता था अर्थात् (१) मताधिकार को अधिकाधिक विस्तृत करना और (२) कुल प्रतिनिधियों की संख्या का देश के विभिन्न क्षेत्रों में न्यायोचित वितरण। इन सुधार कानूनों के फलस्वरूप आज ब्रिटेन में वयस्क मताधिकार की स्थापना हो गई है और कामन्स सभा का संगठन पूर्णतः प्रजातन्त्रात्मक हो गया है।

इसके साथ ही साथ क्रमशः कामन्स सभा पार्लमेंट की प्रमुख अंग अर्थात् लार्ड्स सभा की अपेक्षा अधिक प्रभावशालिनी भी बनती गई। विलियम और ऐन के समय तक तो लार्ड्स-सभा का प्रभाव अधिक था, पर भविष्य में स्थिति बदल गई। हम ऊपर कामन्स सभा के अर्थविषयक अधिकार की चर्चा कर आये हैं। उसे शक्तिशालिनी बनाने के लिये वही अधिकार पर्याप्त था, क्योंकि जो धन देता है वह अपनी इच्छा के अनुसार नीति भी नियत करवा सकता है। पर कुछ अन्य कारण भी कामन्स सभा की शक्ति वृद्धि में सहायक हुए। राबर्ट वालपोल जो प्रथम प्रधान मंत्री था, कामन्स सभा ही का सदस्य था और इस कारण यह स्वाभाविक ही था कि उक्त सभा ही में राजनैतिक और कानूननिर्माण विषयक नेतृत्व केन्द्रित हो जाय। फिर १७१६ ई० के सप्तवर्षीय कानून (Septennial Act) द्वारा कामन्स सभा की अवधि ३ वर्ष से बढ़ा कर ७ वर्ष कर दी गई जिससे इसकी सदस्यता का महत्व बढ़ गया और अधिक योग्य व्यक्ति इसके सदस्य बन कर आने लगे।

४. लार्ड्स सभा के अधिकारों का ह्रास—कामन्स सभा की बढ़ती शक्ति का यह अवश्यम्भावी परिणाम था कि लार्ड्स सभा के अधिकार क्रमशः कम हो जाते। ज्यों-ज्यों कामन्स सभा का रूप अधिकाधिक प्रजातन्त्रात्मक होता गया, त्यों-त्यों उसमें और लार्ड्स सभा में मतभेद की सम्भावना बढ़ती गई। १८३२ के रिफार्म ऐक्ट और बाद के भी कई महत्वपूर्ण सुधारों के विषय में दोनों में तीव्र मतभेद हुए। अन्त में जब १९०९ ई० में लार्ड्स सभा ने कामन्स सभा द्वारा पारित वार्षिक अर्थ-

विधेयक (Finance Bill) को अस्वीकृत कर दिया, तो समस्या जटिल हो गई और उसका हल यह निकाला गया कि अब से लार्ड्स सभा को कामन्स सभा की बराबरी के अधिकार न रहने चाहिये। पार्लमेण्ट ऐक्ट १६११ द्वारा कामन्स सभा को अर्थविधेयकों पर एकच्छत्र अधिकार मिला और अन्य विधेयकों को भी एक नियत प्रक्रिया के अनुसार, लार्ड्स सभा के विरोध करते हुए भी, कानून का रूप दे देने का अधिकार प्राप्त हुआ। १६४६ ई० के एक सशोधन द्वारा लार्ड्स सभा की शक्ति और भी कम कर दी गई। इस प्रकार लार्ड्स सभा अब पार्लमेण्ट का गौण सदन बन गई है। उसकी और कामन्स सभा की बराबरी का अन्त हो गया।

५. राजनैतिक दलों का उदय—यों तो इंगलैंड में दलबन्दी बहुत प्राचीनकाल से चली आती है और हम पन्द्रहवीं शताब्दी में लैंकास्ट्रियन और यार्किस्ट और स्टुअर्ट काल में कैवेलियर और राउंडहेड तथा कोर्ट और कन्ट्री दलों की बात पढ़ते हैं, परन्तु ये सब आजकल के अर्थ में राजनैतिक दल न थे। इनमें उस पारस्परिक सहिष्णुता का अभाव था जो आजकल के राजनैतिक दलों का मुख्य लक्षण है। इंगलैंड में वास्तविक राजनैतिक दलों का उदय अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में हुआ। इस समय में स्टुअर्ट काल से ही वर्तमान ह्विग और टोरी दलों में सुनिश्चित नेतृत्व, पृथक् सिद्धान्तों और कार्यक्रमों तथा एक दूसरे के प्रति सहिष्णुता का प्रादुर्भाव हुआ। कैबिनेट प्रथा का विकास इन दलों के आधार पर ही हुआ और कैबिनेट ज्यों-ज्यों परिपक्व और परिपुष्ट होती गई त्यों-त्यों राजनैतिक दल भी अधिकाधिक सुदृढ़ होते गये। उन्नीसवीं शताब्दी में इन दलों के नाम बदल कर कान्सरवेटिव (Tory) और लिबरल (Whig) हो गये। बहुत समय तक इंगलैंड में दो दल ही रहे, पर बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में एक तीसरा श्रमिक दल (Labour Party) भी संगठित हुआ। पर प्रथम महायुद्ध के बाद से लिबरल दल की शक्ति क्षीण हो गई और आजकल वास्तविक दृष्टि से इंगलैंड में पुनः कान्सरवेटिव और लेबर—ये दो ही प्रबल दल रह गये हैं।

कुछ अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन—१६८८ ई० से अब तक के लगभग ४०० वर्षों में इंगलैंड के राजनैतिक मानचित्र में भी कई परिवर्तन हुए। १७०७ ई० में स्काटलैंड और १८०१ में आयरलैण्ड, इंगलैण्ड और वेल्स के साथ एक ही राज्य के अंग बन गये। १६२१ ई० में आयरलैंड का अधिकांश पुनः आइरिश फ्री स्टेट (अब आयर) के नाम से पृथक् हो गया और केवल अलस्टर की छः काउन्टियाँ ब्रिटेन के साथ रह गईं। सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में अंग्रेजों ने अमेरिका और एशिया में एक बड़े साम्राज्य का निर्माण किया जिसका अधिकांश आज भी बना है, यद्यपि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका १७७५ ई० में और भारतवर्ष अभी १६४७ में इससे स्वतंत्र होकर अलग राज्य बन गया। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में स्थानीय शासन और न्याय-

व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में शासन के प्रधान यंत्र सिविल सर्विस का विकास हुआ। प्रथम और द्वितीय महायुद्धों के बाद कई नये शासन-विभाग बने और राज्य के कार्यों का अनेक नई दिशाओं में प्रसार हुआ। १०४५ से १९५० के बीच में मजदूर सरकार (Labour Government) ने देश के कई महत्वपूर्ण उद्योगों का राष्ट्रीकरण किया और उनके प्रबन्ध के लिये एक नये प्रकार के संगठन—सार्वजनिक निगमों (Public Corporations) की स्थापना की।

इस प्रकार इंगलैंड का शासन-विधान जो लगभग गत सहस्र वर्षों से विकसित हो रहा है, आज भी अपने अन्तिम रूप पर नहीं आया है। समय की आवश्यकता और प्रगति के अनुसार उसमें नये-नये परिवर्तन और संशोधन होते ही चले जा रहे हैं।

अभ्यास

१. आंग्ल-सैक्सन जाति की राजनैतिक संस्थाओं का संक्षिप्त वर्णन करो।

Briefly describe the political institutions of the Anglo-Saxons.

२. नार्मन-एञ्जेविन काल में अंग्रेजी संविधान का किन दिशाओं में विकास हुआ?

In what directions did the English constitution develop during the Norman-Angevin period?

३. बृहत् अधिकार-पत्र (Magna Carta) के विषय में आप क्या जानते हैं? क्या उसे नागरिकों के मूल अधिकारों का आधार मानना ठीक है?

What do you know about the Magna Carta? Is it correct to regard it as the basis of the fundamental rights of the British citizens?

४. पार्लमेंट के उदय और उसके प्रारम्भिक अधिकारों तथा कार्यों का वर्णन करो। उसके वर्तमान अधिकारों की वृद्धि कैसे हुई?

Trace the history of the rise of the Parliament and describe its early functions and powers. How did its present-day functions evolve?

५. स्टुअर्ट काल के गृहयुद्ध का अँग्रेजी संविधान के विकास पर क्या प्रभाव पड़ा? बिल आफ राइट्स में किन मुख्य-मुख्य बातों का उल्लेख किया हुआ था?

What effect did the civil war have on the constitutional development of Britain? Analyse the main provisions of the Bill of Rights (1689).

६. १६८९ के बाद अँग्रेजी संविधान में कौन मुख्य-मुख्य परिवर्तन हुये हैं और क्यों?

What were the major changes which took place in the British Constitution after 1689? What were the reasons for them?

(७) विद्वान ग्रन्थकारों के मत—इस नये स्रोत की चर्चा भी फाइनर ने ही की है। डायसी का Law of Constitutions, एरस्किन का Parliamentary Procedure, एन्सन का Law and Customs of the Constitution आदि ब्रिटिश संविधान सम्बन्धी ग्रन्थ प्रामाणिक माने जाते हैं और संवैधानिक उलझनों के उत्पन्न होने पर उनके समाधान में दिये हुये मतों की भी सहायता ली जाती है।

इस विवरण से यह स्पष्ट हो जायगा कि ब्रिटिश संविधान के ५ प्रकार के आधारों में से तीन की सामग्री लिखित और दो की अलिखित है। जो भाग अलिखित है, वह लिखित भाग की अपेक्षा कहीं अधिक बड़ा है और इसी से ब्रिटिश संविधान को अलिखित कहा जाता है। अलिखित का अर्थ समझना चाहिये 'प्रधानतया अलिखित'। इसी प्रकार लिखित का भी अर्थ 'प्रधानतया लिखित' ही समझना चाहिये। वास्तव में आज दिन संसार का कोई भी संविधान पूर्णतया लिखित अथवा अलिखित नहीं है। सभी में लिखित और अखिलित भागों का सम्मिश्रण पाया जाता है। जिस भाग की मात्रा अधिक होती है उसी के अनुसार संविधान का वर्गीकरण कर दिया जाता है। अतएव लिखित और अलिखित संविधानों का अन्तर मात्रा-विषयक (of degree) है, गुण-विषयक (kind) नहीं।

ब्रिटिश संविधान भी समय की प्रगति के साथ-साथ अधिकाधिक मात्रा में लिखित होता जा रहा है। जब कभी भी कानन लॉ या प्रथाओं के आश्रित भाग में परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है तो उसे कानून द्वारा ही करना पड़ता है और कानून पार्लमेंट द्वारा लिखित रूप ही में बनाये जाते हैं। संविधान का प्राचीन भाग ही अलिखित है। जो कुछ अब उसमें परिवर्तन किया या जोड़ा जाता है वह लिखित रूप ही में। अतः भविष्य की प्रगति यह है कि अलिखित भाग क्रमशः कम और लिखित भाग अपेक्षाकृत अधिक होता जा रहा है। संभव है कि सुदूर भविष्य में यह परिवर्तन इस मात्रा तक पहुँच जाय कि ब्रिटिश संविधान का वर्तमान वर्गीकरण बदलना और उसे 'अलिखित' के स्थान में 'लिखित' विशेषण देना पड़े।

२. लोचदार संविधान—ब्रिटिश संविधान की दूसरी विशेषता है उसका लोचदार (Flexible) होना। साधारण भाषा में 'लोच' का अर्थ होता है वह गुण जो रबड़ सरीखी वस्तुओं में पाया जाता है और जिसके कारण उन्हें सरलता से खींचकर चढ़ाया, मोड़ा, या झुकाया जा सकता है। यदि हम इस शाब्दिक अर्थ ही को लें तो 'लोचदार संविधान' का अर्थ होगा—वह संविधान जिसमें सरलता से ही, खींच-खाँच या मोड़-माड़ कर, आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर लेना सम्भव हो। लार्ड ब्राइस ने लोचदार संविधानों की वृक्ष की उन नरम टहनियों से उपमा दी है जो अपने नीचे से

किसी ऊँची गाड़ी के जाते समय उसके धक्के से इधर-उधर हटकर उसके लिये रास्ता दे देती हैं, परन्तु उसके निकल जाने पर फिर अपने पूर्व स्थानों में आ जाती हैं।

परन्तु राजनीति में इस सम्बन्ध में 'लोचदार' शब्द का एक दूसरा पारिभाषिक (Technical) अर्थ भी होता है जिसे भलीभाँति समझ लेना आवश्यक है। इस अर्थ में 'लोचदार' विशेषण उस संविधान को दिया जाता है जिसकी स्थिति देश के साधारण कानून के समान ही हो, उससे ऊपर या बढ़कर नहीं। इसका अभिप्राय यह है कि लोचदार संविधान को बनाने अथवा उसमें परिवर्तन या संशोधन करने की रीति वही होती है जो साधारण कानूनों के बनाने की तथा संविधान और साधारण कानूनों की महत्ता भी समान होती है। कोई साधारण कानून इस कारण रद्द नहीं समझा जाता कि उसका संविधान से विरोध है।

ब्रिटिश संविधान इस पारिभाषिक अर्थ में लोचदार है। ब्रिटेन में संविधान-निर्मायक और साधारण—दोनों प्रकार के ही कानूनों को पार्लमेंट एक ही रीति से बनाती है। जैसा एक लेखक ने कहा है कि जङ्गली चिड़ियों की संरक्षा के लिये कानून बनाना हो, चाहे लार्ड्स सभा के अधिकारों को कम करने का कानून बनाना हो—दोनों ही दशा में पार्लमेंट एक ही प्रक्रिया का अनुसरण करेगी और दोनों एक ही कोटि के समझे भी जायँगे। जङ्गली चिड़ियों की रक्षा वाला कानून निम्नतर श्रेणी और लार्ड सभा का अधिकार विषयक कानून उच्चतर श्रेणी का हो, सो बात नहीं।

इस व्यवस्था की किसी अलोचदार संविधान वाले देश की व्यवस्था से तुलना करने पर ये बातें स्पष्ट हो जायँगी। उदाहरणार्थ भारत का संविधान अलोचदार श्रेणी का है। यहाँ हम साधारण कानूनों और संविधान सम्बन्धी कानूनों में तीन प्रकार के अन्तर पाते हैं, अर्थात्

(१) साधारण कानून तो भारतीय संसद द्वारा बनाये जाते हैं, परन्तु संविधान में परिवर्तन (कुछ मामूली बातों को छोड़कर) करने के लिये संसद् और कम से कम आधे राज्यों के विधान-मंडलों की स्वीकृति आवश्यक है। इसका अर्थ यह है कि हमारे देश में संविधान में परिवर्तन करने वाली संस्था कानून बनाने वाली संस्था से भिन्न है परन्तु ब्रिटेन में पार्लमेंट ही ये दोनों काम करती है।

(२) भारत में कानून बनाने की प्रक्रिया (Procedure) संविधान में परिवर्तन करने की प्रक्रिया से भिन्न है। कोई विधेयक संसद् के दोनों सदनों में बहुमत से पारित होने और राष्ट्रपति की स्वीकृति मिल जाने पर कानून बन जाता है, परन्तु संविधान सम्बन्धी विधेयक संसद् के प्रत्येक सदन में समस्त सदस्यों के बहुमत और उपस्थित सदस्यों के $\frac{2}{3}$ बहुमत से पारित होने चाहिये, फिर उन्हें कम से कम आधे राज्यों के विधान-मंडलों की स्वीकृति मिलनी चाहिये और अन्त में राष्ट्रपति की। ब्रिटेन

में यह बात नहीं। कानून हो चाहे संविधान-परिवर्तन, दोनों एक ही प्रक्रिया के अनुसार पार्लमेंट द्वारा पारित होते हैं।

(३) भारत सरीखे अलोचदार संविधान वाले देशों में संविधान के नियम साधारण कानून से ऊँची श्रेणी के माने जाते हैं। चाहे संसद् का कानून हो और चाहे राज्य के विधान-मंडलों का, पर यदि यह संविधान की किसी भी धारा के विरुद्ध है, तो सर्वोच्च और अन्य न्यायालय उसे अवैधानिक कहकर उसे कार्यान्वित करने से इन्कार कर देंगे। संयुक्त राज्य अमरीका, आस्ट्रेलिया व अलोचदार संविधान वाले अन्य देशों में भी यही बात है। परन्तु ब्रिटेन में न्यायालय पार्लमेंट द्वारा बनाये गये किसी भी कानून को अवैधानिक कह कर उसे रद नहीं कर सकते। मान लो यदि पार्लमेंट आज कोई कानून बना दे जो मैगना कार्टा या संविधान के अन्य किसी महत्वपूर्ण नियम के विरुद्ध हो, तो अदालतें यह नहीं कहेंगी कि वह कानून अवैधानिक या रद है, प्रत्युत वे यह समझेंगी कि इस नये कानून द्वारा पार्लमेंट ने अद्यावधि के संविधान में ही परिवर्तन कर दिया है। यह जरूर है कि ब्रिटेन में भी जब कोई कानून ऐसा बन जाता है या कोई कार्य ऐसा हो जाता है जो संविधान की परम्पराओं के विरुद्ध है तो लोग उसे असंवैधानिक (Unconstitutional) कहकर उसकी आलोचना करते हैं। पर वहाँ असंवैधानिक का अर्थ 'परम्परा विरुद्ध' मात्र है, यह नहीं कि कोई तथाकथित असंवैधानिक कानून रद समझा जायगा। न्यायालयों द्वारा कानूनों को अवैधानिक और रद ठहराने की व्यवस्था को पारिभाषिक भाषा में 'कानूनों का न्यायिक निरीक्षण' (Judicial Review of Legislation) कहते हैं। ब्रिटेन में इस 'न्यायिक निरीक्षण' की पद्धपि है ही नहीं।

ब्रिटेन में संविधान का अर्थ—जब ब्रिटेन में साधारण और संविधान सम्बन्धी कानून में कोई अन्तर ही नहीं है तो जिसे लोग 'ब्रिटिश संविधान' कहते हैं, वह है क्या? कोई नियम संविधान सम्बन्धी है या नहीं, इसकी परख की कसौटी क्या है? लिखित और अलोचदार सविधानों के विषय में यह कठिनाई उठती ही नहीं। जो कुछ संविधान की लिखित प्रति में है और जो साधारण कानूनों से ऊँची कोटि का है वही संविधान है। पर ब्रिटेन में न तो संविधान लिखा है और न अन्य कानूनों से उच्चतर कोटि का ही है। फिर उसके लक्षण क्या हैं?

हम देख चुके हैं कि अलिखित होने के कारण पेन (Paine) ने ब्रिटिश संविधान का अस्तित्व ही अस्वीकार दिया था। उसके कुछ समय बाद डि टाकेविल नामक फ्रेञ्च विद्वान ने भी कहा कि ब्रिटेन में संविधान जैसी कोई वस्तु नहीं है। उसके ऐसा कहने का कारण यह था कि ब्रिटेन में साधारण कानूनों और संविधान की निर्माण-प्रक्रिया व महत्ता में कोई अन्तर न होने के कारण हमारे पास कोई ऐसा मापदण्ड हो

नहीं रह जाता जिसके द्वारा हम निर्णय कर सकें कि अमुक नियम संविधान सम्बन्धी है और अमुक नहीं है।

परन्तु पेन और डि टाकेविल के ये मत भ्रान्त थे। यह तो स्पष्ट ही है कि नियमों का अस्तित्व उनके लिखित रूप पर निर्भर नहीं होता। इतना ही पर्याप्त है कि वे लोगों को ज्ञात हों और उनके अनुसार कार्य होता हो। ब्रिटिश संविधान के अलिखित नियम परम्परागत होने के कारण सुविदित हैं और उनके अनुसार कार्य होता है। तब पेन का कथन कि लिखित न होने के कारण ब्रिटिश संविधान है ही नहीं, ठीक वैसा ही है जैसे कोई कहे कि कपड़े न पहिनने से मनुष्य का अस्तित्व ही नहीं रह जाता। लिखित रूप तो संविधान का बाह्य आवरण मात्र है।

डी टाकेविल की आलोचना अधिक गंभीर और युक्तिसङ्गत है। प्रत्येक वस्तु का कुछ विशिष्ट लक्षण होना ही चाहिये। यदि ऐसा न हो तो उसका व्यक्तित्व जाता रहता है। यदि ब्रिटिश संविधान और साधारण कानूनों में कुछ भी भेद न हो, तो संविधान को उक्त नाम से पुकारना उचित न होगा। पर डी० टाकेविल ने संविधान के जो विशिष्ट लक्षण बतलाये हैं अर्थात् (१) संविधान साधारण कानून से ऊँची महत्ता का हो और (२) उसके संशोधन आदि की रीति कानून की निर्माण-रीति से भिन्न हो, उनके अतिरिक्त संविधान के अन्य भी विशिष्ट लक्षण हो सकते हैं और वे ब्रिटिश संविधान में पाये जाते हैं। डायसी ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'दि लॉ आफ दी कान्स्टीट्यूशन' में संविधान की यह परिभाषा दी है कि संविधान उन नियमों का समूह है "जिनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से राजप्रभुता (Sovereignty) के वितरण या प्रयोग पर प्रभाव पड़ता है।" इस कसौटी के द्वारा ब्रिटेन में संविधान के नियमों और साधारण कानूनों का अन्तर स्पष्ट हो जाता है। जिन नियमों का राज्य की प्रभुता-शक्ति के वितरण और प्रयोग से सम्बन्ध हो वे संविधान के अङ्ग हैं और जिनका ऐसा सम्बन्ध न हो वे साधारण कानून हैं।

३. **विकसित संविधान**—जैसा कि पिछले अध्याय में बतलाया गया है, ब्रिटिश संविधान लगभग एक सहस्र वर्षों के विकास का परिणाम है। यह कोई नहीं बतला सकता कि अमुक वर्ष में अमुक स्थान पर, अमुक व्यक्तियों द्वारा उसका निर्माण हुआ। सत्य बात यह है कि ब्रिटिश संविधान की समग्र रूप-रेखा किसी ने कभी बनाई ही नहीं। सुदूर प्राचीन काल में व्यावहारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ संस्थाओं का उदय हुआ। समय-समय पर उन्हीं में आवश्यकतानुसार परिवर्तन-संशोधन होते-होते संविधान का वर्तमान रूप बन गया। इस विषय में वह अमरीका या भारत के निर्मित (Enacted) संविधानों से सर्वथा भिन्न है। अमरीका का संविधान १७८९ ई० में फ़िलाडेल्फ़िया कानवेन्शन ने बनाया और भारत का

१९४९ ई० में विधान-परिषद् ने। दोनों ही संविधान एक निश्चित योजना और कुछ मूलभूत सिद्धान्तों को लेकर बने। ब्रिटिश संविधान के निर्माण में योजना या सिद्धान्तों का कोई भाग नहीं रहा। लिटन स्ट्रैची ने उसे 'अनुभव और संयोग का शिशु' (Child of wisdom and chance) कहा है। वास्तव में अँग्रेजी जाति इस बात का गर्व करती है कि वह कोई कार्य तर्क या सिद्धान्त के अनुसार नहीं करती। आवश्यकता पड़ने पर जैसे-तैसे कोई उपयुक्त प्रबन्ध कर लेना, बिना आवश्यकता के कुछ भी परिवर्तन न करना—यह अँग्रेजों की जातीय विशेषता है।

सिद्धान्त और व्यवहार में अन्तर—इस लम्बे विकास और अँग्रेज जाति के प्राचीनता प्रेम के कारण आज ब्रिटिश संविधान के कानूनी और व्यावहारिक रूप में बड़ा अन्तर पड़ गया है। हुआ यह है कि आवश्यकता पड़ने पर अँग्रेजों ने अपने संविधान के व्यावहारिक रूप में तो परिवर्तन कर लिया, परन्तु परम्परागत शब्दों को नहीं बदला। परिणाम यह हुआ है कि यद्यपि व्यवहार में इंगलैण्ड में आज प्रजातन्त्र है, परन्तु कानून के शब्दों के अनुसार वहाँ आज भी वंशक्रमानुगत राजतन्त्र ही की सत्ता का भ्रम होता है। मन्त्री और सभी राज-कर्मचारी सम्राट् के भृत्य कहे जाते हैं। न्यायालय सम्राट् के न्यायालय कहलाते हैं। जल-सेना का प्रत्येक जहाज सम्राट् का जहाज है। राजकोष सम्राट् का राजकोष है। प्रजा सम्राट् की प्रजा है इत्यादि-इत्यादि। ब्रिटिश संविधान के विद्यार्थी को सिद्धान्त और व्यवहार के इस अन्तर को सदैव अपनी दृष्टि के सामने रखना और सतर्क रहना आवश्यक है।

४- संविधान की प्रथायें (Conventions of the Constitution)—डायसी के मतानुसार ब्रिटिश संविधान की एक बड़ी भारी विशेषता है उसका प्रथाओं पर निर्भर होना। जैसा हम ऊपर बतला चुके हैं, ब्रिटिश संविधान कई तत्वों से मिलकर बना है और उनमें से एक तत्व प्रथाओं का है। प्रथायें कानून से भिन्न हैं। न्यायालय उनका पालन नहीं कराते। उन्हें भङ्ग करना कानून की दृष्टि में अपराध नहीं है।

यदि प्रथायें कानून नहीं हैं तो वे हैं क्या? डायसी का कहना है कि वे संविधान सम्बन्धी नैतिकता के आदेश (Precepts of constitutional morality) हैं। दूसरे शब्दों में, ये प्रथायें उस रीति या ढंग का निर्देश करती हैं जिनके अनुसार विभिन्न राज्याधिकारियों को अपने विवेक-निर्भर (discretionary) अधिकारों का प्रयोग करना चाहिये। कानून विभिन्न अधिकारियों के अधिकारों का मोटे तौर से ही उल्लेख करते हैं। विस्तार की बातों को वे उनकी विवेक-बुद्धि पर छोड़ देते हैं। यदि अधिकारियों को सोलहों आने कानून से जकड़ दिया जाय, तो उनकी परिस्थितियों के अनुसार कार्य करने की क्षमता जाती रहेगी और उनके हाथ-पैर बँध से जायँगे। इसी

कारण मोटे तौर से उनके अधिकार बतलाकर शेष उनके विवेक पर छोड़ दिया जाता है। प्रथायें और आगे बढ़कर यह बतलाती हैं कि विवेक-निर्भर अधिकारों का कैसा उपयोग उचित है।

उदाहरणार्थ कानून कहता है कि प्रधान मन्त्री राजा द्वारा नियुक्त होगा। राजा किसे प्रधान मन्त्री नियुक्त करे, इस विषय में कानून चुप है। यह बात उसकी विवेक-बुद्धि पर छोड़ दी गई है। पर इस विषय में यह प्रथा बन गई है कि सम्राट् उसी व्यक्ति को प्रधान मन्त्री नियुक्त करे जो कामन्स सभा के बहुमत का नेता हो। इसी प्रकार ये सब नियम कि कामन्स सभा में पराजित मन्त्रिमण्डल पदत्याग करे अथवा देश से चुनाव द्वारा एक बार अपील करे और उनमें असफल होने पर पदत्याग करे, अथवा यह कि मन्त्री लोग संयुक्त रूप से कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायी हैं—ये भी प्रथायें ही हैं।

उपरोक्त प्रथाओं का सम्बन्ध सम्राट् और मन्त्रिमण्डल से है। अन्य अधिकारियों से सम्बन्धित प्रथायें भी सरलता से ढूँढ़ी जा सकती हैं। उदाहरणार्थ पार्लमेण्ट सम्बन्धी कुछ प्रथायें ये हैं कि पार्लमेण्ट का वर्ष में कम से कम एक अधिवेशन अवश्य हो, कामन्स सभा का अध्यक्ष (Speaker) निर्विरोध चुना जाय और दलबन्दी से पृथक् रहे, अथवा लार्ड सभा का न्याय सम्बन्धी कार्य केवल लार्ड चान्सलर और नौ कानूनी लार्ड (Law Lords) ही करें।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रथाओं का सम्बन्ध केवल सम्राट् और मन्त्रिमण्डल से ही नहीं, किन्तु पार्लमेंट के दोनों सदनों से भी है। ब्रिटेन में पार्लमेंट के तीन अङ्ग हैं—सम्राट्, लार्ड सभा और कामन्स सभा। इन्हीं की समष्टि का नाम पार्लमेंट है और वह पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न है, अर्थात् कोई भी कानून बना या बिगाड़ सकती है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए डायसी ने प्रथाओं की पूर्ण परिभाषा इस प्रकार दी है कि—

"The conventions of the constitution are the customs or understandings as to the mode in which the various members of the sovereign legislative body······should exercise their discretionary authority whether it be termed the prerogative of the Crown or the privileges of the Parliament."

अर्थात् "संविधान की प्रथायें वे रीति-रिवाज या समझौते हैं जिनके अनुसार पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न विधान-मण्डल (अर्थात् पार्लमेण्ट) के विभिन्न अङ्गों (सम्राट् और उसके मन्त्री, लार्ड्स सभा और कामन्स सभा) को अपने विवेक-निर्भर अधिकारों का

प्रयोग करना चाहिये, चाहे वे अधिकार सम्राट् के अधिकार हों अथवा पार्लमेन्ट के।"

कुछ लोग भूल से यह समझ बैठते हैं कि प्रथायें अलिखित कानून हैं। यह नितान्त ही भ्रान्त धारणा है। प्रथायें अलिखित अवश्य हैं, पर वे कानून नहीं हैं। कानून का विशिष्ट लक्षण यह है कि न्यायालय उनका पालन करने और कराने को बाध्य हैं। प्रथाओं का न्यायालय पालन नहीं करते कराते। कोई किसी प्रथा को भङ्ग करे तो उस पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता, जैसा कि कानून भङ्ग करने वालों के साथ किया जा सकता है।

संविधान की प्रथाओं का महत्व—अब प्रश्न यह है कि प्रथाओं को भी कानून ही का रूप क्यों नहीं दे दिया गया? उनके प्रथा-मात्र बने रहने से क्या विशेष लाभ है। प्रथाओं का संविधान में विशिष्ट महत्व क्या है?

डायसी का कहना है कि प्रथाओं के द्वारा ही, कानूनी दृष्टि से पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न पार्लमेन्ट को जनता की इच्छा के अनुसार कार्य करने को बाध्य किया जा सका है। दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि ब्रिटेन का प्रजातन्त्र मुख्यतया प्रथाओं ही के आधार पर स्थित है। कानून द्वारा पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न पार्लमेन्ट पर कोई बन्धन लगाना सम्भव नहीं है। कारण यह है कि कोई ऐसा कानून नहीं है जिसे पार्लमेंट परिवर्तित या रद्द न कर सके। उसके लिए ऐसा बन्धन चाहिये जिसे वह तोड़ न सके। उस पर कानून का बन्धन लगाना वैसा ही है जैसे गाय को हरी घास की रस्सी से बाँधना जिसे वह क्षण भर में चबा जा सकती है। अतः उसके लिए दूसरे प्रकार का बन्धन चाहिये जिसे तोड़ना उसके लिए सरल न हो। प्रथाओं को पार्लमेंट नहीं बनाती। उनका जन्म जनता की औचित्य बुद्धि से हुआ है। अतः पार्लमेंट को उन्हें तोड़ने का सहसा साहस नहीं हो सकता। यही प्रथाओं का विशिष्ट वैधानिक महत्व है।

प्रथाओं का पालन क्यों होता है—पर यदि प्रथायें कानून नहीं हैं, और उन्हें तोड़ने वालों को न्यायालयों से दंड नहीं दिलाया जा सकता है, तो फिर उनका पालन ही क्यों होता है। उन्हें लोग मनमाने तौर से भंग क्यों नहीं किया करते? मिट्टी के शेर से क्या डरना?

इसका एक साधारण उत्तर जो बहुधा दिया जाता है यह है कि प्रथाओं के पीछे लोकमत (public opinion) की शक्ति है। जो उन्हें तोड़ेगा, लोकमत उसके विरुद्ध हो जायगा। परन्तु डायसी का कहना है कि यह उत्तर ठीक नहीं है, क्योंकि 'लोकमत के अनुकूल कार्य करना चाहिये' यह स्वयं ही एक प्रथा मात्र है और यह कहना कि प्रथाओं का आधार कोई अन्य प्रथा है, युक्तिसङ्गत नहीं है।

डायसी की राय में महत्त्वपूर्ण प्रथाओं के पीछे कानून ही की शक्ति निहित है, अर्थात् प्रथाओं को भंग करने वाले को अन्त में किसी न किसी कानून को भंग करने का अपराध करना पड़ेगा जिसके लिए वह न्यायालयों द्वारा दंडनीय हो जायगा। मान लो कामन्स सभा द्वारा पराजित कोई प्रधान मंत्री पदत्याग नहीं करता और सम्राट की पक्षपातपूर्ण सहायता से अपने पद पर बना रहता है। कुछ महीने तो वह ऐसा कर सकता है, पर जब नया आर्थिक वर्ष प्रारम्भ होगा, तो उसे पार्लमेंट से राजकीय व्यय के लिए धन मंजूर कराना और वार्षिक करों की स्वीकृति लेना ही पड़ेगा। पार्लमेंट उसके विरुद्ध पहले से ही है, अतः वह उसे स्वीकृति देगी ही नहीं। अब यदि प्रधान-मंत्री को अपने पद पर रहना है, तो उसे पार्लमेंट की स्वीकृति बिना ही खर्च करना और कर लगाना पड़ेगा, क्योंकि अर्थाभाव में तो राज्य सञ्चालन सम्भव है नहीं। यदि प्रधान मंत्री यह सब करता है, तो वह कानून के विरुद्ध अपराध करता है जिसके लिए उचित दंड मिलेगा। इस प्रकार प्रथाओं का भंग अन्त में कानून-भंग में परिणत हो जाता है।

परन्तु यह बात थोड़ी-सी इनी-गिनी और अधिक महत्त्वपूर्ण प्रथाओं के विषय ही में लागू होती है, सभी प्रथाओं के विषय में नहीं। छोटी-मोटी अनेक प्रथायें समय-समय पर भंग की जा चुकी हैं और यह देखा गया है कि उनके भंग होने से कोई भी कानून भङ्ग नहीं हुआ और न कोई दंडनीय हुआ। इसके कुछ उदाहरण ये हैं। १८६२ ई० में ग्लैडस्टन ने प्रत्येक कर की पार्लमेंट से अलग-अलग स्वीकृति लेने की प्रथा का त्याग करके सब करों को एक ही अर्थविधेयक में एकत्रित कर दिया जिससे पार्लमेंट बिना पूर्ण विधेयक को अस्वीकृत किये किसी एक कर को अस्वीकृत न कर सके। तब से अब तक यही व्यवस्था चली आती है और इसके कारण कोई कानून भंग नहीं हुआ। प्रथम युद्ध के दिनों में प्रधान मन्त्री लायड जार्ज ने मन्त्रिमण्डल सम्बन्धी सभी प्रथाओं का उल्लङ्घन करके 'युद्ध-मन्त्रिमंडल' (war cabinet) नामक नये प्रकार की संस्था की सृष्टि की, और द्वितीय विश्व युद्ध में चर्चिल ने भी कुछ ऐसा ही किया परन्तु इन्हें किसी कानून-भङ्ग के अपराध का भागी नहीं होना पड़ा। १९३१ ई० में राष्ट्रीय मन्त्रिमंडल (National Government) में रैमज़े मैकडानल ने संयुक्त उत्तरदायित्व की प्रथा की उपेक्षा कर दी, परन्तु वह भी किसी कानूनी अपराध में नहीं परिणत हुआ।

अतः डायसी का मत केवल अंशतः ही सत्य है। यह नहीं कहा जा सकता कि सभी प्रथाओं का आधार कानून ही है। यदि हमें सभी प्रथाओं के आधार की खोज करनी ही हो तो अन्त में यही मानना पड़ेगा कि वह उपयोगिता ही है। उपयोगिता ही के अनुसार कुछ पुरानी प्रथायें लुप्त हो जाती हैं और कुछ नई प्रथाओं का

उदय हो जाता है। उदाहरणार्थ १८६८ में डिसरैली ने यह प्रथा चलाई कि चुनाव में हार होने पर मन्त्रिमंडल तुरन्त पद-त्याग कर दे और पार्लमेंट में पराजय की अपेक्षा न करें। १८८१ ई० के बाद समय की बचत के लिए पार्लमेंट में वाद-विवाद सीमित करने (closure) की प्रथा चली। लोकमत प्रथाओं का आदर इसी कारण करता है कि वह उन्हें उपयोगी और उचित मानता है। प्रथायें बुद्धिमत्तापूर्ण राजनीतिक आचार (intelligent political behaviour) की प्रणालीमात्र हैं। स्थिति-परिवर्तन से जब उनका औचित्य व उपयोग नष्ट हो जाता है तो उनका त्याग भी कर दिया जाता है। बहुत उपयोगी और पुरानी प्रथाओं को कानून में भी बदल दिया गया है, जैसे यह प्रथा कि लार्ड्स सभा कामन्स सभा की इच्छा के सामने झुक जाय, पार्लमेंट ऐक्ट १९११ और १९४९ के द्वारा कानून में बदल दी गई है।

पार्लमेण्ट की पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्नता (Sovereignty of Parliament)—ब्रिटिश पार्लमेंट सम्राट्, लार्ड्स-सभा, और कामन्स सभा इन तीन अङ्गों से मिलकर बनी है। ब्रिटिश पार्लमेंट कानून की दृष्टि में पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न है अर्थात् उसकी कानून-निर्माण की क्षमता की कोई सीमा नहीं है। पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्नता (Sovereignty) का अर्थ होता है कानून-निर्माण, अथवा रद्द करने की असीम क्षमता। ब्रिटेन में कोई भी ऐसा व्यक्ति या संस्था नहीं है जिसे पार्लमेंट द्वारा बनाये कानूनों को बदलने या रद्द करने का अधिकार हो।

ब्रिटिश संविधान के सुप्रसिद्ध व्याख्याता ब्लैकस्टन (Blackstone) ने पार्लमेंट की प्रभुता के विषय में कहा है कि 'सर एडवर्ड कोक (एक प्राचीन और विद्वान ब्रिटिश न्यायाधीश) के कथनानुसार पार्लमेंट की शक्ति और अधिकार इतने उत्कृष्ट और असीम हैं कि वे किसी भी कारण से अथवा किसी भी व्यक्ति के लिए सीमा-बद्ध नहीं किये जा सकते।' डी लोम (De Lome) नामक लेखक ने लिखा है कि 'अँग्रेज विधान-वेत्ताओं का यह मूल सिद्धान्त है कि पार्लमेंट स्त्री को पुरुष और पुरुष को स्त्री बना देने के अतिरिक्त और सब कुछ कर सकती है।'

पार्लमेंट की कानून-निर्माण सम्बन्धी पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्नता का प्रमाण हमें उन महत्वपूर्ण कानूनों से मिलता है जिन्हें उसने समय-समय पर बनाया है। उदाहरणार्थ, ऐक्ट आफ सेटिलमेंट १७०१ के द्वारा सम्राट पद के उत्तराधिकार सम्बन्धी नियम निर्धारित हुए, १७१७ ई० के सेप्टीनियल ऐक्ट द्वारा कामन्स सभा की अवधि ३ वर्ष से बढ़ाकर ७ वर्ष कर दी गई, पार्लमेंट ऐक्ट १९११ और १९४९ के द्वारा लार्ड्स सभा के अधिकार कम कर दिये गये, इन्डिपेन्डेन्स आफ इंडिया ऐक्ट १९४७ के द्वारा भारत को स्वतन्त्र कर दिया गया, इत्यादि। इस प्रकार के महत्वपूर्ण सार्वजनिक विषयों पर कानून द्वारा व्यवस्था करने के अतिरिक्त, पार्लमेंट नागरिकों के व्यक्तिगत अधिकारों

में भी अपरिमित हस्तक्षेप कर सकती है, उदाहरणार्थ वह अवयस्क व्यक्ति को वयस्क, विदेशियों को नागरिक और नजायज़ सन्तान को जायज़ घोषित कर सकती है।

पार्लमेंट की पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्नता का एक अर्थ यह भी है कि वही ब्रिटेन की एकमात्र कानून बनाने वाली संस्था है। वहाँ किसी दूसरे अधिकारी या संस्था को कानून-निर्माण की क्षमता नहीं है। यह सत्य है कि कुछ कानूनों को सम्राट भी घोषणा अथवा आर्डर्स-इन-काउन्सिल (Orders-in-council) द्वारा बना सकता है, पर सम्राट पार्लमेंट द्वारा निर्धारित सीमा के भीतर ही यह कर सकता है। वह विषय में पार्लमेंट का प्रतिद्वन्द्वी नहीं है।

पार्लमेंट की पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्नता के सिद्धांत के विरुद्ध कई प्रकार की आलोचनायें और आपत्तियाँ की गई हैं। उनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है :—

(अ) पहले स्थान में यह कहा जाता है कि प्रभुता मतदाताओं (electorate) के हाथ में है न कि पार्लमेंट के, क्योंकि पार्लमेंट तो मतदाताओं के मतों के अनुसार ही बनती और बिगड़ती है और इस कारण वे उससे जैसा चाहें वैसा काम करवा सकते हैं। राजनैतिक दृष्टिकोण से यह बात सत्य है, परन्तु जहाँ तक कानूनी व्यवस्था का सम्बन्ध है, उसके अनुसार मतदाताओं को तो कानून बनाने-बिगाड़ने का कोई अधिकार है नहीं। जनता किसी कानून के कितना भी विरुद्ध क्यों न हो, न्यायालय इस कारण से उसका पालन करना बन्द नहीं करेंगे। जनता किसी कानून को कितना भी क्यों न चाहे, बिना पार्लमेंट के बनाये वह बन नहीं सकता। कम से कम ब्रिटेन में तो यही बात है। अतः कानून के विषय में पार्लमेंट ही पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न है, जनता आदि नहीं।

(ब) दूसरी बात यह कही जाती है कि कानून-निर्माण का कार्य केवल पार्लमेंट ही नहीं, किन्तु न्यायालय भी करते हैं। उनके फैसले आगे के लिए नजीर बन जाते हैं और उनकी की हुई कानून की व्याख्यायें प्रामाणिक मानी जाती हैं। यह सत्य है, परन्तु मुख्य बात यह है कि पार्लमेंट न्यायालयों की नजीरों और व्याख्याओं को कानून द्वारा रद्द कर सकती है, पर न्यायालय पार्लमेंट के किसी कानून को रद्द नहीं कर सकते। अतः पार्लमेंट ही का पक्ष प्रबल है और वह सम्पूर्ण-प्रभुता-सम्पन्न है।

(स) तीसरे स्थान में यह कहा जाता है कि पार्लमेंट नैतिकता के नियमों और अन्तर्राष्ट्रीय कानून के विरुद्ध कानून नहीं बना सकती। अतः उसकी प्रभुता सीमित है। पर, यह भी ठीक नहीं है। यह सत्य है कि पार्लमेंट साधारणतया नैतिकता और अन्तर्राष्ट्रीय नियमों के विरुद्ध कानून नहीं बनाती क्योंकि उसके सदस्य कोई गैर-जिम्मेदार व्यक्ति तो होते नहीं, पर इसका यह अर्थ नहीं है कि वह ऐसे कानून बना ही नहीं सकती। यदि वह चाहे तो अवश्य ही अनैतिक कानून भी बना सकती है और कोई

न्यायालय ऐसे किसी कानून को अनैतिकता आदि के कारण अमान्य नहीं कर सकता।

(द) चौथे स्थान में कुछ लोगों का यह भी कहना है कि पार्लमेंट सम्राट के विवेक-निर्भर अधिकारों (Prerogatives) में परिवर्तन नहीं कर सकती। पर यह दलील बिल्कुल ही लचर है, क्योंकि बिल आफ राइट्स आदि के द्वारा पार्लमेंट ने इन अधिकारों को अनेक बार कम किया है।

(य) पाँचवें, यह कहा जाता है कि पार्लमेंट अपनी पूर्ववर्त्ती पार्लमेंटों द्वारा दिये हुए आश्वासनों आदि के विरुद्ध कानून नहीं बना सकती। उदाहरणार्थ पार्लमेंट, उपनिवेशों या भारत को जिन कानूनों द्वारा स्वराज्य या स्वतन्त्रता दी गई है, उन्हें रद्द नहीं कर सकती या जनता के भाषण, सभा आदि की स्वतंत्रता के विरुद्ध कानून नहीं बना सकती। यह सत्य है कि पार्लमेंट इस प्रकार के अदूरदर्शितापूर्ण कानूनों को नहीं बनायेगी, क्योंकि उनके राजनैतिक परिणाम भयङ्कर होंगे, पर यह भी सत्य है कि पार्लमेंट में ऐसे कानून बनाने की क्षमता का अभाव नहीं है। परिणामों की परवाह न करे तो वह कोई भी कानून बना सकती है।

अतः पार्लमेंट की सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्नता के विरुद्ध दी हुई सभी दलीलें कानूनी दृष्टिकोण से निस्सार हैं। कानूनी स्थिति यही है कि पार्लमेंट की विधि-निर्माण की क्षमता अपरिमित और असीम है, परन्तु व्यवहार में पार्लमेंट उस क्षमता का गर्हित या मूर्खतापूर्ण प्रयोग नहीं करती, क्योंकि अन्ततः वह बुद्धिमान और अनुभवी राजनीतिज्ञों की सभा है। पर इससे उसके अधिकार सीमित नहीं बन जाते। स्वयं-निर्धारित सीमा किसी के भी अधिकारों को परिमित नहीं करती। अधिकार तो परिमित तब होते हैं जब कोई अन्य शक्ति उन पर प्रतिबन्ध लगावे। पार्लमेंट पर कानूनी प्रतिबन्ध लगाने वाली दूसरी कोई संस्था या शक्ति ब्रिटेन में नहीं है। इसी कारण पार्लमेंट पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न कही जाती है।

२. विधि राज्य (Rule of Law)—डायसी के मतानुसार 'विधि अथवा कानून का राज्य' भी ब्रिटिश संविधान की एक विशेषता है। 'विधि राज्य' के निम्नलिखित तीन अर्थ होते हैं :—

(क) विधि राज्य का प्रथम अर्थ तो यह है कि देश का सामान्य कानून ही सर्वोपरि है और देश की सरकार को स्वेच्छाचार या मनमानी करने का अधिकार नहीं है। किसी भी मनुष्य को, बिना कानून भङ्ग का अपराधी सिद्ध हुए, दंड नहीं दिया जा सकता। यह व्यवस्था उस व्यवस्था से सर्वथा भिन्न है जो बहुत से यूरोपीय देशों में प्रचलित है। उक्त देशों में शासनाधिकारियों को सुविस्तृत विवेक-निर्भर अधिकार (discretionary powers) प्राप्त हैं जिनके प्रयोग द्वारा वे लोगों को केवल सन्देह के आधार पर गिरफ्तार कर कुछ समय तक बन्दी रख, अथवा देश से निर्वासित

कर सकते हैं। भारत में भी नये शासन विधान द्वारा सरकार को इस प्रकार के अधिकार दिये गये हैं। परन्तु ब्रिटेन में केवल सन्देह के आधार पर यह सब नहीं किया जा सकता। किसी को दण्ड तभी मिल सकता है जब उस पर मुकदमा चला कर न्यायालयों में उसका अपराध प्रमाणित कर दिया जाय।

(ख) विधि राज्य का दूसरा अर्थ यह है कि देश के छोटे-बड़े सरकारी कर्मचारी और गैर सरकारी लोग सभी एक ही कानून और एक ही प्रकार के न्यायालयों के अधीन हैं। देश का सामान्य कानून ही सब पर लागू होता है और सामान्य-न्यायालयों ही के सामने सबके मुकदमे जाते हैं। यहाँ किसी भी बड़े व्यक्ति या समुदाय के लिए विशेष प्रकार के कानूनों अथवा न्यायालयों की व्यवस्था नहीं है। संक्षेप में यों कहा जा सकता है कि ब्रिटेन में कानून की दृष्टि में सभी बराबर हैं। इस विषय में भी यूरोपीय देशों की व्यवस्था ब्रिटेन से भिन्न है। उदाहरणार्थ फ्रांस में नागरिकों के आपस के मुकदमे तो साधारण न्यायालयों के सामने जाते और देश के साधारण कानून के अनुसार निर्णय होते हैं, पर यदि कोई मुकदमा किसी नागरिक और सरकार या सरकारी अफसर के बीच हो, तो यह एक विशेष प्रकार के न्यायालयों के पास जाता है और उसका निर्णय एक विशेष प्रकार के कानून द्वारा होता है। इस विशेष प्रकार के कानून और न्यायालयों को क्रम से प्रशासन-कानून (Administrative Law or Droit Administrative) और प्रशासन सम्बन्धी न्यायालय (Administrative Courts) कहा जाता है। डायसी का अभिप्राय यह है कि फ्रांस सरीखे देशों में ब्रिटेन के समान सभी के लिए कानून और न्यायालय विषयक समानता नहीं है और शासन कानून और शासन सम्बन्धी न्यायालयों के द्वारा सरकार और उसके अफसरों के साथ पक्षपात होने की सम्भावना रहती है।

(ग) विधि राज्य का तीसरा अर्थ यह है कि ब्रिटेन में नागरिकों के अधिकार संविधान द्वारा नियमित न होकर स्वयं संविधान ही उनके अधिकारों द्वारा नियमित हुआ है। बहुत से अन्य देशों जैसे अमरीका और भारत में नागरिकों के मौलिक अधिकार संविधान में लिखे हैं अर्थात् इन देशों में नागरिकों के मौलिक अधिकारों की जड़ संविधान में है। संविधान पहले है और नागरिक अधिकार उसके बाद अथवा उससे उत्पन्न है। पर ब्रिटेन का क्रम इसका उलटा है। यहाँ नागरिकों के अधिकार परम्परा द्वारा पहिले निश्चित हो गये और फिर उन्हीं अधिकारों की रक्षा विषयक नियमों (remedies) के समूह से संविधान बना। ब्रिटेन में प्राथमिकता नागरिक अधिकारों की है, न कि संविधान की। यहाँ नागरिक अधिकारों की जड़ संविधान में न होकर स्वयं संविधान ही की जड़ नागरिक अधिकारों में है। इससे यह ध्वनि निक-

अध्याय ३

ब्रिटिश सम्राट[1]

[उत्तराधिकार के नियम—ब्रिटिश सम्राट के अधिकार—व्यक्तिगत अधिकार—सम्राट के सार्वजनिक अधिकार—कानून निर्माण-सम्बन्धी अधिकार—शासन सम्बन्धी अधिकार—न्याय सम्बन्धी अधिकार—सम्राट और साम्राज्य—सम्राट की वास्तविक स्थिति—सम्राट की लोकप्रियता—ब्रिटेन में सम्राट-पद की स्थिरता के कारण—सम्राट पद की वामपक्षीय आलोचना—लास्की की आलोचना का मूल्याङ्कन]

उत्तराधिकार के नियम—वैधानिक दृष्टि से ब्रिटेन में आज भी राजतन्त्र ही है। सम्राट-पद के उत्तराधिकार के नियमों में वंशक्रमानुगत व्यवस्था और निर्वाचन के सिद्धान्तों का सम्मिश्रण है अर्थात् साधारणतया तो यही नियम है सम्राट के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र सिंहासनारूढ़ हो, पर यदि किसी राजवंश का अन्त हो जाने या किसी कारण से उसके अवाञ्छनीय हो जाने के कारण दूसरा राजवंश चुनना हो तो यह कार्य पार्लमेंट करती है, जैसा कि उसने १६८८ में स्टुअर्ट वंश के जेम्स द्वितीय को हटा कर और सम्राट विलियम और सम्राज्ञी मेरी को राजपदस्थ करके किया था।

सम्राट पद के उत्तराधिकार के वर्तमान नियम सन् १७०१ के ऐक्ट आफ सेटिलमेंट (Act of Settlement) द्वारा निश्चित किये गये थे। उस समय परिस्थिति यह थी। तत्कालीन सम्राट विलियम तृतीय और सम्राज्ञी मेरी के कोई सन्तान न थी। उनके बाद मेरी की बहिन ऐन उत्तराधिकारिणी थी, परन्तु उसके भी सन्तान होने की कोई सम्भावना न थी। अतः इस ऐक्ट द्वारा यह व्यवस्था की गई कि विलियम तृतीय और सम्राज्ञी ऐन के सन्तान के अभाव में राजकुमारी सोफिया और उसके उत्तराधिकारियों को (यदि वे प्रोटेस्टैण्ट मतानुयायी हों) राजसिंहासन प्राप्त होगा। राजकुमारी सोफिया सम्राट जेम्स प्रथम की दौहित्री थी और जर्मनी में स्थित हैनोवर नामक राज्य के राजा या इलेक्टर (Elector) की विधवा रानी थी। १७०१ ई० में वंश परम्परा के अनुसार उसका प्रथम स्थान न था, पर जो राजवंशी प्राथमिकता में उससे आगे थे वे कैथलिक थे, और बिल आफ राइट्स के अनुसार कोई कैथलिक सिंहासनारूढ़ हो नहीं सकता था। राजकुमारी सोफिया प्रोटेस्टैण्ट राजवंशियों में सर्वप्रथम थीं। १७१४ ई० में सम्राज्ञी ऐन की मृत्यु के बाद सिंहासन जब खाली हुआ तो राजकुमारी सोफिया मर चुकी थी। अतः उसका बड़ा पुत्र जार्ज प्रथम के

---

[1] इस अध्याय में सुविधा के लिए सर्वत्र 'सम्राट' शब्द का ही प्रयोग किया गया है, परन्तु आजकल ब्रिटेन में सम्राज्ञी एलिजाबेथ द्वितीय सिंहासनारूढ़ हैं। अतः सम्राट शब्द से सम्राज्ञी का भी अर्थ लेना चाहिये।

नाम से राजा हुआ। तब से वही राजवंश चला आता है। वर्तमान सम्राज्ञी एलिजाबेथ इस वंश की ग्यारहवीं उत्तराधिकारिणी हैं। हैनोवर से आने के कारण प्रथम महायुद्ध तक इसका नाम हैनोवर का वंश था, पर उक्त युद्ध में जर्मनी के प्रधान शत्रु होने के कारण यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि राजवंश का जर्मन नाम न रहे। अतः १९१७ ई० में वह बदल कर विंडसर वंश (House of Windsor) कर दिया गया।

१८३७ तक ब्रिटेन और हैनोवर में वैयक्तिक संघ (Personal union) था अर्थात् ब्रिटेन का राजा ही हैनोवर का भी राजा होता था, पर उक्त वर्ष में सम्राज्ञी विक्टोरिया के सिंहासनारूढ़ होने पर इस सम्बन्ध का विच्छेद हो गया, क्योंकि हैनोवर के नियमानुसार कोई स्त्री उसके सिंहासन की अधिकारिणी न हो सकती थी।

अस्तु, वर्तमान उत्तराधिकार-नियमों के अनुसार सम्राट् के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र राजा होता है। यदि वह ज्येष्ठ पुत्र मृत हो चुका हो और उसके लड़के हों तो उनमें जो सबसे बड़ा होगा वह राजा होगा। यदि उसके लड़के न हों, किन्तु लड़की हो तो वही रानी होगी। यदि वह निःसन्तान मरा हो, तो फिर उसका छोटा भाई अथवा उसकी सन्तान को गद्दी मिलेगी। इसी प्रकार आगे की भी उत्तराधिकार परम्परा समझनी चाहिये। यह ज्येष्ठाधिकार नियम (Rule of Primogeniture) कहलाता है। इसकी मुख्य बातें दो हैं अर्थात् (१) कनिष्ठ के मुकाबले में ज्येष्ठ का और (२) कन्या के मुकाबले में पुत्र का अधिकार प्रबल होता है। यह पहले ही बतलाया जा चुका है कि कोई कैथलिक मतानुयायी या कैथलिक से विवाहित व्यक्ति सम्राट् (या सम्राज्ञी) नहीं हो सकता। १९१० ई० तक सिंहासनारूढ़ होने पर सम्राट् को कैथलिक मत के परित्याग की शपथ लेनी पड़ती थी, परन्तु अब वह प्रथा जाती रही। १९३७ ई० में जब सम्राट् छठे जार्ज गद्दी पर बैठे तो उन्हें केवल यही कहना पड़ा था कि वे प्रोटेस्टैण्ट मत की रक्षा करेंगे, अँग्रेजी चर्च (धर्म) विषयक व्यवस्था, उसके सिद्धान्तों, और उपासना पद्धति को बनाये रक्खेंगे और पादरियों और बिशपों के विधिसङ्गत अधिकारों की रक्षा करेंगे।

पार्लमेंट को उत्तराधिकार के इन नियमों में परिवर्तन करने का अधिकार है, परन्तु १९३१ ई० के स्टैट्यूट आफ वेस्टमिन्स्टर (Statute of Westminster) के अनुसार सम्राट् के उत्तराधिकार नियमों या उपाधियों में परिवर्तन करने वाले कानून के लिये ब्रिटेन की पार्लमेंट के अतिरिक्त ब्रिटेन के स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों (Dominions) के विधान मंडलों की स्वीकृति भी आवश्यक है। १९३६ ई० में सम्राट् ऐडवर्ड अष्टम के पदत्याग की व्यवस्था करने वाला (Abdication Act) कानून इन सबकी सम्मति से ही बना था।

सम्राट् के लिए वयस्कता की आयु १८ वर्ष है। यदि वह अवयस्क हो तो

पार्लमेंट उसके वयस्क होने तक राज्य-संचालन के लिए संरक्षकता (Regency) की व्यवस्था करती है। रीजेन्सी ऐक्ट १९३७ और १९४३ द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि अवयस्क सम्राट् का सबसे निकट का वयस्क उत्तराधिकारी संरक्षक बनाया जाय। सम्राट् की शारीरिक या मानसिक अस्वस्थता के समय भी संरक्षक नियुक्त किया जाता है। यदि सम्राट् और संरक्षक दोनों ही कार्य संचालन के लिये अनुपयुक्त हों, तो ५ राजकीय परामर्श-दाताओं की समिति संरक्षता के कार्य को करती है।

ब्रिटिश सम्राट् के अधिकार—ब्रिटिश सम्राट् के अधिकारों के दो विभाग किये जा सकते हैं अर्थात् (१) व्यक्तिगत अधिकार और विमुक्तियाँ और (२) सार्वजनिक अधिकार।

व्यक्तिगत अधिकार—सम्राट् को कई व्यक्तिगत अधिकार और छूटें प्राप्त हैं। उनके किसी भी निजी आचरण के लिए उन पर किसी न्यायालय में किसी भी प्रकार से मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। न उन्हें गिरफ्तार किया जा सकता है और न उनका कोई माल-असबाब कुर्क या जब्त हो सकता है। किसी भी मकान या महल में जब तक सम्राट् उपस्थित रहते हैं, तब तक उसमें किसी प्रकार की अदालती कार्रवाई (जैसे डिक्री जारी करना आदि) नहीं की जा सकती।

राजा को सम्पत्ति प्राप्त करने, उसका प्रबन्ध करने, तथा उसे दे या बेच डालने का वैसा ही अधिकार है जैसा साधारण व्यक्तियों को। पहले सम्राट् के पास बड़ी-बड़ी जमींदारियाँ या रियासतें थीं जिनकी आमदनी से वह स्वयं अपना और राज्य का भी साधारण खर्च चलाता था। १६८८ ई० की क्रान्ति के बाद सम्राट् की व्यक्तिगत वृत्ति (Privy purse) और राज्यकोष में अन्तर किया जाने लगा। धीरे-धीरे पार्लमेंट ने सम्राट की जमींदारियाँ ले ली और उनकी आमदनी के बदले प्रतिवर्ष एक निश्चित रकम देना प्रारम्भ किया जिससे राजा अपना खर्च चलावे और राजकीय कर्मचारियों का वेतन आदि भी दे। इस रकम में सरकारी अफसरों का वेतन भी सम्मिलित रहने के कारण इनका नाम 'सिविल-लिस्ट' (Civil List)[१] पड़ा। बाद में सरकारी अफसरों के वेतन इससे अलग कर दिये गये और केवल सम्राट् और उनके निजी भृत्यों का व्यय रह गया; परन्तु इसका वही पुराना नाम 'सिविल-लिस्ट' अब भी बना है। प्रत्येक सम्राट् के राज्यकाल में प्रारम्भ में पार्लमेंट निश्चित करती है कि उसे वार्षिक कितना धन सिविल लिस्ट के रूप में दिया जायगा।

---

[१] सिविल लिस्ट राज्य के प्रधान वेतन भोगी कर्मचारियों की सूची को कहते हैं। इसमें सैनिक अफसर नहीं सम्मिलित रहते। इसी कारण इसे 'सिविल' कहते हैं।

१९५३ ई० के कानून के अनुसार वर्तमान सम्राज्ञी एलिजाबेथ द्वितीय की आर्थिक वृत्ति (civil list) नीचे लिखे अनुसार है:—

निजी वृत्ति (Privy purse)	६०, ००० पौंड
पारिवारिक वेतन (Salaries of Household)	१,८५,००० ,,
पारिवारिक व्यय (Expenses of Household)	१,२१,८०० ,,
दानादि (Bounty and Alms)	१३,२०० ,,
पूरक व्यवस्थायें (Supplementary provisions)	९५,००० ,,
योग	४,७५,,००० पौंड

इसके अतिरिक्त राज-कुटुम्ब के प्रमुख व्यक्तियों के लिए पृथक् निजी वृत्तियाँ भी हैं।

सम्राट् के सार्वजनिक अधिकार—सम्राट् के सार्वजनिक अधिकार राज्य कार्य से सम्बन्ध रखते हैं। इन अधिकारों के दो आधार हैं—(१) परम्परागत प्रथा, और (२) पार्लमेंट के बनाये कानून।

सम्राट् के परम्परा-सिद्ध अधिकारों को अँग्रेजी भाषा में 'प्रेरोगेटिव' कहते हैं। इस शब्द का हिन्दी समानार्थक बतलाना कठिन है और 'परम्परागत अधिकार' शब्द 'प्रेरोगेटिव' शब्द के अर्थ के एक पहलू को ही प्रकट करता है। पर इसे हम यों समझ सकते हैं कि प्राचीन काल में ब्रिटिश सम्राट् के हाथ में पूर्ण सत्ता थी और वह लगभग निरंकुश शासक था। क्रमशः अनेक ऐतिहासिक समझौतों और पार्लमेंट के बनाये कानूनों द्वारा ये अधिकार उत्तरोत्तर कम होते गये; पर आज भी वे पूर्णतः लुप्त नहीं हुए हैं। उनमें कुछ बच रहे हैं। सम्राट् के प्राचीन अधिकारों के इस अवशिष्ट भाग को ही प्रेरोगेटिव या परम्परा-सिद्ध अधिकार कहते हैं। इन अधिकारों के उपयोग के विषय में सम्राट् कानून द्वारा जकड़ा नहीं है, किन्तु अपने विवेकानुसार कार्य कर सकता है। इसीलिए 'प्रेरोगेटिव' न केवल परम्परा-सिद्ध अधिकार है किन्तु वे सम्राट् के विवेक पर भी निर्भर हैं। डायसी का कहना है कि प्रेरोगेटिव का अभिप्राय 'विवेक-निर्भर अधिकारों के उस अवशिष्ट भाग से है जो किसी समय कानून के अनुसार राजा के हाथों में बच रहा है।'[१] सर विलियम ऐन्सन ने (Anson) इन विवेक-निर्भर परम्परा-सिद्ध अधिकारों के तीन उद्गम-स्थान बतलाये हैं :—(१) प्रारम्भ में राज्य के सभी विभागों में सम्राट् के जो शासनाधिकार थे उनका शेष बचा हुआ भाग,

[१] Prerogative is 'the residue of discretionary or arbitrary authority which at any time is legally left into the hands of the crown'—Dicey.

(२) मध्य युग में सम्राट् जो सामन्त-प्रथागत अधिकार थे उनका अवशिष्टांश, और (३) कानूनी सिद्धान्तों द्वारा आरोपित कुछ विशेषतायें जैसे सम्राट् पद का शाश्वत होना अथवा यह सिद्धान्त कि सम्राट् गलती या अपराध नहीं कर सकता।[१]

सम्राट के अधिकारों का दूसरा आधार पार्लमेंट द्वारा निर्मित कानून है। यदि एक ओर राजा के परम्परा-सिद्ध अधिकार कम होते गये हैं; तो दूसरी ओर उसके कानून-प्रदत्त अधिकार बढ़ते जा रहे हैं। पार्लमेंट द्वारा बनाया गया प्रत्येक नया कानून राजा के कर्तव्यों और अधिकारों में वृद्धि करता ही जाता है, क्योंकि प्रत्येक कानून को कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व सम्राट पर ही है। यदि पार्लमेंट आज प्रधान उद्योगों के राष्ट्रीकरण का कानून पास करती है तो उसका यह अर्थ होता है कि इन उद्योगों के प्रबन्ध का भार और अधिकार राजा के हाथों में आ जाता है।

अस्तु, सम्राट के सार्वजनिक अधिकार, उनका उद्गम स्थान चाहे जो कुछ हो, तीन प्रकार के हैं अर्थात् (१) कानून-निर्माण सम्बन्धी, (२) शासन सम्बन्धी, और (३) न्याय सम्बन्धी। कानून निर्माण, शासन और न्याय - राज्य के कार्यों के यही तीन मुख्य भेद या प्रकार हैं और सम्राट को इन तीनों ही के विषय में अधिकार प्राप्त हैं।

सम्राट् के कानून निर्माण सम्बन्धी अधिकार—कानून बनाने का अधिकार सम्राट सहित पार्लमेंट को है। पार्लमेंट के दोनों सदनों से पारित विधेयक सम्राट की स्वीकृति पाने के उपरान्त ही कानून बनता है, अन्यथा नहीं। स्वीकृति न देकर किसी विधेयक को कानून बनाने से रोक देना सम्राट का 'निषेधाधिकार' (Power of veto) कहलाता है। सम्राट पार्लमेंट के अधिवेशनों को बुलाता और विसर्जित करता है। वह किसी समय भी पार्लमेंट का विघटन करके नये चुनाव की आज्ञा दे सकता है। सम्राट को स्वतः कानून बनाने का अधिकार नहीं हैं, परन्तु राजकीय उपनिवेशों (Crown colonies) के लिये वह कानून बना सकता है। स्वयं ब्रिटेन के लिये भी वह अधिनियम या आर्डर्स-काउन्सिल प्रचलित कर सकता है, पर कानून की भाँति ही लागू होने पर भी, यथार्थतः वे कानून नहीं हैं। ये अधिनियम दो प्रकार के होते हैं। इनमें से एक तो सरकारी कार्यवाही के नियम निर्धारित करते हैं जैसे सिविल सर्विस कमीशन द्वारा ली जानेवाली परीक्षाओं के नियम। दूसरे प्रकार के अधिनियम् 'स्टैट्यूटरी आर्डर्स' (Statutory orders) कहलाते हैं। ये

[१]कानूनी सिद्धान्त के अनुसार राज-सत्ता अमर और निर्दोष है। ब्रिटेन में राजा के मरने पर कहते कि 'राजा का स्वर्गवास हुआ, राजा चिरंजीवी हो', (The King is dead. Long live the King) अर्थात् व्यक्ति विशेष राजा मर गये पर राजतन्त्र की संस्था चिरंजीव बनी रहे। इसी प्रकार कानून की दृष्टि में राजा अपराध या दोष से परे हैं। (The King can do no wrong)

वास्तव में कानून ही हैं, पर सम्राट और उसकी काउन्सिल पार्लमेंट द्वारा दिये हुए अधिकार के अन्तर्गत ही इन्हें बनाते हैं, अपने स्वतन्त्र अधिकार से नहीं।

शासन सम्बन्धी अधिकार—सम्राट के शासन सम्बन्धी अथवा कार्यकारी अधिकार निम्नलिखित हैं :—

(१) सभी कानूनों को कार्यान्वित करने, शासन का संचालन करने और उसकी देख-रेख करने का अधिकार,

(२) पार्लमेंट के कुछ कर्मचारियों को छोड़कर राज्य के सभी कर्मचारियों की नियुक्ति का अधिकार और न्यायाधीशों और कम्पट्रोलर तथा आडिटर जनरल (Comptroller and Auditor-General) के अतिरिक्त सभी कर्मचारियों को पद-च्युत करने का अधिकार,

(३) पार्लमेंट द्वारा निश्चित करों को वसूल करने और व्यय करने का अधिकार,

(४) कम्पनियों और संघों के सङ्गठन के लिए आज्ञापत्र (Charters of Incorporation) देने का अधिकार,

(५) चर्च के पादरियों व कर्मचारियों को नियुक्त करने तथा धार्मिक सभाओं के अधिवेशन (Convocation) करने का अधिकार,

(६) सब प्रकार की उपाधियों और सम्मान प्रदान करने, विशेषतः लार्ड (Lord) बनाने का अधिकार।

(७) स्थल, जल तथा वायु-सेना के सर्वोच्च सेनापतित्व का अधिकार,

(८) परराष्ट्र-सम्बन्ध के संचालन तथा उससे सम्बन्धित अन्य बातों के करने का अधिकार जैसे विदेशों में राजदूत भेजना, अन्य देशों से आये राजदूतों को स्वीकार करना, सन्धि करना और युद्ध तथा शान्ति की घोषणा करना।

न्याय सम्बन्धी अधिकार—सम्राट् ही न्याय का भी स्रोत है। न्याय सम्बन्धी सभी कार्रवाई सम्राट ही के नाम से की जाती है जैसे फौजदारी मुकदमों में लिखा जाता है कि सम्राट् बनाम अमुक (Rex vs. so and so) न्यायालय सम्राट् के न्यायालय कहे जाते हैं। सम्राट् को अपराधियों को क्षमा करने का अधिकार है। वह स्वयं कानून के ऊपर है, और किसी अपराध का भागी नहीं हो सकता (The King can do no wrong)।

सम्राट् और साम्राज्य—ब्रिटिश सम्राट् न केवल ब्रिटेन किन्तु कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका, पाकिस्तान आदि स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशों का भी सम्राट् है। भारत यद्यपि अब स्वतंत्र है, पर वह भी इन देशों से मिलकर बने हुए 'कामनवेल्थ' नामक राज्यसमूह का सदस्य है और इस नाते ब्रिटिश-सम्राट् की प्रभुसत्ता को प्रतीक रूप में स्वीकार करता है।

सम्राट की वास्तविक स्थिति—ऊपर हम जिन सार्वजनिक अधिकारों का वर्णन कर आये हैं, कानून के दृष्टिकोण से वे सभी सम्राट् को प्राप्त हैं पर सम्राट स्वयं व्यक्तिगत रूप से उनका उपयोग या प्रयोग नहीं कर सकता। इन अधिकारों का प्रयोग उसे मंत्रिमंडल के परामर्शानुसार ही करना पड़ता है। यह ब्रिटिश संविधान की एक आधार-भूत प्रथा है। वास्तव में राजा और राजत्व में भेद है। ये अधिकार राजा के निजी अधिकार न होकर राजत्व या क्राउन (Crown) के अधिकार हैं।

राजत्व अथवा क्राउन का क्या अर्थ है? 'क्राउन' का शाब्दिक अर्थ राजमुकुट है जो कि राजत्व का प्रतीक है। सिडनी लो (Sidney Low) नामक लेखक ने कहा है कि क्राउन अथवा राजत्व कोई मूर्त वस्तु न होकर केवल "एक सुविधाजनक और कामचलाऊ कल्पना (A convenient working hypothesis) है।" साधारण भाषा में हम यों कह सकते हैं कि राजत्व का अर्थ है राज्य की सर्वोच्च कार्य-कारिणी संस्था अथवा कार्यपालिका। किसी समय यह सर्वोच्च कार्यपालिका अकेले सम्राट् ही से बनी थी, पर अब उसमें मुख्यतः मंत्रिमंडल का और गौण रूप से सम्राट का समावेश होता है। आजकल केवल सम्राट किसी भी सार्वजनिक अधिकार का उपयोग नहीं कर सकता। उसे सभी काम मंत्रियों की राय से ही करने पड़ते हैं। सम्राट के तथाकथित अधिकार वास्तव में अब मंत्रियों ही के अधिकार हैं और वे ही सम्राट के नाम से इनका प्रयोग करते हैं। इसका कारण यह है कि स्वयं राजा अपने किसी भी कार्य के लिए उत्तरदायी नहीं है। उसके नाम से किये जाने वाले प्रत्येक कार्य के लिए मंत्री लोग पार्लमेंट के सामने उत्तरदायी होते हैं। यह स्पष्ट ही है कि कोई भी व्यक्ति किसी अन्य के कार्य का उत्तरदायित्व अपने ऊपर नहीं ले सकता। अतएव यदि मंत्री सम्राट् के कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं तो निश्चय ही वे यह चाहेंगे कि राजा सब कुछ उन्हीं की राय से करे और अपने मन से कुछ भी न करे। यही हुआ भी है। सम्राट केवल वही करता है जो उसके मंत्री उससे करने को कहते हैं।

अब हम इस वास्तविकता को लक्ष्य में रखकर सम्राट के पूर्ववर्णित अधिकारों पर पुनः दृष्टि डालेंगे कि उसकी व्यावहारिक स्थिति क्या है।

जहाँ तक सम्राट के कानून-निर्माण सम्बन्धी अधिकारों की बात है, वे नगण्य से हैं। राजा को नाममात्र ही के लिए पार्लमेंट का अधिवेशन बुलाने अथवा विसर्जित करने का अधिकार है। वार्षिक आय-व्यय के लेखे (budget) को मंजूर करने और सैनिक अनुशासन की व्यवस्था करने के लिए पार्लमेंट का प्रति वर्ष बुलाना अनिवार्य है। पार्लमेंट की ५ वर्ष की अवधि कानून द्वारा (पार्लमेंट ऐक्ट १९११) ही निश्चित है, और अधिवेशनों का विस्तार-काल पार्लमेंट स्वयं ही निश्चित करती है। पार्लमेंट

समय से पूर्व तभी भंग होती है जब प्रधान मंत्री इसके लिए अनुरोध करे, अन्यथा नहीं। संक्षेप में, इन बातों के करने या न करने में सम्राट की इच्छा या अनिच्छा के लिए कोई स्थान ही नहीं है। पार्लमेंट अपना सब कार्य अपनी इच्छा के अनुसार करती है, उसकी कार्यवाही के बीच में तो सम्राट की इच्छा का संकेत करना भी निषिद्ध है।

कानून पर सम्राट की स्वीकृति आवश्यक है, पर साधारणतया यह कहा जाता है कि अब स्वीकृति न देने का सम्राट का निषेधाधिकार (Veto) लुप्त हो गया है। इसका अन्तिम प्रयोग १७०७ ई० में सम्राज्ञी ऐन ने किया था। दो सौ वर्षों से अधिक समय से काम में न आने के कारण कहा जाता है कि अब इस अधिकार का सम्राट द्वारा प्रयोग संवैधानिक प्रथा के विरुद्ध होगा। यह विषय बहुत ही विवाद-ग्रस्त है और निश्चयात्मक रूप से यह कहना कि निषेधाधिकार अब मृत हो गया है कठिन है। कारण यह है कि समय-समय पर सम्राटों और मंत्रियों ने ऐसी बातें कही हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि निषेधाधिकार का अब भी प्रयोग असम्भव नहीं है। उदाहरणार्थ १८५६ ई० में सम्राज्ञी विक्टोरिया ने यह धमकी दी थी कि यदि सम्राज्ञी की सेना से पृथक् सेना बनाने का कानून पास हुआ तो वह स्वीकृति न देगी। आयरलैंड का स्वराज्य-विधेयक जब १९१३-१४ में पार्लमेंट द्वारा पारित होने के निकट था तो अनुदार दल के लोग खुले तौर से कहते थे कि सम्राट को इस कानून पर अपनी स्वीकृति नहीं देनी चाहिये। यह निश्चित है कि साधारण परिस्थितियों में सम्राट द्वारा निषेधाधिकार का प्रयोग राजतंत्र को ही खतरे में डाल देगा, परन्तु राजनैतिक दलों में तीव्र विवाद और मतभेद के समय में हो सकता है कि सम्राट पर इसे प्रयोग करने का दबाव डाला जाय। ऐसा करने का परिणाम परिस्थितियों पर निर्भर है। अवैधानिक कार्य भी सफल होने पर परम वैधानिक समझ लिया जाता है।

कानून-निर्माण विषयक अधिकारों ही की भाँति सम्राट के शासन सम्बन्धी अधिकारों का भी हाल है। शासन का संचालन वास्तव में मंत्रियों द्वारा होता है। अधिकांश पदों की नियुक्तियाँ सिविल सर्विस कमीशन की राय द्वारा होती हैं और जो थोड़े से ऊँचे पद इस प्रकार नहीं भरे जा सकते, उनकी नियुक्तियाँ प्रधान मंत्री और अन्य मंत्री करते हैं। स्वयं मंत्रियों की भी नियुक्ति सम्राट अपनी इच्छानुसार नहीं कर सकता क्योंकि वह राजनैतिक दलों की परिस्थिति पर निर्भर है। अन्य शासनाधिकारों का भी यही हाल है। परन्तु यह कहना कि सम्राट शासन विषयों में एकदम शून्यवत है, भूल होगी। विगत सम्राटों और उनके मन्त्रियों आदि के जीवन-चरित्रों से यह ज्ञात होता है कि राजा एकदम प्रभाव-शून्य नहीं है। सम्राज्ञी विक्टोरिया के पति प्रिन्स अलबर्ट का सिद्धान्त था कि ब्रिटिश राज्य-व्यवस्था में सम्राट का एक विशिष्ट स्थान है। मन्त्री किसी दल-विशेष के होते हैं और समय-समय पर

पदासीन और पद-भ्रष्ट होते रहते हैं, पर राजा सभी दलों के ऊपर है और अपने पद पर आजीवन बना रहता है; इस कारण निष्पक्षता और राजकीय विषयों की जानकारी में उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। अतः उसे मन्त्रियों के कार्यों पर दृष्टि रखने, आलोचना करने, उचित सुझाव देने आदि का अधिकार होना ही चाहिये। सम्राज्ञी विक्टोरिया ने आजीवन इसी सिद्धान्त के अनुसार चलने की चेष्टा की। पर-राष्ट्र-नीति में उन्हें विशेष दिलचस्पी थी और उनका एक विशेष दृष्टिकोण भी था। स्पेन, जर्मनी और रूस के राजवंशों में उनकी कन्याएँ ब्याही थीं। अतः वे स्वभावतः यह चाहती थीं कि इंगलैन्ड और इन देशों में विरोध न हो। जब कोई पर-राष्ट्र-मन्त्री उनकी इस इच्छा के विरुद्ध जाना चाहता तो वे रोकती थीं। ऐसी ही बातों को लेकर उनमें और सुप्रसिद्ध ब्रिटिश पर-राष्ट्र-सचिव लार्ड पामर्स्टन में कई बार मतभेद हुआ। विक्टोरिया मन्त्रियों की नियुक्ति में भी अपनी इच्छा मान्य कराने का प्रयत्न करती थीं। उनके उत्तराधिकारी एडवर्ड अष्टम ने इंगलैंड और फ्रांस तथा रूस के बीच मैत्र्य-सन्धि कराने में प्रमुख भाग लिया था। जार्ज पञ्चम के विषय में भी यह प्रसिद्ध है कि आयरलैंड के साथ १९२२ ई० में समझौता कराने में उनका प्रभाव कार्यशील था। सुना तो यहाँ तक जाता है कि आयरलैंड में जो दमनचक्र चल रहा था उससे क्षुब्ध होकर उन्होंने प्रधान मन्त्री लायड जार्ज से कहा कि मेरी आयरलैंड की प्रजा का विनाश बन्द करो। यह सच हो या न हो, परन्तु जार्ज पञ्चम की आयरलैंड के साथ सहानुभूति सर्वविदित है। १९३१ ई० में इंगलैंड में 'राष्ट्रीय-सरकार' उन्हीं की प्रेरणा से स्थापित हुई। उनके पुत्र एडवर्ड अष्टम थोड़े ही समय राजा रहे, परन्तु अपनी प्रजा के दीन वर्गों के प्रति सहानुभूति के कारण लोग उन्हें 'लोक-सम्राट' (People's king) कहने लगे थे। इन सब से प्रकट होता है कि सम्राट का देश के शासन पर प्रभाव नगण्य नहीं है।

न्याय की समस्त कार्यवाही राजा के नाम से होती है, पर इसका यह अर्थ न समझना चाहिये कि वह न्याय में किसी प्रकार का हस्तक्षेप कर सकता है। सम्राज्ञी विक्टोरिया जब-तब न्यायालयों के निर्णयों की भी आलोचना करती थीं कि वे आवश्यकता से अधिक कठोर अथवा दयापूर्ण थे। एक बार जब एक व्यक्ति जो उनकी हत्या करने के प्रयत्न में पकड़ा गया था, न्यायालय द्वारा पागल करार देकर छोड़ दिया गया, तो वे बहुत अप्रसन्न भी हुई थीं। पर इससे अधिक वे कुछ नहीं कर सकीं। सम्राट को अपराधियों को क्षमा प्रदान करने का अधिकार है, पर इसका भी प्रयोग वे गृहमन्त्री (Home Secretary) के परामर्शानुसार ही करते हैं। इसका विशद स्पष्टीकरण १९२० ई० में हुआ। उस समय आयरलैंड का स्वातन्त्र्य-आन्दोलन चल रहा था और सुप्रसिद्ध आइरिश देश-भक्त मैकस्विनी जेल में भूख-हड़ताल कर रहे थे। वे जब मुमूर्षु दशा को

पहुँच गये तो कई प्रभावशाली व्यक्तियों ने सम्राट से क्षमा-प्रार्थना द्वारा उन्हें मुक्त करा के उनका जीवन बचाना चाहा। कुछ ऐसी बातें कही गईं जिनसे यह भ्रम फैला कि सम्राट क्षमाधिकार का प्रयोग अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं। इस पर सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ बालफोर (Mr. Balfour) ने 'टाइम्स' में एक पत्र प्रकाशित करके स्थिति को स्पष्ट किया कि क्षमाधिकार का प्रयोग मन्त्रियों के परामर्शानुसार ही होता है और उसमें भूल-चूक हो तो उसके लिये मन्त्री ही उत्तरदायी भी होते हैं।

इन सब बातों का निष्कर्ष यह निकला कि वैधानिक नियमों और कानूनों के अनुसार आजदिन ब्रिटिश सम्राट अपने कानून-वर्णित अधिकारों का प्रयोग नहीं कर सकता। वे अधिकार मन्त्रियों के परामर्शानुसार अथवा, सीधी भाषा में कहा जाय, तो मंत्रियों द्वारा ही प्रयुक्त होते हैं। पर यह सब होते हुए भी सम्राट् का राज्य कार्यों पर कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पड़ता है। इस प्रभाव का मूल क्या है?

ब्रिटिश संविधान के, वास्तविकता की दृष्टि से, प्रथम व्याख्याता बेगॉट, (Bagehot) का कहना है कि सम्राट को आज भी तीन अधिकार प्राप्त हैं। वे हैं: राज्यकार्यों में राय देने का अधिकार, उचित कार्यों में प्रोत्साहन देने का अधिकार, और अनुचित कार्य में चेतावनी देने का अधिकार। बेगॉट के मतानुसार किसी बुद्धिमान सम्राट् के लिए इनके अतिरिक्त अन्य किसी अधिकार की आवश्यकता ही नहीं है।

यह बात एक प्रकार से ठीक ही है। मंत्रियों का यह कर्तव्य है कि वे अपने सभी निर्णयों पर सम्राट् की स्वीकृति और हस्ताक्षर लें। किसी भी निर्णय पर हस्ताक्षर करने के पहले सम्राट् मंत्री से उसका स्पष्टीकरण और कारण माँग सकता है, और अन्य प्रकार से निर्णय करने का सुझाव उपस्थित कर सकता है। यदि राजा वयोवृद्ध और अनुभवी हुआ, तो मन्त्री सहसा उसकी बात की उपेक्षा नहीं कर सकता। राजा का उच्च पद, वंश-गौरव, लोकप्रियता आदि बातें मंत्री पर प्रभाव डालती ही हैं। अतः बुद्धिमान और अनुभवी राजा के लिए मन्त्रियों के निर्णयों में थोड़ा-बहुत परिवर्तन करा लेना असम्भव नहीं है। पर इस बात को आवश्यकता से अधिक महत्व नहीं देना चाहिये। अन्तिम बात यही है कि मंत्री यदि अपना निर्णय न बदले, तो राजा उसे बाध्य नहीं कर सकता। आज दिन राजा और मंत्रियों के प्राचीन सम्बन्ध का विपर्यय (उल्टा) हो गया है। पहले मन्त्री लोग सलाह दिया करते थे और राजा निर्णय करता था; आज राजा का काम सलाह देना मात्र रह गया है और निर्णय मंत्रियों के हाथ में है।

ब्रिटिश सम्राट की लोक-प्रियता—इस प्रजातंत्र के युग में भी ब्रिटेन में सम्राट्-पद बड़ा ही लोक-प्रिय है। यह बात थोड़े ही समय से हुई है। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और उन्नीसवीं के पूर्वार्ध में तो यह हाल था कि जब जार्ज तृतीय, जार्ज चतुर्थ अथवा विलियम चतुर्थ सरीखे सम्राट् लन्दन की गलियों में निकलते थे तो उन

कारण सम्राट् का उच्चपद, प्राचीन वंश तथा उसका सभी प्रकार के हस्तक्षेप से तटस्थ रहना है। अतः आज सम्राट् ब्रिटिश साम्राज्य की एकता का प्रतीक बन गया है। कहा गया है कि सम्राट् वह स्वर्ण-शृंखला या रेशमी रस्सी है जो साम्राज्य के विभिन्न भागों को एकत्र जकड़े हुए हैं।

(५) सम्राट् स्थल, नौ तथा वायु सेना का प्रधान सेनापति है। सरकारी कर्मचारी उसी के भृत्य कहे जाते हैं। सैनिक तथा अन्य कर्मचारी उसके प्रति राजभक्ति की शपथ लेते हैं। अतः सम्राट् के द्वारा व्यक्तिगत भक्ति और वफादारी का भाव परिपुष्ट होता है।

(६) सभी देशों में राज्य के एक प्रधान की आवश्यकता होती है। विशेषतः संसदीय शासन-प्रणाली वाले देशों में तो उसके बिना काम ही नहीं चल सकता। ब्रिटेन में राजा ही इस हैसियत से काम करता है और पाँच-सात वर्षों के लिए चुने हुए किसी राष्ट्रपति की अपेक्षा वह इस कार्य के लिए कहीं अधिक उपयुक्त है।

ब्रिटिश सम्राट्-पद की वामपक्षीय आलोचना—प्रोफेसर हैरोल्ड लास्की सरीखे वामपक्षीय (समाजवादी) विचारकों ने ब्रिटिश सम्राट और उसकी स्थिति की वर्ग-विभेद के दृष्टिकोण से आलोचना करके यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि सम्राट् वास्तव में निष्पक्ष मध्यस्थ नहीं है, किन्तु राज्य के एक राजनैतिक दल—अनुदार दल (Conservative Party)—के साथ उसकी प्रच्छन्न रूप से सक्रिय सहानुभूति रहती है। यह सहानुभूति जब-तब पक्षपातपूर्ण ढङ्ग से प्रकट भी हो जाती है। साधारण परिस्थितियों में इससे चाहे विशेष हानि न हो, पर संकटकालीन स्थिति में इससे प्रजातन्त्र को खतरा हो सकता है।

लास्की का कहना है कि जन्म और शिक्षा दोनों ही के विचार से सम्राट् अनुदार वातावरण ही में रहता है। उसके मिलने-जुलने वाले, और मन्त्रियों के अतिरिक्त अन्य सभी सलाहकार उच्च और धनिक वर्गों के ही लोगों में से होते हैं। साधारण जन-समुदाय के लोगों से मिलने-जुलने और विचारों का विनिमय करने के लिए उसे कोई अवसर नहीं मिलता। इस दशा में यह अनिवार्य है कि उसकी विचारधारा उच्चवर्गीय तथा अनुदार हो। जार्ज तृतीय के समय से अब तक के सभी सम्राट् लास्की के कथनानुसार, अनुदार और साम्राज्यवादी मनोवृत्ति के रहे हैं।

यह होते हुए भी यदि ब्रिटेन में अभी तक राजतन्त्र सफल रहा है तो उसका एक मात्र कारण यह है कि सम्राट् अपने अधिकारों का प्रयोग नहीं करता। सम्राट् की इस प्रकार की तटस्थता इस कारण संभव रही है कि देश की दोनों प्रधान राजनैतिक दलों के बीच मौलिक बातों में मतैक्य रहा है। पर यदि कभी इन दलों में तीव्र मतभेद हो और उनमें से एक अपने प्रतिपक्षी दल के विरुद्ध सम्राट् की सहायता का प्रार्थी हो,

तो यह तटस्थता कदाचित् बनी न रह सकेगी। १६१०-११ ई० में लार्ड्स सभा के सुधार के प्रश्न पर इस प्रकार की परिस्थिति लगभग उत्पन्न हो गई थी और कदाचित १६३१ ई० में राष्ट्रीय सरकार के निर्माण के अवसर पर भी कुछ ऐसी ही बात थी।

सम्राट् के पास कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण अधिकार हैं जिनका वह अपने विवेकानुसार प्रयोग कर सकते हैं जैसे प्रधान मंत्री को चुनना, कानूनों पर स्वीकृति देना या न देना, पार्लमेंट को किसी भी समय भङ्ग करके नये चुनाव की आज्ञा देना आदि। साधारण प्रथा तो यही है कि सम्राट् इन अधिकारों का प्रयोग भी मंत्रियों के परामर्शानुसार करे, पर एक सिद्धांत यह भी चल पड़ा है कि सम्राट् संविधान का संरक्षक है और इस कारण उसे मंत्रियों के किसी भी क्रान्तिकारी प्रस्ताव पर तब तक स्वीकृति न देनी चाहिये जब तक उसे यह निश्चय न हो जाय कि देश की जनता उस प्रस्ताव का समर्थन करती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि मंत्रिमंडल द्वारा प्रस्तावित किसी भी बड़े परिवर्तन को स्वीकार करने के पहले सम्राट् उससे कह सकता है कि वह पहले एक नया चुनाव लड़ कर और उसमें विजयी होकर जनता के समर्थन का प्रमाण दे, तभी उस प्रस्ताव पर स्वीकृति दी जायगी अन्यथा नहीं। १६१० ई० में लार्ड्स सभा के प्रश्न पर जार्ज पंचम ने यही किया था। अब विचारणीय बात यह है कि सम्राट की इस प्रकार की माँग से लेबर पार्टी जैसी प्रगतिशील पार्टियों ही के कार्यक्रम में बाधा पड़ती है क्योंकि अनुदार दल वाले एक तो परिवर्तन करना चाहते ही नहीं और दूसरे उनके द्वारा किये गये परिवर्तनों में सम्राट कभी कोई बाधा नहीं डालता।

इसी प्रकार सम्राट प्रधान मंत्री की नियुक्ति के विषय में भी संकटकालीन परिस्थितियों में अपने विशेषाधिकार का पक्षपातपूर्ण प्रयोग कर सकता है। लास्की ने १६३१ ई० में राष्ट्रीय सरकार के निर्माण का उदाहरण दिया है। इस समय मजदूर दल की सरकार पदारूढ़ थी और रामसे मैकडानल्ड मंत्री थे। आर्थिक संकट के निराकरण के उपायों के विषय में मतभेद होने के कारण मजदूर दल दो टुकड़ों में बँट गया जिनमें एक जो अपेक्षाकृत छोटा था, रामसे मैकडानल्ड के साथ रहा और दूसरा अधिकांश भाग मिस्टर हंडरसन के नेतृत्व में उनके विरुद्ध। इस परिस्थिति में अपना बहुमत न होने के कारण रामसे मैकडानल्ड को इस्तीफा देना पड़ता परन्तु सम्राट जार्ज पंचम ने अपने प्रभाव का प्रयोग कर रामसे मैकडानल्ड को राष्ट्रीय अर्थात् सर्वदलीय सरकार बनाने का परामर्श दिया और अनुदार दल से उनका साथ देने का अनुरोध किया। इस विषय में मिस्टर हंडरसन से जो मजदूर दल के बड़े भाग के नेता थे, कोई परामर्श नहीं लिया गया। लास्की ने सम्राट की इस चाल को 'राजभवन द्वारा की हुई क्रान्ति' (a Palace Revolution) और अवैधानिक कहा है। रामसे मैकडानल्ड के पदत्याग करने पर या तो सम्राट को विपक्षी दल (अनुदार दल) से पदग्रहण करने

को कहना चाहिये था, या यदि सर्वदलीय या राष्ट्रीय सरकार ही बनानी थी, तो मिस्टर हंडरसन की भी राय लेनी चाहिये थी।

संक्षेप में लास्की की आलोचना का सारांश यह है कि आजकल की परिस्थितियों में सम्राट की तथा-कथित तटस्थता का रहना कठिन है। ब्रिटेन का मजदूर दल वर्ग-स्वार्थ के आधार पर बना है और उसका पूँजीपति तथा सम्पत्तिशाली वर्ग से विरोध है। सम्राट् स्वयं सम्पत्तिशाली वर्ग का ही है और उसकी सहानुभूति स्वभावतः उसी के साथ है। उसके हाथ में कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषाधिकार हैं ही और वह उनका प्रयोग इस भाँति कर सकता है और कर चुका है कि जिससे मजदूर दल के कार्यक्रम की पूर्ति में अड़चन और बाधा पड़े। सम्राट् का निजी सेक्रेटरी, राजभवन के उच्च कर्मचारी, सेनाओं के अध्यक्ष, कैन्टरबरी के लाट-पादरी (archbishop) आदि सम्राट् के सलाहकार हैं और ये सब उच्च तथा अनुदार वर्ग के लोग हैं। इन सब कारणों से सम्राट् और उसके अधिकार आज भी प्रजातंत्र की प्रगति में खतरा उत्पन्न कर सकते हैं।

लास्की की आलोचना का मूल्याङ्कन—लास्की की आलोचना सर्वथा तथ्य-रहित न होने पर भी अतिरंजित और अतिशयोक्तिपूर्ण है। उन्होंने तिल का ताड़ बना दिया है। वर्गीय दृष्टिकोण से देखने के कारण उनकी दृष्टि में सम्राट् का पद भयावह बन गया है जब कि वास्तव में सम्राट का हस्तक्षेप उत्तरोत्तर कम ही होता जा रहा है। लास्की के यह सब लिखने के उपरांत १९४६-१९५१ तक मजदूर दल एक बड़े बहुमत के साथ सत्तारूढ़ रहा और इस बीच में उसने अनेक महत्वपूर्ण उद्योगों का राष्ट्रीकरण किया और लार्ड्स सभा के अधिकार पहले की अपेक्षा भी कम कर दिये। इन कार्यों के विरोध में अनुदार दल और सम्राट् का कोई भी षड्यन्त्र देखने में नहीं आया। सम्राट यह बात कभी नहीं भूल सकता कि अवैधानिक तथा अप्रजातन्त्रीय ढंग से कार्य करने का फल राजसंस्था के लिये घातक होगा। अतएव इस बात की संभावना बहुत कम है कि कोई सम्राट राजनैतिक दलबन्दियों के चक्कर में पड़कर अपना और अपने उत्तराधिकारियों का भविष्य खतरे में डालेगा। हमारे पास यह विश्वास करने का भी कोई कारण नहीं है कि अनुदार दल प्रजातंत्र का विरोधी है। उसकी और मजदूर दल की प्रजातांत्रिक विचार-धाराओं में अंतर हो सकता है, पर यह कहना कि अनुदार दल प्रजातंत्र को उलटने में राजा के साथ षड्यंत्र करेगा, एक अनर्गल सी बात है।

अभ्यास

१. ब्रिटिश सम्राट-पद के उत्तराधिकार-सम्बन्धी नियमों का वर्णन करो। ज्येष्ठाधिकार का क्या अर्थ है ?

Give a summary of the rules of succession to the British monarchy. What do you understand by 'primogeniture' ?

२. 'ब्रिटिश सम्राट् राज्य करता है, पर शासन नहीं।' इसका स्पष्टीकरण करो।

अथवा

ब्रिटिश सम्राट के अधिकारों का वर्णन करो। इन अधिकारों के विषय में उसकी वास्तविक स्थिति क्या है ?

'The British King reigns but does not govern.' Elucidate.

or

Give a description of the powers of the British monarch. What is his actual position in regard to these powers ?

३. 'राजत्व' (crown) और सम्राट् में क्या अन्तर है ? 'सम्राट् के अधिकार घटते जा रहे हैं, परन्तु राजत्व के अधिकारों की निरन्तर वृद्धि हो रही है'—कैसे ?

Differentiate between the 'Crown' and 'the King'. Do you agree with the view that while the powers of the King have been decreasing, those of the Crown have been increasing ?

४. ब्रिटेन में सम्राट् पद की लोकप्रियता के क्या कारण हैं ?

What are the reasons for the popularity of the monarchy in Great Britain

५. ब्रिटेन में सम्राट्-पद के स्थायित्व के कारणों पर प्रकाश डालो।

In what ways is the monarchy useful to Britain ? Why does it endure in this democratic age ?

६. लास्की के मतानुसार ब्रिटिश सम्राट् निष्पक्ष वैधानिक अध्यक्ष मात्र नहीं है किन्तु राजनीति पर उसका पर्याप्त प्रभाव रहता है जिसका प्रयोग बहुधा अनुदार दल के पक्ष में होता है। इस मत का आलोचनात्मक स्पष्टीकरण कीजिये।

Laski has said that the British monarch is no neutral constitutional head, but vested with real powers which are generally used on the side of conservatism.

Discuss this view critically.

आजकल प्रिवी काउन्सिल का पहिले वाला महत्त्व नहीं रह गया है पर फिर भी वह कई आवश्यक कार्य करती है।

प्रिवी काउन्सिल के सदस्यों की वर्तमान संख्या ३३० के लगभग है। इन सदस्यों में कैन्टरबरी और यार्क के आर्कबिशप, लन्दन के बिशप, लार्डसभा वाले ६ न्यायाधीश और कुछ अन्य न्यायाधिकारी, कामन्स सभा का स्पीकर, स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशों के प्रधान मन्त्री, ब्रिटेन के सभी भूतपूर्व और वर्तमान मन्त्रिमण्डलों के सदस्य आदि सम्मिलित रहते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे सदस्य भी होते हैं जो विद्या, कला, विज्ञान या अन्य क्षेत्रों में अपनी ख्याति के कारण प्रिवी काउन्सिल की सदस्यता से सम्मानित किये गये हैं। भारत से सर तेज बहादुर सप्रू और श्रीनिवासशास्त्री इसी प्रकार से प्रिवीकाउन्सिल के सदस्य थे। प्रिवी काउन्सिल के सदस्यों के नाम के पहिले 'राइट आनरेबिल' (परम माननीय) उपाधि जोड़ दी जाती है।

पूरी प्रिवी काउन्सिल का अधिवेशन केवल सम्राट के राज्याभिषेक के समय अथवा एकाध ऐसे ही महत्वपूर्ण अवसरों पर होता है। पर काउन्सिल की गणपूरक संख्या (Quorum) केवल ३ हैं, अर्थात् ३ सदस्यों के उपस्थित रहने पर भी नाम के लिये प्रिवी काउन्सिल की बैठक समझी जाती है। इस संक्षिप्त रूप में प्रिवी काउन्सिल की प्रति वर्ष कई बैठकें होती हैं। उनमें ५-६ सदस्य ही उपस्थित रहते हैं। काउन्सिल के लार्ड प्रेसीडेन्ट, क्लर्क, और दो-तीन मंत्री जिनके विभागों का कार्य काउन्सिल के सामने आने वाला होता है—साधारणतया इतने ही सदस्य प्रिवी काउन्सिल की बैठकों में आया करते हैं।

साधारणतया प्रिवी काउन्सिल इन बैठकों में 'आर्डर्स-इन-काउन्सिल' और 'स्टैट्यटरी आर्डर्स' बनाने अथवा उन पर स्वीकृति देने का काम करती है। सम्राट् के कानून-निर्माण-सम्बन्धी अधिकारों के सन्दर्भ में हम 'आर्डर्स-इनकाउन्सिल' और स्टैट्यूटरी आर्डर्स की व्याख्या कर आये हैं। ये उपनियम और नियम हैं जो या तो सरकारी कार्यवाही के संचालन के सम्बन्ध में या उपनिवेशों के लिये कानून के रूप में बनाये जाते हैं। इनकी विशेषता यही है कि इनका निर्माण पार्लमेंट द्वारा न होकर कार्यपालिका (Executive) के द्वारा होता है। प्रिवी काउन्सिल इन नियमों-उपनियमों को बनाती नहीं, किन्तु उन पर अपनी केवल स्वीकृति देती है। बनते तो वे विभिन्न शासन-विभागों में हैं, और प्रिवी काउन्सिल की स्वीकृति भी एक रस्म ही के तरीके से बिना किसी वाद-विवाद के दे दी जाती है, पर बिना इस स्वीकृति के वे प्रचलित नहीं होते।

२) मंत्री और अन्य उच्चाधिकारी प्रिवी काउन्सिल ही के सामने अपने पद की शपथ लेते और अधिकार-मुद्रा (Seals of office) पाते हैं।

३) कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य करने के लिए प्रिवी काउन्सिल की स्थायी कमेटियाँ स्थापित हैं। इनमें सबसे विख्यात प्रिवी काउन्सिल की न्याय समिति (Judicial Committee of the Privy Council) है। यह ब्रिटिश साम्राज्य के अधीनस्थ उपनिवेशों (और कुछ हद तक स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशों) से आई हुई अपीलों का अन्तिम निर्णय करती है। १९४७ के पूर्व भारत से भी इसके पास अपीलें आया करती थीं।

प्रिवी काउन्सिल और मन्त्रिमण्डल में भेद—मंत्रिमण्डल या कैबिनेट प्रिवी काउन्सिल का एक भाग मात्र है। दोनों में अन्तर यह है कि यद्यपि मंत्रिमण्डल का प्रत्येक सदस्य प्रिवी काउन्सिल का सदस्य होता है, पर इसका विलोम सदस्य नहीं है, अर्थात् प्रिवी काउन्सिल का प्रत्येक सदस्य मंत्रिमंडल का सदस्य नहीं होता। प्रिवी काउन्सिल मंत्रिमंडल की अपेक्षा आकार में बड़ी है। मंत्रिमंडल में वर्तमान मंत्री ही होते हैं, पर प्रिवी काउन्सिल में न केवल इस समय के, किन्तु पहले के भी सभी मंत्री और कितने ही अन्य लोग भी सम्मिलित रहते हैं।

मन्त्रि समुदाय (Ministry)

जिस प्रकार प्रिवी काउन्सिल और मंत्रिमण्डल में भेद है उसी प्रकार मंत्रि समुदाय या मिनिस्ट्री (Ministry) और मंत्रिमण्डल में भी भेद है। बात यह है कि मंत्रियों में भी पद-भेद हैं। मंत्रिमण्डल के सदस्यों का दर्जा साधारण मंत्रियों की अपेक्षा अधिक ऊँचा और महत्त्वपूर्ण है।

ब्रिटेन में सब मंत्रियों की संख्या लगभग ६०-७० है। इन सबके समूह को ही मंत्रिसमुदाय कहते हैं। पर इनमें के लगभग २०-२२ मंत्री ही मंत्रिमंडल में सम्मिलित किये जाते हैं। इस प्रकार मंत्रिसमुदाय भी मंत्रिमंडल की अपेक्षा आकार में अधिक बड़ा है। मंत्रिमंडल के सभी सदस्य मंत्रि-समुदाय में सम्मिलित हैं, पर मंत्रि-समुदाय के सभी सदस्य मंत्रिमंडल के सदस्य नहीं होते।

मंत्रि-समुदाय के सदस्य ४ वर्गों में विभाजित किये जा सकते हैं अर्थात्—

(१) वे मंत्री जो मंत्रिमंडल के सदस्य और शासन विभागों के अध्यक्ष हैं, जैसे गृह सचिव, अर्थ सचिव, पर-राष्ट्र सचिव, शिक्षा मंत्री, स्वास्थ्य मंत्री, श्रम मंत्री इत्यादि।

(२) वे मंत्री जो मंत्रिमंडल के सदस्य तो माने जाते हैं, पर विभागाध्यक्ष नहीं हैं जैसे, लार्ड चान्सलर, प्रिवी काउन्सिल के लार्ड प्रेसीडेंट, लार्ड प्रिवी सील इत्यादि। इन्हें विभाग रहित मंत्री (Non-departmental Ministers) कहा जाता है।

(३) मंत्रिमंडलीय कोटि के मंत्री (Ministers of cabinet rank)।

ये मंत्री शासन विभागों के अध्यक्ष होते हैं, परन्तु मंत्रिमंडल के सदस्य नहीं। अतः इन का 'मंत्रिमंडलीय कोटि के मंत्री' नाम भ्रामक-सा है, और सार्थक नहीं, परन्तु यह नाम ब्रिटेन ही में नहीं किन्तु भारतीय मंत्रिमंडल में भी प्रचलित हो गया है। अस्तु, ये मंत्री विभागाध्यक्ष होते हैं और अपने विभाग सम्बन्धी, तथा जब-तब अन्य विभाग सम्बन्धी आवश्यक बातों को भी मंत्रिमंडल के सामने विचारार्थ भेज सकते हैं। जब उनके विभाग संबन्धी बातें मंत्रिमंडल के विचाराधीन होती हैं तो ये मंत्री उसकी बैठकों में विशेष रूप से बुला लिये जाते हैं, पर अन्यथा उन्हें मंत्रिमंडल की बैठकों में भाग लेने का अधिकार नहीं होता। पार्लमेंट के सामने ये अपने विभाग संबंधी बातों के लिए उत्तरदायी होते और प्रस्तुत प्रश्नों का उत्तर देते हैं।

(४) राजकीय मंत्री (Ministers of State)। राजकीय मंत्रियों का स्थान मंत्रियों और संसदीय सचिवों के बीच का, अर्थात् हमारे देश के उपमंत्रियों (deputy ministers) की भाँति का है। राजकीय मंत्री का पद अपेक्षाकृत नया है और द्वितीय महायुद्ध के दिनों में प्रचलित हुआ। राजकीय मंत्री कुछ ही विभागों में पाये जाते हैं जैसे अर्थ विभाग (Treasury), व्यापार विभाग (Board of Trade), औपनिवेशिक विभाग, वैदेशिक विभाग, स्काटलैंड सम्बन्धी विभाग इत्यादि। राजकीय मंत्री अधिक कार्यभार वाले विभागों में ही नियुक्त किये जाते हैं जिससे वे उक्त विभागों के कार्य के कुछ भागों का भार अपने ऊपर ले कर विभागाध्यक्ष मंत्री का बोझ हलका कर दें। उदाहरणार्थ व्यापार विभाग (Board of Trade) के राजकीय मंत्री का मुख्य कार्य ब्रिटेन के वैदेशिक व्यापार को प्रोत्साहन देने का है। राजकीय मंत्री प्रत्यक्ष रूप से पार्लमेंट के समक्ष उत्तरदायी नहीं होता। पूरे विभाग का उत्तरदायित्व औपचारिक रूप से विभागाध्यक्ष मंत्री ही पर होता है।

(५) संसदीय उपसचिव या पार्लमेंट सेक्रेटरी लोग (Parliamentary Secretaries)। ये विभागाध्यक्ष मंत्रियों के सहायक होते हैं। प्रत्येक विभागाध्यक्ष मंत्री की सहायता के लिए एक या अधिक संसदीय सचिव रहते हैं। इनका मुख्य काम यह है कि मंत्री संसद के जिस सदन का सदस्य न हो, उसमें उपस्थित रहने पर ये उसका प्रतिनिधित्व करें और उसके स्थान में प्रश्नों के उत्तर आदि दें।

औपचारिक-दृष्टि से संसदीय सचिव मंत्री नहीं कहे जा सकते, और वैधानिक रूप से उन्हें कोई अधिकार भी नहीं प्राप्त हैं। यह प्रत्येक मंत्री पर निर्भर है कि अपने संसदीय सचिव को शासन संबंधी कोई अधिकार दे या न दे। कुछ मंत्री उन्हें शासन कार्य में कोई भाग नहीं देते। विभागों के स्थायी सचिव (Permanent Secretary) और अन्य उच्च कर्मचारी भी यह नहीं पसन्द करते कि सरकारी फाइलें संसदीय उपसचिव के हाथ से होती हुई मंत्री के पास जायँ, क्योंकि यदि

संसदीय सचिव कर्मचारियों के सुझाव के विरुद्ध कोई नोट लिख दे, तो उन्हें उसे भी समझाना पड़ता है और इस प्रकार उनका काम बढ़ जाता है।

परन्तु श्री हर्बर्ट मारिसन का मत है कि संसदीय सचिवों को इस प्रकार शासनाधिकार से वंचित रखना उचित नहीं। उनकी राय में संसदीय सचिवों को तीन प्रकार के अधिकार दिये जा सकते हैं और दिये जाने चाहिये अर्थात् (१) फाइलें व सरकारी कागज-पत्र, यदि उन्हें विशेष रूप से गुप्त रखने की आवश्यकता न हो तो, संसदीय सचिव के हाथों से होकर ही मन्त्री के पास जाने चाहियें जिससे वह उन्हें पढ़ कर उन पर अपने सुझाव दे सके; (२) अपेक्षाकृत कम महत्त्व के विषय संसदीय सचिव के निर्णय पर छोड़ दिये जाने चाहिये। इनमें जिस किसी विषय में वह आवश्यक समझे, मन्त्री का परामर्श भी ले लेगा; (३) विभाग के स्थायी कर्मचारियों के साथ मंत्रियों की जो परामर्श-गोष्ठियाँ या सम्मेलन हों उन में जहाँ तक संभव हो, संसदीय सचिवों को भी उपस्थित रहने का अवसर दिया जाना चाहिये जिस से उच्चतर उत्तरदायित्वों के लिए उन का प्रशिक्षण होता रहे। श्री मारिसन के मतानुसार इन अधिकारों को संसदीय-सचिवों को देना ही चाहिये जिससे वे अपने को अनावश्यक या नगण्य न समझें।

(६) राजसदन के ५ मुख्य कर्मचारी भी जिनमें कोषाध्यक्ष, काम्पट्रोलर, वाइस-चेम्बरलेन सम्मिलित हैं, मन्त्री ही समझे जाते हैं।

मन्त्रिमण्डल के मुख्य सदस्य—मन्त्रि समुदाय के इन ६०-७० के लगभग मंत्रियों में से कुछ थोड़े से लोग मंत्रिमण्डल की सदस्यता स्वीकार करने को प्रधानमन्त्री द्वारा आमन्त्रित किये जाते हैं। कौन-कौन मन्त्री मन्त्रिमण्डल में रक्खे जायँगे—यह सर्वथा प्रधानमन्त्री ही की इच्छा पर निर्भर नहीं है। कुछ मंत्रि-पद इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि उनके धारण करने वालों को मन्त्रिमण्डल में अवश्य ही सम्मिलित करना पड़ता है। ये निम्नलिखित हैं :—

(१) फ़र्स्ट लार्ड आफ़ ट्रेज़री (यह प्रधानमंत्री ही होता है
(२) अर्थमंत्री (चान्सलर आफ़ इक्सचेकर)
(३) लार्ड चान्सलर
(४) लार्ड प्रेसीडेण्ट आफ़ दि काउन्सिल
(५) लार्ड प्रिवी सील
(६) रक्षा मंत्री* (मिनिस्टर आफ़ डिफ़ेन्स)

*रक्षा मंत्री का पद १९४६ ई० में बनाया गया। इसके पहले तीनों सेना-विभागों के अध्यक्ष अर्थात् फ़र्स्ट लार्ड आफ़ ऐडमिरल्टी (नौ सेनाध्यक्ष) सेक्रेटरी-आफ़ स्टेट फ़ार वार (स्थल सेनाध्यक्ष), और सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार एयर (वायु

(७) स्वास्थ्य मंत्री (मिनिस्टर आफ़ हेल्थ)
(८) व्यापार मंत्री (प्रेसीडेण्ट आफ़ बोर्ड आफ ट्रेड)
(९) परराष्ट्र मंत्री (सिक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार फ़ारेन अफ़ेयर्स)
(१०) गृह मंत्री (सिक्रेटरी)
(११) औपनिवेशिक मंत्री (सिक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार कालोनीज़)
(१२) सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार कामनवेल्थ रिलेशन्स

इनके अतिरिक्त कुछ मंत्री ऐसे हैं जिन्हें, सर्वदा तो नहीं, परन्तु बहुधा मंत्रि-मण्डल में सम्मिलित किया जाता है। ये हैं—स्काटलैंड के मन्त्री (सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार स्काटलैंड) परिवहन (ट्रान्सपोर्ट) मंत्री, श्रम (लेबर) मंत्री, शिक्षामंत्री। तीसरे स्थान में चार-छः ऐसे भी मंत्री होते हैं जो कभी-कभी मंत्रिमंडल में सम्मिलित होते हैं और कभी नहीं जैसे पोस्टमास्टर जनरल, फ़र्स्ट मिनिस्टर आफ़ वर्क्स इत्यादि।

मंत्रिमंडल के सदस्यों की संख्या नियत नहीं है। वह आवश्यकतानुसार घटती-बढ़ती रहती है। साधारणतया मंत्रिमंडल में २० से २३ के लगभग सदस्य होते हैं। परन्तु १९५१ के श्री चर्चिल के मन्त्रिमंडल में केवल १६ सदस्य थे और जून १९५५ में मन्त्रिमंडल के सदस्यों की संख्या १८ थी।

मन्त्रिमण्डल का संगठन

नये मन्त्रिमण्डल का निर्माण—प्रधान मन्त्री की नियुक्ति—नया मंत्रि-मंडल तभी बनता है जब वर्तमान मन्त्रिमंडल अथवा प्रधान मन्त्री अपना पद त्याग करता है। आजकल साधारणतया चुनाव में हार होने पर ही (अर्थात् अपने दल के कम सदस्य चुने जाने पर) मंत्रिमंडल व प्रधानमंत्री त्यागपत्र देते हैं, अथवा कभी-कभी दल में फूट पड़ जाने और इस प्रकार कामन्स सभा में अपना बहुमत जाता रहने पर भी मंत्रिमंडल पद त्याग करते हैं जैसा रामसे मैकडानल्ड के मंत्रिमण्डल ने १९३१ ई० में किया था।

अस्तु, किसी भी कारण से नया मंत्रिमंडल बने, उनका श्री गणेश यों होता है कि सम्राट सर्व प्रथम किसी को प्रधानमन्त्री नियुक्त करते हैं। साधारणतया सम्राट् को प्रधानमन्त्री की नियुक्ति में मनमानी करने का मौका नहीं मिलता। कामन्स सभा के बहुसंख्यक दल का जो नेता होता है, सम्राट् को उसी को प्रधानमन्त्री नियुक्त करना पड़ता है। यदि वे ऐसा न करके किसी अन्य को प्रधानमन्त्री बनावें, तो वह उक्त सभा में अपना बहुमत न होने के कारण तुरन्त ही अविश्वास-प्रस्ताव द्वारा पदत्याग करने को

सेनाध्यक्ष) मन्त्रिमंडल के सदस्य होते थे, पर १९४६ में यह निश्चय हुआ कि अब केवल रक्षामन्त्री मन्त्रिमण्डल में इन तीनों के स्थान में रहेगा और ये उसकी सदस्यता से अलग कर दिये गये।

बाध्य कर दिया जायगा। पहिले प्रधानमन्त्री लार्डस सभा में से भी नियुक्त होते थे, पर १६०२ ई० से जब लार्ड सैलिसबरी ने पद त्याग किया, अन्य कोई लार्ड प्रधानमन्त्री नहीं बनाया गया। १६२३ ई० में अनुदार दल के नेता बोनरला की मृत्यु के बाद जब नये प्रधानमंत्री की नियुक्ति का अवसर आया तो उक्त दल के ये दो व्यक्ति—लार्ड कर्जन और स्टैनली बाल्डविन इसके लिए उम्मेदवार थे। पर, सम्राट जार्ज पंचम को यह सलाह दी गई कि प्रधानमन्त्री कामन्स सभा का ही सदस्य होना चाहिये और श्री बाल्डविन ही नियुक्त हुए। अब यह एक प्रथा ही बन गई है कि कोई लार्ड प्रधानमंत्री नहीं हो सकता।

सम्राट को प्रधानमंत्री की नियुक्ति में अपनी इच्छा के अनुसार चुनने का थोड़ा बहुत मौका केवल दो परिस्थितियों में मिलता है अर्थात् :

(१) जब किसी दल का प्रधानमन्त्री पद-त्याग कर देता है, पर दल का कोई दूसरा निश्चित नेता नहीं रहता, अथवा लगभग समान रूप से प्रभावशाली दो व्यक्ति नेतृत्व के उम्मेद्वार रहते हैं। १६२३ ई० में बाल्डविन और कर्जन के बीच ऐसी ही स्थिति थी और सम्राट् जार्ज पंचम को निर्णय करना पड़ा था कि उनमें से कौन प्रधान-मन्त्री बनाया जाय।

(२) जब कामन्स सभा में दलों की स्थिति ऐसी उलझी रहती है कि यह स्पष्ट नहीं रहता कि किस दल का बहुमत हो सकेगा। ऐसी स्थिति मजदूर-दल में मत-भेद हो जाने के कारण १६३१ ई० में उत्पन्न हुई और तब भी सम्राट् जार्ज पंचम ने सर्वदलीय राष्ट्रीय मन्त्रिमंडल के निर्माण की प्रेरणा दी थी।

इन परिस्थितियों में भी सम्राट मनमानी नहीं कर सकता। विभिन्न दलों के प्रधान व्यक्तियों से परामर्श करके ही वह ऐसा निर्णय कर सकता है जिससे सुदृढ़ सरकार बन सके। पर इन स्थितियों में उसे कुछ न कुछ अपने विवेकानुसार निर्णय करने का मौका रहता है।

अन्य मन्त्रियों का चुनाव—स्वयं अपनी नियुक्ति हो जाने और सम्राट् से मन्त्रिमंडल का निर्माण करने का आदेश पाने के बाद प्रधानमन्त्री को फिर अपने सहयो-गियों अर्थात् अन्य मन्त्रियों को चुनना पड़ता है। इन्हें वह साधारणतया अपने ही दल में से चुनता है यद्यपि यह कोई अनिवार्य नियम नहीं है। मन्त्रियों को चुनने में प्रधान मन्त्री को कई शर्तों का ध्यान रखना पड़ता है जिनमें से मुख्य-मुख्य ये हैं :—

(१) दल के कुछ महत्त्वपूर्ण व्यक्ति ऐसे होते हैं जिन्हें मन्त्रिमंडल में सम्मिलित करना आवश्यक है। साधारणतया दल के वे लोग जो पहिले के मन्त्रिमंडलों में सम्मिलित रहे हैं, यह आशा रखते हैं कि नये मन्त्रिमंडल में भी उन्हें स्थान मिलेगा। यदि उन्हें छोड़ दिया जाय तो उनके अनुयायियों में असंतोष फैलता है।

(२) कुछ मंत्री लार्ड सभा से भी लेने आवश्यक हैं। पहले यह एक कानूनी नियम था कि पाँच सेक्रेटरी आफ स्टेट और पांच अंडर सिक्रेटरियों से अधिक पार्लमेंट की किसी एक सभा में साथ ही साथ नहीं बैठ सकते।[१] लार्ड चान्सलर सदा लार्ड सभा का ही सदस्य बल्कि, अध्यक्ष होता है।

(३) यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि मंत्रिमंडल में देश के सभी भौगोलिक भागों का यथासम्भव प्रतिनिधित्व रहे।

(४) प्रधानमंत्री मन्त्रिमंडल में अपने दल के विभिन्न भागों और समुदायों को भी स्थान देने का प्रयत्न करता है। वह कुछ वयोवृद्ध और अनुभवी सदस्यों को लेता है तो कुछ उत्साही नवयुवक कार्यकर्ताओं को भी सम्मिलित करने का प्रयत्न करता है जिससे भविष्य के लिए उन्हें शिक्षा और अनुभव प्राप्त हो।

सभी मन्त्रियों को पार्लमेंट का सदस्य होना आवश्यक है। बिना पार्लमेंट की सदस्यता के कोई छः मास से अधिक मन्त्री नहीं रह सकता। यदि किसी बाहर के आदमी को मन्त्री बनाना ही हो, तो इसके दो उपाय हैं। उसे या तो लार्ड उपाधि देकर लार्ड सभा का सदस्य बना दिया जा सकता है, अथवा, उसे मन्त्रिपद पर नियुक्त करके फिर किसी सुरक्षित निर्वाचन क्षेत्र से आये हुए अपने दल के किसी सदस्य से इस्तीफा दिला कर इस प्रकार खाली हुए निर्वाचन क्षेत्र से नये मन्त्री का चुनाव करा दिया जाता है। पहिले यह भी नियम था कि मन्त्रिपद स्वीकार करने के बाद सभी मन्त्रियों को पार्लमेंट की सदस्यता का त्याग करके फिर चुनाव लड़ना पड़ता था और उसमें सफल होने पर ही वे मन्त्री और साथ ही साथ पार्लमेंट के सदस्य बने रह सकते थे, अन्यथा नहीं। १६१६ ई० में यह नियम स्थगित और १६२६ ई० में रद कर दिया गया।

मन्त्रियों को चुन लेने के बाद फिर प्रधान मन्त्री सम्राट से उनकी नियुक्ति करा देता है। साधारणतया सम्राट् प्रधान मन्त्री द्वारा दी हुई मन्त्री-सूची को ज्यों की त्यों मान लेता है, पर वह चाहे तो किसी नाम पर आपत्ति भी कर सकता है। सम्राज्ञी विक्टोरिया ने ऐसा कई बार किया था।

विभागों और पदों का वितरण—मन्त्रिपद के लिए व्यक्तियों को चुन लेने के साथ ही साथ प्रधान मन्त्री को यह भी निर्णय करना पड़ता है कि उनमें से किसको कौन-सा पद या विभाग सौंपा जायगा। साधारणतया प्रधान मन्त्री स्वयं किसी विभाग की अध्यक्षता ग्रहण न करके फर्स्ट लार्ड आफ ट्रेज़री का कार्यरहित पद ही लेता है, पर इसके अपवाद भी हैं। लार्ड सैलिसबरी ने १८८७-६२ तक और रामसे मैकडानल्ड ने

[१] इस नियम में अब कई महत्त्वपूर्ण संशोधन हो गये हैं और कामन्स सभा में बैठने वाले सेक्रेटरियों की संख्या में वृद्धि हो गई है।

१६२४ ई० में प्रधान मन्त्री होते हुए पर-राष्ट्र-सचिव का पद ग्रहण किया था। पहिले प्रधान मन्त्री का कानून द्वारा स्वीकृत न होने के कारण, किसी को प्रधान मन्त्री होने के कारण वेतन न मिल सकता था और कोई अन्य पद चाहे वह कार्यरहित ही क्यों न हो ग्रहण करना पड़ता था। परन्तु १६३७ ई० के मिनिस्टर्स आफ क्राउन ऐक्ट के द्वारा प्रधान मन्त्री के पद को कानूनी रूप प्राप्त हो गया और उसका दस हजार पौंड वार्षिक वेतन भी उसी कानून द्वारा नियुक्त हो गया। इस कानून के अनुसार प्रधान मन्त्री का फर्स्ट लार्ड आफ ट्रेजरी होना भी आवश्यक है।

अन्य मन्त्रियों में पदों और विभागों का वितरण कभी-कभी कठिनाई का काम होता है। जब-तब दो या अधिक लोग एक ही पद या विभाग चाहते हैं और कुछ लोग, जो उन्हें मिला है, उसके अतिरिक्त अन्य कोई विभाग चाहते हैं और कुछ लोग यह चाहते हैं कि अमुक विभाग यदि उन्हें न मिले तो उनके प्रतिद्वन्द्वी को भी न मिले। प्रधान मन्त्री को इन गुत्थियों को धैर्य से सुलझाना पड़ता है।

जब मन्त्री चुन लिये जाते हैं और उनके विभाग और पद भी निश्चित हो जाते हैं तो सम्राट् द्वारा उनकी नियुक्ति यथा-विधि होकर, उनके नाम और पद लन्दन गजट में प्रकाशित कर दिये जाते हैं।

मन्त्रिमण्डल के मुख्य मन्त्रियों के पद और उनके कार्य—मन्त्रिमंडल के मुख्य-मुख्य मन्त्री और उनके कार्य निम्नलिखित हैं :—

१. प्रधान मन्त्री—प्रधान मन्त्री के विषय में यह बतलाया ही जा चुका है कि वह साधारणतया किसी विभाग का भार ग्रहण नहीं करता। फर्स्ट लार्ड आफ ट्रेजरी का पद प्रधान मन्त्री के लिए अब कानून द्वारा अनिवार्य हो गया है, परन्तु यह वेतन-युक्त होने पर भी कार्यहीन पद (sinecure) है। अतः प्रधान मन्त्री को फर्स्ट लार्ड आफ ट्रेजरी होने के नाते कोई काम नहीं करना पड़ता।

परन्तु प्रधान मन्त्री को अनेक अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य करने पड़ते हैं। प्रथम स्थान में वही सम्राट और मन्त्रिमंडल के बीच सम्बन्ध स्थापित करने वाली कड़ी है। मन्त्रिमंडल के निर्णयों को सम्राट को सूचित करना तथा उनसे उसकी स्वीकृति लेना उसी का काम है। उसे राज्यकार्य के विषय में सम्राट से निरन्तर परामर्श करते रहना पड़ता है। पहिले यह प्रथा थी कि प्रधान मन्त्री समय-समय पर सम्राट को पत्र लिखकर उसे आवश्यक सूचनाएँ दिया करता था, पर अब यह काम मुलाकात करके वार्तालाप द्वारा ही पूरा कर दिया जाता है। सम्राट् का मन्त्रिमंडल के निर्णयो को सूचित करने के सम्बन्ध में एक यह प्रथा है कि प्रधान मन्त्री सम्राट् को केवल यह बतला दे कि अमुक-अमुक निर्णय हुए हैं, परन्तु यह न बतलावे कि किसी निर्णय के विषय में विभिन्न मन्त्रियों के क्या मतामत थे। इस नियम का कभी-कभी अपवाद भी हुआ है—

उदाहरणार्थ डिसरेले (बाद में लार्ड बीकन्सफील्ड) सम्राज्ञी विक्टोरिया को मन्त्रिमंडल में होने वाली वाद-विवाद की विस्तृत सूचना दिया करते थे; परन्तु ऐसा न चाहिये। हो सकता है कि कोई निर्णय सम्राट् को प्रिय और कोई अप्रिय प्रतीत हो। प्रिय निर्णय के विरोधी और अप्रिय निर्णयों के समर्थक मन्त्रियों के प्रति सम्राट् के मन में दुर्भाव न उत्पन्न हो और सभी के साथ उसका समान सद्भाव रहे—इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये यह आवश्यक है कि सम्राट् किसी भी प्रश्न पर किसी मन्त्री के व्यक्तिगत मतामत को न जाने। अतः जो प्रधान मन्त्री इस नियम का अपवाद करता है, वह एक प्रकार से अपने सहयोगी मन्त्रियों के प्रति विश्वासघात का दोषी समझा जाता है।

दूसरे, प्रधान मन्त्री मन्त्रिमण्डल की बैठकों का सभापति होता है और समस्त कार्यवाही का संचालन और नेतृत्व करता है। ग्लैडस्टन ने लिखा है कि प्रधान मन्त्री मन्त्रिमण्डल रूपी मेहराब का कुञ्जी वाला पत्थर (The key-stone of the Cabinet arch) है। यह बात बिल्कुल सच है। जैसे कुञ्जीवाला पत्थर मेहराब के प्रत्येक अन्य स्थान में स्थित रहता और मेहराब को गिरने से रोक रखता है, ठीक उसी प्रकार प्रधान मन्त्री ही के बल से मन्त्रिमण्डल संगठित होता, स्थित रहता और कार्य करता है। हम देख ही चुके हैं कि प्रधान मन्त्री ही मन्त्रियों को चुनता और उनमें कार्य-वितरण करता है। मन्त्रियों में कोई मतभेद हो तो उसे प्रधान मन्त्री ही सुलझाता है। प्रधान मन्त्री से यदि किसी मन्त्री का मतभेद हो जाय तो उस मन्त्री ही को पदत्याग करना पड़ता है, प्रधान मन्त्री को नहीं। प्रधान मन्त्री के पदत्याग देने या उसकी मृत्यु हो जाने पर मन्त्रिमण्डल अपने आप ही भंग हुआ समझा जाता है। इस प्रकार, प्रोफेसर लास्की के अनुसार, प्रधान मन्त्री मन्त्रिमण्डल के निर्माण, उसके कार्य करने और उसके भंग में भी केन्द्र स्वरूप है।[१]

तीसरे, प्रधान मन्त्री को अपने सभी सहयोगी मन्त्रियों की गतिविधि तथा उनके विभागों के कार्यों पर निगाह रखनी पड़ती है। कोई समय था जब रावर्ट पील सरीखे प्रधान मन्त्री सभी विभागों के कार्यों का निरीक्षण करते थे। आज जब कि शासन विभागों की संख्या १०२ से भी ऊपर पहुँच गई है तो उनके कार्यों की देख-रेख किसी भी प्रधान मन्त्री के लिये संभव नहीं है, पर इतना ध्यान प्रधान मन्त्री को आज भी रखना अवश्यक है कि उसके सभी सहयोगी मन्त्री व उनके विभाग एक ही नीति के अनुसार कार्य करें और प्रतिकूल दिशाओं में न जाने पावें। उसका और अन्य मन्त्रियों का अफसर-मातहत का-सा सम्बन्ध नहीं होता। अन्य मन्त्री उसके

---

[१] 'The Prime Minister is central to the formation functioning and dissolution of the Cabinet.' Laski, Parliamentary Government in England.

सहयोगी व मित्र होते हैं व उसकी विशेषता यही है कि यह उनमें अग्रगण्य अथवा सर्वप्रथम है, जैसा भाइयों में ज्येष्ठ भाई होता है। उसे 'समकक्षों में सर्वप्रथम' (Primus inter pares) कहा गया है। पर यह सब होते हुये भी यह निर्विवाद है कि प्रधान मन्त्री अन्य मन्त्रियों की अपेक्षा उच्चतर कोटि का पदाधिकारी है और उन सब की लगाम उसके हाथ में होती है। एक नई उपमा के अनुसार प्रधान मन्त्री 'समकक्षों में प्रथम' (Primus inter pares) नहीं, किन्तु 'तारों में चन्द्रमा के समान' (inter stellas luna minors)[१] समझा जाना चाहिये। सरकारी दल का प्रधान नेता होने के कारण वह सरकार का प्रमुख संचालक, प्रमुख प्रवक्ता और प्रमुख प्रतिनिधि माना जाता है। जो कुछ वह कहता है वह सरकारी नीति की अधिकार-पूर्ण व्याख्या के रूप में माना जाता है। चाहे पार्लमेंट में हो, या देश की जनता के समक्ष, मन्त्रिमण्डल और उसके कार्यों पर किये हुये आक्षेपों का उत्तर देने का भार प्रधानतया उसी पर रहता है।

चौथे, यद्यपि अधिकांश राजकीय बातों का निर्णय मन्त्रिमण्डल संयुक्त रूप से करता है, पर कई महत्त्वपूर्ण बातें ऐसी हैं जिनका निर्णय मन्त्री अकेले भी कर सकता है और करता है। मन्त्रियों और उपनिवेशों के गवर्नरों और कुछ अन्य उच्चपदों की नियुक्तियाँ, लोगों को लार्ड अथवा अन्य उपाधियों का देना, पार्लमेंट को भङ्ग करके नये चुनाव की घोषणा आदि ऐसी बातें हैं जिनके विषय में प्रधान मन्त्री बिना अन्य मन्त्रियों से परामर्श किये हुए ही सम्राट् को राय दे सकता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रधान मन्त्री इन विषयों में अपने साथियों की राय लेता ही नहीं अथवा ले ही नहीं सकता, पर यह अवश्य है कि यदि वह इन बातों में किसी की भी राय न ले और अकेले ही निर्णय करे, तो भी किसी को कोई शिकायत नहीं हो सकती।

प्रधान मन्त्री पर नीति-निर्धारण, नीति-समन्वय, कार्यक्रम संचालन तथा देख-रेख का इतना अधिक भार होने के कारण ही वह साधारणतया किसी शासन-विभाग की अध्यक्षता का भार नहीं ग्रहण करता। १६४२ ई० तक प्रधान मन्त्री कामन्स सभा का नेतृत्व करता था और उसे सदन का नेता (Leader of the House) कहा जाता था, पर उक्त वर्ष में कार्य भार हलका करने के लिए एक अन्य मन्त्री श्री आर० ए० ग्रीनवुड को सदन का नेता बना दिया गया। तब से यह प्रथा चल पड़ी है कि प्रधान मन्त्री व कामन्स सभा के नेता दो अलग-अलग व्यक्ति होते हैं।

उप प्रधान मन्त्री (Deputy Prime Minister)—द्वितीय युद्ध-

---

[१] यह उपमा एक आधुनिक लेखक सर विलियम वर्नन हारकूर्त द्वारा दी गई है।

कालीन चर्चिल मन्त्रिमण्डल के समय से ब्रिटेन में एक उप-प्रधान मन्त्री भी नियुक्त किया जाने लगा है। साधारणतया यह पद लार्ड प्रेसीडेण्ट आफ दी काउन्सिल या परराष्ट्र मन्त्री, या अन्य किसी अनुभवी मन्त्री को दिया जाता है। श्री चर्चिल के युद्ध-कालीन मन्त्रिमण्डल में श्री एटली, और श्री एटली के १६४५-५० के मन्त्रिमण्डल में श्री हर्बर्ट मारिसन उप-प्रधान मन्त्री थे। उप प्रधान मन्त्री के पद के सार्वजनिक रूप से घोषित हो जाने पर भी, अभी उसे संविधान या सम्राट् द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं है।

चान्सलर आफ इक्सचेकर—यह ब्रिटेन का अर्थ अथवा राजस्व मन्त्री होता है। यह अर्थ विभाग (Treasury) का मन्त्री होता है। किसी विभाग की भी कोई महत्त्वपूर्ण नीति अथवा योजना बिना व्यय के कार्यान्वित हो ही नहीं सकती। व्ययों के औचित्य अथवा अनौचित्य का प्रश्न निर्णय अर्थ-विभाग ही करता है। इसी कारण चांसलर आफ इक्सचेकर का प्रकारांतर से अन्य सभी विभागों के संचालन में हाथ होता है। यही इसके पद के महत्व का रहस्य है। सरकारी आय-व्यय का वार्षिक लेखा (बजट) चान्सलर आफ इक्सचेकर के ही तत्वावधान में बनता है और तदनन्तर ही मन्त्रिमण्डल और पार्लमेंट के सामने आता है। यदि वह किसी योजना का विरोध करे, तो फिर वह मन्त्रिमंडल की स्वीकृति के बिना, आगे नहीं बढ़ सकती। सक्षेप में सरकारी आय-व्यय को निर्धारित करना चान्सलर आफ इक्सचेकर का काम होता है। आर्थिक नियन्त्रण के सभी सूत्र इसके ही विभाग के हाथों में केन्द्रित रहते हैं। नये सरकारी पदों का निर्माण तथा सभी कर्मचारियों के वेतन पेन्शन, आदि के नियम बनाना भी इसी विभाग का काम है। अतः यह विभाग समस्त वेतन-भोगी स्थाई कर्मचारियों पर भी अंकुश रखता है। यह इसके महत्त्व का दूसरा कारण है।

३. सेक्रेटरी आफ स्टेट फार फारेन अफेयर्स अर्थात् परराष्ट्र सचिव—महत्त्व की दृष्टि से परराष्ट्र सचिव का मन्त्रिमंडल में तीसरा स्थान है। इसका कार्य ब्रिटेन के अन्य देशों से सम्बन्ध का निर्धारण करना है। विदेशों के लिए राजदूत चुनना, उन्हें परामर्श तथा आदेश देना, उनसे विदेशों की गति-विधि की सूचना प्राप्त करना, विदेशों से सन्धियाँ करना, अन्तर्राष्ट्रीय सभाओं में प्रतिनिधि भेजना, संयुक्त-राष्ट्र सङ्घ की कार्यवाही में भाग लेना इत्यादि कार्य परराष्ट्र सचिव और उसके विभाग के ही हैं। युद्ध अथवा शांति की घोषणा तो मन्त्रिमंडल के निर्णय द्वारा होती है, परन्तु परराष्ट्र सचिव और उसके विभाग उन परिस्थितियों का जिन पर अन्ततः युद्ध या शांति निर्भर होते हैं, प्रतिक्षण निर्माण करते रहते हैं। आजकल के संसार में युद्ध या शांति का सर्वव्यापी प्रभाव सर्व-विदित है। इसी कारण परराष्ट्र सचिव का पद बड़े ही जिम्मेदारी व महत्त्व का होता है।

४. मिनिस्टर आफ डिफेंस अर्थात् रक्षा मन्त्री—यह अपेक्षाकृत नया मन्त्रिपद है। १६४० में युद्धकालीन परिस्थिति में इसकी स्थापना हुई और १६४५ तक प्रधान मन्त्री विन्स्टन चर्चिल ही रक्षा मन्त्री भी रहे। पर १६४६ में प्रधान मन्त्री एटली ने इसे एक अन्य मन्त्री को दे दिया। अब तक ब्रिटेन के तीन सेना सम्बन्धी विभाग थे और इन सभी के अध्यक्ष अर्थात् फर्स्ट लार्ड आफ् ऐडमिरल्टी (नौ सेना विभागाध्यक्ष) सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार वार (स्थल सेना विभागाध्यक्ष) और सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार वार (वायु सेना विभाग के अध्यक्ष)–मन्त्रिमण्डल के सदस्य होते थे। परन्तु १६४६ में यह निश्चय हुआ कि अब से केवल एक रक्षा मन्त्री ही मन्त्रिमण्डल का सदस्य होगा और उपरोक्त तीनों सैनिक मन्त्री साधारण मन्त्री मात्र रहेंगे। इनके विभाग की कोई बात जब विचाराधीन होती है तो फर्स्ट लार्ड आफ़ एडमिरल्टी आदि मन्त्रिमंडमल की बैठक में बुला लिये जाते हैं, पर अब इन्हें उसकी सदस्यता प्राप्त नहीं। रक्षा मन्त्री का प्रधान कार्य तीनों प्रकार की सेनाओं की नीतियों का समन्वय करते हुए देश-रक्षा की योजनाओं का निर्माण तथा उन्हें कार्यान्वित करना है।

५. सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार कालोनीज़ अर्थात् उपनिवेश सचिव—इसका कार्य उपनिवेशों अर्थात् ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन परतन्त्र देशों के शासन की देख-रेख करना तथा उनके ब्रिटेन के बीच के सम्बन्ध को निर्धारित करना है।

६. सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार कामनवेल्थ रिलेशंस अर्थात् राष्ट्रमंडल मन्त्री—ब्रिटिश साम्राज्य के स्वतन्त्रता-प्राप्त भागों की समस्टि को कामनवेल्थ अथवा राष्ट्रमंडल कहते हैं। इसमें कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, न्यूजीलैंड, भारत, पाकिस्तान, सीलोन आदि सम्मिलित हैं। कामनवेल्थ रिलेशन्स सचिव का काम ब्रिटेन और इन देशों के बीच के सम्बन्ध का निर्धारण और संचालन है। पहिले यह कार्य उपनिवेश सचिव ही किया करता था। १६२६ ई० में इसे कालोनियल आफ़िस से अलग करके एक सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार डोमिनियन्स के सुपुर्द किया गया और १६४७ में इस मन्त्री का नाम बदल कर 'सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार कामनवेल्थ रिलेशंस' कर दिया गया।

७. सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार होम अफ़ेयर्स अर्थात् गृह-सचिव—इसका कार्य देश की आन्तरिक शान्ति, पुलिस, जेलों और अनेक अन्य बातों का प्रबन्ध करना है। इसके विभाग, होम आफ़िस, के कार्य विविध प्रकार के हैं। अन्य विभागों से बचा-खुचा सभी काम इसके हिस्से में पड़ता है।

८. सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार स्काटलैण्ड—इस मन्त्रिपद की स्थापना १६२६ में हुई थी। इस मन्त्री का काम स्काटलैंड सम्बन्धी कार्य और शासन-विभागों की देख-रेख है।

९. **लार्ड चांसलर**—लार्ड चान्सलर लार्ड्स सभा का अध्यक्ष होता है। यह सदैव ही एक अनुभवी न्यायाधीश होता है और लार्ड्स सभा के न्यायालय के रूप में बैठने पर उसके प्रधान न्यायाधीश का कार्य करता है। प्रिवीकाउन्सिल की जुडीशल कमिटी का भी यही प्रधान न्यायाधीश होता है। साथ ही साथ वह मन्त्रिमण्डल का एक महत्वपूर्ण मन्त्री भी है। वह काउन्टी कोर्ट्स नामक विभाग का अध्यक्ष होता है और इस हैसियत से काउन्टी न्यायालयों के सङ्गठन और उनकी कार्य-पद्धति आदि की देख-रेख करता है। लार्ड्स सभा में उसके आसन अथवा कुर्सी को 'ऊल-सैक' (Wool sack) नाम से पुकारने की प्रथा है। स्वदेशी ऊन को प्रोत्साहन देने के लिए किसी पहले के लार्ड चान्सलर ने अपनी कुर्सी की गद्दी के स्थान में ऊन भरवा लिया था। उसी से उस कुर्सी का नाम ही 'ऊल सैक' अर्थात् 'ऊन का बोरा' पड़ गया और लाक्षणिक रूप से यह शब्द लार्ड चान्सलर के पद का बोध कराता है।

१०. **मिनिस्टर आफ़ हेल्थ अर्थात् स्वास्थ्य मन्त्री**—यह मन्त्री स्वास्थ्य विभाग का अध्यक्ष है। पहिले उसका और उसके विभाग का काम केवल स्वास्थ्य प्रबंध ही न होकर सब प्रकार की स्थानीय संस्थाओं के शासन प्रबन्ध की देख-भाल, उनके हिसाब-किताब की जाँच तथा उन्हें आदेश तथा परामर्श देना भी था, पर हाल ही में स्थानीय संस्थाओं का काम इसके हाथ से निकाल लिया गया है।

११ **शिक्षा मन्त्री**—इसका कार्य स्थानीय संस्थाओं के शिक्षा-कार्य की देख-भाल, पुस्तकालयों का प्रबन्ध और विद्या-प्रचार सम्बन्धी कई अन्य संस्थाओं का प्रबन्ध तथा शिक्षा-नीति का निर्धारण है।

१२ **प्रेसीडेन्ट आफ़ बोर्ड आफ़ ट्रेड**—यह व्यापार मन्त्री है। ब्रिटेन के विदेशी व्यापार को प्रोत्साहन देना और उसकी उन्नति का प्रयत्न करना इस का प्रधान कार्य है।

१३. **मिनिस्टर आफ लेबर ऐंड नैशनल सर्विस**—१९३९ तक इस मन्त्री का प्रधान कार्य था श्रम-जीवियों और मजदूरों के हितों की रक्षा और उनके तथा मालिकों के बीच के झगड़ों को चुकाने का प्रयत्न; परन्तु द्वितीय युद्ध के छिड़ने पर इसका यह भी काम हो गया कि युद्ध कार्य के लिये आवश्यक संख्या में आदमी भरती करे और उन्हें आवश्यकतानुसार विभिन्न कार्यों में लगावे।

१४. **विभाग रहित मन्त्री**—प्रत्येक मन्त्रिमण्डल में कुछ विभाग रहित मन्त्री भी होते हैं इन्हें अँग्रेजी में 'नान डिपार्टमेंट मिनिस्टर' (Non-department ministers) कहा जाता है। इन मन्त्रियों के पास शासन-कार्य बहुत थोड़ा या कुछ भी नहीं होता। विभाग रहित-मन्त्रियों के सब से अच्छे उदाहरण प्रधान मन्त्री लार्ड प्रिवी सील (Lord Privy Seal), लार्ड प्रेसीडेंट आफ दि काउन्सिल (Lord

President of the Council), पे मास्टर जनरल (Pay Master-general) और चान्सलर आफ दि डची आफ लैंकैस्टर हैं। लार्ड प्रिवी सील के पास शासन विभाग सम्बन्धी काम कुछ भी नहीं होता। लार्ड प्रेसीडेन्ट आफ दि काउन्सिल और चान्सलर आफ दि डची आफ लैंकैस्टर के पास भी विभाग सम्बन्धी काम सप्ताह में दो एक घंटे से अधिक का नहीं रहता। इस प्रकार की कार्यहीन नियुक्तियों के दो उद्देश्य होते हैं। या तो इन पदों पर उन वयोवृद्ध और अनुभवी राजनीतिज्ञों की नियुक्ति की जाती है जिनका परामर्श तो बहुमूल्य होता है पर जो विभागों का कार्य-भार नहीं स्वीकार करना चाहते, अथवा उन पर ये लोग नियुक्त किये जाते हैं जिनसे कोई विशेष योजना बनवानी या कोई विशेष प्रकार का कार्य कराना होता है। १९२९-३१ ई० वाले मजदूर दल के मन्त्रिमंडल में लार्ड प्रिवी सील बेकारी दूर करने की योजना के निर्माण में लगे थे और १९४५-५० के मजदूर मन्त्रिमंडल के लार्ड प्रेसीडेन्ट आफ दि काउन्सिल हर्बर्ट मारिसन उद्योगों के राष्ट्रीकरण योजनाओं के समन्वय के महत्त्वपूर्ण कार्य में लगे थे। विभाग-रहित मन्त्रियों के अतिरिक्त ब्रिटिश मन्त्रिमंडल में कभी-कभी एक या अधिक पद-रहित मन्त्री (ministers without portfolios) भी नियुक्त किये जाते हैं, परन्तु बहुधा नहीं।

मन्त्रिमण्डल के दो असाधारण रूप—मन्त्रिमंडलों की ऊपर वर्णित रूप-रेखा साधारण समय के साधारण मन्त्रिमंडलों की है, पर विशेष परिस्थितियों में मन्त्रिमंडल की बनावट व कार्य-प्रणाली में बहुत कुछ अन्तर भी हो जाता है। मन्त्रिमंडलों के दो असाधारण रूप विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं अर्थात् (१) संयुक्त मन्त्रिमण्डल और (२) युद्ध कालीन मन्त्रिमंडल।

१. संयुक्त मन्त्रिमंडल (Coalition Cabinets)—साधारणतया मन्त्रिमंडल एक ही राजनैतिक दल के आधार पर बनाया जाता है जिसका कि कामन्स सभा में बहुमत होता है। पर कभी-कभी ऐसी भी परिस्थिति होती है कि उक्त सभा में किसी भी एक दल का बहुमत नहीं होता। ऐसी दशा में दो दल मिल कर अपना बहुमत स्थापित करते और मन्त्रिमंडल बनाते हैं एक से अधिक दलों के संयोग से बने हुये मन्त्रिमंडल संयुक्त मन्त्रिमंडल कहलाते हैं। इनमें एक दलीय मन्त्रिमंडलों की सी दृढ़ता और स्थिरता नहीं होती और न उतनी एकता ही। अतः ये कमजोर और अल्प-जीवी होते हैं। राष्ट्रीय संकट की परिस्थिति में भी ब्रिटेन में संयुक्त मन्त्रिमंडल बनाने की प्रणाली है जिससे दलों के मतभेद व वाद-विवाद के कारण कोई अड़चन न पड़े। १९२४ में मजदूर उदार दल का संयुक्त मन्त्रिमंडल इस कारण बना था कि मजदूर दल का अकेले बहुमत न था, पर यह मन्त्रिमंडल कुछ ही महीने चल सका। १९३१ में आर्थिक संकट की परिस्थिति में अनुदार, उदार और मजदूर दल के

एक भाग को मिला कर राष्ट्रीय संयुक्त मन्त्रिमंडल बना जो १९३५ तक चलता रहा। साधारण परिस्थिति जब पुनः आ जाती है तो संयुक्त मन्त्रिमंडल के स्थान में साधारण मन्त्रिमंडल पुनः स्थापित हो जाते हैं। कहा जाता है कि इङ्गलैंड के लोगों को संयुक्त मन्त्रिमंडल अच्छे नहीं लगते (England does not love coalitions), क्योंकि इनमें न तो दीर्घजीवन होता है, न नीति की एकता और न दलों के संघर्ष से उत्पन्न होने वाला राजनैतिक आकर्षण।

२. **युद्ध कालीन मन्त्रिमंडल**—प्रथम और द्वितीय महायुद्धों की परिस्थितियों में मन्त्रिमण्डल के साधारण रूप का परित्याग करके उन्हें एक नये साँचे में ढालना पड़ा जिसे 'युद्ध कालीन मन्त्रिमण्डल' का नाम दिया गया है। प्रथम युद्ध के समय १९१६ ई० में जब लायड जार्ज प्रधान मन्त्री बने तो उन्होंने केवल पाँच मन्त्रियों का युद्ध कालीन मन्त्रिमण्डल बनाया। इनमें केवल एक (चान्सलर आफ इक्सचेकर) को छोड़ कर और किसी मन्त्री के पास शासन-विभाग का काम नहीं रक्खा गया जिससे वे अपना पूरा समय युद्ध के प्रबन्ध में ही लगा सके। इस युद्ध कालीन मन्त्रिमण्डल के सदस्य पार्लियामेंट में भी कम ही जाते थे और इनमें से कुछ तो पार्लियामेंट के सदस्य भी न थे। युद्ध-प्रबन्ध में इसका कार्य प्रस्तुत्य था, पर शान्ति की स्थापना होने पर इनका अंत करके पुनः मन्त्रिमण्डल की साधारण पद्धति का अनुसरण किया जाने लगा।

१९३९ ई० में द्वितीय युद्ध के छिड़ने पर प्रधान मन्त्री नेवाइल चेम्बरलेन ने ९ मन्त्रियों का युद्ध-कालीन मन्त्रिमंडल बनाया जिनमें के कई मन्त्रियों के पास विभागों का भार भी था। १९४० ई० में जब चर्चिल प्रधान मन्त्री हुए तो उन्होंने इसका आकार छोटा करके मन्त्रियों की संख्या केवल ५ कर दी और सिवाय अपने के, और सभी मन्त्रियों के विभागों के भार से मुक्त कर दिया। परन्तु १९४५ में युद्ध की समाप्ति पर मन्त्रिमंडल पुनः अपने पुराने रूप में आ गया।

युद्ध कालीन मन्त्रिमंडल साधारण मन्त्रिमंडलों से चार बातों में भिन्न रहे हैं अर्थात् (१) उनका आकार छोटा होता है। २०-२५ के स्थान में केवल ४ मन्त्री रक्खे जाते हैं। (२) मन्त्री लोग विभागों के भार से मुक्त रक्खे जाते हैं और अपना पूर्ण समय युद्ध संचालन में देते हैं। (३) उन्हें पार्लियामेंट के समक्ष आने, वाद-विवाद में भाग लेने, अथवा प्रश्नों के उत्तर आदि देने का काम बहुत ही कम करना पड़ता है। पार्लियामेंट साधारणतया उनके निर्णयों को बिना विवाद ही के मान लेती है। और (४) इन मन्त्रिमंडलों के सदस्य पार्लियामेंट के बाहर से भी लिये जा सकते हैं जैसे प्रथम युद्ध के मन्त्रिमंडल में जनरल स्मट्स जो कि दक्षिणी अफ्रीका के प्रधान मंत्री थे।

मन्त्रिमंडल की कार्यप्रणाली

मन्त्रिमंडल की कार्यप्रणाली के सम्बन्ध में याद रखने की मुख्य बात यह है

कि वह बहुत अधिक मात्रा में लचीली है। बैठकों के समय, स्थान, वाद-विवाद और निर्णय करने की रीति आदि किसी कठोर नियम से जकड़े हुए नहीं हैं। सुविधानुसार उनमें संशोधन-परिवर्तन होता रहता है। आज हम यह तो नहीं कह सकते कि मन्त्रिमंडल कानून को सर्वथा अज्ञात है, क्योंकि मिनिस्टर्स आफ़ क्राउन्स ऐक्ट में उसका परोक्ष रीति से उल्लेख है, परन्तु तो भी अपने संगठन और कार्यप्रणाली के विषय में वह आज भी कानून के बन्धन से प्रधानतया मुक्त ही है।

मन्त्रिमण्डल की बैठकें—प्रो० लास्की के कथनानुसार मन्त्रिमंडल की वर्ष में ५० से ६० तक बैठकें होती हैं। जब पार्लमेंट का अधिवेशन चलता रहता है, तो उसकी एक बैठक साधारणतया प्रति सप्ताह होती है। समय सवेरे का या तीसरे पहर के प्रारम्भ का रहता है। स्थान—प्रधान मन्त्री का सरकारी निवास स्थान नं० १० डाउनिंग स्ट्रीट होता है। पार्लमेंट के अवकाश काल में (अगस्त से अक्टोबर तक) इसकी बैठकें अपेक्षाकृत अधिक-अधिक समय के बाद होती हैं। जब युद्ध या किसी अन्य राष्ट्रीय संकट की संभावना रहती है, तो मन्त्रिमंडल की बैठक प्रतिदिन, अथवा दिन में एक से अधिक बार सवेरे, दोपहर, शाम या आधीरात को किसी भी समय हो सकती है। यह भी आवश्यक नहीं है कि सभी बैठकें प्रधान मन्त्री के निवास-स्थान ही में हों। जब-तब बैठकें प्रधान मन्त्री के पार्लमेंट भवन में स्थित कमरे या पर राष्ट्र-विभाग के दफ्तर में होती हैं और सुविधानुसार किसी भी अन्य स्थान में जा सकती हैं।

कार्यक्रम (Agenda)—मन्त्रिमंडल की बैठकों का कार्यक्रम प्रधान मन्त्री की आज्ञानुसार मन्त्रिमंडल-कार्यालय (Cabinet Secretariat) द्वारा बनाया जाता है। विशेष महत्त्वपूर्ण विषय ही मन्त्रिमंडल के सामने लाये जाते हैं। साधारणतया किसी बैठक के कार्य-क्रम में निर्णयार्थ प्रस्तुत मदों की संख्या १५ से अधिक नहीं होती। इन विषयों पर इनसे सम्बन्धित विभागों में पहिले ही से विचार-विनिमय हो चुका होता है और यथा-संभव निर्णय कैसे किया जाय—इसके लिए सुझाव भी दिये रहते हैं। कार्यक्रम के साथ ही ५०-६० पृष्ठों का एक स्मरण-पत्र भी मन्त्रियों के पास भेजा जाता है जिसमें प्रस्तुत मदों के सम्बन्ध की सभी आवश्यक जानकारी दी रहती है। ये सब कागज-पत्र बैठक से ५ दिन पूर्व ही सदस्यों के पास भेज दिये जाते हैं जिससे वे तैयार होकर आ सकें। पहिले से इतनी तैयारी हो चुकने के कारण मन्त्रिमंडल की बैठकें लम्बी नहीं होतीं और लगभग दो घंटे में ही समाप्त हो जाती हैं।

विचार और निर्णय की विधि—मन्त्रिमंडल की बैठकों में वाद-विवाद वक्तृता के रूप में न होकर साधारण बात-चीत के ढंग से ही होता है जिसमें सभी सदस्य बीच-बीच में भाग ले सकते हैं। सभी मन्त्रियों का प्रभाव बराबर न होकर उनकी योग्यता अनुभव और वक्तृत्व शक्ति के अनुसार न्यूनाधिक होता है। प्रधान मन्त्री का स्वाभाविक

रूप से ही मुख्य प्रभाव होता है। प्रयत्न यही किया जाता है कि यथा-संभव आपस के समझौते द्वारा प्रत्येक विषय पर सर्वसम्मत से ही निर्णय हो। तीव्र मतभेद की दशा में जब समझौता नहीं हो पाता तो बहुमत द्वारा भी निर्णय किया जा सकता है, परन्तु चेष्ठा यही की जाती है कि यथासंभव इसकी नौबत न आने पावे।

अंतरंग मन्त्रिमण्डल (Inner Cabinet)—प्रत्येक मन्त्रिमंडल में चार-पाँच मन्त्री ऐसे होते हैं जो अन्यों की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली और प्रधान मन्त्री के अधिक विश्वासपात्र होते हैं। प्रधान मन्त्री और ये, मन्त्रिमंडल की बैठक से पहिले ही आपस में बात-चीत करके, आने वाले कार्यक्रम की मुख्य बातों पर अपना मत स्थिर कर लेते हैं और पूरे मन्त्रिमंडल की बैठक में अपने प्रबल समर्थन द्वारा उन्हीं पहिले किये हुए निर्णयों को अपने सहयोगियों से स्वीकार करा लेते हैं। मन्त्रिमंडल के इस छोटे गुट को 'अंतरंग मन्त्रिमंडल' (Inner Cabinet) कहा जाने लगा है। प्रथम युद्ध के समय के मन्त्री लायड जार्ज ने अपनी 'युद्ध के संस्मरण' नामक पुस्तक में लिखा है कि 'अधिकांश मन्त्रिमंडल में चार या पाँच ऐसे प्रमुख व्यक्ति होते हैं...जो अन्तरंग समिति सी बना लेते हैं और यही समिति मन्त्रिमंडल की नीति का दिग्दर्शन करती है। जिस सरकार को ऐसे अंतरंग गुट के रखने का सौभाग्य नहीं प्राप्त है वह साधारण समय में चाहे ज्यों-त्यों करके निर्विघ्न रूप से चल जाय, पर संकट समय में छिन्न-भिन्न हो जाती है।[१] कहा जाता है कि १९३० ई० के मजदूर मन्त्रिमंडल के शासन-काल में अंतरंग मन्त्रिमंडल की नियमित रूप से बैठकें हुआ करती थीं।

कार्यवाही की गोपनीयता—मन्त्रिमंडल की बैठकों की कार्यवाही गुप्त रक्खी जाती है, अर्थात् यह नहीं प्रकट किया जाता कि किस मन्त्री की क्या राय थी, या उनमें आपस में क्या मतभेद थे। उसकी बैठकों में सिवाय मन्त्रियों और मन्त्रिमंडल के सिक्रेटरी के अन्य कोई सम्मिलित नहीं हो सकता। बैठक के बाद प्रधान मन्त्री मुख्य-मुख्य निर्णयों की एक संक्षिप्त सूची समाचारपत्रों के संवाददाताओं को दे देता है, पर उसमें कुछ विस्तार की बातें भी नहीं होतीं। कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय तो सर्वथा गुप्त रक्खे जाते हैं और बहुत वर्ष बीत जाने पर ही लोगों को उनका पता चल पाता है।

मन्त्रिमंडल की कार्यवाही को गुप्त रखने का अभिप्राय यह है कि सभी मन्त्री सभी निर्णयों का संयुक्तरूप से समर्थन कर सकें। आगे चलकर यह बतलाया जायगा कि प्रत्येक निर्णय के लिए सभी मन्त्री संयुक्त रूप से उत्तरदाई माने जाते हैं और आवश्यकता होने पर प्रत्येक को उनका समर्थन करना पड़ता है। अब यदि यह लोगों को मालूम हो जाय कि अमुक मन्त्री ने अमुक निर्णय का मन्त्रिमंडल में विरोध किया

[१] D. Llyod George, War Memoirs, Vol III, P. 1042.

था, तो बाद में उसका उसी निर्णय का समर्थन असंगत जान पड़ेगा। मन्त्री भी इस दशा में संकोच का अनुभव करेगा।

कार्यवाही को गुप्त रखने के नियम का साधारणतया पालन होता है, पर तो भी मन्त्रिमण्डल के आन्तरिक मतभेद जब-तब प्रकाश में आ ही जाते हैं। ऐसा तीन परिस्थितियों में या कारणों से होता है। पहले तो जब कभी तीव्र मतभेद के कारण कुछ मन्त्री अपना पद-त्याग कर देते हैं तो वे कामन्स सभा के सामने वैसा करने के कारणों का स्पष्टीकरण करते हैं और उस सिलसिले में गुप्त मतभेद प्रकट हो जाते हैं। दूसरे, मन्त्री लोग अपने जीवन-चरित्र या संस्मरण भी प्रकाशित करते हैं जिनमें उनके मन्त्रिमण्डल की अनेक गुप्त बातों का उल्लेख रहता है। तीसरे कभी-कभी प्रधान-मन्त्री या अन्य मन्त्री अपने विशेष कृपापात्र पत्र संवाददाताओं को गुप्त बातों का आभास दे देते हैं और इस प्रकार वे बातें समाचार पत्रों में छप जाती हैं।

मन्त्रिमंडल की कार्यवाही को गुप्त रखने के नियम की पुष्टि तीन कारणों से होती है। पहले तो सभी मन्त्रियों को प्रिवी काउन्सिल के सदस्य होने की हैसियत से राजकीय रहस्यों को गुप्त रखने की शपथ लेनी पड़ती है। दूसरे कानून के अनुसार (आफिशल सीकरेट्स ऐक्ट) भी राजकीय रहस्यों को प्रकट करना अपराध है। तीसरे, किसी भी निर्णय के प्रकाशन के पहिले सम्राट् की स्वीकृति आवश्यक है। परन्तु मन्त्रिमंडल की कार्यवाहियों को गुप्त करने का व्यावहारिक कारण यह है कि बिना इसके मन्त्री लोग वाद-विवाद में अपना मत स्वतंत्रतापूर्वक प्रकट नहीं कर सकते और न उन निर्णयों का बाद में समर्थन ही कर सकते हैं जिनका कि उन्होंने विरोध किया था।

मन्त्रिमण्डल समितियाँ—मन्त्रिमंडल की कार्यविधि में उसके सदस्यों द्वारा बनी हुई कमेटियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कभी-कभी इन कमेटियों में कुछ लोग शासन-विभागों या बाहर से भी सम्मिलित कर लिये जाते हैं। कमेटियाँ अस्थायी और स्थायी दो प्रकार की होती हैं। अस्थायी कमेटियों को किसी विशेष प्रश्न का अध्ययन करके उस पर राय देने का काम सौंपा जाता है और राय दे चुकने के बाद वे समाप्त समझी जाती हैं। स्थायी कमेटियाँ किसी महत्त्वपूर्ण विषय पर सदैव ही परामर्श देने के उद्देश्य से स्थापित की जाती हैं और वे बराबर काम करती हैं। अस्थायी समितियों की संख्या और उनके कार्य समयानुसार बदलते रहते हैं और इस कारण उनका कोई निश्चित वर्णन संभव नहीं। स्थायी कमेटियों की संख्या १९५१ में पाँच थी, और आजकल भी वही बतलाई जाती है। इनमें पहली तो कानून निर्माण कमेटी है। कुछ वर्ष पूर्व इसका नाम 'गृह और राजस्व कमेटी' (Home and Finance Committee) था। इसका कार्य सभी प्रस्तावित विधेयकों की नीति की दृष्टि से आलोचना करना तथा मन्त्रिमंडल को उनके विषय में परामर्श देना है।

दूसरी उत्पादन कमेटी (Poduction Committee) है जिसका कार्य देश की आवश्यकताओं की पूर्ति तथा निर्यात के लिये उत्पादन सम्बन्धी सरकारी कार्यक्रम को कार्यान्वित करना है। तीसरी रक्षा कमेटी (Defence Committee) है। पहिले इसके स्थान में एक दूसरी कमेटी थी जिसका नाम 'कमेटी आन इम्पीरियल डिफेन्स' (Committee on Imperial Defence) था। यह वास्तव में मन्त्रिमंडल की कमेटी बन गई है। प्रधान मन्त्री अथवा रक्षा मन्त्री इसका अध्यक्ष होता है। चौथे लार्ड प्रेसीडेंट की कमेटी है। लार्ड प्रेसीडेंट इसका अध्यक्ष होता है और इसका कार्य है सामाजिक और आर्थिक विकास योजनाओं का निर्माण, समन्वय तथा एकीकरण। पांचवी आर्थिक नीति कमेटी (Economic Policy Committee) है। प्रधान मन्त्री इसका अध्यक्ष होता है और इसका कार्य आर्थिक नीतियों का निर्धारण है। श्री हर्बर्ट मारिसन ने मजदूर दल के तृतीय मन्त्रिमण्डल-काल में मन्त्रिमण्डल की लगभग २० समितियों का उल्लेख किया है, पर इनमें अधिकांश अस्थायी ही थीं। प्रत्येक मन्त्रिमण्डल सामयिक आवश्यकता के अनुसार निर्णय करता है कि वह अपनी कितनी और कौन समितियां स्थापित करेगा।

मन्त्रिमण्डल की कमेटियों के साधारणतया ३-४ सदस्य होते हैं और ये मन्त्रिमण्डल के वे सदस्य होते हैं जो किसी कमेटी के अधीनस्थ विशेष विषय में विशेष जानकारी या दिलचस्पी रखने वाले होते हैं। ये कमेटियां सम्बन्धित विभागाध्यक्षों व अन्य विशेषज्ञों से भी परामर्श लेकर तब अपनी राय निश्चित करती हैं। मन्त्रिमंडल किसी कमेटी की किसी भी राय को मानने को बाध्य नहीं है, पर व्यवहार में बहुधा वह इनके परामर्श को ही मान्यता देता है। कारण यह है कि कमेटियां गम्भीर अध्ययन और विचार के बाद ही अपना मत देती हैं और मन्त्रिमण्डल के पास इतना समय भी नहीं होता कि वह व्यर्थ का पिष्ट-पेषण करे। कुछ लोगों की राय में कमेटियों के उपयोग से पूरे मन्त्रिमंडल की बैठकों का महत्त्व कम होता जा रहा है, बढ़ते हुये कार्य भार के कारण कमेटियों की सहायता लेना मन्त्रिमंडल के लिए अनिवार्य सा हो गया है।

मन्त्रिमण्डल का कार्यालय (Cabinet Secretariat)—१९१६ ई० तक मन्त्रिमंडल की बैठकों में न तो कोई निश्चित कार्यक्रम होता था और न उसके निर्णयों का कोई लिखित ब्यौरा ही रक्खा जाता था। यदि कोई मन्त्री किसी बैठक में कोई विषय निर्णयार्थ प्रस्तुत करना चाहता था तो वह प्रधान मन्त्री को पहले से सूचित कर देता था और प्रधान मन्त्री प्रत्येक बैठक के कुछ समय पहले प्रस्तुत होने वाले सभी विषयों की स्वयं ही एक सूची अपने स्मरणार्थ बना कर सामने रख लेता था। जो निर्णय होते थे उनका भी कोई लिखित ब्यौरा न रक्खा जाता था। सब कुछ

मन्त्रियों की स्मरण शक्ति पर ही छोड़ दिया जाता था। कभी-कभी आपस में इस बात पर बड़ा मतभेद हो जाता था कि अमुक बात का क्या निर्णय हुआ था। एक मन्त्री एक बात कहता तो दूसरा दूसरी। केवल प्रधान मन्त्री सम्राट् की सूचना के लिए निर्णयों की एक संक्षिप्त सूची बना लेता था।

प्रथम युद्ध के समय १९१६ ई० में लायड जार्ज ने मन्त्रिमंडल की कार्यवाही का लिखित ब्यौरा रखने के लिये एक सेक्रेटरी की व्यवस्था की जो कि बैठकों में उपस्थित रहकर निर्णयों को उसी समय लिपिबद्ध करता जाय। सेक्रेटरी की सहायता के लिए एक कार्यालय भी स्थापित हुआ। उस समय यह सब प्रबन्ध केवल युद्ध की समाप्ति तक के लिए किये गये थे, पर वे इतने सुविधाजनक सिद्ध हुए कि स्थायी कर दिये गये। अब यह सेक्रेटेरियट या कार्यालय मन्त्रिमंडल का एक अभिन्न सहकारी अंग बन गया है।

अनुसंधान से पता लगा है कि मन्त्रिमंडल के निर्णयों का लिखित विवरण रखने की प्रथा नई नहीं है। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में वह प्रचलित थी, पर बाद में किसी कारण से बंद हो गई थी। सरकारी काम के बढ़ने के साथ मन्त्रिमण्डलों के निर्णयों की संख्या, विशेषतः युद्ध-काल में, इतनी बढ़ गई कि उन्हें जबानी याद रखना असम्भव हो गया, और लिखित विवरण का प्रबंध करना अनिवार्य हो गया।

आजकल केबिनेट का कार्यालय एक पूरा विभाग ही बन गया है। उसका अध्यक्ष स्थायी सेक्रेटरी और मन्त्रिमंडल का सेक्रेटरी (Permanent Secretary and Secretary of the Cabinet) कहलाता है। उसके अतिरिक्त उस विभाग में दो डिप्टी सेक्रेटरी और कई ज्वाइंट सेक्रेटरी, अंडर सेक्रेटरी और असिस्टैंट सेक्रेटरी होते हैं।

मन्त्रिमंडल के इस कार्यालय के कार्य निम्नलिखित हैं :—

(१) प्रधानमन्त्री के आदेशानुसार मन्त्रिमंडल की बैठकों का कार्यक्रम बनाना। मन्त्रिमंडल की कमेटियों के कार्यक्रम (agenda) भी इसी के द्वारा बनाये जाते हैं।

(२) कार्यक्रम से सम्बंधित कागज-पत्रों को मन्त्रिमण्डल के सदस्यों के पास भेजना।

(३) मन्त्रिमंडल और उसकी कमेटियों की बैठकों की सूचना और आमन्त्रण भेजना।

(४) मन्त्रिमण्डल के निर्णयों को लिपिबद्ध करके मन्त्रियों के पास भेजना, और कमेटियों के निर्णयों को भी इसी प्रकार लिपिबद्ध करना तथा उनकी रिपोर्टें तैयार करना।

(५) मन्त्रिमंडल की आज्ञानुसार उसके कागज-पत्रों को सुरक्षित रखना, तथा उसके निर्णयों की प्रतिलिपि रखना।

(६) मन्त्रिमंडल के निर्णयों पर विभिन्न विभागों द्वारा जो कार्रवाही की गई है उसकी खबर रखना तथा पता लगाना।[1]

मन्त्रिमण्डल के अधिकार और कार्य

मन्त्रिमण्डल की केन्द्रीय स्थिति—मन्त्रिमंडल ही ब्रिटिश राज्य-संचालन-व्यवस्था का केन्द्र है। बेगोट (Bagehot) के मतानुसार मन्त्रिमण्डल राज्य के कानून निर्माता और शासनकर्ता को जोड़ने वाली कड़ी है[2]। लावेल ने इसे राजनैतिक मेहराब का कुंजी वाला पत्थर कहा है[3]। मैरियट ने कहा है कि मन्त्रिमंडल वह धुरी है जिस-पर राजयन्त्र घूमता है[4]। रामसे म्योर ने इसे राज्यरूपी पोत का पतवार बतलाया है[5]। एमरी के मतानुसार यह सरकार का केन्द्रीय संचालक यन्त्र है[6]। इन कथनों से शासन-व्यवस्था में मन्त्रिमंडल के महत्त्व का पता चलता है।

शासन-संचालन का अधिकार—कानून की दृष्टि से शासन-संचालन का अधिकार सम्राट् को है, पर हम देख चुके हैं कि सम्राट् सभी राजकीय कार्यों में मन्त्रि-मंडल के मतानुसार ही चलते हैं। व्यावहारिक दृष्टिकोण से हम कह सकते हैं कि शासन के सर्वोच्च अधिकार मन्त्रिमंडल ही को प्राप्त हैं। संयुक्त रूप से वह शासन नीति को निर्धारित करता है और उसके सदस्य वैयक्तिक रूप से भिन्न-भिन्न विभागों के अध्यक्ष होते हैं। इस प्रकार मन्त्रिमंडल ही के हाथों में शासनाधिकार केन्द्रित हैं। सभी शासन विभाग और सभी राज्य-कर्मचारी मन्त्रिमण्डल के निर्णय को मानने के लिए बाध्य हैं।

पार्लमेंट का नेतृत्व—मन्त्रिमण्डल केवल शासन ही के अधिकार नहीं रखता, किन्तु बहुसंख्यक दल के नेताओं से मिलकर बने रहने के कारण वह पार्ल-मेंट, विशेषतः कामन्स सभा का नेतृत्व भी करता है। पार्लमेंट सभी बातों में उसी की इच्छा का अनुसरण करती है। मन्त्रिमण्डल ही यह निश्चित करता है कि पार्लमेंट के किस अधिवेशन के सामने कौन-कौन कार्य आवेंगे और प्रत्येक अधिवेशन के प्रारम्भ में होने वाले सम्राट् के भाषण द्वारा वही इन कार्यों की पूर्व-सूचना देता है। वास्तव में सम्राट् का भाषण मन्त्रिमंडल द्वारा ही तैयार किया जाता है। दूसरे, मन्त्रिमंडल ही पार्लमेंट के समय का मालिक है। प्रति सप्ताह कुछ घंटों को

[1] Jennings, Cabinet Government, p. 227.

[2] The hyphen that joins, the buckle that fastens the executive and legislature together. Bagehot.

[3] The keystone of the political arch. Lowell.

[4] The pivot round which the whole political machinery revolves. Sir John Marriot.

[5] The steering wheel of the ship of the state. Ramsay Muir.

[6] The central directing instrument of Government. L.S. Amery.

छोड़कर शेष समस्त समय में पार्लमेंट मन्त्रिमण्डल द्वारा प्रस्तुत किये गये विधेयकों और प्रस्तावों का ही विचार और निर्णय करती रहती है। इन बैठकों का कार्यक्रम मन्त्रिमण्डल के परामर्शानुसार ही निर्धारित होता है। इतना ही नहीं, मन्त्रिमण्डल या उसका प्रधान मन्त्री सम्राट् से किसी भी समय पार्लमेंट को भंग करवा के उसके जीवन की इतिश्री कर दे सकता है।

कानून निर्माण और अर्थ सम्बन्धी प्रभाव—मन्त्रिमण्डल स्वयं तो कानून नहीं बना सकता है और न कर लगा सकता या व्यय की मञ्जूरी दे सकता है, पर पार्लमेंट का नेतृत्व करने के कारण और उसके बहुमत का समर्थन प्राप्त होने के कारण वह जो भी कानून चाहे बनवा सकता है और जैसी भी चाहे वैसी आर्थिक व्यवस्था करवा सकता है। यह कहने में अधिक अत्युक्ति नहीं है कि आजकल मन्त्रि-मण्डल ही पार्लमेंट के परामर्श और सम्मति से कानून निर्माण तथा अर्थ-व्यवस्था का सम्पूर्ण कार्य करता है। सभी सरकारी विधेयक और वार्षिक आय-व्यय का लेखा मन्त्रिमण्डल ही के तत्वावधान में तैयार किये जाते हैं और वही या उसके विशेष सदस्य उन्हें पार्लमेंट में प्रस्तुत करते हैं। बिना उसकी सम्मति के उनमें कोई भी संशोधन-परिवर्तन होना असम्भव है। बिना मन्त्रिमण्डल के समर्थन अथवा कम से कम उसके विरोध के अभाव के बिना, गैर सरकारी सदस्यों का कोई भी विधेयक या प्रस्ताव पार्लमेंट द्वारा पारित नहीं किया जा सकता।

युद्ध, शान्ति और सन्धि—युद्ध, शान्ति और सन्धि करना ये सब सम्राट् के विशेषाधिकार हैं। इनका तथा अपराधियों को क्षमा करने का विशेषाधिकार का प्रयोग वास्तव में मन्त्रिमण्डल द्वारा ही होता है।

संक्षेप में यों कहा जा सकता है कि कानून द्वारा जितने भी अधिकार व कार्य सम्राट् या पार्लमेंट में निहित हैं, वास्तव में उन सब का प्रयोग और सम्पादन मन्त्रि-मण्डल द्वारा ही होता है। मन्त्रिमंडल इन कार्यों को स्वयं करता है। कानून की मर्यादा की रक्षा के लिए वह इन्हें सम्राट् या पार्लमेंट के ही द्वारा कराता है, पर प्रेरक-शक्ति उसी की रहती है और पार्लमेंट व सम्राट् उसके परामर्श ही पर अपनी स्वीकृति की मोहर लगा देते हैं। केवल न्याय-कार्य और न्यायालय मन्त्रिमण्डल के अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं, शेष सब कुछ उसके अन्दर ही है।

मंत्रिमण्डल का उत्तरदायित्व

मन्त्रिमण्डल इन अधिकारों का निरंकुशतापूर्वक प्रयोग नहीं कर सकता। यदि वह वैसा कर सकता तो ब्रिटेन में प्रजातन्त्र न रह कर निरंकुश राज्य स्थापित हो जाता। वास्तव में मन्त्रिमंडल अपने अधिकारों के उचित प्रयोग के लिये एक से अधिक अधिकारियों के प्रति उत्तरदायी है। यह उत्तरदायित्व कानून पर अवलम्बित न होकर

प्रथा पर निर्भर है, पर यह प्रथा इतनी दृढ़ हो गई है कि इसका महत्व किसी कानून से कम नहीं।

मन्त्रिमण्डल प्रकारान्तर से तीन अधिकारियों के प्रति उत्तरदायी है अर्थात् सम्राट् के प्रति, (२) कामन्स सभा के प्रति और (३) देश के मतदाताओं के समूह के प्रति।

संयुक्त उत्तरदायित्व—मन्त्रिमण्डल का इन सभी अधिकारियों के प्रति संयुक्त उत्तरदायित्व (Collective responsibility) है, अर्थात् सभी मन्त्री एक दूसरे के कार्यों और निर्णयों के औचित्य के लिए समान रूप से जिम्मेदार माने जाते हैं। एक मन्त्री पर किया हुआ आक्षेप पूरे मन्त्रिमण्डल पर आक्षेप माना जाता है और उसके कारण यदि एक मन्त्री को पद-त्याग करना पड़े, तो उसके साथ ही पूरा मन्त्रिमण्डल पद-त्याग कर देता है। इसका यह अर्थ न समझना चाहिये कि मन्त्रिमण्डल का कोई मन्त्री कभी अकेले पद-त्याग करता ही नहीं। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब कि मन्त्रिमण्डल के किसी एक मन्त्री ने कोई अनुचित कार्य हो जाने पर अकेले ही अपना पद-त्याग कर दिया और उसके साथी अपने पदों पर बने रहे। उदाहरणार्थ १९३६ ई० में जे० एच० टामस ने और १९४७ में ह्यू डाल्टन ने अर्थ-मन्त्री के पद से बजट के रहस्यों के समय से पूर्व प्रकाशित होने के कारण पद-त्याग कर दिया और १९३७ ई० में वैदेशिक मन्त्री सर सैमुएल होर ने इस कारण पद-त्याग किया कि उनका और फ्रांस के मन्त्री लावल का इथियोपिया के विषय का समझौता देश को मान्य न था। इन लोगों ने अपने मन्त्रिमण्डल के सहयोगियों की सम्मति से इस कारण पद-त्याग किया कि उनसे स्पष्ट रूप से भूल हो गई थी। पर यदि मन्त्रिमंडल के किसी सदस्य को कामन्स सभा पद-त्याग करने को लाचार करे, तो अन्य मन्त्री उसका साथ देंगे और या तो उसे बचा लेंगे अन्यथा उसके साथ ही स्वयं भी पद-त्याग कर देंगे। मन्त्रिमंडल अपनी इच्छा से अपने किसी सदस्य को अलग कर दे तो उससे संयुक्त उत्तरदायित्व के नियम का अपवाद नहीं होता। संयुक्त उत्तरदायित्व का प्रश्न तभी उठता है जब किसी मन्त्री पर किसी बाहर के अधिकारी द्वारा आक्षेप या आक्रमण किया जाय।

मन्त्रिमण्डल का सम्राट् के प्रति उत्तरदायित्व—एक समय था जब कि मन्त्रियों का उत्तरदायित्व केवल सम्राट् ही के प्रति था। वह ही उन्हें इच्छानुसार नियुक्त और पदच्युत कर सकता था। प्रजातन्त्र के विकास के साथ सम्राट् के ये अधिकार जाते रहे और तदनुसार जब वह मन्त्रियों के परामर्शानुसार ही काम करने को बाध्य है, तो मन्त्रियों के उसके प्रति उत्तरदायित्व कोई भयावह या गम्भीर वस्तु नहीं है। क्योंकि वह उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकता। प्रोफेसर लास्की के मतानुसार इस उत्तरदायित्व का इतना मात्र अभिप्राय है कि मन्त्रिमंडल सम्राट् को प्रत्येक बात की सूचना

देता रहे, उसे अपने निर्णयों की आलोचना करने का मौका दे और प्रत्येक विभाग के महत्वपूर्ण कागज़-पत्र उसे दिखला कर उसका परामर्श लेता रहे।

मन्त्रिमण्डल का कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायित्व—आजकल मन्त्रिमंडल का वास्तविक उत्तरदायित्व कामन्स सभा के प्रति माना जाता है। कोई भी मन्त्रिमंडल तभी तक पदारूढ़ रह सकता है जब तक कि उसमें कामन्स सभा का विश्वास रहे, अर्थात् जब तक कि कामन्स सभा के अधिकांश सदस्य उसका समर्थन करें। कामन्स सभा का बहुमत अपने विरुद्ध हो जाने पर या तो मन्त्रिमंडल को तत्काल पद-त्याग कर देना चाहिये, या फिर उक्त सभा को भंग करवा कर नये चुनाव द्वारा मतदाताओं का निर्णय प्राप्त करना चाहिये।

कामन्स सभा किसी मन्त्रिमंडल में अपने अविश्वास को निम्नलिखित रीतियों से प्रकट कर सकती है :—

(१) मन्त्रिमंडल के किसी भी महत्वपूर्ण विधेयक या अन्य प्रस्ताव को अस्वीकृत करके।

(२) किसी ऐसे गैर-सरकारी विधेयक या प्रस्ताव को, जिसका मन्त्रिमंडल विरोध कर रहा हो, स्वीकार या पारित करके।

(३) किसी मन्त्री के वेतन को कम करने के प्रस्ताव को पारित करके।

(४) किसी मन्त्री के विरुद्ध निंदात्मक प्रस्ताव (vote of censure) पारित करके, और

(५) पूरे मन्त्रिमंडल के विरुद्ध प्रत्यक्ष रीति से अविश्वास प्रस्ताव पारित करके। अविश्वास प्रस्ताव मन्त्रिमंडल की सामान्य नीति अथवा उसके समस्त कार्य-कलाप के विरुद्ध लाया जाता है और साधारणतः प्रतिपक्षी दल का नेता उसे प्रस्तुत करता है।

कामन्स सभा में मन्त्रिमण्डल की हार का परिणाम—कामन्स सभा में मन्त्रिमंडल की उपरोक्त रीतियों में से किसी के भी द्वारा हार होने पर उसके सामने केवल दो मार्ग रह जाते हैं। या तो उसे तुरंत ही पद-त्याग कर देना चाहिये, या यदि उसका ख्याल है कि कामन्स सभा का बहुमत विरुद्ध होने पर भी देश का बहुमत उसके साथ है, तो उसे सम्राट् से पार्लमेंट का विघटन करके नये चुनाव की घोषणा करने का अनुरोध करना चाहिये। अब यह एक सर्वसम्मत प्रथा है कि प्रधान मन्त्री के किसी भी समय पर पार्लमेंट के विघटन करने के अनुरोध को सम्राट् तत्काल मान लेता है। इसके बाद होने वाले चुनाव में यदि मंत्रिमंडल विजयी हुआ अर्थात् उसके समर्थक अधिकांश संख्या में चुनकर कामन्स सभा में आ गये, तो वह पदारूढ़ बना रहता है, और यदि चुनाव का परिणाम इसके विपरीत हुआ, तो वह तुरन्त पद-त्याग कर देता

है। कामन्स सभा के निर्णय को इस प्रकार अग्राह्य करके उस पर चुनाव द्वारा देश की सम्मति लेने को ब्रिटेन में 'देश से पुनर्विचार की प्रार्थना' (Appeal to the Country) कहते हैं। आजकल साधारणतया कोई भी मन्त्रिमण्डल बिना देश से पुनर्विचार की प्रार्थना किये हुए केवल कामन्स सभा में ही हार होने पर पद-त्याग नहीं करता।

कभी-कभी मन्त्रिमंडल का कामन्स सभा में बहुमत होते हुए भी किसी प्रश्न पर अचानक उसकी हार हो जाती है। ऐसा बहुधा असावधानी के कारण या अपने समर्थकों के पर्याप्त संख्या में उपस्थित न होने के कारण होता है। इस प्रकार की हार को 'आकस्मिक हार' (snap vote) कहते हैं, और इसके कारण मन्त्रिमंडल पद-त्याग करने को बाध्य नहीं समझा जाता। हार आकस्मिक न हो, तो भी यदि वह किसी महत्त्वपूर्ण बात पर न हुई हो तो वह मन्त्रिमण्डल के पद-त्याग का हेतु नहीं बनती। १९०४-५ में बाल्फोर मन्त्रिमण्डल, १९२०-२२ में लायड जार्ज मन्त्रिमण्डल, और १९२४ के मजदूर मन्त्रिमण्डल ने कई बार अपनी हारों को महत्वहीन कहकर उनकी उपेक्षा कर दी थी। यह मन्त्रिमन्डल ही के निर्णय करने की बात है कि किस प्रश्न को वह महत्त्वपूर्ण मानेगा और किसको न मानेगा। पर इस मामले में धाँधली करने की अधिक गुञ्जाइश नहीं है। मन्त्रिमन्डल कुछ भी कहे, पर यदि कामन्स सभा का बहुमत वास्तव में उसके विरुद्ध हो गया है, तो उसकी हार पर हार होगी, और उसे पद-त्याग करना अथवा देश से पुनर्विचार की प्रार्थना करनी ही पड़ेगी।

मन्त्रिमण्डल के कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायित्व की वास्तविकता—आजकल राजनैतिक दलों के अनुशासन के विकास के कारण कामन्स सभा में मन्त्रि-मन्डल की हार होना असम्भव-सा हो गया है। सर आइवर जेनिंग्स ने लिखा है कि "राजनैतिक दलों के प्रभाव के कारण वास्तव में मन्त्रिमण्डल ही कामन्स सभा का नियन्त्रण करता है न कि कामन्स सभा मन्त्रिमंडल का"[१]। सर सिडनी लो ने अपनी पुस्तक गवर्नमेन्ट आफ इंगलैंड में लिखा है कि आजकल किसी मन्त्रिमंडल की कामन्स सभा में हार होती ही नहीं। वह या तो अपने दल में फूट पड़ जाने पर पद-त्याग करता है (द्वितीय मजदूर मन्त्रिमंडल ने १९३१ में), या फिर चुनाव में हार होने पर। रामसे म्योर ने लिखा है कि 'सिद्धान्त की दृष्टि से मन्त्रिमंडल पार्लमेंट के अधीन है, पर वास्तव वह पार्लमेंट का स्वामी है'[२]।

पार्लमेंट और मन्त्रिमन्डल के पारस्परिक सम्बन्ध का यह विपर्यय कैसे हो

[१] Jenning's Cabinet Government, p. 239

[२] Muir, How Britain is Governed, p. 62 (Allahabad edition)

गया, सिद्धान्त रूप से मन्त्रिमण्डल की स्वामिनी होते हुए भी पार्लमेंट वास्तव में उसकी दासी कैसे बन गई ?

इसका उत्तर यह है कि राजनैतिक दलों के विकास और उनके अनुशासन की कड़ाई की वृद्धि के कारण मन्त्रिमण्डल और कामन्स सभा के पारस्परिक सम्बन्ध यों उलट गये।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक ब्रिटेन में राजनैतिक दल तो थे, पर उनका सदस्यों पर कोई कठोर नियन्त्रण न रहता था। उन दिनों मतदाताओं की संख्या थोड़ी थी और चुनाव के उम्मीदवार लोग अपने ही व्यय और अपनी ही शक्ति से चुनाव लड़ते और जीतते थे। चुनकर कामन्स सभा में आने पर वे अपनी रुचि के अनुसार इस या उस दल में सम्मिलित हो जाते थे, पर प्रत्येक दशा में उसका समर्थन करने को वे बाध्य न थे। अपने दल की सरकार यदि अनुचित काम करती, तो वे विपक्षी दल से मिलकर उसे हरा देते थे। उन दिनों वाद-विवाद की युक्तियाँ सदस्यों को इधर या उधर झुका सकती थीं। सारांश यह कि तब कामन्स सभा के सदस्य स्वतंत्र थे।

१८३२ के बाद से सुधारों के फलस्वरूप मतदाताओं की संख्या बढ़ने लगी। क्रमशः वह इतनी बढ़ गई कि किसी भी उम्मीदवार के लिये अपने बूते पर चुनाव लड़ना असम्भव हो गया। इसके लिए बहुत धन और बहुत से कार्यकर्ताओं को आवश्यकता पड़ने लगी। इन्हें प्रस्तुत करने के लिये राजनैतिक दलों का वर्तमान प्रकार का सङ्गठन हुआ। इन सङ्गठित दलों ने चुनाव जीतने के साधनों—धन और जन—को एकत्र किया। वे ही उम्मेदवारों को चुनने और खड़े करने लगे। अपनी सहायता से जीते हुये उम्मेदवारों से उन्होंने यह वचन लेना प्रारंभ किया कि कामन्स सभा में दल के नेताओं के आदेशानुशार ही अपना मत देंगे। ऐसा न करने पर उन्हें विद्रोही व निन्द्य कह करके सदस्यता त्याग के लिए बाध्य किया जा सकता है। इस स्थिति में बहुमत दल के सदस्य अपने दल के मन्त्रिमंडल का प्रत्येक दशा में समर्थन करने को बाध्य हैं। मन्त्रिमंडल की नीति उन्हें रुचे या नहीं, मन्त्रिमंडल के विरुद्ध प्रतिपक्षी दल के तर्क कितने ही प्रभावशाली क्यों न हों, बहुमत दल के सदस्य मन्त्रियों के विरुद्ध जा नहीं सकते। परिणाम यह होता है कि आज दिन मन्त्रिमंडल को हराने के लिये उसके विरुद्ध कामन्स सभा में बहुमत संगठित ही नहीं किया जा सकता। मन्त्रिमंडल का दल सदैव ही बहुसंख्यक रहता है और वह प्रतिपक्षी दल के सभी आक्षेपों और आक्रमणों को परास्त कर देता है। मन्त्रिमंडल के विरुद्ध अविश्वास का सफल प्रदर्शन असंभव हो गया है।

मन्त्रिमण्डल की तथा कथित तानाशाही—इस प्रकार कामन्स सभा का

मन्त्रिमंडल पर स्वामित्व जाता रहा। उल्टे मन्त्रिमंडल ही अपने बहुसंख्यक सदस्यों की सहायता से कामन्स सभा को जिस प्रकार चाहे, दबा सकता है। बहुमत की सहायता से वह जो चाहे, कानून बनवा सकता है; जो भी कर चाहे, लगवा सकता है; जितना चाहे उतना व्यय स्वीकृत करा सकता है तथा और भी मनमानी बातें करा सकता है। कामन्स सभा के समय का वह पूर्णरूप से मालिक है। अधिक क्या पार्लमेंट का जीवन भी मन्त्रिमंडल की मुट्ठी में है। वह सम्राट् से अनुरोध करके जब चाहे तब वर्तमान पार्लमेंट को भङ्ग करा कर नया चुनाव करवा सकता है। साधारण सदस्य समय से पहिले चुनाव का होना पसंद नहीं करते। चुनाव में धन व्यय होता है, दौड़धूप करनी पड़ती है और फिर हार जाने की भी सम्भावना रहती ही है। मन्त्री तो बड़े नेता होने के कारण चुन कर आ ही जाते हैं, पर साधारण सदस्य चुनाव से भय खाते हैं। अतएव यदि वे अधिक गड़बड़ी या आलोचना करते हैं तो मन्त्रिमंडल की एक साधारण धमकी कि वह पार्लमेंट भङ्ग करा देगा, उन्हें ठंडा और शांत कर देती है।

सारांश यह है कि राजनैतिक दलों के अनुशासन के कारण आज कामन्स सभा के सदस्य स्वतंत्र रीति से अपना मत नहीं दे सकते। उन्हें दल के नेताओं का समर्थन करना ही पड़ता है। मन्त्रिमंडल बहुसंख्यक दल के नेताओं से बना होता है। अतः उसे पार्लमेंट के बहुसंख्यक सदस्यों का सदैव ही समर्थन प्राप्त रहता है। उस समर्थन की सहायता से वह अपने विरुद्ध किये गये सभी आक्षेपों और आक्रमणों को परास्त कर सकता है। अतः व्यवहार में कामन्स सभा के वे सब अस्त्र जिनके द्वारा वह मन्त्रिमंडल को पदच्युत कर सकता है, बेकार हो गये हैं।

रामसे म्योर का यह मत है कि आजकल मन्त्रिमंडल सर्वशक्तिमान् और निरंकुश बन गया है। नीति-निर्धारण, शासन, कानून-निर्माण, आय-व्यय, बड़े-बड़े पदों पर नियुक्ति, पार्लमेंट का नेतृत्व आदि सब कुछ उसी के हाथ में है और पार्लमेंट उसके हाथ की कठपुतली बन गई है। इस प्रकार ब्रिटेन में प्रजातंत्र एक प्रकार से विकृत हो गया है। वास्तविक प्रजातंत्र में विधान-मंडल के सदस्यों का मन्त्रिमंडल पर वास्तविक नियंत्रण और दबाव रहना चाहिये जैसा कि फ्रांस में है।

प्रोफेसर लास्की और श्री एल० एस० एमरी ने म्योर के इस आक्षेप का खंडन करते हुये यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि ब्रिटेन के मन्त्रिमंडल की ही कार्यपद्धति ठीक है।

लास्की का कहना है कि ब्रिटिश मन्त्रिमंडल को निरंकुश नहीं कहा जा सकता। यह सत्य है कि मन्त्रिमंडल को बहुमत दल की सहायता साधारणतया अधिकांश बातों में प्राप्त रहती है, पर इसका यह अर्थ नहीं है कि मन्त्रिमंडल अपने अनुयायियों और लोकमत की उपेक्षा कर सकती है। वैसा करने का परिणाम होता है बहुमत दल का

छिन्न-भिन्न हो जाना; जैसा कि १८८६ में आइरिश स्वराज्य के प्रश्न पर उदार दल और १९३१ ई० में खर्च की कमी के प्रश्न पर मजदूर दल की दशा हुई थी। १९३६ ई० में अनुदार दल का प्रबल बहुमत था, पर तो भी उसे सर सैमुएल होर को मन्त्रित्व-पद से अलग करना ही पड़ा, क्योंकि अबीसीनिया के प्रश्न पर लोकमत उनकी नीति के नितांत विरुद्ध हो गया था। ये उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं कि अधिक से अधिक शक्तिशाली मन्त्रिमंडल भी निरंकुश नहीं हो सकता। यह अवश्य है कि आजकल मन्त्रिमंडल कामन्स सभा द्वारा पदच्युत न किया जाकर चुनाव में हारने पर पद-त्याग करता है, पर इसका केवल इतना मात्र अर्थ है कि मन्त्रिमंडल का उत्तरदायित्व प्रजातंत्र के विकास के साथ-साथ क्रमशः जनता की दिशा में खिसकता-खिसकता आज मतदाताओं के ही प्रति हो गया है। पहले मन्त्री सम्राट् के प्रति उत्तरदायी थे। प्रजातंत्र की कुछ वृद्धि होने पर वह उत्तरदायित्व कामन्स सभा के लोक-प्रतिनिधियों के पास खिसक आया। अब जबकि प्रजातंत्र पूर्णता पर पहुँच गया है, तो यह उत्तरदायित्व सीधे जनता के ही प्रति हो गया है।

श्री एल० एस० एमरी के मतानुसार प्रजातंत्रीय शासन-पद्धति के सम्बन्ध में दो सिद्धांत हैं। उनमें से एक तो यह है कि सरकार को शासनाधिकार जनता से प्राप्त हुआ है। अतः जनता या उसके प्रतिनिधियों द्वारा ही सरकार का चुनाव होना चाहिये और उसे जनता के आदेशों का अनुसरण करते हुए ही शासन करना चाहिये। फ्रांस, स्विटजरलैंड और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की सरकारें इसी सिद्धांत के अनुसार बनी हैं। स्विटजरलैंड में मन्त्री विधानमंडल के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में चुने जाते हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति का भी निर्वाचकों द्वारा परोक्ष रीति से चुनाव होता है। इन देशों तथा फ्रांस में सरकार को जनता के प्रतिनिधियों के आदेशानुसार शासन करना पड़ता है। वे स्वतंत्र नीति का अवलम्बन नहीं कर सकते। पर ब्रिटेन के शासन-संगठन का मूल सिद्धांत भिन्न है। वहाँ सरकार अथवा मन्त्रिमंडल का निर्माण सम्राट् के आदेशानुसार होता है और उनके शासनाधिकारों का मूल भी सम्राट् ही है, न कि जनता या उसके प्रतिनिधि। ब्रिटिश प्रधान मन्त्री सम्राट् द्वारा नियुक्त होता है और अन्य मन्त्री भी प्रधान मन्त्री के परामर्शानुसार सम्राट् द्वारा ही नियुक्त किये जाते हैं। मन्त्रिमंडल को जनता या उसके प्रतिनिधि नहीं चुनते। इसी कारण शासन-सञ्चालन में भी मन्त्रिमंडल पार्लमेंट का अनुसरण न करके उसका नेतृत्व करता है। प्रजातंत्र का ब्रिटेन में यह अर्थ नहीं है कि पार्लमेंट शासन करती या कर सकती है। उसका इतना मात्र अर्थ है कि शासन पार्लमेंट की सम्मति से होना चाहिये। नीति-निर्धारण व शासन-संचालन का अधिकार केवल मन्त्रिमंडल को है। पार्लमेंट केवल अपनी सम्मति या असम्मति प्रकट कर सकती है। पार्लमेंट की असम्मति होने पर ब्रिटिश मन्त्रिमंडल पद-त्याग कर

सकता है, परंतु अपनी नीति नहीं बदलता। पार्लमेंट चाहे एक मन्त्रिमंडल को रक्खे या दूसरे को, पर उसे सदा मन्त्रिमंडल के पीछे ही चलना पड़ेगा, उसके आगे कभी भी नहीं। एमरी के मत का सारांश यह है कि ब्रिटिश पद्धति में प्रमुखता मन्त्रिमंडल की है और पार्लमेंट का काम केवल आलोचना करना और नियंत्रण रखना मात्र है। सरकार का सञ्चालन होता रहे यह मूल बात है और उक्त सञ्चालन सम्भव जन-मत के अनुसार हो—यह उसके बाद की बात है। जिन संसदीय व्यवस्था वाले देशों में (जैसे फ्रांस में) इस क्रम को उलट कर जन मत को प्रधान और सरकार को गौण स्थान दिया गया है, वहाँ अनेक विकार उत्पन्न हो गये हैं, जैसे मन्त्रिमंडल का निर्बल तथा अल्पजीवी होना। अतः मन्त्रिमंडल के उत्तरदायित्व का विशुद्ध स्वरूप इतना मात्र है कि जब पार्लमेंट अथवा जनता उसकी नीति से सहमत न हो, तो वह पद-त्याग कर दे। पर जब तक पार्लमेंट या जनता उसे पदारूढ़ रखना चाहती है, तब तक उसे मन्त्रिमंडल की बात मान कर ही चलना पड़ेगा। जो लोग इस व्यवस्था को मन्त्रिमंडल की तानाशाही या निरंकुशता कहते हैं, वे मन्त्रिमंडल के उत्तरदायित्व का ठीक अर्थ समझते ही नहीं। जनता कभी शासन-सञ्चालन नहीं कर सकती। इसकी योग्यता उसमें नहीं होती। पर वह यह जरूर कह सकती है कि शासन अच्छा है या बुरा, उससे उसे सुख है या दुःख। ब्रिटिश प्रणाली की संसदीय व्यवस्था इसी मौलिक सत्य के आधार पर बनी है।

पार्लमेंट का मन्त्रिमण्डल पर नियंत्रण—यद्यपि पार्लमेंट मन्त्रिमंडल के शासन में अनावश्यक हस्तक्षेप नहीं कर सकती, पर उसके पास कुछ ऐसे साधन हैं जिनके उपयोग द्वारा वह मन्त्रिमंडल के सदैव सतर्क रहने और उचित मार्ग पर चलने के लिए बाध्य कर सकती है। ये साधन निम्नलिखित हैं :—

१. प्रश्न पूछने का अधिकार—पार्लमेंट का कोई भी सदस्य किसी भी मन्त्री से उसके विभाग के शासन के विषय में कोई प्रश्न पूछ सकता है। प्रश्नों के द्वारा कहीं भी कोई अव्यवस्था या असंतोषजनक बात हो, तो उसे प्रकाश में लाया जा सकता है और उसके लिए उत्तरदायी मन्त्री से उत्तर माँगा जा सकता है। पार्लमेंट की प्रतिदिन की बैठक का पहला घंटा प्रश्नों के लिए ही सुरक्षित रक्खा जाता है। मन्त्री सभी प्रश्नों का उत्तर देने को बाध्य नहीं हैं। वे यह कह कर इनकार कर सकते हैं कि उत्तर देना सार्वजनिक हित के विरुद्ध होगा, अर्थात् कोई बात जो गुप्त रहनी चाहिये, प्रकट हो जायगी। कोई भी विशेष कारण न रहने पर मन्त्रियों को उत्तर देना ही पड़ता है। प्रश्नों के पूछे जाने की सम्भावना मन्त्रियों और उनके अधीन कर्मचारियों को सदैव सतर्क रखती है।

२. कार्य-स्थगन प्रस्ताव (Motions of Adjournment)—प्रश्न

के घंटे के बाद ही कोई भी सदस्य यह प्रस्ताव कर सकता है कि सार्वजनिक महत्व के किसी निश्चित प्रश्न पर वाद-विवाद के लिए अन्य कार्य स्थगित कर दिया जाय। यदि ४० सदस्य इस प्रस्ताव के पक्ष में हों, तो उसी दिन बैठक के अंत में उस प्रस्ताव पर वाद-विवाद के लिए समय देना पड़ता है। ऐसे प्रस्ताव तभी रक्खे जाते हैं जब [illegible] की किसी महत्त्वपूर्ण भूल या किसी अत्याचार के लिए मन्त्रिमंडल की निंदा या भर्त्सना करनी हो। यदि वाद-विवाद के बाद यह प्रस्ताव बहुमत से स्वीकृत हो जाय, तो यह मन्त्रिमंडल के प्रति अविश्वास का द्योतक माना जाता है। अतः मन्त्रिमंडल को इस प्रकार के प्रस्तावों की संभावना से भी सतर्क रहना पड़ता है।

३. वाद-विवाद—विपक्षी दल के नेता को यह अधिकार है कि सरकारी नीति के किसी भी महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर वाद-विवाद (Debate) के लिए समय माँगे। मन्त्रिमंडल इस प्रकार की माँग को साधारणतया सदैव ही स्वीकार कर लेता है। यह वाद-विवाद निश्चित तिथि पर एक या कई दिनों तक चलता है और इसके द्वारा विचाराधीन नीति की प्रत्येक दृष्टिकोण से आलोचना हो जाती है। सरकार को अपनी नीति का समर्थन करना और उसके विरुद्ध आक्षेपों का उत्तर देना पड़ता है। मन्त्रिमंडल पर पार्लमेंट का यह भी एक महत्वपूर्ण अंकुश है।

मन्त्रिमंडल पर लोक नियंत्रण—पार्लमेंट के नियंत्रण के अतिरिक्त मन्त्रिमंडल पर अन्य भी अनेक दबाव और अंकुश रहते हैं, जो कि देश के लोकमत, विभिन्न संस्थाओं, संगठित व्यवसायों, समाचार-पत्रों आदि द्वारा प्रयुक्त होते हैं। मन्त्रिमंडल की अनुचित नीति के विरुद्ध सभाओं में प्रस्ताव पास करके अथवा समाचार-पत्रों द्वारा आन्दोलन किया जा सकता है। पूँजीपतियों, मजदूरों और अन्य संगठित स्वार्थों को जब सरकार का कोई निर्णय अरुचिकर या हानिकर प्रतीत होता है, तो वे शिष्ट-मण्डल (Deputation) भेजकर, प्रस्ताव पास करके अथवा इसी प्रकार के अन्य उपायों द्वारा अपना असंतोष प्रकट करते और उक्त निर्णय को बदलवाने की चेष्टा करते हैं। इस प्रकार मन्त्रिमंडल अनेक प्रकार के प्रभावों और दबावों से घिरा रहकर अपना कार्य करता है। उसके अधिकार चाहे जितने विस्तृत हों पर उनके निरंकुश प्रयोग का बहुत कम अवसर रहता है।

ब्रिटेन के मन्त्रिमंडल की आलोचना—निरंकुशता के आरोप के अतिरिक्त ब्रिटिश मन्त्रिमंडल की कुछ अन्य आलोचनाएँ भी की जाती हैं जिनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है।

(१) इनमें पहिली आलोचना यह है कि मंत्रिमंडल के पास इतने अधिकार और कार्य एकत्र हो गये हैं कि वह उनको ठीक पूरा नहीं कर पाता। रामसे म्योर (Ramsay Muir) का कहना है कि "मन्त्रिमंडल ने बिना सोचे-विचारे अपने

हाथों में इतने उत्तरदायित्व ले लिये हैं कि जिनका वह पालन नहीं कर सकता। वह उन उत्तरदायित्वों का भार न तो पार्लमेंट को लेने देता है और न उनकी पूर्ति की अन्य कोई व्यवस्था ही करता है। मंत्रिमंडल की सर्वशक्तिमत्ता की आड़ में ये अधिकार और उत्तरदायित्व नौकरशाही के हाथों में आ गये हैं।"

परंतु प्रोफेसर लास्की (Laski) के मतानुसार यह आरोप ठीक नहीं है। मन्त्रिमंडल के दो प्रधान कार्य विभिन्न विभागों के कार्य की देख-रेख (Supervision) और उनकी नीतियों का समन्वय करना (Co-ordination) हैं। ये दोनों कार्य मन्त्रिमंडल परी तौर से करता है। मन्त्री लोग प्रत्येक ऐसे प्रश्न को जिसमें नीति सम्बंधी कोई नई समस्या रहती है, मन्त्रिमंडल के सामने लाते और उस पर उसका निर्णय लेते हैं। इसके अतिरिक्त अपनी आर्थिक मंजूरी अधिकार द्वारा राजकोष विभाग (Treasury) भी प्रत्येक विभाग के नये प्रस्तावों की जाँच या अन्य विभागों के कार्यों से उनका समन्वय करता रहता है। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि वर्तमान व्यवस्था में शासन की देख-रेख या उसकी विभिन्न शाखाओं के समन्वय का अभाव है।

(२) दूसरी आलोचना यह है कि मन्त्रिमण्डल का अधिकांश समय सामयिक प्रश्नों के निर्णय ही में लग जाता है। उसे दीर्घकालीन नीति और योजनाओं (Long term policy and plans) पर विचार करने का न तो अवकाश है और न प्रवृत्ति। यह आलोचना श्री एल० एस० एमरी ने अपनी 'थाट्स अनादि कान्स्टीट्यूशन' (Thoughts on the Constitution) नामक पुस्तक में दी है। सर विलियम बेवरिज़ (Lord Beveridge) ने भी कहा है कि मंत्री लोगों के पास नई खोजों द्वारा प्राप्त ज्ञान का हृदयंगम करने और अपने निर्णयों में उसका प्रयोग करने के लिए समय का अभाव है।

लास्की ने इस आलोचना का भी खंडन करते हुये कहा है कि मंत्रिमण्डल कोई अन्वेषण समिति (Research Society) नहीं है कि वह प्रत्येक अनुसंधान का पता रक्खे। उसकी दिलचस्पी केवल उन अनुसंधानों के फलों में होती है जिनका राजनैतिक महत्त्व होता है। इस प्रकार के अनुसंधानों के उपयोग के लिये मन्त्रिमण्डल के पास पर्याप्त साधन हैं। अनेक परामर्शदात्री समितियाँ (Advisory committees) और विशेषज्ञ (Experts) विभिन्न विभागों से सम्बंधित हैं और उनके द्वारा आवश्यक अनुसंधानों की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित होता रहता है। दीर्घकालीन नीतियों और योजनाओं के निर्माण के लिए भी विशेषज्ञ समितियों तथा राजकीय आयोगों (Royal Commissions) का सहयोग लिया जाता है।

श्री एमरी का सुझाव यह है कि मंत्रिमण्डल में केवल पाँच-सात मन्त्री हों

और वे विभागीय उत्तरदायित्व से मुक्त रहें, जिससे वे अपना पूरा समय नीति और समन्वय सम्बंधी प्रश्नों को ही दे सकें। विभागों का भार सामान्य मन्त्रियों पर होना चाहिये, जो मन्त्रिमंडल के सदस्य न हों। ये सामान्य मन्त्रिमंडल वाले मन्त्रियों से निरंतर सम्पर्क बनाये रखकर उन्हें आवश्यक सूचनायें देते तथा महत्त्वपूर्ण समस्याओं की ओर उनका ध्यान आकर्षित करते रहें, पर मन्त्रिमंडल के सदस्यों का मुख्य काम हो इन समस्याओं का हल ढूँढ़ निकालना और नीति सम्बन्धी प्रश्नों पर निरंतर विचार। संक्षेप में श्री एमरी युद्धकालीन मन्त्रिमंडल की पद्धति को स्थायी बना देना चाहते हैं।

रामसे म्योर का मत था कि विभागों का पुनः सङ्गठन करके उनकी संख्या १० तक सीमित कर दी जाय। इस प्रकार मन्त्रिमंडल में भी दस ही सदस्य रहेंगे जिनमें से प्रत्येक एक-एक विभाग का अध्यक्ष होगा। आकार छोटा होने पर मन्त्रिमंडल अपना काम अधिक सुविधापूर्वक कर सकेगा। शासन की देख-रेख के कार्य में कामंस सभा का अधिक भाग होना चाहिये और मन्त्रियों का अधिकांश समय नीति और समन्वय सम्बंधी बड़े-बड़े प्रश्नों में ही लगना चाहिये।

पर अन्य विद्वान् इन सुझावों से सहमत नहीं। जब सरकारी काम दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है, तो मन्त्रिमंडल का आकार छोटा करना सहज नहीं है। मन्त्रियों की संख्या राजनैतिक परिस्थिति पर भी निर्भर रहती है, अर्थात् कभी-कभी प्रधानमन्त्री को अपने दल के विभिन्न उपदलों को प्रतिनिधित्व देने के लिए मन्त्रियों की संख्या बढ़ानी पड़ती है। विभाग-भार-मुक्त पाँच-सात मन्त्रियों के छोटे मन्त्रिमंडल के विरुद्ध दो बातें हैं। युद्धकालीन मन्त्रिमडलों के अनुभव से यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की अस्थायी व्यवस्था को स्थाई करना लोगों को पसन्द नहीं है। वे विस्तृत आधार वाला (broad-based) मन्त्रिमण्डल ही चाहते हैं। दूसरे, नीति-निर्धारण और शासन-संचालन के कामों को पृथक् करके उन्हें भिन्न-भिन्न कोटि के मन्त्रियों को सौंपना वांछनीय भी नहीं है। इससे नीति और शासन के घनिष्ठ सम्पर्क के छिन्न हो जाने और नीति की व्यावहारिकता को आघात पहुँचने का भय है। फिर, यह भी बात नहीं है कि मन्त्रिमण्डल में नीति और समन्वय के प्रश्नों को ही अपना अधिक समय देने वाले मन्त्रियों का अभाव हो। सर राबर्ट जेनिंग्स ने अपनी 'कैबिनेट गवर्नमेंट' (Cabinet Government) नामक पुस्तक में बतलाया है कि प्रत्येक मन्त्रिमंडल में कुछ कार्य-भार रहित मन्त्री जैसे लार्ड प्रेसीडेन्ट आफ दि काउन्सिल, लार्ड प्रिवी सील आदि होते ही हैं और प्रधानमन्त्री भी विभाग-भार साधारणतया नहीं ही ग्रहण करता। अतः ये सब अपना समय बड़े-बड़े प्रश्नों को देने के लिए स्वतंत्र रहते हैं।

(३) तीसरी आलोचना यह है कि मन्त्री लोग अपने विभागों के कर्मचारियों के हाथ में कठपुतली की भाँति होते हैं। वे अपने विभागों के कार्य के विशेषज्ञ तो

होते नहीं। अतः उन्हें अपने अधीन स्थायी कर्मचारियों की राय के अनुसार काम करना पड़ता है, क्योंकि कर्मचारी लोग अनुभवी और विशेषज्ञ होते हैं। इसी आलोचना पर हम एक आगे के अध्याय में विचार करेंगे। यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त है कि मन्त्रियों का काम विभाग का कार्य स्वयं करना नहीं, किन्तु केवल यह देखते रहना है कि स्थायी कर्मचारी उनकी नीति के अनुसार ठीक-ठीक काम करते रहें। यदि मन्त्री योग्य हो तो बिना विशेषज्ञ हुए भी वह विभाग के कार्य पर अपना प्रभाव डाल सकता है। चर्चिल और लायड जार्ज सरीखे मन्त्रियों को स्थायी कर्मचारियों के हाथ की कठपुतली कदापि नहीं कहा जा सकता। अपनी प्रकांड योग्यता के कारण उन्होंने सदैव शासन का नेतृत्व किया। यह सत्य है कि सभी मन्त्री इनकी ऐसी योग्यता के नहीं होते, पर वे भी अपने विभाग वालों से यह तो कह ही सकते हैं कि अमुक बात को जनता स्वीकार करेगी या नहीं। फिर मन्त्री लोग अपने विभाग के विशेषज्ञों की राय पर अन्य विशेषज्ञों की भी राय ले सकते हैं। वे चाहें तो विभाग में बाहर के एक-आध ऐसे विशेषज्ञों की नियुक्ति कर सकते हैं जिनमें उनका विश्वास हो और जिन्हें उनकी नीति से सहानुभूति हो। द्वितीय मजदूर मन्त्रिमंडल के वैदेशिक मन्त्री श्री हंडरसन पद-ग्रहण करते समय अपने विभाग में कुछ ऐसे विशेषज्ञ बाहर से लाये थे।

ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के संगठन के विषय की एक नई समस्या—ऊपर हम श्री एमरी के मत का उल्लेख कर चुके हैं कि मन्त्रिमंडल में विभागीय भार से मुक्त ५-७ मन्त्री ही हों जिनका कार्य नीति-निर्धारण व नीति-समन्वय मात्र रहे, और विभागीय मन्त्री मन्त्रिमंडल से बाहर ही रक्खे जायँ। इस मत का मूल सिद्धांत है नीति निर्धारण व समन्वय कार्य को शासन-प्रबंध कार्य से पृथक् कर देना।

सन् १९५१ में श्री चर्चिल ने जब अपना मन्त्रिमंडल बनाया, तो उस में उन्होंने चार ऐसे मन्त्री रक्खे जिनका कार्य दो या अधिक विभागीय मन्त्रियों के कार्यों का निरीक्षण तथा समन्वय करना था। स्वयं चर्चिल ने प्रतिरक्षा मन्त्री का पद ग्रहण करके स्थल, जल तथा वायु सेना विभागों के मन्त्रियों के कार्यों के निरीक्षण व समन्वय को अपने हाथ में लिया। लार्ड प्रेसीडेंट आफ दि काउन्सिल लार्ड ऊल्टन के नीचे खाद्य और कृषि के मन्त्री रक्खे गये। लार्ड लेदर्स को यातायात, ईंधन तथा विद्युतशक्ति विभागों के मन्त्रियों के ऊपर रक्खा गया, और लार्ड चेरवेल (मास्टर जनरल) को वैज्ञानिक और अन्वेषण कार्यों का समन्वयकर्ता बनाया गया। इन उच्चतर कोटि के मन्त्रियों में श्री चर्चिल को छोड़ कर शेष लार्ड-सभा में से थे। लोगों ने इन्हें शीघ्र ही 'महाप्रभुओं' (Overlords) का नाम दे डाला और कामंस सभा में सम्राज्ञी के भाषण के उत्तर वाले प्रस्ताव पर वाद-विवाद के समय विपक्षी मजदूर दल ने इस नयी व्यवस्था की तीव्र आलोचना की। आलोचना का सारांश यह था कि

जब विभागीय मन्त्रियों के ऊपर ये 'महाप्रभु' रक्खे गये हैं जो कामन्स सभा के सदस्य भी नहीं हैं, तो सम्बंधित विभागों के लिए कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायी कौन होगा? 'महाप्रभु' लोग तो उत्तरदायी हो नहीं सकते थे क्योंकि वे कामन्स सभा के सदस्य नहीं थे, और यदि कहा जाय कि उनके अधीनस्थ विभागीय मन्त्री जो कामन्स सभा में हैं, उत्तरदायी होंगे तो भी बात ठीक नहीं बैठती, क्योंकि विभागीय मन्त्रियों के हाथ में अंतिम निर्णय की शक्ति न रहने से वे भी अपने से सम्बंधित विभागों की जिम्मेदारी नहीं ले सकते। मन्त्रिमण्डल की ओर से कहा गया समन्वय व निरीक्षण-कर्ता मन्त्रियों की इस कार्य के विषय को जिम्मेदारी का प्रश्न मन्त्रिमंडल की एक आंतरिक बात है जिससे पार्लमेंट का कोई सम्बन्ध नहीं और विभागीय मन्त्री पूर्ववत् ही कामन्स सभा के समक्ष अपने विभागों का पूर्ण उत्तरदायित्व ग्रहण करेंगे। 'महा-प्रभु' मन्त्रियों के उत्तरदायित्व के मन्त्रिमंडल के संयुक्त उत्तरदायित्व ही में आ जाने की बात भी कही गई। परंतु इस स्पष्टीकरण से किसी का समाधान नहीं हुआ। नई व्यवस्था के सञ्चालन में भी कठिनाइयों का अनुभव हुआ। अतः १९५३ ई० में उसे समाप्त कर दिया गया।

परंतु सन् १९४५ से अब तक के दो-तीन मन्त्रिमंडलों का आकार अपेक्षाकृत छोटा रहा है। इनमें २०-२२ के स्थान में १६ से १८ मन्त्री तक ही रक्खे गये हैं।

अभ्यास

१. प्रिवी काउंसिल, मन्त्रिमंडल और मन्त्रीसमुदाय में क्या भेद है?

Differentiate between the Privy Council, the Cabinet and the Ministry.

२. प्रिवी काउंसिल के संगठन और कार्यों का वर्णन करो।

Describe the organisation and the duties of Privy Council.

३. नये मन्त्रिमंडल का किस प्रकार निर्माण होता है और उसमें मुख्यतः कौन-कौन मन्त्री सम्मिलित किये जाते हैं?

How is a new cabinet formed? What ministers are usually included in it?

४. प्रधान मन्त्री के अधिकार, कार्यों और स्थिति का वर्णन करो।

Describe the position, powers and functions of the British Prime Minister.

or

'The prime minister is the key-stone of the cabinet arch.' Comment.

or

'The prime minister is in relation to his colleagues no longer merely 'primus interpares' but 'inter stellas luna minors.' Comment.

५. निम्नलिखित मंत्रियों के क्या कार्य हैं :—

(अ) चांसलर आफ इक्सचेकर (ब) लार्ड चांसलर (स) सेक्रेटरी आफ स्टेट फार फारेन अफेयर्स (द) पदरहित मन्त्री ।

What are the functions and duties of the following :—

(a) The Chancellor of Exchequer, (b) The Lord Chancellor, (c) The Secretary of State for Foreign Affairs, and (d) The ministers without portfolio.

६. संयुक्त मन्त्रिमंडल का क्या अर्थ है ? उसके गुण-दोष बताओ !

What do you understand by a coalition cabinet ? What are its merits and defects ?

७. युद्धकालीन मन्त्रिमंडलों की विशेषताओं पर प्रकाश डालो ।

What were the special features of the two war cabinets ?

८. मन्त्रिमंडल की कार्यवाही क्यों और किस प्रकार गुप्त रक्खी जाती हैं ?

Why are the proceedings of the cabinet kept secret and by what means ?

९. मन्त्रिमंडल के कार्यालय का क्या कार्य है ?

What are the functions of the cabinet secretariat ?

१०. मन्त्रिमंडल के अधिकारों और कार्यों का संक्षिप्त वर्णन करो ।

Briefly describe the principal functions and the powers of the British Cabinet.

११. 'आजकल कामन्स सभा के मन्त्रिमंडल पर नियंत्रण रखने के बदले, मन्त्रिमंडल ही कामन्स सभा पर नियंत्रण रखता है ।' इस कथन की आलोचनापूर्ण जाँच करो ।

'Nowadays instead of controlling the cabinet, the House of Commons is itself controlled by the cabinet.' Discuss critically.

१२. मन्त्रिमंडल वह कड़ी या सूत्र है जो राज्य के कार्यकारी और व्यवस्थापक अंगों को परस्पर सम्बद्ध करता है ।' इसका स्पष्टीकरण करो ।

'The cabinet is the link that joins, the buckle that fastens the executive and the legislature together.' Show how.

१३. कुछ लोगों का मत है कि आजकल ब्रिटिश मन्त्रिमंडल वस्तुतः उत्तर-दायित्वविहीन और निरंकुश हो गया है । क्या आप इस मत से सहमत हैं ? सकारण उत्तर दीजिये ।

Do you agree with the view that the British Cabinet has now become virtually a dictator owing to effective responsibility of nobody ? Give reasons for your answer.

१४. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिये :—

अंतरंग मन्त्रिमंडल, मन्त्रिमण्डल की समितियाँ, संसदीय उपसचिव, फर्स्ट लार्ड आफ ट्रेजरी, देश से पुनर्विचार-प्रार्थना।

Write brief notes on :—

The inner cabinet, the committees of the cabinet, parliamentary undersecretaries, the First Lord of the Treasury, Appeal to the Country.

१५. ब्रिटिश मन्त्रिमंडल में आधुनिक लेखकों ने कौन-कौन मुख्य त्रुटियाँ बतलाई हैं और आप उनसे कहाँ तक सहमत हैं ?

What main defects have contemporary writers pointed out in the working of the British Cabinet? How far do you agree with them ?

सदस्य	कार्यविधि	अधिकार	उत्तरदायित्व	समस्याएँ
१—प्रधान मन्त्री सम्राट् द्वारा नियुक्त-बहुमत दल का नेता	१—गुप्त कार्यवाही	१—शासन सञ्चालन	१—सम्राट् के प्रति	१—कार्य भार का आधिक्य
२—अन्य मन्त्री—प्रधान-मन्त्री के परामर्श पर सम्राट् द्वारा नियुक्त	२—संयुक्त उत्तरदायित्व	२—पार्लमेंट का नेतृत्व	२—एक दूसरे के प्रति संयुक्त उत्तरदायित्व	२—सामयिकप्रश्नों में व्यस्तता, दीर्घकालीन योजनाओं का अभाव
३—योग्यता-पार्लमेंट की सदस्यता	३—समितियों का प्रयोग	३—विधि निर्माण और अर्थ सम्बंधी प्रभाव	३—कामन्स सभा के प्रति	३—बड़ा आकार
४—वेतन—प्रधान मन्त्री को १०००० पौंड वार्षिक-अन्यों को २००० से १०००० पौंड वार्षिक तक	४—मन्त्रिमण्डल का कार्यालय	४—शासन कर्मचारियों की नियुक्ति और बर्खास्तगी	अ—प्रश्नों द्वारा	४—मन्त्रियों में योग्यता का अभाव
५—कार्यकाल—पार्लमेंट के विश्वास रहने तक अथवा पार्लमेंट की अवधि भर, जो भी न्यूनतर हो	५—अंतरंग मन्त्रिमण्डल	५—सम्राट् द्वारा पार्लमेंट को बुलाने और विसर्जित तथा विघटित कराने का अधिकार	ब—वाद-विवाद द्वारा	५—यथार्थ उत्तर-दायित्व का अभाव
६—मुख्य पदाधिकारी प्रधानमन्त्री, चान्सलर आफ इक्सचेकर, लार्ड चांसलर, लार्ड प्रिवी सील, लार्ड प्रेसीडेन्ट आफ दि काउंसिल, रक्षा मन्त्री, स्वास्थ्य मन्त्री, व्यापार मन्त्री, परराष्ट्र मन्त्री, गृह मन्त्री, औपनिवेशिक मन्त्री, राष्ट्रमण्डल मन्त्री और १०-११ अन्य	६—साप्ताहिक अथवा अधिक बैठकें और बहुधा पारस्परिक समझौता द्वारा निर्णय।	६—पार्लमेंट के कार्यक्रम को निर्णय करने का अधिकार	स—प्रस्तावों द्वारा	
		७—सम्राट् को सभी बातों में परामर्श देने का अधिकार	द—अविश्वास प्रस्ताव द्वारा	
			४—देश और लोकमत के प्रति	

अध्याय ५

मंत्री, शासन-विभाग और स्थायी कर्मचारी

शासन विभाग—ह्वाइट हाल—शासन विभागों का संगठन—मन्त्रियों और स्थायी कर्मचारियों का सम्बन्ध—स्थायी नौकरियों का ब्रिटेन में इतिहास—नौकरियों का वर्गीकरण—सिविल सर्विस कमीशन द्वारा—नियुक्ति—परीक्षावधि—शिक्षण—पदवृद्धि—विवाद-निर्णय—अवकाश ग्रहण और अवकाश-वृत्ति—राजकोष विभाग का नियन्त्रण—ब्रिटेन की स्थायी नौकरियों की कुछ विशेषतायें—प्रमुख शासन विभाग—अर्धसरकारी शासन संस्थायें और निगम—शासन विभागों के विधि-निर्माण और न्याय सम्बन्धी कार्य—प्रत्यायुक्त विधि निर्माण (delegated legislation) इसके पक्ष और विपक्ष में तर्क—प्रशासनीय न्याय-व्यवस्था (administrative justice)।

पिछले अध्याय में हम बतला आये हैं कि प्रत्येक मंत्री एक या अधिक शासन-विभागों का अध्यक्ष होता है। परंतु केवल अध्यक्ष ही विभाग का पूरा काम नहीं सँभाल सकता। वास्तव में मंत्री तो केवल नीति-निर्धारण और शासन-प्रबंध की देख-रेख ही करता है। शासन कार्य को करने के लिए मंत्री के अधीन प्रत्येक विभाग में बहुत से अन्य कर्मचारी होते हैं। इस अध्याय में हम शासन-विभागों के सङ्गठन और इन्हीं कर्मचारियों का वर्णन करेंगे तथा उनमें और मंत्रियों में जो सम्बंध है उसे स्पष्ट करेंगे।

शासन-विभाग—देश का समस्त शासन सुविधा के लिए विषयानुसार कई बड़े-बड़े भागों में विभक्त कर दिया जाता है। शासन के इन्हीं बड़े भागों या खंडों को शासन-विभाग कहा जाता है। इस प्रकार आंतरिक शांति रक्षा, देश का बाहरी शत्रुओं से बचाव, शिक्षा, कृषि, व्यापार आदि के विषय अलग-अलग विभागों के हाथों में रक्खे जाते हैं, जिन्हें क्रम से गृह (Home Office), रक्षा (Defence), शिक्षा (Education) विभाग आदि नामों से पुकारा जाता है।

आजकल ब्रिटेन में विभागों की संख्या १०० से कुछ अधिक ही है। यह संख्या आवश्यकतानुसार घटती-बढ़ती रहती है। नये विभाग स्थापित होते रहते हैं और कुछ पुराने विभाग जो आवश्यक नहीं रह जाते, तोड़ दिये जाते हैं। आवश्यकतानुसार ही विभागों के कार्य, सङ्गठन आदि में भी परिवर्तन होते रहते हैं। विभागों का बनाना, तोड़ना या उनका नये ढङ्ग से संगठन करना आदि मुख्यतः मन्त्रिमंडल के अधिकार की बात है।

ह्वाइट-हाल (White Hall)—ब्रिटेन का शासन जिस केन्द्र से संचालित होता है उसका नाम 'ह्वाइट हाल' (White Hall) है। यह स्थान लंदन में पार्लमेंट-भवन के समीप ही है और यहीं मुख्य-मुख्य शासन विभागों के कार्यालय स्थित हैं जिनमें मंत्री लोग और उनके मुख्य अधीन कर्मचारी काम करते हैं। इससे यह न समझना चाहिये कि शासन विभागों का समस्त कार्य यहीं केंद्रित है। इनमें से अनेक विभागों की संस्थाओं और कर्मचारियों का पूरे देश में जाल-सा बिछा हुआ है, पर उन सब का संचालन और निरीक्षण इसी ह्वाइट-हाल वाले केन्द्र से ही होता है। यह शासन रूपी शरीर का मस्तिष्क स्थान है।

शासन-विभागों का संगठन—यद्यपि विस्तार की बातों में प्रत्येक विभाग का संगठन अन्यों से कुछ न कुछ भिन्न होता है, पर मोटे तौर से यह कहा जा सकता है कि सभी विभागों के संगठन की मौलिक रूप-रेखा एक ही तरह की है। विभाग के शीर्ष या चोटी पर उसका अध्यक्ष मंत्री होता है। कुछ विभागों की अध्यक्षता एक मंत्री के हाथ में न होकर एक समिति या बोर्ड (Board) के हाथों में होती है जैसे बोर्ड आफ़ ट्रेड, पर इससे कुछ अधिक अंतर नहीं पड़ता, क्योंकि जहाँ बोर्ड होता है वहाँ भी उसका एक अध्यक्ष नियत होता ही है और वह विभागाध्यक्ष मंत्री ही के समान कार्य करता है। मंत्री के नीचे उसके दो प्रकार के मुख्य सहायक होते हैं। अर्थात् राजनीतिक और स्थायी कर्मचारियों में से। मंत्री के राजनीतिक प्रकार के सहायकों में राजकीय मन्त्री (ministers of state), संसदीय सचिवों और संसदीय निजी सचिवों (Parliamentary private secretaries) का नाम आता है। इनमें से राजकीय मन्त्रियों और संसदीय सचिवों का वर्णन मन्त्रिमण्डल वाले अध्याय में किया जा चुका है। संसदीय निजी सचिव पार्लमेंट के सदस्यों में से होता है, परंतु उसे संसदीय सचिव की भाँति कोई वेतन इत्यादि नहीं मिलता। मन्त्री और उसका सम्बंध व्यक्तिगत परिस्थितियों के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है; परंतु साधारणतया उसका काम एक ओर तो मन्त्री को पार्लमेंट में अपने दल के सदस्यों के भावों और गतिविधि की जानकारी देते, और दूसरी ओर सदस्यों को मन्त्री के दृष्टिकोण व नीति से परिचित करते रहना है।

स्थायी कर्मचारियों में मन्त्री के दो प्रधान सहयोगी होते हैं—विभाग का स्थायी सचिव (Permanent secretary) और निजी सचिव (private secretary)। जिन विभागों के मन्त्री 'सेक्रेटरी आफ़ स्टेट' कहलाते हैं उनका स्थायी अध्यक्ष 'स्थायी सचिव' (permanent secretary) न कहा जा कर 'स्थायी अवर सचिव' (permanent under secretary) कहलाता है जैसे वैदेशिक, औपनिवेशिक, युद्ध, वायु आदि विभागों में। स्थायी सचिव अथवा अवर

सचिव स्थायी वैतनिक कर्मचारी होते हैं। न तो वे पार्लमेंट के सदस्य ही होते हैं और न मन्त्रिमण्डल के परिवर्तन के कारण बदलते ही हैं। उनके पद राजनीतिक न होकर शासन विशेषज्ञता के होते हैं। इनकी नियुक्ति अनुभवी और वरिष्ठ स्थायी कर्मचारियों में से होती है। किसी विभाग के स्थायी सचिव या उपसचिव का पद रिक्त होने पर उस पर नयी नियुक्ति मुख्यतया राजकोष विभाग के स्थायी सचिव (permanent secretary to the Treasury) और सम्बन्धित विभाग के अवकाश ग्रहण करने वाले भूतपूर्व स्थायी अध्यक्ष के परामर्श से की जाती है। विभाग-मन्त्री की भी सम्मति ले ली जाती है, परंतु साधारणतया वह अपनी सम्मति देने से इनकार नहीं करता। विभागाध्यक्ष मन्त्री अपने विभाग के स्थायी अध्यक्ष की नियुक्ति में मनमानी नहीं कर सकता।

निजी सचिव (private secretary) विभाग के अपेक्षाकृत अवरिष्ठ (junior) स्थायी कर्मचारियों में से चुना जाता है। उसके चुनाव में विभाग का स्थायी अध्यक्ष मन्त्री को परामर्श देता है, पर इस नियुक्ति में मन्त्री की पसंद का अधिक भाग रहता है। निजी सचिव मन्त्री के पास जाने वाले कागज-पत्रों को उचित रीति से तैयार करता है और उससे मिलने-जुलने वालों के लिए समय निश्चित करता, तथा इसी प्रकार के अन्य कार्य करता है जिससे मन्त्री के समय व शक्ति का अपव्यय न हो।

स्थायी उपसचिव के नीचे एक या अधिक उप-सचिव (Deputy Secretary) उनके नीचे सहायक सचिव (assistant secretaries), उनके भी नीचे प्रधान (principal), उपप्रधान और फिर लेखक (clerk) और लिपिक (clerical assistants) होते हैं। विभागीय पदों की मुख्य कोटियाँ यहीं हैं। स्थायी उपसचिव के नीचे के सभी छोटे-बड़े कर्मचारी स्थायी ही होते हैं, अर्थात् उनके पद राजनैतिक नहीं होते।

जिस प्रकार समस्त शासन, विभागों में बँटा रहता है वैसे ही सुविधा के लिए प्रत्येक विभाग के अन्दर कई प्रकार की अपेक्षाकृत छोटी इकाइयों में कार्य का बँटवारा कर दिया जाता है। विभाग शाखाओं (branches) में बँटा रहता है, शाखाएँ उपविभागों (divisions) में और उपविभाग अनुविभागों (sections) में। ऊपर वरिष्ठ अधिकारियों में से प्रतिसचिव शाखाओं के, सहायक सचिव उपविभागों और प्रधान अनुविभागों के अध्यक्ष होते हैं।

मंत्रियों और स्थायी कर्मचारियों का सम्बन्ध—हम बतला चुके हैं कि विभाग का अध्यक्ष मन्त्री होता है। उसे यह पद अपने राजनैतिक प्रभाव के कारण प्राप्त होता है, न कि विभाग के विषय की जानकारी अथवा शासन-कुशलता के कारण।

अतः यह बहुधा देखा जाता है कि विभागाध्यक्ष मन्त्री अपने विभाग के कार्य के विषय में कुछ भी जानकारी नहीं रखता या यदि रखता भी है तो उतनी ही जितनी किसी शिक्षित नागरिक को साधारणतया होती है। ब्रिटेन में एक कहावत प्रसिद्ध है कि एक बार एक अर्थ मन्त्री (Chancellor of Exchequer) ने दशमलव अङ्कों में लिखित आय-व्यय-पत्रक (budget) को जब पहले देखा तो पूछा कि इन अभागे शून्यों का क्या अर्थ है।[1] इतना ही नहीं, सैनिक विभागों के अध्यक्ष मन्त्री जानबूझ कर ऐसे रक्खे जाते हैं, जो स्वयं सैनिक न हों। इस प्रकार युद्ध-विभाग का मन्त्री ऐसा व्यक्ति हो सकता है जिसने कभी हाथ में बन्दूक पकड़ी भी न हो। सारांश यह कि मन्त्री लोग अपने विभाग के विषयों या शासन-कला के विशेषज्ञ (expert) न होकर साधारण व्यक्ति (layman) ही होते हैं। मन्त्रियों का अपने विभाग का विशेषज्ञ होना अच्छा नहीं समझा जाता है। उनसे आशा यह की जाती है कि वे जनता की इच्छा और मनोवृत्ति के ज्ञाता हों और लोकमत के अनुसार विभाग को सञ्चालित करें। कोई ऐसी बात न होने दें जिससे लोगों को असुविधा और असंतोष हो। उन्हें विशेषज्ञता की आवश्यकता नहीं। उनका काम शासन करना नहीं किंतु, विशेषज्ञ कर्मचारियों द्वारा शासन कराना है। स्थायी कर्मचारी विभाग के विषय के विशेषज्ञ होते हैं और मन्त्री को उनकी सहायता और परामर्श सदा ही प्राप्त रहते हैं। मन्त्री उन्हें यह बतलाता रहता है कि जनता अमुक बात चाहती है। इसे करो। फिर वह बात किस ढंग से की जाय, इसकी योजना बनाना और उसे कार्यान्वित करना स्थायी कर्मचारियों का काम है। इस बात को संक्षेप में यों कहा जाता है कि मन्त्री लोग विभाग की नीति निश्चित करते हैं अर्थात् यह बतलाते हैं कि क्या करना होगा और फिर स्थायी कर्मचारी उस नीति को कार्यान्वित करते, अर्थात् उसके अनुसार शासन करते हैं।

अपने देश की राजनीति से लिये हुए एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायगी। १९४६ के चुनाव में कांग्रेस वालों ने इस नीति की घोषणा की कि विजयी होने पर वे जमींदारी तोड़ देंगे। कांग्रेस के मन्त्रिमण्डल बनने पर भूमि-कर विभाग के मन्त्रियों ने अपने विभाग के स्थायी सचिवों को आज्ञा दी कि जमींदारी तोड़ने की योजना बनाई जाय। अब इसके बाद उस योजना को बनाना तथा विधानमण्डल द्वारा उसके पारित हो जाने पर उसे अमल में लाना—यह सब भूमि-सम्बन्धी विधियों के विशेषज्ञ स्थायी कर्मचारियों द्वारा किया गया। मन्त्री इस विषय की पेचीदगियों को न जानते थे, पर स्थायी कर्मचारी जानते थे और उन्होंने ही मन्त्रियों को भी समस्याओं के समाधान बतलाये। इस प्रकार प्रजातंत्रीय शासन अविशेषज्ञ मन्त्रियों और विशेषज्ञ स्थायी कर्मचारियों के सहयोग से चलता है।

---

[1] What do these damned dots mean?

यह व्यवस्था यों तो बड़ी विचित्र जान पड़ती है और यह संदेह होता है कि अपनी अविशेषज्ञता के कारण मन्त्री लोग विशेषज्ञ कर्मचारियों के हाथ की कठपुतली मात्र रहते होंगे, पर यदि हम थोड़ा विचार करें तो ज्ञात होगा कि नित्यप्रति के जीवन में भी इसी प्रकार काम चलाना पड़ता है। यदि मुझे अपने लिए एक मकान बनवाना हो, तो मुझे विशेषज्ञ इंजीनियर की सहायता लेनी पड़ती है। मैं उसे मोटे तौर से अपनी आवश्यकतायें बतला देता हूँ, और यह बतला देता हूँ कि मैं कितना रुपया खर्च करना चाहता हूँ, और फिर शेष बातों का प्रबंध और मकान का निर्माण इंजीनियर द्वारा ही होता है। समय-समय पर मैं देखता रहूँगा कि मकान मेरी इच्छानुसार बन रहा है या नहीं। जहाँ मुझे कोई त्रुटि दिखलाई देगी, मैं इंजीनियर का ध्यान आकर्षित करके उसे दूर कराऊँगा अथवा यदि वह त्रुटि नहीं है, तो इंजीनियर के समझाने पर समझ भी जाऊँगा। अब मैं भवन-निर्माण कला का विशेषज्ञ न होते हुए भी विशेषज्ञ इंजीनियर द्वारा अपने मकान के निर्माण की देख-भाल करता ही हूँ। यह बात तो नहीं कि मैं उसके हाथ की कठपुतली होऊँ। उसका काम पसंद न आवे, तो उसे अलग करके मैं दूसरे इंजीनियर को बुला सकता हूँ। ठीक ऐसी ही स्थिति मन्त्रियों की भी है। वे स्वयं विशेषज्ञ न होते हुए भी विशेषज्ञ स्थायी कर्मचारियों के काम का आवश्यक मात्रा में सञ्चालन व नियंत्रण कर सकते हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि मन्त्रियों में योग्यता की आवश्यकता ही नहीं है। इसका केवल यही अभिप्राय है कि उनमें व्यावहारिक योग्यता व अनुभव मात्र की आवश्यकता है, विभागीय विषय की विशेष योग्यता की नहीं। जो व्यक्ति सफल वकील, डाक्टर, व्यवसायी आदि रहा है अथवा जीवन के किसी भी क्षेत्र में योग्यता का परिचय दे चुका है, वह अपनी उस सामान्य योग्यता के बल पर ही मन्त्रित्व का कार्य भी सफलतापूर्वक कर सकता है।

साधारणतया मन्त्रियों और स्थायी कर्मचारियों का सम्बंध यह कह कर प्रकट किया जाता है कि मन्त्री नीति निर्धारण करते हैं और स्थायी कर्मचारी उस नीति को कार्यान्वित करते हैं। मोटे तौर से यह बात ठीक है, पर व्यवहार में स्थिति इतनी सरल और सुस्पष्ट नहीं है, क्योंकि नीति-निर्धारण में भी स्थायी कर्मचारी मन्त्रियों को सहायता देते हैं और मन्त्री निश्चित नीति के स्थायी कर्मचारियों द्वारा कार्यान्वित किये जाने की क्रिया की देख-रेख करते रहते हैं। फिर नीति भी शासन के प्रत्येक स्तर पर निश्चित करनी पड़ती है। सर्वोच्च नीति मन्त्री निश्चित करते हैं, पर गौण नीति स्थायी कर्मचारी अपने-अपने क्षेत्र में। अतः यह कहना कि समस्त नीति-निर्धारण मन्त्रियों द्वारा ही होती है, असत्य होगा। इसी प्रकार यह भी कहना ठीक नहीं है कि शासन-कार्य केवल स्थायी कर्मचारी ही करते हैं। शासन सम्बंधी महत्वपूर्ण प्रश्नों का निर्णय भी मन्त्रियों को ही करना पड़ता है, जैसे विभाग के ऊँचे पदों की नियुक्तियाँ, पदवृद्धि तथा अन्य

इसी प्रकार के प्रश्न । अतः वास्तविक स्थिति यह है कि विभागीय कार्य के प्रत्येक पग पर मंत्रियों और स्थायी कर्मचारियों के सहयोग की आवश्यकता पड़ती है । दोनों ही का नीति-निर्धारण और शासन में भाग होता है । नीति और शासन सर्वथा पृथक नहीं किया जा सकता । केवल मोटे तौर से यह नियम है कि मंत्री लोग शासन की विस्तार सम्बंधी बातों (details) में हस्तक्षेप न करके उन्हें स्थायी कर्मचारियों पर छोड़ दें और स्थायी कर्मचारी किसी महत्वपूर्ण नीति सम्बंधी प्रश्न का स्वयं निर्णय न करके उसे मन्त्री के निर्णयार्थ उसके सामने रक्खें ।

स्थायी कर्मचारी (The Civil Service)

स्थायी नौकरियों का ब्रिटेन में इतिहास—उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक ब्रिटेन के राज्यकर्मचारी मुख्यतया सिफारिशों के आधार पर नियुक्त किये जाते थे । इसे सिफारिशी प्रथा (Patronage system) कहते थे । यह बहुत ही दोषपूर्ण थी और बहुधा अयोग्य लोग सरकारी पदों पर नियुक्त हो जाते थे । १८५५ ई० में इस प्रथा में सुधार प्रारम्भ हुआ । उक्त वर्ष तीन सदस्यों का एक सिविल सर्विस कमीशन नियुक्त हुआ जिसके जिम्मे परीक्षाओं द्वारा योग्य अभ्यर्थियों (candidates) के चुनने का कार्य रक्खा गया । कुछ काल बाद ये परीक्षाएँ प्रतियोगितात्मक बना दी गई । प्रारम्भ में कुछ ही पदों की नियुक्ति इस प्रकार होती थी, पर १८७० ई० में लगभग सभी पदों की नियुक्ति प्रतियोगिता परीक्षाओं द्वारा होना अनिवार्य कर दिया गया । ब्रिटेन ने इस विषय में भारत से प्रेरणा ली, जहाँ कि प्रतियोगिता परीक्षाओं द्वारा नियुक्ति की प्रथा कुछ वर्ष पहले ही स्थापित हो चुकी थी ।

ब्रिटेन की वर्तमान स्थायी नौकरियाँ—ब्रिटेन में 'सिविल-सर्विस' में कुछ प्रकार की सरकारी नौकरियों को छोड़ कर अन्य सभी का समावेश होता है । जिन नौकरियों का इनमें समावेश नहीं होता वे निम्नलिखित हैं अर्थात् (१) सैनिक नौकरियाँ (२) शारीरिक श्रम-कार्य वाली (manual) और औद्योगिक (industrial) नौकरियाँ और (३) स्थानीय संस्थाओं की नौकरियाँ ।

सिविल सर्विस के कर्मचारियों की संख्या बराबर बढ़ती जा रही है । १८३२ में इनकी संख्या २१००० के लगभग थी । लगभग १०० वर्ष बाद द्वितीय महायुद्ध के पूर्व १९३९ ई० में और भी बढ़ कर लगभग ७ लाख तक पहुँच गई । इस निरंतर वृद्धि का कारण राज्य के कार्यों में वृद्धि और नये-नये विभागों का स्थापित होना है ।

नौकरियों का वर्गीकरण—ब्रिटेन के स्थायी कर्मचारी आजकल चार वर्गों में विभक्त हैं । ये हैं : (१) प्रशासी वर्ग (administrative class), (२) अधिशासी वर्ग (executive class), (३) लेखक वर्ग (clerical class) और (४) लिपिक वर्ग (assistant clerical or typist class).

प्रशासी वर्ग—(Administrative Class)—इनमें प्रशासी वर्ग सर्वोच्च है। विभागाध्यक्ष और उनके प्रधान सहायक कर्मचारी अर्थात् विभागों के सचिव, स्थायी उपसचिव, प्रति सचिव, सहायक सचिव, प्रधान, सहायक प्रधान आदि इसी वर्ग में से होते हैं। प्रशासी वर्ग को हम स्थायी कर्मचारियों का मस्तिष्क अंग कह सकते हैं। मन्त्रियों को परामर्श देने, योजनायें बनाने, आगे की बातें सोचने शासन संचालन करने आदि के कार्य प्रशासी वर्ग ही के कर्मचारी करते हैं। ये विश्वविद्यालयों के उच्च योग्यता वाले स्नातकों (graduates) में से नियुक्त होते हैं। विश्वविद्यालय की स्नातक उपाधि इस वर्ग में नियुक्त होने की निम्नतम योग्यता नियत है। परीक्षा के समय अभ्यर्थियों की आयु २१ वर्ष से कम या २४ से अधिक न होनी चाहिये। इस वर्ग के कर्मचारियों की संख्या १९४९ ई० में ४३१६ थी जो कि समस्त कर्मचारियों की संख्या के १ प्रतिशत से भी कम है। इनका वार्षिक वेतन १००० से २००० पौंड तक होता है।

इस वर्ग में प्रतिवर्ष लगभग ६० स्थान खाली होते हैं। इनमें से ४८ तो विश्वविद्यालयों से निकले स्नातकों में से खुली प्रतियोगिता द्वारा भरे जाते हैं और १२ नीचे के अधिशासी वर्ग उन कर्मचारियों की प्रतियोगिता द्वारा, जिनकी आयु २८ वर्ष से कम हो।

अधिशासी वर्ग (Executive Class)—यह प्रशासी वर्ग से नीचे है। इसकी संख्या १९४९ ई० में ६३००० के लगभग थी जो कि समस्त कर्मचारियों की संख्या का ९ प्रतिशत है। इनके लिए निम्नतम योग्यता है उच्चतर माध्यमिक परीक्षा पास होना (Higher Secondary School Certificate) और नियत आयु होनी चाहिये १८-१९ वर्ष की। इस वर्ग की नियुक्तियों का भी एक भाग नियमित प्रतियोगिता (Limited Competition) के द्वारा नीचे वाली लेखक वर्ग में किया जाता है, और शेष खुली प्रतियोगिता द्वारा। यह वर्ग अधिकतर हिसाब-किताब रखने (Accounting), रसद (Supply), और प्रबन्ध सम्बंधी (Managerial) काम करता है। इस वग के कर्मचारियों का वेतन ५०० से १००० पौंड वार्षिक होता है।

लेखक वर्ग—(Clerical Class) इस वर्ग के कर्मचारियों की योग्यता माध्यमिक परीक्षा प्रमाणपत्र (school leaving certificate) की होती है और नियत आयु १६-१७ वर्ष की। इसमें तीन उपवर्ग हैं। निम्नतम वर्ग का वेतन ६० पौंड से प्रारंभ होकर २५० पौंड वार्षिक तक होता है और उच्चतर वर्गों का ५०० पौंड तक। इसके कर्मचारियों की संख्या १९४९ ई० में सवा लाख के लगभग थी। इसका काम सरल नियमों को उपस्थित मामलों (Cases) में लागू करना, सरल

पत्रों का आलेख (draft) तैयार करना, पत्रों आदि का संक्षिप्त सारांश बनाना और किसी विषय के भी सम्बंध में आँकड़ों को संकलित करके प्रस्तुत करना (Statements, Returns, etc.) आदि है।

लिपिक वर्ग (Clerical Assistant class)—इस वर्ग के लगभग सभी कर्मचारी लड़कियाँ और स्त्रियाँ हैं। ये १६-१७ वर्ष की आयु में प्रारंभिक परीक्षा उत्तीर्ण लोगों में से प्रतियोगिता परीक्षा द्वारा नियुक्त की जाती हैं। इनका काम मुख्यतया सरकारी कागज-पत्रों की टाइप द्वारा प्रतिलिपियाँ तैयार करना है।

ऊपर लिखे ये चार वर्ग एक दूसरे से सर्वथा पृथक नहीं हैं। पहिले तीन वर्गों में नियमित मात्रा में आदान-प्रदान हो सकता है अर्थात् निम्नतर वर्ग के कर्मचारी नियमित प्रतियोगिता द्वारा उच्चतर वर्ग में जा सकते हैं। कुछ विभागों में जिनका काम विशेष प्रकार की योग्यता की अपेक्षा रखता है, इन वर्गों के स्थान में अपने अन्य वर्ग हैं जैसे आयात कर और उत्पादन (Customs and Excise) विभाग में। गत कई वर्षों में (१९४५-५०) ब्रिटेन में कई उद्योगों का राष्ट्रीकरण हुआ है जैसे कोयले की खानों, बिजली, गैस, यातायात के साधनों आदि। इनका प्रबंध विभागों के हाथ में न रक्खा जाकर सार्वजनिक निगमों (public Corporations) के हाथ में रक्खा गया है। इनकी नौकरियाँ साधारण सरकारी नौकरियों से पृथक और एक नई प्रकार की ही हैं। इनको औद्योगिक नौकरियाँ (Industrial Services) कहने की प्रथा चल पड़ी है।

सिविल सर्विस कमीशन, प्रतियोगिता परीक्षाएँ और नियुक्ति—नियुक्तियों के लिए योग्य अभ्यर्थियों को चुनने के लिए एक सिविल सर्विस कमीशन है। इसकी स्थापना पहले-पहल १८५५ में हुई थी और इसमें ३ सदस्य रक्खे गये थे। सदस्यों की नियुक्ति सम्राट् द्वारा (मन्त्रिमण्डल के परामर्श से) होता है। साधारणतया ये अनुभवी राज्य-कर्मचारियों में से नियुक्त होते हैं। इनकी पद-अवधि पारिभाषिक भाषा में सम्राट् जब तक चाहें (During the Pleasure of the crown) तब तक के लिए होती है, पर इसका व्यावहारिक अर्थ यह है कि कमीशन के सदस्य अन्य राजकर्मचारियों ही की भाँति अवकाश ग्रहण की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं जिससे ये अपना कार्य स्वतंत्र और निष्पक्ष रीति से कर सकें। इन्हें किसी भी मन्त्री या विभाग की अधीनता में नहीं रखा गया है।

सिविल सर्विस कमीशन के तीन कार्य हैं : (१) सरकारी पदों पर नियुक्त होने वाले सभी व्यक्तियों की योग्यता को प्रमाणित करना, अर्थात् उनमें उपयुक्त योग्यता है इसका प्रमाण पत्र देना (२) नियुक्त और योग्यता सम्बन्धी नियम (regula-

tion) बनाना और (३) लंदन गजट में सभी नियुक्तियों को प्रकाशित करना। कमीशन ये सब काम राज्यकोष विभाग (Treasury) की सम्मति से करता है।

कमीशन का काम नियुक्ति के लिए उपयुक्त अभ्यर्थियों को चुनना मात्र है। वास्तविक नियुक्ति विभिन्न विभागाध्यक्षों द्वारा अपने-अपने विभाग में की जाती है, परंतु ये विभाग साधारणतया सदैव ही कमीशन के चुने हुए लोगों को ही नियुक्त करते हैं। उसके निर्णय को कभी भी अमान्य नहीं करते। कमीशन के बिना प्रमाणित किये नियुक्त अधिकारी को अवकाश-वृत्ति (Pension) पाने का अधिकार नहीं होता। ब्रिटेन में कमीशन का काम उपयुक्त अभ्यर्थियों की प्रतियोगिता परीक्षाओं अथवा अन्य रीति द्वारा चुनना और उनकी योग्यता को प्रमाणित करना मात्र है। कर्मचारियों के अनुशासन, दण्ड, पद वृद्धि, वेतन, वर्गीकरण आदि के प्रश्नों से उसका कुछ भी सम्बबंध नहीं है।

कमीशन उपयुक्त अभ्यर्थियों का चुनाव साधारणतया प्रतियोगिता परीक्षाओं द्वारा करता है। प्रति वर्ष कमीशन नौकरियों के ऊपर वर्णित चार वर्गों में से प्रत्येक के लिए एक-एक प्रतियोगिता परीक्षा का प्रबंध करता है। नियत योग्यता और आयु वाला कोई भी ब्रिटिश नागरिक इनमें बैठ सकता है। परीक्षाओं के विषय वे ही होते हैं जिन्हें विद्यार्थी स्कूलों और कालिजों में पढ़ते हैं जैसे साहित्य, इतिहास, गणित, राजनीति, कानून, विज्ञान आदि। संयुक्त राज्य अमरीका और फ्रांस आदि में इससे भिन्न व्यवस्था की परीक्षाएँ होती हैं। उन देशों में किसी पद की नियुक्ति की परीक्षा उन्हीं विशेष विषयों में होती है जो उस पद के कार्यों को करने में उपयोगी हों। पर ब्रिटेन की प्रतियोगिता परीक्षाओं का उद्देश्य अभ्यर्थी की सामान्य योग्यता (general ability) को जाँचना है न कि विशेष पदों के लिये उसकी विशिष्ट योग्यता या जानकारी को। इस पद्धति का सिद्धांत यह है कि कोई व्यक्ति यदि किसी भी विषय में भी योग्यता रखता हो, तो वह योग्यता का अन्य विषयों में भी प्रदर्शन करेगा। मुख्य वस्तु प्रतिभा है। जिसमें प्रतिभा है उसे कोई भी कार्य दे दो, तो वह उसे अच्छा ही करेगा। तदनुसार ही इन परीक्षाओं में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होने वाले अभ्यर्थी चाहे जिस विभाग में हो, नियुक्त कर दिये जाते हैं और अपनी प्रखर बुद्धि के कारण उसका काम शीघ्र ही सीख लेते हैं। इस पद्धति के जन्मदाता लार्ड मेकाले का इस सिद्धान्त में इतना दृढ़ विश्वास था और वे कहा करते थे कि प्रतियोगिता परीक्षा स्कूलों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाये जाने वाले विषयों के बदले यदि किसी जङ्गली भाषा में भी ली जाय, तो उसमें भी सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होने वाले अभ्यर्थियों में वही प्रतिभा और बुद्धि-प्रखरता, पाई जायगी और वे भी नियुक्तों के लिये उतने ही उपयुक्त होंगे जितने वर्तमान प्रकार की प्रतियोगिता में सफल होने वाले विद्यार्थी

होते हैं। चारों कर्मचारीवर्गों की योग्यता शिक्षा क्रम के चार सोपानों—विश्वविद्यालयों, उच्चतर माध्यमिक शालाओं, माध्यमिक शालाओं, और प्रारम्भिक शालाओं – से अभिन्न रूप से सम्बद्ध है। शिक्षाक्रम और नियुक्तियोग्यता का यह घनिष्ठ सम्बन्ध ब्रिटिश पद्धति का विशिष्ट गुण है। सर्वोच्च प्रशासी वर्ग (Administrative) की परीक्षा में ब्रिटिश विश्वविद्यालयों (विशेषतः आक्सफोर्ड और केम्ब्रिज) के श्रेष्ठतम स्नातक ही सफल होते हैं।

परंतु अंतिम चुनाव केवल लिखित परीक्षा ही के फल पर नहीं होता। परीक्षा के कुल अङ्कों में से लगभग एक चौथाई या कुछ न्यूनाधिक मौखिक परीक्षा के आधार पर दिये जाते हैं। मौखिक परीक्षा का उद्देश्य अभ्यर्थियों के व्यक्तित्व, प्रत्युत्पन्न मति, व्यवहार-कुशलता आदि की जाँच करना है। केवल लिखित परीक्षा एकांगी होती है। हो सकता है उसमें 'किताबी कीड़ों' (book-worms) ही के हाथ बाजी रहे। पर शासन में केवल पुस्तक-ज्ञान ही सब कुछ नहीं है। अतः अन्य बातों की जाँच के लिये मौखिक परीक्षा और मुलाकात (Viva Voce and Interview) की व्यवस्था है। कुछ पदों की नियुक्ति केवल मौखिक परीक्षा और मुलाकात ही के आधार पर होती है जैसे विशेषज्ञों की, क्योंकि इनकी योग्यता का अनुमान लगाने के लिये लिखित परीक्षा उपयुक्त नहीं होती।

परिवीक्षावधि (Probation)—नये नियुक्त कर्मचारी तुरंत ही स्थायी नहीं कर दिये जाते। साधारणतया दो वर्ष तक उनकी परीक्षा अर्थात् जाँच की अवधि होती है। परीक्षावधि के अन्त में यदि वे उपयुक्त पाये गये तो स्थायी कर दिये जाते हैं, अन्यथा या तो यह अवधि बढ़ा दी जाती है, या नितांत अनुपयुक्त सिद्ध होने पर उन्हें पदच्युत कर दिया जाता है।

शिक्षण (Training)—नये नियुक्त कर्मचारी अपने पद के कार्यों से अनभिज्ञ होते हैं, क्योंकि उनकी नियुक्ति जैसा हम देख चुके हैं, सामान्य योग्यता के आधार पर होती है। उनकी शिक्षा के लिये उनका विभाग प्रबंध करता है। इस शिक्षण (Training) की कई पद्धतियाँ हैं और वे प्रत्येक वर्ग के लिए भिन्न प्रकार की हैं। निचले वर्ग वालों के लिए विभागों के अंतर्गत शिक्षण-कक्षायें (Training classes) होती हैं। उच्चतर वर्ग वाले प्रारम्भ के कुछ वर्षों में पुराने अनुभवी कर्मचारियों की देख-रेख में विभागीय काम को सीखते हैं। उन्हें शीघ्र-शीघ्र एक शाखा से दूसरी शाखा में बदल दिया जाता है जिससे उन्हें सम्पूर्ण विभाग के काम की जानकारी हो जाय। कभी-कभी उनका एक विभाग से दूसरे विभाग में भी परिवर्तन कर दिया जाता है जिससे उन्हें विभिन्न विभागों का परिचय मिल जाय। विभिन्न विभागों की शिक्षण व्यवस्था के अतिरिक्त राजकोष विभाग (Treasury) के अंतर्गत एक केन्द्रीय शिक्षण

उपविभाग (Training division) भी है जो सभी विभागों के शिक्षण कार्य का समन्वय करता तथा उन्हें परामर्श देता है। इस उपविभाग में एक शिक्षण-संचालक (Director of Training and Education) की देख-रेख में प्रशासी वर्ग के नव-नियुक्त कर्मचारियों के लिए दो-तीन मास का एक पाठ्यक्रम बनाया गया है जिसके द्वारा उन्हें राजनीति और सार्वजनिक शासन के मूल-सिद्धांतों का परिचय कराया जाता है। सारांश यह है कि आजकल ब्रिटेन में शासन कर्मचारियों की नियुक्ति के बाद के शिक्षण पर अधिकाधिक जोर दिया जाता है और उत्तरोत्तर नई-नई व्यवस्थाएँ की जा रही हैं।

पदवृद्धि—निम्नतर पद से उच्चतर पद पर नियुक्त होने को पदवृद्धि (Promotion) कहते हैं। पदवृद्धि का अवसर प्राप्त होना किसी भी नौकरी के प्रधान आकर्षणों में से है। निष्पक्ष रीति से योग्यतानुसार पदवृद्धि की व्यवस्था कर्मचारियों की तुष्टि के लिए परमावश्यक है। पदवृद्धि में अन्याय या पक्षपात होने से अच्छा काम करने वाले कर्मचारी हतोत्साह हो जाते हैं।

ब्रिटेन में पदवृद्धि की समस्या का बहुत ही विचारपूर्ण समाधान निकाला गया है। मुख्यतः पदवृद्धि में दो बातों का विचार किया जाता है अर्थात् (१) अनुभवावधि (seniority) और (२) योग्यता। निम्नतर वर्गों में पदवृद्धि साधारणतया अनुभवावधि के आधार पर ही की जाती है, अर्थात् अभ्यर्थियों में जो सबसे अधिक पुराना है उसे अवसर दिया जाता है। परन्तु उच्चतर वर्गों में पदवृद्धि का आधार योग्यता है। योग्यता के निर्णय के लिए प्रत्येक विभाग में एक पदवृद्धि-समिति (Promotion Board) बनायी गई है। इसके सदस्य निम्नलिखित होते हैं—विभाग की कर्मचारी शाखा (Establishment Branch) का प्रधान, जिस उपविभाग में जगह खाली हुई है उसका अध्यक्ष, विभाग के दो-एक और अनुभवी कर्मचारी। यह समिति पदवृद्धि के सभी अभ्यर्थियों से भेंट करके तथा उनके गत कार्यों के अभिलेखों (record of past work) और चरित्र की जाँच करके विभागाध्यक्ष को परामर्श देती है कि अमुक कर्मचारी योग्यतम है। कोई कर्मचारी इस परामर्श को न्यायपूर्ण न समझे तो विभागाध्यक्ष से पुनर्विचार-प्रार्थना (appeal) कर सकता है। अन्त में सभी बातों पर विचार करके विभागाध्यक्ष निर्णय करता है कि पदवृद्धि का अवसर किसे दिया जाय।

विवाद-निर्णय (Settlement of Disputes)—आजकल कर्मचारियों के संगठन और हड़तालों का युग है। राजकर्मचारियों को हड़ताल का अधिकार तो नहीं होता, पर तो भी यह आवश्यक है कि उन्हें असंतोष प्रकट करने तथा उसे दूर कराने का अन्य कोई उपाय प्राप्त हो। ब्रिटेन में इसके लिए ह्विटली काउंसिल

(Whitley Council) नामक संस्थाओं की स्थापना की गई है। प्रत्येक विभाग में एक विभागीय ह्विटली काउंसिल होती है जिसमें निम्न कर्मचारियों और सरकार के समान संख्या में प्रतिनिधि रक्खे जाते हैं। सरकारी प्रतिनिधि विभाग के उच्चपदस्थ कर्मचारी ही होते हैं। नौकरी सम्बंधी कोई भी प्रश्न इस काउंसिल के सामने विचारार्थ रक्खा जा सकता है। यदि सर्वसम्मत निर्णय हुआ, तो विभागाध्यक्ष उसे स्वीकार करने को बाध्य है, पर मतभेद होने पर वह जैसा उचित समझे वैसा कर सकता है। इस व्यवस्था से सभी विवाद-ग्रस्त प्रश्नों का निर्णय हो जाता हो, सो बात तो नहीं है, पर असंतोष के कारण प्रकाश में अवश्य आ जाते हैं और यह भी थोड़ा लाभ नहीं है। विभागीय काउंसिलों के ऊपर एक राष्ट्रीय ह्विटली काउंसिल भी है जो अखिल देशीय कर्मचारी-सम्बंधी प्रश्नों का निर्णय करती है।

१००० पौंड वार्षिक से कम वेतन के कर्मचारियों के वेतन सम्बंधी विवादों के निर्णय के लिए एक सरकारी कर्मचारी विवाद निर्णायिका पञ्चायत है जिसे सिविल सर्विस आरबिट्रेशन ट्रिब्यूनल (Civil Service Arbitration Tribunal) कहते हैं। इसके निर्णयों को मानने के लिए सरकार और कर्मचारी दोनों ही बाध्य हैं।

अवकाश-ग्रहण तथा अवकाश वृत्ति (Retirement and Pension)—ब्रिटेन में सरकारी कर्मचारियों के अवकाश-ग्रहण की आयु ६० से ६५ वर्ष तक है। ६० वर्ष की आयु के बाद कर्मचारी चाहे तो अपनी इच्छा से अवकाश ग्रहण कर ले, अथवा विभागाध्यक्ष उससे अवकाश ग्रहण करने को कह भी सकता है। ६५ वर्ष की आयु होने पर अवकाश-ग्रहण अनिवार्य है।

अवकाश वृत्ति सेवा के वर्षों की संख्या पर निर्भर है। वर्तमान वेतन को सेवा के वर्षों के $\frac{1}{60}$ भाग से गुणा करने से जो गुणनफल होता है, अवकाश वृत्ति उतनी ही मिलती है। पर १० वर्ष से कम सेवा-अवधि के कर्मचारी अवकाश-वृत्ति के अधिकारी नहीं होते, और न वे ही कर्मचारी जो सिविल सर्विस कमीशन के प्रमाणपत्र बिना नियुक्त हुए हों, अथवा जो अंश-कालिक (Part-time) कर्मचारी हों।

अनुशासन, पदच्युत आदि—कानून की दृष्टि से तो सभी कर्मचारी सम्राट् की जब तक इच्छा हो तभी तक पदासीन रह सकते हैं, पर व्यवहार में एक बार नियुक्त हो जाने पर वे अवकाश की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं। इस बीच में बिना किसी अपराध के वे पदच्युत नहीं किये जाते। इसीलिए इन्हें स्थायी कर्मचारी कहा जाता है।

किसी कर्मचारी के विरुद्ध कोई अभियोग हो तो उसे उसकी सूचना दी जाती है। अभियोग की जाँच में उसे अपने को निर्दोष सिद्ध करने का पूरा मौका दिया जाता

है। जाँच के परिणाम के विरुद्ध वह विभागाध्यक्ष से पुनर्विचार की प्रार्थना कर सकता है। सारांश यह है कि उसका पदाधिकार सर्वथा सुरक्षित कर दिया गया है।

राज्यकोष विभाग का नौकरियों पर नियंत्रण—यों तो प्रत्येक सरकारी कर्मचारी अपने विभाग की अधीनता में काम करता और उसके अध्यक्ष के अनुशासन में रहता है, पर कुछ ऐसी बातें जिनका सभी विभागों के कर्मचारियों से समानरूप से सम्बन्ध है, विभागों द्वारा अलग न तय की जा करके राज्यकोष विभाग के अधिकारान्तर्गत रक्खी गई हैं। संक्षेप में राज्यकोष विभाग का नियंत्रण निम्नलिखित बातों पर रहता है :—

(१) प्रत्येक विभाग में किस पद के और कितने कर्मचारी रक्खे जायँगे।

(२) कर्मचारियों की वेतन-कोटियाँ (Grades) क्या होंगी।

(३) नौकरी की अन्य शर्तें जैसे छुट्टी, भत्ता, अवकाश-वृत्ति आदि क्या होंगी।

(४) कर्मचारियों के आचरण सम्बंधी नियम(Conduct-rules)।

ये बातें ऐसी हैं जिनका प्रत्येक विभाग भिन्न-भिन्न प्रकार से निर्णय नहीं कर सकता, क्योंकि इन बातों में पूरी सरकारी नौकरी में समान व्यवस्था होना ही उचित है। अतः इन विषयों पर राज्यकोष विभाग ही नियम बना कर प्रचलित करता है। पर इन नियमों को अपने-अपने विभाग में लागू करना विभागाध्यक्षों का काम है। राज्यकोष विभाग नवनियुक्त कर्मचारियों के शिक्षण में भी भाग लेता है। इस विभाग का स्थायी सचिव समस्त सिविल सर्विस का प्रमुख (Head of the Civil Services) कहा जाता है।

ब्रिटेन की सरकारी नौकरियों की कुछ विशेषतायें—ब्रिटेन की सरकारी नौकरियों के संगठन की चार मुख्य विशेषताएँ हैं—(१) योग्यता के आधार पर नियुक्त (Recruitment by merit), (२) पदावधि की सुरक्षा (Security of tenure), (३) कर्मचारियों की राजनैतिक तटस्थता (Political neutrality), (४) प्रच्छन्नता (Anonymity)। इनमें प्रथम दो विशेषताओं का स्पष्टीकरण किया जा चुका है। यहाँ केवल तीसरी और चौथी विशेषताओं—राजनैतिक तटस्थता और प्रच्छन्नता पर कुछ और प्रकाश डालना है।

राजनैतिक तटस्थता का अर्थ यह है कि सरकारी राजकर्मचारी राजनीति में कोई सक्रिय भाग नहीं ले सकते। उन्हें मतदान का अधिकार है और चुनाव के समय वे चाहे जिस दल के अभ्यर्थी को अपना मत दे सकते हैं। पर किसी दल के लिए प्रचार करना, सभाओं या जलूसों में भाग लेना, राजनैतिक विषयों पर भाषण देना या लेख लिखना आदि उनके लिए निषिद्ध है। राजनैतिक तटस्थता का यह भी अर्थ है कि चाहे जिस दल की सरकार बने, स्थायी कर्मचारियों का उसके साथ समान रूप से

सहयोग करना चाहिये। वास्तव में बिना राजनैतिक तटस्थता के कर्मचारियों का स्थायी रहना असंभव हो जायगा। यदि राजकर्मचारी राजनैतिक दलबंदी में पड़ जायँ तो जभी किसी नये दल की सरकार बनेगी, वह अपने से भिन्न मतवाले कर्मचारियों को निकाल बाहर करेगी।

प्रच्छन्नता का यह अर्थ है कि स्थायी कर्मचारियों का कार्य या उनके गुण-दोष पार्लमेंट या जनता के सामने प्रकाश में नहीं आते। उनके कार्यों का पूरा उत्तरदायित्व विभागाध्यक्ष मन्त्री ही के ऊपर होता है; कर्मचारियों का अपने कार्य के लिए जनता और पार्लमेंट के सामने न तो यश प्राप्त होता है और न अपयश। उनका काम अच्छा हुआ तो उसका श्रेय विभागाध्यक्ष मन्त्री को मिलता है, और यदि बुरा हुआ तो भी मन्त्री ही की निन्दा होती है और उसी को जवाब देना पड़ता है। मन्त्री बाद में खराब काम करने वाले कर्मचारियों को दण्डित और अच्छा काम करने वालों को पुरस्कृत कर सकता है, पर यह उसके विभाग के अन्दर की व्यवस्था है। पार्लमेंट अथवा जनता के सामने वह यह कहकर छुट्टी नहीं पा सकता कि दोष उसका नहीं, किन्तु उसके अधीन किसी स्थायी कर्मचारी का है। ऐसा कहने पर उसे उत्तर मिलेगा कि तुमने उसके काम की यथोचित देख-रेख क्यों नहीं की, उसे कर्तव्यच्युत होने का अवसर क्यों दिया, इत्यादि।

ब्रिटेन के प्रमुख शासन-विभाग—ब्रिटेन में आजकल शासन विभागों की कुल संख्या १०० से ऊपर है। सरकार के कार्यों की वृद्धि के साथ ही साथ विभागों की संख्या भी बढ़ती जाती है; सात-आठ नये विभाग तो द्वितीय महायुद्ध के समय में और उसके बाद ही बनाये गये हैं। कुछ पुराने विभाग अनावश्यक होने पर तोड़ भी दिये जाते हैं। विभागों की स्थापना, पुनः संगठन अथवा उन्हें तोड़ देना मुख्यतः मन्त्रिमंडल के निर्णय द्वारा होता है।

पिछले अध्याय में ब्रिटेन के प्रमुख शासन विभागों और उनके मन्त्रियों का संक्षिप्त विवरण दिया जा चुका है। यहाँ विभागों के वर्गीकरण के दृष्टिकोण से उनका सिंहावलोकन मात्र कर लेना है।

मोटे तौर से हम विभागों को दो वर्गों में बाँट सकते हैं अर्थात् (१) वे विभाग जिनका काम सरकारी आमदनी को वसूल करना और उसका हिसाब-किताब रखना है, और (२) वे विभाग जो धन को जनता के लिए विभिन्न सुविधाएँ और सेवाएँ प्रस्तुत करने में खर्च करते हैं।

सरकारी आमदनी को वसूल करने और हिसाब-किताब रखने वाले विभागों की कुल संख्या ६ है ये निम्नलिखित हैं:—

१. अर्थ विभाग (Treasury)—जैसा बतलाया जा चुका है, यह विभाग चांसलर आफ इक्सचेकर (अर्थ मन्त्री) की अध्यक्षता में काम करता है। यह स्वयं कोई कर नहीं वसूल करता, परंतु अन्य विभागों द्वारा एकत्रित समस्त आमदनी इसी के नाम में बैंक आफ इंगलैण्ड में जमा होती है। वार्षिक आय-व्यय पत्रक यही विभाग बनाता है, और विभिन्न विभागों के व्यय की माँगों को नियंत्रित करता रहता है। विदेशी ऋण, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक समस्याएँ, विकास-योजनाएँ (planning), मुद्रा, विनिमय आदि इसी के अधिकार क्षेत्र में हैं। इसके अतिरिक्त यह विभाग सरकारी नौकरियों पर भी नियंत्रण रखता है और उनकी शिक्षा तथा कार्यपद्धति के सुधार की भी व्यवस्था करता रहता है। यह ब्रिटेन का एक केन्द्रस्थानीय विभाग है जिसका अन्य सभी विभागों से सम्पर्क तथा उन सब पर नियन्त्रण रहता है। मन्त्रिमंडल के बाद यही विभाग अन्य विभागों की नीतियों और कार्यों के समन्वय (Co-ordination) का प्रधान साधन है।

२. और ३. बोर्ड आफ कस्टम्स ऐण्ड इक्सायज और बोर्ड आफ इंनलैण्ड रेवन्यु (Board of Customs and Excise and Board of Inland Revenue)—ये विभाग कर वसूल करने वाले विभाग हैं। इनमें से पहले आयात कर (Customs duty) और उत्पादन कर (Excise) वसूल करता है, और दूसरा आय कर (Income. tax), अतिकर (Super-tax), उत्तराधिकार कर (Death and Succession duties), मुद्रांक कर (Stamp duty) और खनिज अधिकार कर (Mineral rights duty)—इन पाँच करों को वसूल करता है। इन दोनों विभागों के कर्मचारियों का देश भर में जाल-सा फैला हुआ है।

४. डाक विभाग (Post Office)—यह केवल कर-वसूली का विभाग तो नहीं है क्योंकि इसका मुख्य काम डाक, तार, टेलीफोन आदि की सुविधायें प्रस्तुत करना है, पर इन कार्यों से जो आमदनी होती है उसे वसूल करने के कारण इसकी भी इस वर्ग में गिनती की गई है।

५. कोष और लेख-परीक्षण विभाग (Exchequers and Audit Department)—इस विभाग का काम मुख्यतः हिसाब-किताब रखना तथा उसकी जाँच या परीक्षण (Audit) का प्रबन्ध करना है। इस विभाग का मुख्याधिकारी काम्पट्रोलर और आडिटर जेनरल (Comptroller and Auditor-General) कहलाता है। बिना इसकी आज्ञा के राज्यकोष से एक पाई भी नहीं दी जा सकती। आवश्यक व्यय के लिये अर्थ विभाग समय-समय पर माँग करता रहता है। प्रधान लेखा-परीक्षक (Auditor General) यह देखता है कि उक्त माँग पार्लमेंट द्वारा स्वीकृत आय-व्यय पत्रक (Budget) के अनुसार है या नहीं। यदि है तो वह रुपया देने की अनुमति

दे देता है। इस अधिकारी को पार्लमेंट का पहरेदार (Watch-dog of the Parliament) कहा गया है। उसे केवल पार्लमेंट ही पदच्युत कर सकती है। समस्त विभागों के व्यय की परीक्षा करके उनकी त्रुटियों को वह अपनी रिपोर्ट में लिखता है। पार्लमेंट की सार्वजनिक लेखा समिति (Public Accounts Committee) इस रिपोर्ट की जाँच करती, विभागों से त्रुटियों का समाधान पूछती और उनकी ओर पार्लमेंट का ध्यान आकर्षित करती है।

६. भूमि तथा वन-विभाग (Department of Woods, Forests & Lands)—इस विभाग का काम अपने नाम से सम्बन्धित सरकारी आय की कुछ मदों की वसूली करना है।

इन ६ आय विभागों के बाद अब व्यय-विभागों (Spending Departments) पर विचार करना है। इन विभागों को ८-९ वर्गों में बाँटा जा सकता है, और प्रत्येक वर्ग के मुख्य विभाग निम्नलिखित हैं:—

१. वैदेशिक और साम्राज्य सम्बन्धी (Foreign and Imperial)—इस वर्ग में कुल तीन विभाग हैं अर्थात् परराष्ट्र विभाग (Foreign), औपनिवेशिक विभाग (Colonial) और राष्ट्रमंडल सम्बन्ध विभाग (Commonwealth Relations) इनके कार्यों का चौथे अध्याय में वर्णन हो चुका है।

२. गृह और विधि न्याय (Home Law and Justice)—गृह विभाग का वर्णन चौथे अध्याय में हो चुका है। इसके अंतर्गत विधि और न्याय (Law and Justice) के उपविभाग भी हैं।

३. शिक्षा और प्रसार (Education and Broadcasting)—शिक्षा विभाग का कार्य उसके नाम से ही स्पष्ट है। प्रसार कार्य (Broadcasting) एक स्वतन्त्र निगम (Corporation) के अधीन है जिसे बी० बी० सी० (British Broadcasting Corporation) कहते हैं, पर नीति सम्बन्धी मामलों में इसका शिक्षा तथा डाक विभाग से भी सम्बन्ध है।

४. स्वास्थ्य, गृह-व्यवस्था, श्रम, नगर-निर्माण और राष्ट्र आगोप (Health, Housing, Labour, Town Planning, and National Insurance)—इस वर्ग में स्वास्थ्य, श्रम, स्थानीय शासन और नगर निर्माण और राष्ट्रीय आगोप (National Insurance)—ये चार मुख्य विभाग हैं। इन में से स्वास्थ्य विभाग का चौथे अध्याय में वर्णन हो चुका है। श्रम विभाग का मुख्य काम बेकार श्रमिकों को श्रम विनिमायक संस्थाओं (Labour Exchanges) द्वारा काम दिलाना, शिक्षित करना, बेकारी रोकना तथा श्रमिक-कल्याण (labour welfare) कार्य करना है। पर इससे भी अधिक महत्वपूर्ण कार्य है देश

की श्रम-शक्ति को विभिन्न राष्ट्रीय कार्यों में आवश्यकतानुसार विभाजित करना तथा लगाना। द्वितीय महायुद्ध के समय से श्रमिकों की कमी के कारण इस कार्य का महत्व बहुत बढ़ गया है। स्थानीय शासन और नगर निर्माण विभाग (Ministry of Local Government and Country and Town Planning) की स्थापना द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद हुई है। इसके कार्य का सम्बन्ध देश की समस्त भूमि के उचित उपयोग, नये नगरों के निर्माण और वर्तमान नगरों के विकास की योजनाओं को बनाना अथवा स्वीकृत करना है। संसार में ब्रिटेन ही पहला देश है जिसने अपनी समस्त भूमि के सुव्यवस्थित उपयोग के लिए इस प्रकार की व्यवस्था की है। १६५१ से स्थानीय संस्थाओं की देख-रेख का काम भी यही विभाग करने लगा है। आगोप विभाग (Ministry of National Insurance) भी नया ही है। राष्ट्रीय आगोप, कानून १६०६ के अनुसार देश के ४३ करोड़ लोगों का इस उद्देश्य से बीमा करना कि निर्धनता, बेकारी, रोग आदि की आपत्तियों के आने से कोई भी भरण-पोषण की सुविधा से वंचित न रहे—यही इस विभाग का काम है। इस विषय में भी संसार के देशों में ब्रिटेन का यह प्रथम प्रयत्न है। आवश्यकता होने पर राज्य द्वारा लोक-कल्याण का समस्त भार ग्रहण करने की योजना अन्य किसी भी देश में अभी स्वीकृत नहीं की गई।

५. **व्यापार** (Trade), **उद्योग** (Industry) **और परिवहन** (Transport)—इस वर्ग में ५ मुख्य विभाग हैं अर्थात्

(अ) व्यापार विभाग (Board of Trade)—इसका कार्य देश के विदेशी व्यापार को प्रोत्साहन देना, उद्योगों को ऐसे परामर्श व सूचना देना जिससे माल की विदेशों में अधिक खपत हो, उद्योगों के लिये सरलता से न मिलने वाले कच्चे माल की प्राप्ति का प्रबन्ध करना आदि है।

(ब) कृषि और मत्स्य विभाग (Ministry of Agriculture and Fisheries) कृषि विभाग का काम कृषि की उन्नति के लिए प्रयत्न करना, कृषकों को परामर्श तथा सहायता देना, कृषि में काम करने वाले मजदूरों के निम्नतम वेतन नियत करना आदि है। मछलियों की उत्पत्ति के स्थानों का प्रबंध करना, उनकी बढ़ती के उपाय करना आदि भी इसी विभाग के कामों में से हैं।

(स) **ईंधन तथा शक्ति विभाग** (Ministry of Fuel and Power)—इस विभाग का कोयला, गैस, बिजली आदि के उद्योगों से सम्बंध है। इस विभाग की देख-रेख में इन उद्योगों के प्रबंध के लिए कई स्वाधीन निगम (Corporations) स्थापित हैं जैसे कोयले के लिए नैशनल कोल बोर्ड, बिजली के लिए ब्रिटिश

इलेक्ट्रीसिटी अथॉरिटी (Br. Electricity Authority) और गैस के लिए ब्रिटिश गैस काउंसिल (Br. Gas Council) आदि। इन तीनों ही उद्योगों का राष्ट्रीयकरण (Nationalization) हो चुका है।

(द) परिवहन विभाग (Ministry of Transport)—जल और स्थल द्वारा परिवहन के सभी साधन इस विभाग के अधीन हैं जैसे जहाज, रेल और मोटर द्वारा यात्रा। इनका काम सड़कों का प्रबंध, मोटरों तथा जहाजों को लाइसेंस देना आदि है। वायुयान के द्वारा यातायात एक अलग ही विभाग के अधीन है जिसे उड्डयन विभाग (Ministry of Civil Aviation) कहते हैं। परिवहन उद्योग का भी ब्रिटेन में राष्ट्रीयकरण हो चुका है और विभिन्न साधनों का प्रबन्ध स्वाधीन निगमों के हाथ में दे दिया गया है। परिवहन और उड्डीयन विभाग केवल इन निगमों की नीति निर्धारण का काम करते हैं।

६. सामान्य प्रबन्ध (Common Services)—इस वर्ग में वे विभाग सम्मिलित हैं जो कुछ सामान्य बातों का सभी विभागों के लिए प्रबंध करते हैं। इसमें मुख्य विभाग तीन हैं—केन्द्रीय सूचना विभाग (The Central Office of Information), राजकीय मुद्रण और लेखन-सामग्री विभाग (H. M. Stationery Office) और सार्वजनिक कार्य विभाग (Ministry of Works)। केन्द्रीय सूचना विभाग सभी विभागों को सूचना और प्रचार कार्य में सहायता देता है। मुद्रण और लेखन सामग्री विभाग सभी विभागों की रिपोर्टों और अन्य आवश्यक कागज-पत्रों की छपाई तथा उनके प्रकाशनों को बेचने का काम करता है। सार्वजनिक कार्य विभाग सभी विभागों के भवनों की मरम्मत तथा उनके लिए आवश्यक नई इमारतों के बनाने का काम करता है।

रसद, खाद्य पदार्थ (Supply, Food, etc.)—इस वर्ग में दो विभाग मुख्य हैं। रसद विभाग का काम तीनों सेना विभागों के लिए अस्त्र-शस्त्र तथा अन्य आवश्यक सामग्री संग्रह और प्रस्तुत करना है। वायुयानों का निर्माण तथा उनकी उन्नति के लिए शोध-कार्य (research) इस विभाग का एक विशेष उत्तरदायित्व है। अणुशक्ति अन्वेषण (Atomic Energy Research) का कार्य भी इसी के अधीन है। खाद्य विभाग (Ministry of Food)-का कार्य देश के लिए पर्याप्त अन्न और अन्य खाद्य वस्तुओं का संग्रह है। ब्रिटेन को खाद्य पदार्थ अधिकांश में बाहर के देशों से मँगाना पड़ता है। उन्हें मँगाना और वितरण करना, उनके मूल्य और मात्रा पर नियन्त्रण (Control) रखना इसी विभाग का काम है।

रक्षा विभाग (Defence)—इस वर्ग में स्थल सेना (War Minis-

try), जल सेना (Board of Admiralty), और वायु सेना विभाग (Air-Ministry) ये तीन विभाग सम्मिलित हैं। इनका काम इन सेनाओं की भरती, शिक्षा, संगठन और संचालन है। इन तीनों की नीति का समन्वय रक्षा विभाग (Ministry of Defence) करता है। अब केवल रक्षा मंत्री (Minister of Defence) ही मंत्रिमण्डल का सदस्य होता है, और इन तीनों विभागों के अध्यक्ष साधारण मंत्री मात्र रह गये हैं।

अर्धसरकारी-शासन संस्थायें और निगम (Quasi-Government Organizations and Public Corporations)—कोई समय था जब समस्त शासन-प्रबन्ध विभागों द्वारा ही किया जाता था। उन दिनों सरकार के कार्य देश-रक्षा और न्याय-प्रबन्ध तक ही सीमित थे। परन्तु परिस्थिति-भेद के कारण अब सरकार को एक प्रकार से नागरिकों की समस्त जीवन-यात्रा का प्रबन्ध करना पड़ता है जैसे शिक्षा, मजदूरों की रक्षा का प्रबन्ध, बेकारी रोकना और लोगों को काम दिलाना, चिकित्सा, खाद्यपदार्थ संग्रह, मकानों का प्रबन्ध, यातायात के साधन प्रस्तुत करना आदि। फिर, सामाजिक न्याय (Social justice) की भावना से प्रेरित होकर राज्य ने कई महत्वपूर्ण उद्योग भी उनके मालिकों के निजी स्वत्व (Private ownership) का अंत करके अपने हाथ में ले लिये हैं। मजदूर सरकार ने अपने १६४५-५१ के शासन काल में बैंक आफ़ इंगलैंड, विद्युत उत्पादन, वायुयान यात्रा, रेल और सड़कों द्वारा यात्रा आदि उद्योगों का राष्ट्रीकरण करके उन्हें अपने हाथ में ले लिया। अन्य कई उद्योगों में जैसे कृषि, व्यापार, वितरण आदि में युद्धोत्पन्न कमी के कारण अनेक प्रकार का सरकारी नियंत्रण (Control) स्थापित करना पड़ा है। अभाव से रक्षा के लिए देश की लगभग समस्त जनता के लिए सरकारी बीमे का प्रबंध कराना पड़ा है।

इनमें से बहुतेरे कार्य ऐसे हैं जिनका पहिले उद्योगपतियों और व्यवसाइयों द्वारा निजी रूप से प्रबंध होता था। सरकारी शासन की रीति और व्यावसायिक (business administration) में एक महत्वपूर्ण अंतर है और वह यह है कि व्यावसायिक प्रबंध सरकारी प्रबंध की भाँति नियमों से जकड़ा नहीं होता। व्यवसायी को जब तक लाभ होता रहता है, तब तक कार्य-पद्धति, नियम आदि की विशेष परवाह नहीं करता। इस कारण व्यावसायिक प्रबंध में एक लोच और शीघ्रगामिता (flexibility and speed) होती है जो सरकारी प्रबंध में नहीं पाई जाती। इसी कारण बहुधा सरकारी कार्य उतने शीघ्र और उतने कम खर्च में नहीं हो पाते जितने निजी कार्य। लोग कहते हैं कि सरकारी उद्योग और व्यवसाय में निजी उद्योग और व्यवसाय की पटुता (efficiency) आनी कठिन है।

ऋणों के साथ शासनाधिकारियों ही का सौंप दिये हैं। शासनाधिकारियों का इस प्रकार का विधि निर्माणाधिकार स्वतंत्र न होकर उन्हें पार्लमेंट से प्रत्यायोजन या हस्तान्तरण द्वारा प्राप्त हुआ है और इसी कारण इसे प्रत्यायुक्त विधि निर्माण कहा जाता है। क्योंकि यह स्वतंत्र अधिकार न होकर पार्लमेंट द्वारा नियंत्रित अथवा सीमाबद्ध है। इस कारण इसे अधीन विधि-निर्माण (subordinate legislation) कहा जाता है। अधीन इसलिए कि पार्लमेंट के जिस कानून द्वारा यह अधिकार दिया गया है, उसके अन्तर्गत और उससे सामञ्जस्य रखते हुए ही इसका प्रयोग किया जाता है। यदि प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण अपने नियामक और मूलभूत पार्लमेंट के कानून के सीमा का उल्लंघन करे अथवा उसके विरुद्ध हो, तो न्यायालय उसे अवैध या शक्ति परस्तात् (ultra vires) घोषित करके रद कर सकते हैं।

प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण के कारण और उसके समर्थन में तर्क—प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण का मुख्य कारण राज्य के कार्यों के विस्तार और उनकी जटिलता की वृद्धि है। जैसा कि अनेक बार दुहराया जा चुका है, आजकल राज्य का काम शान्ति और न्याय-व्यवस्था मात्र न होकर पूरे राष्ट्र की जीवन-यात्रा का प्रबंध करना हो गया है। इससे विधिनिर्माण कार्य भी बहुत विस्तृत हो गया है और पार्लमेंट के पास उसके लिए पर्याप्त समय नहीं रहता। अतः पार्लमेंट अपने कार्य को संक्षिप्त करने के उद्देश्य से विधि निर्माण में केवल मूल-भूत नियमों को स्वीकृत कर देती है और विस्तार की बातों का नियम करने का अधिकार सम्राट्, उसके मंत्रियों, शासन-विभागों अथवा गैर-सरकारी निगमों (जैसे विश्वविद्यालयों, स्थानीय संस्थाओं आदि) को दे देती है। अतः प्रत्यायुक्त विधि-निर्माण का प्रथम कारण और उसके पक्ष में प्रथम तर्क यही है कि इससे पार्लमेंट के समय की बचत होती है। फिर, एक दूसरी बात यह भी है कि आर्थिक, सामाजिक, औद्योगिक आदि विषयों से सम्बद्ध कानूनों की विस्तार की बातें बहुधा ऐसी होती हैं जिन्हें पार्लमेंट के साधारण सदस्य न जानते हैं और न समझते हैं। उनकी यथेष्ट जानकारी केवल विशेषज्ञों ही को हो सकती है। अतः युक्तिसंगत बात यही है कि ऐसी बातों का नियमन शासन विभागों के विशेषज्ञ कर्मचारियों पर छोड़ दिया जाय। ऐसी बातों पर पार्लमेंट में विचार होने से कोई लाभ नहीं। तीसरी बात यह कि पार्लमेंट द्वारा-पारित कानून की धाराओं में संशोधन और परिवर्तन शीघ्र या सरलता से नहीं हो सकते, पर शासन विभाग द्वारा बनाये हुए नियम आवश्यकता होने पर बिना कठिनाई के उन विभागों द्वारा ही संशोधित हो सकते हैं। अतः प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण द्वारा कानूनों में एक ऐसी लोच (flexibility) उत्पन्न की जा सकती है जो जटिल अथवा परिवर्तनशील विषयों के नियमन में बहुत ही उपयोगी सिद्ध होती है। चौथी और अंतिम बात यह है कि संकटकालीन स्थितियों का सामना करने के

लिए शासकों को आवश्यक विधिनिर्माण का अधिकार देना ही पड़ता है। युद्ध या अन्य कोई संकट आ जाय तो पार्लमेंट तुरन्त ही तो कानून नहीं बना सकती।

प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण के विपक्ष में तर्क—प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण के विपक्ष में प्रमुख तर्क यह है कि विधिनिर्माण का कार्य लोक प्रतिनिधियों द्वारा होने पर उस पर सभी दृष्टिकोणों से विचार होता है और जनता की सुविधा-असुविधाओं का यथेष्ट ध्यान रक्खा जाता है। शासकों द्वारा कानून-निर्माण होने पर मुख्य ध्यान शासन की सुविधा व सुगमता पर चला जाता है और जनता की सुविधा की उपेक्षा हो सकती है। दूसरी बात यह है कि शासन और कानून-निर्माण के अधिकारों का एकत्र समावेश लोक-स्वातंत्र्य के लिए भयप्रद है। उत्तरदायित्वपूर्ण शासन की व्यवस्था का अभिप्राय यही है कि लोक-प्रतिनिधि कानून-निर्माण और अन्य उपायों से शासकों पर नियंत्रण रक्खें। यदि शासक कानून भी बनाते हैं तो यह पार्लमेंट और जन-प्रतिनिधियों के अधिकार का अपहरण और निरंकुशता का प्रथम सोपान है। ब्रिटेन के भूतपूर्व चीफ जस्टिस लार्ड हेवार्ट ने अपनी 'नई निरंकुशता' (The New Despotism) नामक पुस्तक में इसी दृष्टिकोण से प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण की तीव्र आलोचना की है। तीसरी बात यह है कि यदि प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण केवल विस्तार की बातों तक ही सीमित रहे तो उतनी चिन्ता की बात नहीं, पर व्यवहार में यह देखा जाता है कि पार्लमेंट बहुधा अज्ञात रूप से ही शासकों को सिद्धांत-नियमन और अपने बनाये कानूनों में संशोधन-परिवर्तन का भी अनियमित सा अधिकार दे देती है जिससे प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण अधीन न रह कर स्वतंत्र और एक प्रकार से पार्लमेंट से भी ऊपर की वस्तु हो जाता है। यह विशेष चिंता का विषय है।

निर्णय—इन आलोचनाओं के कारण १९२९ ई० में ब्रिटेन में एक कमेटी नियुक्त की गई कि वह प्रत्यायुक्त विधि-निर्माण के पूर्वापर पक्षों पर विचार करके इस विषय पर उचित परामर्श प्रस्तुत करे। इसका नाम मंत्रियों के अधिकार सम्बंधी कमेटी, (The Committee on Ministers' Powers)—प्रसिद्ध है। इसकी रिपोर्ट १९३३ ई० में प्रकाशित हुई और उसमें बतलाया गया कि वर्तमान परिस्थितियों में प्रत्यायुक्त विधि निर्माण आवश्यक ही नहीं किन्तु अनिवार्य है। उसके लाभ बहुत हैं और जो हानियाँ बतलाई हैं वे उपयुक्त नियंत्रण द्वारा दूर की जा सकती हैं। कमेटी ने ऐसे नियंत्रण के कई उपाय बतलाये जिसमें मुख्य यह था कि पार्लमेंट की एक स्थायी समिति प्रति अधिवेशन में प्रत्यायुक्त रीति से निर्मित नियमों की और प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण का अधिकार देने वाले प्रस्तावित विधेयकों की जाँच करके जो उनमें आपत्तिजनक अथवा साधारण बातें हों उनकी ओर पार्लमेंट का ध्यान आकर्षित करे। १९४४ ई० से एक विशिष्ट समिति (select committee)

यह कार्य करती है। यह भी बन्धन रक्खा गया है कि शासन-विभागों द्वारा निर्मित विशेष महत्व वाले नियम ४० दिन तक पार्लमेंट के समक्ष रक्खे जायँ और इस अवधि में पार्लमेंट चाहे तो उन्हें अस्वीकृत कर सकती है। कुछ और भी अधिक महत्त्वपूर्ण प्रकार के नियम पार्लमेंट की स्वीकृति के बिना लागू ही नहीं किये जा सकते। शासन-विभागों द्वारा निर्मित नियमों पर सम्बद्ध संस्थाओं और स्वार्थों की राय लेने तथा उन्हें सरकारी गजट में लोगों की जानकारी के लिये प्रकाशित करने की भी व्यवस्था होने से प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण से भय की आशङ्का नहीं रह जाती, प्रत्युत उससे प्रचुर लाभ होता है।

प्रशासनीय न्याय-व्यवस्था (Administrative Justice)

जिन कारणों से प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण का विकास हुआ है उन्हीं कारणों से प्रशासनीय न्याय-व्यवस्था का भी जन्म हुआ है। प्रथम बात यह है कि आजकल के आर्थिक और सामाजिक कानूनों का बहुधा ऐसे विषयों से सम्बन्ध होता है जिनमें उठने वाले विवादों का यथोचित निर्णय विशेषज्ञ लोग ही कर सकते हैं, केवल कानून का ज्ञान रखने वाले न्यायाधीश नहीं। दूसरे साधारण न्यायालयों की न्याय-प्रणाली में बड़ी देर होती है, बड़ा खर्च पड़ता है और इन कारणों से वे सर्वसाधारण के लिए सुलभ नहीं हैं। आर्थिक और सामाजिक विषयों के नियमन करने वाले कानूनों के लागू करने में पग-पग पर संपत्ति और अधिकार सम्बंधी विवाद उठते हैं और यदि उनका शीघ्र अल्पव्ययसाध्य निर्णय न हो, तो उन कानूनों को कार्यान्वित करना ही असंभव हो जाय। तीसरी बात यह भी कही जाती है कि परंपरागत कानून और उनके अनुसार न्याय करने वाले न्यायाधीश कुछ ऐसी मूलभूत धारणाओं पर अवलम्बित हैं जो वर्तमान युग की परिस्थितियों से बहुत अंशों में विपरीत हैं। इनमें से कुछ धारणाएँ ये हैं कि सभी व्यक्ति समान हैं अथवा निजी सम्पत्ति पर प्रत्येक व्यक्ति का निरपेक्ष अधिकार है, अथवा संविदा (contract—ठेका) के विषय में प्रत्येक व्यक्ति पूर्णतः स्वतंत्र है। आजकल के समाज में आर्थिक असमानता के कारण इन धारणाओं के अनुसार न्याय करने में बहुधा अन्याय हो जाता है। निर्धन और असहाय व्यक्ति को कानून के अधिक संरक्षण की जरूरत है, अन्यथा वह धनी और सबल के शोषण का शिकार हो जायगा। व्यक्तिगत सम्पत्ति का भी समाज-हित में नियंत्रण आवश्यक है। संविदा की स्वतंत्रता पर भी रोक न हो तो गरीब लोग पेट की आग बुझाने को इतनी मात्रा में और ऐसे कामों को करने को लाचार हो जायँगे जिनसे उनके स्वास्थ्य और जीवन को धक्का पहुँचने का डर है। इन कारणों से आजकल के सामाजिक कानूनों में धनी और सबल के मुकाबले में गरीबों को अधिक सुविधा और संरक्षण

देने की प्रवृति पाई जाती है। पर इन्हें कार्यान्वित करने में साधारण न्यायालय उन्हीं पुरानी धारणाओं का अनुसरण करते हुए अर्थ का अनर्थ कर डालते हैं। इस कारण बहुधा ऐसे कानूनों के अनुसार उपयुक्त न्यायाधीशों की जरूरत पड़ती है जो कानून की पुरानी रूढ़ियों के प्रभाव से मुक्त हों और नवयुग की प्रवृत्तियों की जानकारी और उसकी आवश्यकता से सहानुभूति रखते हों। शासन कर्मचारियों को इन नई प्रवृत्तियों और आवश्यकताओं का अपने दैनिक कार्य में अनुभव होता रहता है। अतः आजकल बहुतेरे मामलों में विवाद-निर्णय का अधिकार साधारण न्यायालयों को न देकर मन्त्रियों, विभागों, शासन-कर्मचारियों या उनके द्वारा मनोनीत विशेष न्यायालयों को दे दिया जाता है। इसी व्यवस्था को प्रशासनीय न्याय-व्यवस्था कहा जाता है और इन विशेष न्यायालयों को प्रशासनीय न्यायालय।

ब्रिटेन में आजकल इन विशेष न्यायालयों और न्यायाधिकार अथवा अर्द्ध-न्यायाधिकार (Quasi-Judicial) शासनाधिकारियों की संख्या कई सौ तक जा पहुँची है और बढ़ती ही जाती है। पार्लमेन्ट के प्रति अधिवेशन में बने कानूनों द्वारा इनकी संख्या में कुछ न कुछ वृद्धि होती ही है। स्वास्थ्य विभाग को नगरों की घनी और गन्दी बस्तियों के सुधार के सम्बन्ध में ऐसे अनेक मामलों का निर्णय करने का अधिकार है जिनमें सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारों के प्रश्न उठते हैं। शिक्षा विभाग, स्थानीय संस्थाओं और गैरसरकारी (Private) स्कूलों के बीच में उठने वाले अनेक प्रकार के झगड़ों का अन्तिम निर्णय देने का अधिकार रखता है। गृह-विभाग (Home Office) के भी अनेक न्याय विषयक अधिकार हैं जैसे यह निर्णय करना कि अमुक व्यक्ति नागरिक है या विदेशी, अथवा अपराधियों को क्षमा प्रदान का अधिकार। अधिक क्या, आजकल कोई भी शासन विभाग ऐसा नहीं है जिसके कर्मचारियों को कुछ न कुछ न्याय-विषयक अधिकार प्राप्त न हों। कभी-कभी तो इन न्यायालयों या कर्मचारियों के विरुद्ध साधारण न्यायालयों में पुनर्विचार प्रार्थना (appeal) की जा सकती है और कभी-कभी उनका निर्णय एकदम अन्तिम होता है।

प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण की भाँति ही प्रशासनीय न्याय-व्यवस्था की भी तीव्र आलोचना की गई है। प्रथम स्थान में तो यह कहा गया है कि इस प्रकार की व्यवस्था अँग्रेजी संविधान के मौलिक आधार—विधि राज्य (rule of law) के विरुद्ध है, क्योंकि विधिराज्य के अनुसार सभी नागरिक साधारण कानून और न्यायालयों के अधीन ही होने चाहिए। दूसरी आलोचना यह है कि प्रशासनीय न्याय की पद्धति में वादी-प्रतिवादी को न्यायप्राप्ति की यथेष्ट सुविधा नहीं दी जाती। बहुधा, पक्षों को उपस्थित होकर अपनी बात कहने का मौका नहीं दिया जाता, कभी वकील लाने की

अध्याय ६

पार्लमेण्ट (अ) लार्ड सभा

पार्लमेंट का अर्थ—लार्ड सभा—ऐतिहासिक महत्त्व—ब्रिटेन का लार्ड समुदाय—लार्ड सभा का संगठन—लार्ड सभा के अधिवेशन और उसकी कार्य-प्रणाली—लार्ड-सभा के अधिकार—न्याय विषयक—विधि-निर्माण विषयक—पार्लमेण्ट ऐक्ट १९११—पार्लमेण्ट ऐक्ट १९४९—लार्ड संगठन का सुधार—ब्राइस रिपोर्ट १९२२ की कैबिनेट कमेटी के प्रस्ताव—लार्ड सभा की वर्तमान उपयोगिता।

पार्लमेण्ट का अर्थ—गत अध्यायों में ब्रिटिश राज्य की कार्यपालिका (**Executive**)—सम्राट्, मन्त्रिमण्डल, शासन विभागों और उनके स्थायी कर्मचारियों का वर्णन किया गया है। हमने यह देखा कि यह कार्यपालिका पार्लमेण्ट के प्रति उत्तरदायी है और उसी के नियंत्रण में काम करती है। अब हमें पार्लमेण्ट के संगठन और कार्यप्रणाली का अध्ययन करना है।

पार्लमेण्ट सम्राट् और लार्ड सभा तथा कामन्स सभा—इन तीनों अंगों से मिलकर बनी है। इनमें से सम्राट् के पार्लमेंट और विधि निर्माण सम्बन्धी अधिकारों का वर्णन किया जा चुका है। इस अध्याय में अब लार्ड सभा तथा आगे के अध्यायों में कामन्स सभा के अधिकारों और पार्लमेंट की कार्यप्रणाली का वर्णन किया जायगा।

लार्ड सभा

ऐतिहासिक महत्व—लार्ड सभा संसार की सबसे प्राचीन विधान सभा है। प्रथम अध्याय में बतलाया जा चुका है कि नार्मन विजेताओं के समय की बृहत्सभा (Great Council) से इसकी कैसे उत्पत्ति हुई तथा चौदहवीं शताब्दी में कामन्स सभा के पृथक् हो जाने पर इसने कैसे द्वितीय सभा का रूप धारण कर लिया। इसी का अनुकरण करते हुये संसार के अन्य संविधानों में भी द्वितीय सभाओं की व्यवस्था करने की प्रणाली प्रचलित है। शताब्दियों तक लार्ड सभा ही ब्रिटेन में राजनैतिक प्रभाव और शक्ति का केन्द्र रही और कामन्स सभा उसकी अनुगामिनी। प्रजातन्त्र की भावना की वृद्धि के साथ-साथ लार्ड सभा के अधिकार क्रमशः कम होते गये और आज कामन्स सभा की प्रधानता निःसन्दिग्ध है, पर यह सब होते हुये भी लार्ड सभा का प्रभाव एकदम नष्ट नहीं हुआ है और अपने सदस्यों की योग्यता और उत्कृष्टता के कारण आज भी उसका आदर और नाम है।

ब्रिटेन का लार्ड समुदाय (The British Peerage)—लार्ड सभा

का संगठन समझने के लिए यह जान लेना आवश्यक है कि लार्ड लोग कौन हैं और उन्हें यह कैसे प्राप्त होती है।

लार्ड पदवी देना सम्राट् का अधिकार है, पर व्यवहार में अन्य बातों की भाँति ही इस विषय में भी सम्राट् मन्त्रिमंडल और मुख्यतः प्रधानमन्त्री की राय पर ही काम करता है। लार्ड पदवी देने का उद्देश्य जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में ख्याति-प्राप्त व्यक्तियों का सम्मान करना है। अतः यह पदवी साहित्य, विज्ञान, कला, व्यवसाय, कानून, राजनीति, सरकारी सेवा आदि में सफल और लब्ध-प्रतिष्ठ व्यक्तियों को दी जाती है। पुराने समय में यह उपाधि देश के बड़े-बड़े सामन्तों और जमींदारों को ही प्राप्त हुई थी और उनके वंशजों में उत्तराधिकार क्रम से अब भी चली आती है। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि सभी लार्ड उत्कृष्ट योग्यता वाले व्यक्ति ही हैं। लायड जार्ज मंत्रिमंडल (१९१९-२१) ने तो अपने दल को चन्दे में बड़ी-बड़ी रकमें देने वाले लोगों को लार्ड की उपाधियाँ देकर एक प्रकार से पदवियों की खुली बिक्री की नीति का अनुसरण किया था। अतः यद्यपि सभी लार्डों को योग्य नहीं कहा जा सकता, परन्तु यह बात निर्विवाद है कि इनमें उत्कृष्ट योग्यता वालों की भी पर्याप्त संख्या पाई जाती है।

कितने नये लार्ड प्रति वर्ष अथवा समय-समय पर बनाये जायँ, इसकी कोई संख्या नहीं नियत है। सब कुछ सरकार की इच्छा पर निर्भर है। १७५९ ई० में लार्ड सन्डरलैण्ड ने इस आशय का एक विधेयक प्रस्तुत किया था कि लार्डों की कुल संख्या कभी २०० से अधिक न हो पर यह स्वीकृत न हो सका। परन्तु लार्ड समुदाय की सभी शाखाओं में वृद्धि करने का सम्राट् को अधिकार नहीं है। स्काटलैंड की शाखा में अब कोई नया लार्ड नहीं बनाया जा सकता और न इंगलैंड के पुराने लार्डों की शाखा में ही। ऐक्ट आफ़ यूनियन (१८०१) के द्वारा आयरलैंड के लार्डों की भी संख्या १०० तक ही सीमित है।

ब्रिटिश लार्ड समुदाय की चार शाखाएँ हैं : (१) इंगलैंड का प्राचीन लार्ड समुदाय (२) स्काटलैंड का लार्ड समुदाय, (३) आयरलैंड का लार्ड समुदाय और (४) युनाइटेड किंगडम (अर्थात् इंगलैंड, स्काटलैंड और उत्तर आयरलैंड के संयुक्त राज्य) का लार्ड समुदाय। इनमें से प्रथम दो की संख्या में अब वृद्धि नहीं की जा सकती और वास्तव में इनकी संख्या घटती ही जाती है। स्काटलैंड के लार्डों की संख्या १७०७ ई० में १६५ थी पर अब वह उन पुराने परिवारों के निर्वंश हो जाने के कारण २० के लगभग रह गई है। इसी प्रकार आयरलैंड के लार्डों की संख्या १८०१ ई० में १०० नियत की गई थी, पर वह भी अब घटते-घटते ६० ही रह गई है। अब जो नये लार्ड बनते हैं वह संयुक्त राज्य (peerage of United Kingdom)

वाली शाखा ही में सम्मिलित किये जाते हैं। इनकी संख्या बढ़ती ही जाती है और १९४८ ई० में ७५० के लगभग थी।

प्रत्येक शाखा के लार्डों की ५ कोटियाँ (Ranks), हैं—ड्यूक (Duke), मारक्विस (Marquis), अर्ल (Earl), विस्काउंट (Viscount) और बैरन (Baron)। ये कोटियाँ महत्त्व के निम्नतर क्रमानुसार लिखी गई हैं, अर्थात ड्यूक उच्चतम् पद है, फिर मारक्विस, फिर अर्ल और इसी प्रकार आगे भी। राजवंश वाले ड्यूक पद्वीधारी होते हैं।

यदि किसी को लार्ड पदवी देने का प्रस्ताव किया जाय, तो वह चाहे तो उसे अस्वीकार कर सकता है, पर यदि एक बार स्वीकार कर लिया, तो फिर बाद में न तो वही और न उसके उत्तराधिकारी उसे किसी प्रकार त्याग सकते हैं। इस नियम के कारण कभी-कभी लार्डों के होनहार उत्तराधिकारी अपने पिता की मृत्यु के कारण कामन्स सभा की सदस्यता छोड़कर लार्ड सभा में स्थान ग्रहण करने को बाध्य हो जाते हैं और उनकी राजनैतिक महत्त्वाकांक्षाएँ अपूर्ण ही रह जाती हैं।

लार्ड पदवी का उत्तराधिकार ज्येष्ठाधिकार क्रम (Primogeniture) के अनुसार होता है अर्थात् पिता की मृत्यु के बाद उसके ज्येष्ठ पुत्र अथवा उसके जीवित न होने पर ज्येष्ठ पौत्र या प्रपौत्र आदि को क्रमानुसार प्राप्त होता है। पुरुष उत्तराधिकारी के अभाव में स्त्रियों को भी उत्तराधिकार से पदवी मिल जाती है, पर वे लार्ड सभा की सदस्या नहीं हो सकतीं। स्त्रियों की उपाधियाँ स्त्रीवाचक अर्थात् डचेस, वाईकाउन्टेस बैरोनेस आदि रूप में होती हैं। आदर के भाव से भी ड्यूक की पत्नी को डचेस, विस्काउन्ट की पत्नी को विस्काउन्टेस आदि कहने की प्रथा है और इसी प्रकार पिता के जीवनकाल में उसके पुत्र के नाम के आगे पिता की पदवी से एक दर्जा नीचे की जोड़ने की प्रथा है जैसे ड्यूक का ज्येष्ठ पुत्र पिता के जीवनकाल में मारक्विस और मारक्विस का पुत्र अर्ल कहा जाता है, पर ये केवल सम्मानार्थ पदवियाँ (Courtesy titles) हैं, अधिकार-मूलक नहीं।

१९१९ ई० में एक विधेयक द्वारा यह चेष्टा की गई कि अधिकार मूलक पदवी वाली स्त्रियों (Peeresses in their own right) को भी लार्ड सभा की सदस्यता प्राप्त हो सके, पर लार्ड सभा ने इसे स्वीकार नहीं किया। कुछ वर्ष बाद पुनः यही प्रयत्न किया गया पर वह भी विफल रहा।

इसी प्रकार यह प्रयत्न भी किये गये हैं कि लार्डों के ज्येष्ठ पुत्र जो अपने पिता की मृत्यु के समय कामन्स सभा के सदस्य हों, उक्त सभा के स्थान को छोड़ने और लार्ड सभा में जाने को बाध्य न किये जायँ। १८९५ ई० में लार्ड सेलबोर्न के पुत्र मि० पामर ने जो उस समय कामन्स सभा के सदस्य थे, लार्ड सभा में जाने से बचने की

यह तरकीब सोची कि उक्त सभा के स्थान के लिये आवेदन-पत्र ही नहीं दिया। पर कामन्स सभा ने उनके उस सभा के स्थान को प्रस्ताव द्वारा खाली घोषित करके उन्हें निकाल-बाहर किया। इस प्रकार के दो अपेक्षाकृत नये उदाहरण श्री क्विन्टन हाग (लार्ड हेलशैम के पुत्र) और श्री क्रैनबोर्न (वर्तमान लार्ड सैलिसबरी) के हैं। इन्हें भी इच्छा के विरुद्ध कामन्स सभा से लार्ड सभा में जाना पड़ा।

लार्डों के कुछ अधिकार भी हैं और साथ ही अयोग्यतायें (Disabilities) भी। प्रधान अधिकार तो यह है कि वे सभी (स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड के लार्डों को छोड़कर) लार्ड सभा के सदस्य होते हैं, और उनके बाद उनके उत्तराधिकारी भी उन्हीं की भाँति उक्त सभा के सदस्य होते हैं, परन्तु अवयस्क (२१ वर्ष से कम आयु), विदेशी, अपराधी अथवा विदित होने की दशा में सदस्यता नहीं ग्रहण की जा सकती। दूसरे, लार्ड सभा की सदस्यता के कारण उन्हें पार्लमेंट के सदस्यों के अधिकार—भाषण की स्वतंत्रता, कैद न किये जाने का अधिकार—आदि प्राप्त होते हैं। तीसरे उन्हें सम्राट से मिलने और उसके सामने अपने मत को प्रकट करने का अधिकार है। पहले उन्हें यह भी अधिकार था कि अपने पर लगाये हुये अभियोगों की साधारण न्यायालयों में सुनवाई न करा कर लार्ड सभा द्वारा ही निर्णय करावें, पर अब यह अधिकार जाता रहा है। लार्डों की मुख्य अयोग्यता यह है कि वे न तो कामन्स सभा के चुनाव में मतदान कर सकते हैं और न उसके सदस्य ही हो सकते हैं। यह अयोग्यता आयरलैंड के लार्डों पर लागू नहीं होती। इसी कारण कभी-कभी कामन्स सभा के सदस्यों की सूची में हमें लार्ड उपाधिधारी नाम भी मिल जाते हैं। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि लार्डों के सभी वंशज लार्ड नहीं होते। केवल ज्येष्ठ पुत्र या उत्तराधिकारी ही पिता की पदवी को धारण करता है, और शेष पुत्र या अन्य वंशज साधारण जनसमुदाय (Commoners) में ही सम्मिलित समझे जाते हैं। लार्ड-समुदाय कोई जाति नहीं, किन्तु केवल व्यक्तिगत उपाधिधारियों का समूह है।

लार्ड सभा का संगठन—लार्ड सभा के सदस्य छः प्रकार के होते हैं :—

(१) राजवंशीय सदस्य (peers of Blood Royal)

(२) पैतृकाधिकारानुसार सदस्य (Hereditary Peers)

(३) स्काटलैंड के प्रतिनिधि लार्ड (Representatlve Peers of Scotland)

(४) आयरलैंड के प्रतिनिधि लार्ड (Representative Peers of Ireland)

(५) न्यायकर्ता लार्ड (Law Lords) और

(६) पादरी अथवा धार्मिक लार्ड (Lords Spiritual)

१. राजवंशीय सदस्य—सम्राट् से नियत मात्रा तक का निकट सम्बन्ध रखने वाले राजवंश के वयस्क पुरुष इस वर्ग में सम्मिलित हैं। ये लोग साधारणतया लार्ड सभा की बैठकों में न तो जाते हैं और न उनमें कोई भाग लेते हैं। अतः इनकी सदस्यता नाम मात्र की ही है। १९५६ में इनकी संख्या ४ थी।

२. पैतृकाधिकार वाले सदस्य—इनमें इंगलैंड की प्राचीन शाखा और यूनाइटेड किंगडम की वर्तमान शाखा के सभी लार्ड सम्मिलित हैं। सभा का यही बहुसंख्यक भाग है। और १९५६ ई० में इन सदस्यों की संख्या ८०५ थी जिन में २१ ड्यूक (राजवंशी लार्डों के अतिरिक्त) २७ मार्किस, १३३ अर्ल, १०१ वाइकाउण्ट और ५२३ बैरन थे। नये लार्डों के बनते रहने के कारण यह संख्या बढ़ती ही जाती है।

३. स्काटलैंड के प्रतिनिधि लार्ड—इनकी संख्या १६ है। ये स्काटलैंड की शाखा वाले लार्डों द्वारा उन्हीं में से प्रत्येक पार्लमेंट की अवधि (साधारणतया ५ वर्ष) के लिये चुने जाते हैं। स्काटलैंड की शाखा वाले लार्डों की संख्या अब लगभग २० के ही रह गई है। अतः तीन-चार को छोड़कर उनमें से और सभी प्रतिनिधि लार्ड चुन लिये जाते हैं।

४. आयरलैंड के प्रतिनिधि लार्ड—जब १८०१ में आयरलैंड ब्रिटेन के साथ संयुक्त कर दिया गया तो ऐक्ट आफ यूनियन (१८०१) द्वारा यह व्यवस्था की गई कि आयरलेंड के २८ प्रतिनिधि लार्ड, लार्ड सभा में रहेंगे। ये आयरलैंड के लार्डों द्वारा अपने ही में से जीवन भर के लिये चुने जाते थे। १९२२ ई० तक वह व्यवस्था कायम रही, परंतु उस वर्ष जब आयरलैंड को औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त हुआ और वह फिर ब्रिटेन से अलग हो गया, तो इन प्रतिनिधियों की ब्रिटिश पार्लमेंट में उपस्थिति अनावश्यक हो गई। उस समय जो २८ प्रतिनिधि लार्ड सभा में थे वे तो बने रहे, पर मृत्यु द्वारा उनके जो स्थान खाली हों, उन्हें पुनः भरने का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया। अतः इनकी संख्या घटते-घटते १९५६ में केवल पाँच ही रह गई, और कुछ वर्षों में बिल्कुल मिट जायगी।

५. न्यायकर्ता लार्ड (Law Lords)—जैसा आगे चलकर बताया जायगा, लार्ड सभा पार्लमेंट का एक भाग होने के साथ ही ब्रिटेन का सर्वोच्च न्यायालय भी है। साधारण सदस्य न्याय-कार्य को उचित रीति से नहीं कर सकते। उसके लिये कानूनवेत्ताओं की आवश्यकता होती है। अतः १८७६ ई० के एक कानून द्वारा (Appellate Jurisdiction Act) सम्राट् को २ कानून विशेषज्ञ सदस्यों को लार्ड सभा में जोड़ने का अधिकार मिला। इनकी संख्या बाद में २ से ४, फिर ४ से ६ और फिर ७ हुई और अब ९ है। इन्हें न्यायकर्ता लार्ड (Lords of Appeal in Ordinary or Law Lords) कहते हैं। इनकी नियुक्ति आजीवन के लिये

(for life) होती है और ये लब्ध-प्रतिष्ठ न्यायाधीशों अथवा वकीलों में से नियुक्त होते हैं। लार्ड सभा का न्याय विषयक कार्य केवल यही लोग करते हैं। अन्य सदस्यों को उसमें भाग लेने का अधिकार नहीं है।

६. पादरी अथवा धार्मिक लार्ड (Ecclesiastical Peers)—इन सदस्यों की संख्या २६ है और ये इंगलैण्ड के पादरी वर्ग में से होते हैं। कैण्टबरी और यार्क के आर्चबिशप, और लन्दन, डरहम, और विन्चेस्टर के बिशप को उक्त पदों के आधार पर सदैव ही स्थान मिलता है, और शेष २१ स्थान अन्य बिशपों में से जो औरों की अपेक्षा अधिक पुराने (Senior) होते हैं, उन्हें मिलते हैं। ये स्थान पैतृक (Hereditary) नहीं हैं। जो जब तक अपने धार्मिक पद पर रहता है तभी तक लार्ड सभा का सदस्य भी रहता है।

इस प्रकार लार्ड सभा के कुल सदस्यों की संख्या १९५६ ई० में ८६५ के लगभग थी। इस सभा के संगठन में एक विचित्र विविधता है। इसके अधिकांश सदस्य पैतृकाधिकार द्वारा बैठते हैं; परन्तु साथ ही साथ स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड के प्रतिनिधि चुनाव द्वारा और न्यायकर्ता लार्ड नियुक्ति द्वारा अपने स्थानों को प्राप्त करते हैं। इसके सदस्यों की संख्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही है, और वह समय दूर नहीं है जब कि वह १००० या इस से भी ऊपर पहुँच जाय। इस विशाल संख्या वृद्धि से लार्ड सभा की प्रतिष्ठा को धक्का लगा है। इसकी सदस्यता में योग्य, अनुभवी और सुविख्यात लोगों का आज भी अभाव नहीं है। आज भी इसे 'जीवित सुप्रसिद्ध लोगों का वेस्टमिनस्टर'[१] (Westminster Abbey of living celebrities) कहा जा सकता है, परन्तु इसके सभी सदस्य अनुभवी या प्रसिद्ध हों, सो बात नहीं। प्रथम महायुद्ध के बाद बहुत से लोगों को लार्ड पदवी केवल इसलिए मिली थी कि उन्होंने अपने पार्टी को बड़े-बड़े चन्दे दिये थे। लार्ड सभा के सदस्यों का एक बहुत बड़ा भाग उसके अधिवेशनों में उपस्थित भी नहीं रहता। ८५० सदस्यों में से ५० से अधिक उसकी कार्यवाही में कोई भाग नहीं लेते। प्रोफ़ेसर लास्की ने लिखा है कि लार्ड सभा की बैठकों में उपस्थिति की औसत केवल ३५ के ही लगभग है। कभी-कभी विशेष अवसरों पर जब

---

[१] वेस्टमिंस्टर इंगलैण्ड का सुप्रसिद्ध गिरजाघर है। विख्यात और प्रतिष्ठित लोग मरने पर इसी की श्मशान भूमि में दफनाये जाते हैं। पहले के सभी प्रसिद्ध व्यक्तियों की कब्रें देखी जा सकती हैं। लार्ड सभा को जीवित सुप्रसिद्ध व्यक्तियों का वेस्टमिनस्टर इसलिए कहा गया है कि वर्तमान सुप्रसिद्ध व्यक्तियों में से अधिकांश उसके सदस्य होते हैं और वहाँ देखे जा सकते हैं।

सदस्यों को बहुमत से अल्पमत में परिवर्तित कर दें। इस क्रिया को 'स्वाम्पिङ्ग' (Swamping) अर्थात् पूर्ति करना कहा जाता था।

कामन्स और लार्ड सभा में विरोध का सूत्रपात १८३२ ई० के सुधारों के उपरान्त प्रारम्भ हुआ। लार्ड सभा बहुत निर्बल कभी न थी और अधिकतर कार्य कामन्स सभा ही सदा से करती चली आती थी। लार्ड सभा भी इससे संतुष्ट थी क्योंकि १८३२ ई० तक कामन्स सभा के सदस्यों पर लार्डों का बहुत प्रभाव था और वे उनके अनुवर्ती-से थे। कामन्स सभा के लगभग एक-तिहाई सदस्य लार्ड लोगों के ही आदमी थे जिन्हें उन्होंने विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों से अपने प्रभाव द्वारा चुनवाया था और शेष में से अधिकांश लार्ड लोगों ही के परिवार के लोगों अथवा रिश्तेदारों और मित्रों में से होते थे। इसलिए शक्ति का केन्द्र लार्ड सभा ही में था और कामन्स सभा उसके विरुद्ध जा ही नहीं सकती थी। उन दिनों राज्य का यह एक सिद्धान्त ही था कि 'जो भूमि के मालिक हैं, उन्हीं को राज्य भी करना चाहिये'। कहने की आवश्यकता नहीं कि लार्ड लोगों में बड़े-बड़े जमींदार थे।

परन्तु १८३२ ई० के सुधारों द्वारा यह स्थिति बदल गई। निर्वाचन क्षेत्रों का पुनः संगठन हुआ, मतदाताओं की संख्या बढ़ गई और इन सबके कारण व्यापारीवर्ग को भी राजनीति में आगे बढ़ने का अवसर मिला और जमींदारों का एकाधिपत्य जाता रहा। १८६७ और १८८४ के सुधारों से यह परिवर्तन और भी पुष्ट होता गया और अन्त में कामन्स सभा का रूप प्रजातान्त्रिक हो गया। इसके विपरीत, लार्ड सभा का पुराना रूप ही बना रहा और उसकी मनोवृत्ति भी वही रही। १८८० ई० के लगभग समाजवाद के उदय से भयभीत होकर उद्योगपतियों ने भी लार्ड सभा के भू-स्वामियों से मिल-जुलकर कार्य करना प्रारम्भ किया। १८८६ में आयरलैण्ड की स्वतंत्रता के प्रश्न पर ग्लैडस्टन के उदार दल के दो टुकड़े हो गये जिनमें से एक अनुदार दल से जा मिला। इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक लार्ड सभा अनुदार विचारधारा की गढ़ बन गई और उसके अधिकांश सदस्य अनुदार दल के अनुयायी।

इस दशा में यह स्वाभाविक ही था कि जब कभी कामन्स सभा में उदार दल का बहुमत होता, तो उसमें और अनुदार-दल-बहुल लार्ड सभा में मतभेद और संघर्ष उपस्थित होता। हुआ भी यही। १८९२-९५ ई० के उदार दल के शासन काल में लार्ड सभा ने आयरलैण्ड के स्वतंत्रता विषयक द्वितीय 'होम-रूल बिल' को कामन्स सभा के निर्णय को अमान्य करके अस्वीकृत कर दिया। उसी समय से उदार दल ने लार्ड सभा का 'सुधार या अन्त' (Mending or ending the House of Lords) करने का निश्चय कर लिया।

इसके बाद १० वर्षों तक उदार दल अल्पसंख्या में रहा, पर १९०५ ई० के

चुनाव में उसकी पुनः विजय हुई। दोनों भवनों में संघर्ष चलने लगा और लार्ड सभा ने कामन्स सभा द्वारा पारित कई विधेयकों का संशोधन और परिवर्तनों द्वारा अंग-भंग कर डाला। १९०९ ई० में दोनों भवनों का विवाद अपनी उग्रतम स्थिति पर पहुँच गया। इस वर्ष के आय-व्यय-पत्रक में अर्थमंत्री लायड जार्ज ने कुछ 'भूमि-मूल्य कर' (Land Value Duties) लगाने की व्यवस्था की जिनके द्वारा भू स्वामी लार्डों के हितों को आघात पहुँचता था। लार्ड सभा ने इसे अस्वीकार कर दिया। ऊपर बतलाया जा चुका है कि अर्थ विधेयकों, विशेषतः कर लगाने के मामलों में कामन्स सभा की प्रमुखता की परम्परा बद्ध-मूल हो चुकी थी। अतः अब उदार दल वालों ने नारा बुलंद किया कि लार्ड सभा ने अवैधानिक कार्य कर डाला है और जिससे आगे चलकर वह फिर ऐसा न कर सके, उसके अधिकारों की कतर-ब्योंत (Clipping the wings of the Lords) कर देना आवश्यक है। १९१० ई० में इस आशय का एक विधेयक भी कामन्स सभा में प्रस्तुत कर दिया गया।

यह विधेयक कामन्स सभा से तो पारित हो गया, पर इसके लार्ड सभा द्वारा स्वीकार किये जाने की कोई संभावना न थी। इसी समय जार्ज पंचम नये सम्राट् हुए थे। मंत्रिमंडल ने उनसे से यह माँग की कि वे अतिरिक्त लार्ड बना कर वर्तमान लार्ड सभा के विरोधकों को पराजित कर दें। सम्राट् ने ऐसा करने के पहले पुनः साधारण चुनाव की माँग की जिससे कि जन-मत की इस विषय में परीक्षा हो जाय। इस चुनाव में भी उदार दल विजयी हुआ। लार्ड सभा के अधिकारों को कम करने वाला विधेयक पुनः प्रस्तुत किया गया। अब की बार लार्ड सभा ने अपना पक्ष निर्बल देखकर, उसे स्वीकार कर लिया। इस प्रकार पारित होकर इस विधेयक ने 'पार्लमेंट ऐक्ट' १९११ का रूप धारण किया।

पार्लमेण्ट ऐक्ट, १९११ की धाराएँ—पार्लमेंट ऐक्ट १९११ की प्रथम और सबसे महत्त्वपूर्ण व्यवस्था यह थी कि कामन्स सभा द्वारा पारित कोई अर्थ-विधेयक यदि लार्ड सभा द्वारा अपने पास भेजे जाने के एक महीने के भीतर ही बिना किसी संशोधन के पारित न कर दिया जाय, तो उसकी स्वीकृति बिना ही वह सम्राट् की स्वीकृत के लिए भेज दिया जायगा और सम्राट् के स्वीकार कर लेने पर कानून बन जायगा। अर्थ विधेयक की परिभाषा भी स्पष्ट कर दी गई और यह व्यवस्था रक्खी गई कि यदि किसी विधेयक के विषय में यह शंका उपस्थित हो कि वह अर्थ विधेयक है या नहीं, तो इस विषय में कामन्स सभा के अध्यक्ष (Speaker) का निर्णय सर्वमान्य समझा जायगा।

इस ऐक्ट की दूसरी महत्वपूर्ण धारा साधारण विधेयकों के सम्बन्ध में थी, अर्थात् उन विधेयकों के सम्बन्ध में जो अर्थ विधेयक न हों। यदि कोई साधारण सार्वजनिक

विधेयक कामन्स सभा द्वारा तीन सत्रों (Sessions) में (चाहे वे एक ही पार्लमेंट के सत्र हों या नहीं) पारित हो, और लार्ड सभा उसे तीनों ही बार अस्वीकृत कर दे, तो तीसरी बार की अस्वीकृति के बाद वह सम्राट् की स्वीकृति के लिए भेजा जा सकेगा और सम्राट् की स्वीकृति मिल जाने पर कानून बन जायगा, यदि विधेयक के पहले सत्र वाले द्वितीय वाचन और तृतीय सत्र वाले तृतीय वाचन की तिथियों में दो वर्ष का समय बीत चुका हो।

पार्लमेंट ऐक्ट १९११ की तीसरी और अन्तिम महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि पार्लमेंट की अवधि ७ वर्षों से घटाकर पाँच वर्ष कर दी गई। इसका अभिप्राय यह था कि यदि लार्ड सभा की कामन्स सभा पर रोक-थाम करने की शक्ति घटाई जा रही है, तो अपेक्षाकृत शीघ्र-शीघ्र चुनावों द्वारा उस पर जनमत का नियंत्रण बढ़ा दिया जाय और कामन्स सभा को, लार्ड सभा को नई प्रणाली द्वारा हराने का, आवश्यकता से अधिक समय भी न मिल सके।

पार्लमेंट ऐक्ट १९११ के द्वारा लार्ड सभा की वह बराबरी जो अभी तक कामन्स के साथ थी, जाती रही। अर्थ विधेयकों पर उसका कुछ भी अधिकार न रहा। एक महीने के भीतर वह चाहे उन्हें स्वीकार करे या अस्वीकार, परिणाम एक ही होता था। अर्थात् सम्राट् की स्वीकृति पाकर वे कानून बन ही जाते थे। साधारण विधेयकों के विषय में अब भी लार्ड सभा दो वर्ष की देर कर सकती थी, परन्तु नई प्रणाली के द्वारा कामन्स सभा, लार्ड सभा के विरोध के होते हुए भी, किसी विधेयक को तीन बार पारित करके उसे कानून का रूप दे ही सकती थी।

पार्लमेण्ट ऐक्ट १९४९—परन्तु १९११ के पार्लमेंट ऐक्ट द्वारा निर्धारित नई प्रणाली का उपयोग सरल न था। लार्ड सभा के विरोध का उल्लंघन करने के लिए तीन बार पारित करना और, दो वर्ष का समय चाहिए था। अनुभव से यह ज्ञात हुआ कि इन शर्तों को पूरा करना कठिन है। इसके अतिरिक्त, राजनीति में दो वर्ष का समय थोड़ा नहीं होता। परिस्थितियाँ ऐसी बदल सकती हैं कि जो विधेयक आज आवश्यक और जनमतानुकूल है, दो वर्ष बाद वैसा न रह जाय। १९४५-५० ई० में जब मजदूर सरकार पदारूढ़ थी तो उसने देखा कि लार्ड सभा ने उसके कई विधेयकों में अड़ंगा लगा दिया और पार्लमेंट ऐक्ट १९११ की प्रणाली द्वारा उन्हें हटाने का पर्याप्त समय उसके पास नहीं था। अतः उसने लार्ड सभा के विरोध को और भी निर्बल करने के लिये यह प्रस्ताव किया कि १९११ ई० के एक्ट में जो तीन सत्रों में पारित होने और दो वर्ष का समय बीतने की व्यवस्था की गई थी उसे संशोधित करके केवल दो सत्र और एक वर्ष कर दिया जाय। इस प्रस्ताव ने पारित होने पर पार्लमेंट ऐक्ट १९४९ का रूप धारण किया। इसके अनुसार अब कामन्स सभा साधा-

रण विधेयकों को एक ही वर्ष में दो सत्रों में दो बार पारित करके लार्ड सभा के विरोध का उल्लंघन कर उन्हें कानून बनवा सकती है।

लार्ड सभा के संगठन का सुधार—इन परिवर्तनों द्वारा लार्ड सभा के अधिकारों और उसके कामन्स सभा से सम्बन्ध की समस्या हल हो गई है, परन्तु अभी लार्ड सभा के संगठन-सुधार की समस्या बनी है। हम देख चुके हैं कि लार्ड सभा के अधिकांश सदस्य पैतृक अधिकार द्वारा उसकी सदस्यता प्राप्त करते हैं जो कि आजकल की प्रजातांत्रिक परम्परा के विरुद्ध है। उक्त सभा का आकार बहुत बड़ा है और बढ़ता ही जाता है। यद्यपि उसके कुछ सदस्य उत्कृष्ट योग्यता वाले व्यक्ति होते हैं, पर बहुतों में कोई विशेष योग्यता नहीं पाई जाती और वे इसके अधिवेशनों में आते भी नहीं। इसके अतिरिक्त लार्ड सभा के बहुसंख्यक सदस्य धनिक और सम्पत्तिशाली वर्गों के होने के कारण अनुदार दल के अनुयायी होते हैं और प्रगतिशील कार्यों का विरोध करते हैं। धारा सभा का कोई भी भवन किसी एक ही राजनैतिक दल की बपौती न होना चाहिये। इन्हीं त्रुटियों के कारण लार्ड सभा के संगठन में सुधार करना आवश्यक समझा जाता है।

यह समस्या काफी पुरानी है और समय-समय पर इसको हल करने के लिए सुझाव भी उपस्थित किये गये हैं। इनमें से कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण सुधार योजनाएँ निम्नलिखित हैं :—

ब्राइस रिपोर्ट (१९१८)—पार्लमेंट ऐक्ट १९११ की प्रस्तावना में लार्ड सभा के संगठन के सुधार की आवश्यकता का भी उल्लेख हुआ था। इसलिए १९१७ में लार्ड ब्राइस की अध्यक्षता में इस समस्या के हल के लिए एक सम्मेलन (Conference) हुआ जिसकी रिपोर्ट १९१८ ई० में प्रकाशित हुई। इसके अनुसार लार्ड सभा का आकार घटा कर उसमें ३२७ सदस्य रक्खे जाने की सिफारिश की गई। इनमें से २४६ सदस्य को कामन्स सभा के सदस्य १२ प्रादेशिक दलों में विभक्त होकर चुनने वाले थे जिससे लार्ड सभा में देश के प्रत्येक भौगोलिक भाग का प्रतिनिधित्व रहे और ८१ सदस्य लार्ड समुदाय में से दोनों भवनों की एक संयुक्त कमेटी द्वारा चुने जाने वाले थे। दोनों ही प्रकार के सदस्यों की पद अवधि १२ वर्ष की रक्खी गई, पर प्रत्येक में से एक-तिहाई का चुनाव प्रति चौथे वर्ष होता।

कैबिनेट कमेटी १९२२ के प्रस्ताव—ब्राइस योजना कई दृष्टिकोणों में समझौता करके बनाई गई थी। अतः कोई भी उससे पूर्णतया सन्तुष्ट न था। इससे वह कार्यान्वित नहीं की जा सकी। उसमें कुछ परिवर्तनों के साथ १९२३ ई० में मंत्रि-मण्डल की एक उपसमिति ने निम्नलिखित योजना उपस्थित की कि लार्ड सभा में

राज्यवंश के लार्डों, लार्ड-पादरियों और न्यायाधीश लार्डों के अतिरिक्त निम्नलिखित तीन प्रकार के सदस्य रहें अर्थात्—

(१) प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से बाहर से चुने सदस्य,

(२) लार्ड समुदाय द्वारा अपने ही वर्ग में से निर्वाचित सदस्य, और

(३) सम्राट् (Crown) द्वारा नामजद सदस्य।

इस योजना में सदस्यों की कुल संख्या ३५० और पद अवधि वर्षों की एक निश्चित संख्या तक रक्खी गई। अधिकार पार्लमेंट ऐक्ट, १९११ के अनुसार ही रखने की व्यवस्था रही।

इस योजना के शीघ्र ही बाद सरकार में परिवर्तन हो गया और तब से यद्यपि सुधार-चर्चा समय-समय पर होती रहती है, कोई सरकारी योजना पुनः नहीं बनाई गई। १९४९ के पार्लमेंट ऐक्ट द्वारा भी अधिकारों में ही परिवर्तन किया गया।

वास्तव में लार्ड सभा के संगठन सुधार के प्रश्न पर इतना मतभेद है कि सरकारें इस प्रश्न को हाथ में लेना बर्रों के छत्ते को छेड़ने के समान ही भयावह समझने लगी हैं। अतः यह कहना कठिन है कि यह सुधार कब होगा। परन्तु विस्तार की बातों में चाहे जितना मतभेद हो, पहले के प्रस्तावों के विश्लेषण से दो-तीन मौलिक बातों पर पर्याप्त मतैक्य दिखलाई देता है। वे बातें ये हैं :—

(१) लार्ड सभा का आकार घटा कर ३०० सदस्यों के लगभग कर दिया जाय।

(२) उसके पैतृक आकार को बदल कर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष चुनाव द्वारा उसे प्रजातांत्रिक अथवा अर्ध-प्रजातांत्रिक रूप दे दिया जाय, और

(३) लार्ड सभा के अधिकार जैसे दो पार्लमेंट ऐक्टों (१९११ और १९४९) द्वारा निश्चित हो चुके हैं, लगभग वैसे ही रहें, अर्थात् लार्ड सभा कामन्स सभा की समकक्ष न होकर उससे नीचे स्तर पर रहे।

सर्वदलीय सम्मेलन १९४९ के प्रस्ताव—१९४९ में जब पार्लमेंट ऐक्ट १९११ में संशोधन का प्रश्न विचाराधीन था, तो अनुदार दल के प्रस्ताव पर लार्ड-सभा के सुधार की समस्त समस्या पर विचार करने के लिए सर्वदलीय सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस में लार्ड सभा के संगठन के विषय में निम्नलिखित सर्वसम्मत निश्चय किये गये, अर्थात्

(१) वर्तमान पैतृक अधिकार मूलक सदस्यता का अन्त कर दिया जाय,

(२) इस के स्थान में व्यक्तिगत प्रतिष्ठा और सार्वजनिक सेवा के आधार पर 'संसदीय लार्ड' (Lords of Parliament) बनाये जायें। उनकी सदस्यता आजीवन मात्र रहे, और यदि वे किसी प्रकार अयोग्य सिद्ध हों या सभा के कार्य में

उदासीनता दिखलायें, तो उन्हें जीवन-काल में भी सदस्यता से हटाया जा सके। संसदीय लार्ड पैतृक लार्डों में से भी योग्यतानुसार नियुक्त किये जा सकें, और सभी संसदीय लार्डों को कामन्स सभा के सदस्यों की भाँति वेतन दिया जाय।

(३) स्त्रियाँ भी लार्ड सभा की सदस्या बन सकें और संसदीय लार्डों में कुछ राजवंशीय और पादरी लार्ड भी सम्मिलित रखे जायँ।

(४) जो कोई संसदीय लार्डों की कोटि में न आवें, उन्हें कामन्स सभा के चुनावों में मत देने तथा सदस्यता के लिए खड़े होने का अधिकार दिया जाय।

लार्ड सभा की शक्तियों के विषय में मतैक्य न हो सकने के कारण उस के संगठन-विषयक ये सर्वसम्मत निर्णय भी कार्यान्वित नहीं किये जा सके। तथ्य की बात यह है कि लार्ड-सभा का संगठन बाहर वालों को चाहे जितना विचित्र और अप्रजातन्त्रीय दिखाई दे, स्वयं ब्रिटेन के लोग उसके लिए विशेष व्यग्र या चिन्तित नही हैं। श्री हर्बर्ट मारिसन अपनी 'गवर्नमेंट ऐंड पार्लमेंट' नामक पुस्तक में कहते हैं कि हम ब्रिटेन के लोगों में युक्ति-विरुद्ध संस्थाओं से भी काम निकाल लेने की पर्याप्त क्षमता है। जब किसी चीज से काम चलता रहता है, तब तक हम उसे अच्छा ही समझते हैं, या कम से कम उसके प्रति सहिष्णुता का भाव रखते ही हैं। मजदूर दल की सरकार लार्ड सभा में युक्ति-युक्त अथवा प्रजातन्त्रीय सुधार के लिए चिन्तित नहीं—ऐसे सुधार से उसकी शक्ति बढ़ जाने और उसके कामन्स सभा की प्रतिद्वन्द्वी बन जाने का भय है—हमें संयुक्तराष्ट्र अमेरिका की सिनेट की भाँति की सशक्त द्वितीय सभा नहीं चाहिये—वर्तमान लार्ड-सभा का अतर्कसंगत और विचित्र संगठन हमारे ब्रिटिश लोकतंत्र का रक्षक है।

आगे जब कभी भी लार्ड सभा का सुधार हो, सम्भवतः इन्हीं सिद्धान्तों के अनुसार होगा।

लार्ड सभा की वर्तमान उपयोगिता—अब प्रश्न यह होता है कि लार्ड सभा को लेकर इतना झंझट करने की आवश्यकता ही क्या है। इसका अंत क्यों नहीं कर दिया जाता? इसका उत्तर यह है कि यद्यपि अधिकारों के कम हो जाने के कारण अब लार्ड सभा कामन्स सभा को कोई कार्य करने से एकदम रोक नहीं सकती, तो भी वह अनेक बातों के लिए उपयोगी है। ब्राइस रिपोर्ट में लार्ड सभा की चार प्रकार की उपयोगिताओं का उल्लेख है, अर्थात्—

(१) कामन्स सभा से पारित होकर आये हुए विधेयकों को जाँचना और सुधारना। आजकल कामन्स सभा पर बड़ा कार्य-भार रहता है और जल्दी में पारित विधेयकों में भूलों और अशुद्धियों की संभावना रहती है। लार्ड सभा उनकी बारीकी से जाँच करके उन्हें ठीक कर सकती है।

(२) कुछ ऐसे विधेयक जो विवादग्रस्त नहीं हैं, पहले लार्ड सभा में प्रस्तुत करके उसके द्वारा पारित होने पर कामन्स सभा के पास भेजे जा सकते हैं। ऐसे विधेयकों पर कामन्स सभा को फिर अधिक समय लगाने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि लार्ड सभा उन्हें पहले ही उचित रूप दे चुकी है। व्यक्तिगत विधेयक (Private bills) बहुधा ऐसे ही होते हैं। वे लार्ड सभा ही में प्रस्तुत किये जाते हैं और साधारणतया कामन्स सभा, जो कुछ लार्ड सभा का निर्णय होता है, उसे ही मान लेती है। इस प्रकार लार्ड सभा कामन्स सभा के समय की बचत का बहुमूल्य साधन है।

(३) यद्यपि अब लार्ड सभा किसी विधेयक को कानून बनने से रोक नहीं सकती पर अपना मतभेद प्रगट करके एक वर्ष की देर अवश्य कर सकती है। इस देर का भी वैधानिक महत्व है। दोनों सभाओं में मतभेद की सूचना मिलते ही जनता का ध्यान विवादग्रस्त समस्या की ओर आकृष्ट हो जाता है और एक वर्ष के समय में जन मत को स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाने का अवसर मिलता है। इससे यह लाभ है कि मौलिक और महत्त्वपूर्ण बातों में सहसा या गुपचुप परिवर्तन नहीं किया जा सकता। द्वितीय सभा एक प्रकार से जनता को सावधान कर देने और जगा देने वाले प्रहरी का काम करती है।

(४) कार्य-भार के कारण कामन्स सभा के पास महत्त्वपूर्ण विषयों पर भी वाद-विवाद के लिए यथेच्छ समय नहीं रहता। लार्ड सभा के पास समय पर्याप्त रहता है। अतः वैदेशिक नीति अथवा गृहनीति के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर वहाँ पर्याप्त वाद-विवाद हो सकता है। इस सभा के सदस्यों में कुछ व्यक्ति सदा ऐसे रहते हैं जो अवकाश प्राप्त कूटनीतिज्ञ, उपनिवेशों के शासक, अनुभवी राजनीतिज्ञ और कानून-वेत्ता होते हैं। इनकी आलोचनाएँ बहुमूल्य होती हैं। वास्तव में लार्ड सभा के सर्वाङ्गी वाद-विवाद (Full-dress debates) अपनी उत्कृष्टता और विद्वता के लिए जगत् प्रसिद्ध हैं। इस सभा के निर्णय द्वारा सरकार के पद-त्याग का भय तो रहता नहीं। अतः इसके वाद-विवाद कामन्स सभा की अपेक्षा अधिक उन्मुक्त वातावरण में होते हैं।

लार्ड सभा की इन उपयोगिताओं के कारण उसका अंत होने की संभावना नहीं है। प्रारम्भ में मजदूर दल के कार्य-क्रम में लार्ड सभा के अंत कर देने की बात भी सम्मिलित थी, पर प्रबल बहुमत से पदासीन रहने के समय में भी उसने ऐसा नहीं किया, केवल उसके अधिकार कुछ और कम कर दिये। कहा जाता है कि लार्ड सभा की वर्तमान शक्तिहीनता ही उसकी प्रधान शक्ति है। इस बात में विरोधाभास होते हुए भी यह पूर्णतः सत्य है। लार्ड सभा में अब पदासीन सरकार को चुनौती देने की शक्ति नहीं रह गई है, तो उसके विरुद्ध असन्तोष का कारण भी जाता रहा। मरे हुए को

कौन मारता है, अतः वर्तमान प्रवृत्तियों से तो यही प्रगट होता है कि लार्ड सभा के रूप में चाहे जो कुछ परिवर्तन हो, पर उसका अस्तित्व बना रहेगा।

अभ्यास

१. ब्रिटिश लार्ड समुदाय और उसके विभिन्न वर्गों का वर्णन करो।

Give a brief description of the British peerage, its various branches and gradations.

२. लार्ड सभा का वर्तमान संगठन क्या है? उसमें सुधार की आवश्यकता क्यों है?

Describe the present composition of the House of Lords. Why does it need reform?

३. लार्ड सभा और कामन्स सभा में संघर्ष क्यों उत्पन्न हुआ और किन बातों पर?

What were the reasons for the conflict between the House of Commons and Lords? What were the main issues involved?

४. पार्लमेण्ट ऐक्ट १९११ की मुख्य धाराएँ क्या थीं?

Explain the principal provisions of the Parliament Act. 1911.

५. कामन्स और लार्ड सभा का वर्तमान सम्बन्ध किस प्रकार का है?

What are the present relations between the House of Commons and the House of Lords?

६. लार्ड सभा के न्याय विषयक अधिकारों का संक्षिप्त वर्णन दो।

Write a short note on the judicial functions of the House of Lords.

७. लार्ड सभा के सुधार की मुख्य-मुख्य योजनाओं का संक्षिप्त वर्णन दो। उसके सुधार के मूल तत्व क्या होने चाहिए?

What have been the principal plans put forward from time to time for the reform of House of Lords? What should in your opinion be the underlying principles of such reform?

८. लार्ड सभा की वर्तमान उपयोगिता क्या है? क्या उसे संतोषजनक द्वितीय सभा कहा जा सकता है?

What is the present utility of the House of Lords? Can it be said to be a satisfactory second chamber now?

इसका परिणाम यह हुआ था कि एक ओर तो लाखों जनसंख्या वाले बड़े नगर भी दो ही सदस्य भेज पाते थे और दूसरी ओर कुछ ऐसे कस्बे भी, जो बिल्कुल उजाड़ हो चुके थे अथवा जिनकी जनसंख्या दो ही चार रह गई थी, दो प्रतिनिधि भेजने के अधिकारी थे। बात यह थी कि औद्योगिक क्रान्ति (Industrial Revolution) और कल-कारखानों के खुलने के कारण ब्रिटेन की जनसंख्या के वितरण में बड़ा उलट-फेर हो गया था। काम की तलाश में लोग अपने पुराने निवास-स्थानों को छोड़ कर औद्योगिक केन्द्र में एकत्रित हो गये और इस कारण बहुत से देहाती भाग और कस्बे उजाड़ हो गये और बरमिंघम, लिवरपूल आदि जो पहले छोटे गाँव थे, विशाल नगर बन गये। परन्तु प्रतिनिधित्व का वही पुराना वितरण ही चला आता था। इसके कारण अनेक हास्यास्पद विषमताएँ उत्पन्न हो गई थीं। पुरानी कामन्स सभा के विषय में लिखे ग्रन्थों में हमें इन विषमताओं के अनेक मनोरंजक उदाहरण मिलते हैं। ओल्डसेरम नामक नगर में केवल दो ही निवासी रह गये थे और वे भी रहते कहीं बाहर थे, पर चुनाव के अवसर पर उन्हें भी प्रतिनिधि चुनने का अधिकार था। एक अण्डरटन (Underton) नाम का बरो था जो समुद्र के गर्भ में विलीन हो चुका था, पर उसके नाम से भी दो प्रतिनिधि भेजे जाते थे। इस प्रकार के निर्वाचन-क्षेत्रों को 'सड़े निर्वाचन क्षेत्र' (rotten boroughs) का नाम मिल गया था। इन क्षेत्रों और अन्य भी बहुतों में प्रतिनिधि भेजने का अधिकार वास्तव में उन जमींदारों को था जो उनके स्वामी होते थे। असामियों पर दबाव डाल कर वे जिन्हें चाहते, चुनावों में भेज देते थे। एक प्रकार से ऐसे निर्वाचन क्षेत्र अपने जमींदारों की जेब में थे और उन्हें 'जेबी निर्वाचन क्षेत्र' (Pocket boroughs) की संज्ञा दी गई थी। ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों का खुले आम सौदा होता था और जो अधिक मूल्य दे सकते थे या वहाँ के भू-पतियों के मित्र, या सम्बन्धी थे, वे ही वहाँ से निर्वाचित हो जाते थे।

अतः सुधार की समस्याएँ दो थीं। पहले तो मताधिकार को किसी निश्चित नियम के आधार पर रखना और उसका विस्तार करना आवश्यक था, और दूसरे उपरोक्त विषमताओं को दूर करने के लिए निर्वाचन-क्षेत्रों का पुनर्विभाजन आवश्यक था।

इस प्रकार की दोषपूर्ण प्रतिनिधि-व्यवस्था के विरुद्ध देश में असन्तोष बहुत था, पर फ्रांस की राज्यक्रांति और नेपोलियन के युद्धों में व्यस्त रहने के कारण १८१५ ई० तक कुछ न हो सका। युद्ध कालीन परिस्थिति के अन्त होने में दस-पन्द्रह वर्ष और बीत गये। १८३० के चुनाव में उदार दल विजयी हुआ और लार्ड ग्रे प्रधान मंत्री बने। इन्होंने १८३२ ई० का प्रथम सुधार कानून बनवाया।

१८३२ का सुधार कानून—ऊपर बतलाया जा चुका है कि सुधार की समस्यायें दो थीं—मताधिकार का किसी निश्चित् योग्यता के आधार पर विस्तार और

परिवर्तन-क्षेत्र सम्बन्धी भिन्नताओं का दूर करना। १८३२ के कानून द्वारा इन दोनों दिशाओं में सुधार प्रारम्भ हुआ। नगरों और देहाती क्षेत्रों दोनों ही के लिए मतदान की एक ही योग्यता रक्खी गई, अर्थात् ४० शिलिङ्ग वार्षिक लगान या किराये वाली अचल संपत्ति का मालिक या किरायेदार होना। इससे मतदाताओं की संख्या में लगभग २½ लाख की वृद्धि हो गई। इस व्यवस्था से न तो सर्वसाधारण को मताधिकार प्राप्त हुआ और न प्रजातंत्र की स्थापना, पर आगे के लिए रास्ता साफ हो गया। अधिक लोगों को मताधिकार देने के लिए सम्पत्ति के मूल्य या किराये की रकम को घटा देने से काम हो जा सकता था। यही इस सुधार का महत्त्व है।

निर्वाचन क्षेत्रों की विषमताओं को दूर करने के लिए इस कानून द्वारा सड़े हुये और जेबी (Rotten and Pocket boroughs) क्षेत्रों का अंत कर दिया गया और उनके द्वारा चुने जाने वाले १५० स्थानों को अन्य निर्वाचन क्षेत्रों में आवश्यकतानुसार बाँट दिया गया। इससे अधिक घने बसे भागों को अपेक्षाकृत अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त हो गया।

बाद के सुधार—जनता ने १८३२ ई० के सुधारों को पर्याप्त न समझा। शीघ्र ही वयस्क मताधिकार की माँग होने लगी। चार्टिस्ट (chartist) नाम से पुकारे जाने वाले उन सुधारकों का एक दल संगठित होकर आन्दोलन करने लगा। इसकी छः माँगें थीं अर्थात् (१) प्रत्येक वयस्क पुरुष को, (स्त्रियों को नहीं) मताधिकार (२) समान आकार के निर्वाचन क्षेत्र, (३) गुप्त मतदान (secret ballot), (४) पार्लमेंट का वार्षिक चुनाव, (५) सदस्यों के लिए सम्पत्ति सम्बन्धी योग्यता का अन्त, और (६) पार्लमेंट के सदस्यों को वेतन।

इस प्रकार के आन्दोलनों के फलस्वरूप १८६७ ई० में द्वितीय सुधार कानून (Second Reform Act 1867) बना। इसके द्वारा नगरों से लगभग सभी श्रमजीवियों को मताधिकार मिल गया और मतदाताओं की संख्या में लगभग १० लाख की वृद्धि हुई।

लोक प्रतिनिधित्व कानून (People's Representation Act) १८८४ के द्वारा उदार दल के नेता ग्लैडस्टन देहाती क्षेत्रों के श्रमिकों को भी माताधिकार दिलाया और इस प्रकार मतदाताओं की संख्या में २० लाख की वृद्धि हुई। १८८५ के एक कानून द्वारा निर्वाचन क्षेत्रों का भी पुनर्विभाजन हुआ।

इन कानूनों के द्वारा अभी तक स्त्रियों को मताधिकार न प्राप्त हुआ था। निर्वाचनक्षेत्र भी असमान थे और उनमें कोई १, कुछ २ और कुछ ३ या अधिक सदस्य चुनते थे। 'एक मनुष्य, एक मत' (one man, one vote) का नियम भी अभी स्थापित न हो सका था। कुछ लोग अपनी कई स्थानों की योग्यताओं के कारण एक

से अधिक मत दे सकते थे। अधिकांश निर्वाचन-क्षेत्र भौगोलिक थे, परन्तु कुछ व्यावसायिक आधार पर भी बने थे जैसे विश्वविद्यालयों का प्रतिनिधित्व।

१९१८ के लोक प्रतिनिधित्व कानून ने इन त्रुटियों को हटाने का आंशिक प्रयत्न किया। इसके द्वारा निर्वाचन क्षेत्रों का पुनर्विभाजन हुआ। मतदाताओं की सूची बनाने के नियमों में सुधार किया गया। अनेक मतदान (Plural voting) पर प्रतिबंध लगाये गये और सबसे बढ़कर यह हुआ कि मताधिकार का बहुत बड़ा विस्तार हुआ। अभी तक सम्पत्ति (यद्यपि अत्यन्त अल्प मात्रा में) ही मताधिकार की आधार थी। १९१८ के कानून ने पुरुषों के लिए वयस्क मताधिकार स्थापित किया अर्थात् कोई पुरुष जिसकी आयु २१ वर्ष या इससे अधिक हो, अपने निवास-स्थान वाले निर्वाचन-क्षेत्र के मतदाताओं की सूची में नाम लिखाने का अधिकारी माना गया यदि वह किसी प्रकार की अयोग्यता से बाधित न हो। स्त्रियों को भी मताधिकार मिला, पर कुछ विशेष प्रतिबन्धों के साथ, उदाहरणार्थ उनके लिए ३० वर्ष या अधिक आयु होने की शर्त रक्खी गई और यह भी आवश्यक था कि या तो वे स्वयं स्थानीय संस्थाओं के मताधिकार की योग्यता रखती हों, या उनके पतियों में उक्त योग्यता हो। इन प्रतिबन्धों का कारण यह बतलाया जाता है कि प्रथम युद्ध के परिणामस्वरूप इंगलैण्ड में पुरुषों की संख्या घट गई थी और स्त्रियों को वयस्क मताधिकार देने का परिणाम होता, उनका बहुमत स्थापित करना। लोक प्रतिनिधित्व कानून (People's Representation Act) १९२८ के द्वारा स्त्रियों के मताधिकार के ये प्रतिबन्ध हटा दिये गये और उन्हें भी पुरुषों ही के समान वयस्क मताधिकार प्राप्त हो गया।

१९४४ से १९४८ ई० के बीच में प्रतिनिधित्व सम्बन्धी चार नये कानून १९४४, १९४५, १९४७ और १९४८ में बने। इन कानूनों के द्वारा निम्नलिखित सुधार हुये, अर्थात्—

(१) निर्वाचन क्षेत्रों का पुनर्विभाजन किया गया जिससे कामन्स सभा के सदस्यों की संख्या ६१५ से बढ़कर ६४० हो गई।

(२) लन्दन नगर के अतिरिक्त और सभी निर्वाचन-क्षेत्र एक-सदस्यीय (Single-membered) कर दिये गये। इस प्रकार दो या अधिक सदस्य चुनने वाले निर्वाचन क्षेत्रों का अन्त हो गया।

(३) व्यवसाय आदि के आधार पर बने निर्वाचन क्षेत्रों का अन्त करके सभी क्षेत्र भौगोलिक कर दिये गये। इस समय अभौगोलिक क्षेत्र में केवल विश्वविद्यालय बच रहे थे जिन्हें १२ सदस्य चुनने का अधिकार था, परन्तु लोक प्रतिनिधित्व कानून १९४८ के द्वारा विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधित्व का अन्त कर दिया गया। यह कार्य

मजदूर दल का था, क्योंकि विश्वविद्यालयों से बहुधा अनुदार विचार धारा (Conservative) वाले सदस्य चुनकर आते थे।

(४) निर्वाचन क्षेत्रों के पुनर्विभाजन के लिए अभी तक पार्लमेंट द्वारा बनाये गये कानून की आवश्यकता पड़ती थी जिससे यह काम आवश्यकतानुसार ठीक मौके पर न हो पाता था। पिछले सौ-सवा सौ वर्षों में केवल ३ बार अर्थात् १८३२, १८८५ और १९१८ में पुनर्विभाजन हो सका था। इसका परिणाम होता था जनसंख्या के वितरण और निर्वाचन-क्षेत्रों में असंगति और विषमता। १९४५ के लोक-प्रतिनिधित्व कानून द्वारा एक ऐसी स्थायी व्यवस्था कर दी गई जिसके अनुसार निरंतर आवश्यक पुनर्विभाजन अथवा संशोधन होता रहे और नये कानून की जरूरत न पड़े। वह व्यवस्था यह है कि इंगलैण्ड, वेल्स, स्काटलैण्ड और उत्तरी आयरलैण्ड में से प्रत्येक के लिए एक-एक स्थायी सीमा-आयोग (Boundary Commission) स्थापित कर दिया गया है। कामन्स सभा का अध्यक्ष (Speaker) इन सभी आयोगों का अध्यक्ष है और उनके सदस्य स्थायी सरकारी कर्मचारियों में से नियुक्त किये गये हैं जिससे निर्वाचन क्षेत्रों का सीमानिर्धारण राजनैतिक प्रभाव से सर्वथा मुक्त रहे। इन आयोगों का यह कर्तव्य है कि प्रति तीसरे या सातवें वर्ष अपने-अपने क्षेत्रों के निर्वाचन-क्षेत्रों में आवश्यक संशोधन-परिवर्तन की योजनायें प्रस्तुत करते रहें। ये योजनायें आर्डर्स इन कार्उसिल (Orders-in-council) द्वारा कार्यान्वित हो सकती हैं जो पार्लमेंट के समक्ष एक नियत समय तक रक्खे जाते हैं जिससे यदि वह चाहे तो उनके विषय में आवश्यक आपत्ति कर सके।

(५) लोक प्रतिनिधित्व कानून १९४८ द्वारा यह भी निश्चित कर दिया गया कि अब से कोई भी मतदाता किसी भी दशा में एक से अधिक मत नहीं दे सकेगा। इस प्रकार 'एक मनुष्य एक मत' (One man one vote) का नियम स्थापित हो गया।

कामन्स सभा का वर्तमान संगठन—इन सब सुधारों के बाद अब कामन्स सभा के सदस्यों की संख्या ६२५ के लगभग निश्चित की गई है। लोक प्रतिनिधित्व कानून १९४८ के अनुसार ग्रेटब्रिटेन के सदस्यों की संख्या न तो ६१३ से बहुत अधिक और न बहुत कम रक्खी जायगी और इसी प्रकार उत्तरी आयरलैण्ड से न तो १२ से बहुत अधिक न उससे बहुत कम सदस्य आयेंगे। इस प्रकार से कानून में सदस्यों की संख्या जान-बूझ कर कुछ लोचदार (flexible) रक्खी गई है। 'न बहुत अधिक और न बहुत कम' (substantially greater or less), शब्दों का यही अभिप्राय है।

वर्तमान कामन्स सभा में कुल ६२५ सदस्य हैं जिनमें ५०७ इंगलैण्ड, ७१

स्काटलैण्ड, ३५ वेल्स और १२ उत्तरी आयरलैण्ड से चुने जाते हैं। जैसा ऊपर बतलाया जा चुका है, ये सदस्य वयस्क मताधिकार द्वारा एक सदस्यीय भौगोलिक निर्वाचन-क्षेत्रों से चुने जाते हैं। कामन्स सभा की पद अवधि ५ वर्षों की है, पर मन्त्रिमंडल की राय से उसका विघटन (Dissolution) समय से पहले भी हो सकता है।

मतदाताओं की सूची का निर्माण—मतदान के लिए यह आवश्यक है कि मतदाताओं की सूची में नाम हो। आजकल इस सूची में वर्ष में दो बार परिवर्तन-संशोधन होते हैं और सूची ६ मास तक व्यवहार में लाई जाती है। प्रति वर्ष १५ मार्च और १ अक्टूबर तक सूचियों का संशोधन होकर नई सूची प्रकाशित हो जानी चाहिये। स्थानीय संस्थाओं के क्लर्कों पर सूची के संशोधन का भार रहता है। संशोधन सूची कुछ समय तक सार्वजनिक स्थानों में लगी रहती है जिससे जिनका नाम छूट गया हो वे उसे लिखवा लें। सूची में नाम हुए बिना कोई भी मतदान नहीं कर सकता।

चुनाव की घोषणा और प्रबन्धकर्ताओं की नियुक्ति—नया चुनाव होने के निश्चय के उपरान्त सम्राट् द्वारा एक घोषणा की जाती है जिसके द्वारा ही वर्तमान दोनों भवनों के विघटन और नये सदस्यों के चुनने की आवश्यकता सूचित की जाती है। काउन्टियों में शेरिफ़, नगरों (Boroughs) में मेयर, और अन्य स्थानों में अन्य स्थानीय संस्थाओं के अध्यक्षों को प्रबन्धकर्ता (returning officer) नियुक्त कर दिया जाता है और उन्हें अपने-अपने क्षेत्रों में चुनाव सम्बन्धी प्रबन्ध करने का आदेश दे दिया जाता है। इस प्रकार चुनाव का श्रीगणेश होता है।

अभ्यर्थियों का नामनिर्देशन (Nomination of Candidates)—घोषणा की तिथि से आठवें दिन अभ्यर्थियों का नाम-निर्देशन हो जाना चाहिये। कोई भी मतदाता अभ्यर्थी बन सकता है, केवल पादरी लोग इस अधिकार से वंचित हैं। स्त्रियाँ भी अभ्यर्थी बन सकती हैं।

नामनिर्देशन की प्रक्रिया बहुत ही सरल है। जो कोई भी अभ्यर्थी होना चाहता है उसे नियत दिन प्रबन्धक को नाम-निर्देशन-पत्र भर कर दे देना होता है। प्रत्येक अभ्यर्थी के एक प्रस्तावक (Proposer), एक समर्थक (Seconder), और आठ सम्मतिदाता होने आवश्यक हैं, अर्थात् उसके नाम-निर्देशन के लिए कुल मिला कर दस लोगों के सहयोग की आवश्यकता रहती है। ये दसों उसी निर्वाचन-क्षेत्र के मतदाता होने चाहिये जहाँ से अभ्यर्थी खड़ा होना चाहता है। स्वयं अभ्यर्थी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह उसी निर्वाचन क्षेत्र का निवासी या मतदाता हो। कोई भी उपयुक्त व्यक्ति किसी भी निर्वाचन-क्षेत्र से खड़ा हो सकता है। नाम-निर्देशन-पत्र के साथ ही साथ १५० पौं० की रकम जमा करनी पड़ती है। यदि अभ्यर्थी को चुनाव में

पड़े हुये शुद्ध मतों के ⅛ से कम मत मिलें, तो यह रकम ज़ब्त हो जाती है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रभावहीन लोग व्यर्थ ही अभ्यर्थी बनकर अपना और दूसरों का समय नष्ट न करें।

यह तो हुई नाम-निर्देशन की कानूनी प्रक्रिया। वास्तव में अधिकांश अभ्यर्थी विभिन्न राजनैतिक दलों के उम्मेदवार होते हैं। यों—कोई भी चाहे, स्वतन्त्र रूप से भी खड़ा हो सकता है। आजकल ऐसे लोगों का सफल होना कठिन है और इस कारण स्वन्त्र अभ्यर्थियों की संख्या कम ही होती है। १९४५ ई० के चुनाव में १६०८ अभ्यर्थी राजनैतिक दलों के थे और केवल ७५ स्वतन्त्र। विभिन्न राजनैतिक दल अपने अभ्यर्थियों को विभिन्न रीति से छाँटते हैं। अनुदार दल में दल के स्थानीय अर्थात् विभिन्न निर्वाचन-क्षेत्रों के संगठन द्वारा ही अभ्यर्थी छाँट लिये जाते हैं और केन्द्रीय संगठन के परामर्श की तभी आवश्यकता पड़ती है जब स्थानीय संगठन किसी उपयुक्त व्यक्ति को न पा सके, परन्तु मजदूर दल में स्थानीय निर्णयों के लिए दल के केन्द्रीय संगठन की स्वीकृति लेनी आवश्यक होती है, और दल के स्थानीय संगठन को केन्द्रीय संगठन की आज्ञा माननी पड़ती है।

चुनाव की लड़ाई—ब्रिटेन में चुनाव की लड़ाई और प्रचार के लिये ३ सप्ताह से अधिक समय नहीं दिया जाता। चुनाव-घोषणा के एक मास के भीतर ही सब चहल-पहल समाप्त हो जाती है। यों, राजनैतिक दल सभी समय अपने प्रचार और शक्ति-संचय में लगे रहते हैं। जो अभ्यर्थी जिस क्षेत्र से खड़ा होना चाहता है, वहाँ अनेक रीतियों से लोकप्रिय बनने का प्रयत्न करता रहता है—जैसे सार्वजनिक कार्यों के लिए चन्दा देकर, भाषण देकर, लोगों से मिल-जुल कर इत्यादि। इसे निर्वाचन क्षेत्र का पोषण (Nursing the Constituency) कहते हैं।

चुनाव के पहिले प्रत्येक दल अपनी भावी नीति की घोषणा करता है, अर्थात् यह कि सफल होने पर वह कौन-कौन कार्य करेगा। किसी भी दल की नीति को पारिभाषिक भाषा में उसका 'मंच' (Platform) कहते हैं। इसी 'मंच' ही के आधार पर चुनाव की लड़ाई लड़ी जाती है। प्रत्येक दल के प्रचारक अपने मंच का समर्थन और विरोधी मंचों की आलोचना करते हैं। इसके अतिरिक्त प्रत्येक अभ्यर्थी भी अपना वक्तव्य (address or manifesto) प्रकाशित करता है। ब्रिटेन में प्रत्येक अभ्यर्थी प्रत्येक मतदाता को अपने वक्तव्य की एक प्रति बिना डाक-महसूल दिये अर्थात् निःशुल्क भेज सकता है। ज्यों-ज्यों चुनाव का दिन पास आता जाता है, प्रचार की तीव्रता बढ़ती जाती है और उसके सभी साधनों का प्रयोग किया जाता है। पार्कों, खुली जगहों और सड़कों के मोड़ पर सभायें की जाती हैं, समाचारपत्रों में विज्ञापन प्रकाशित होते हैं, व्यंगचित्रों, नारों और सूचना-फलकों का आश्रय लिया

जाता है, चलती सड़कों पर अभ्यर्थी को वोट देने के प्रार्थनासूचक विज्ञापन लिये हुये आदमी भेजे जाते हैं और सबसे बढ़कर यह बात होती है कि अभ्यर्थियों के मित्र और सहायक प्रत्येक घर में जा-जाकर मतयाचना करते हैं। गत बीस वर्षों से रेडियो द्वारा भी प्रचार होता है और प्रत्येक दल के नेता को अपना वक्तव्य प्रसारित करने का मौका दिया जाता है। यों तो प्रत्येक चुनाव में अनेक प्रश्न मतदाताओं के सम्मुख रक्खे जाते हैं, परन्तु एक मुख्य प्रश्न होता जिसके आधार पर उन्हें प्रभावित करने की चेष्टा की जाती है। जैसे १९१८ के चुनाव में 'जर्मन कैसर को फाँसी दो' (Hang the Kaiser issue), यह मुख्य प्रश्न था। किसी दल के नेता का राजनैतिक कौशल इस मुख्य प्रश्न या नारे के चुनाव से प्रगट होता है, क्योंकि दल की हार-जीत इस पर बहुत कुछ निर्भर होती है।

मत दान—नाम निर्देशन वाले दिन के नवें दिन चुनाव होता है। जिन क्षेत्रों से एक ही अभ्यर्थी रहता है, वहाँ चुनाव की आवश्यकता ही नहीं होती। उसी अभ्यर्थी को नाम-निर्देशन के दिन ही निर्विरोध निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है। अन्यत्र मतदान आवश्यक होता है।

१८७२ ई० से मतदान गुप्त रीति से (By secret ballot) होता है। मतदान-पत्र पर क्षेत्र के सभी अभ्यर्थियों के नाम लिखे होते हैं और मतदाता जिसे मत देना चाहता है उसके नाम के सामने × चिन्ह कर के पत्र को तह कर के बक्स में डाल देता है।

मतदान के सभी स्थानों से मत-पत्र निर्वाचन क्षेत्र के किसी केन्द्रीय स्थान (साधारणतया टाउन हाल या काउन्टी हाल) में भेज दिये जाते हैं जहाँ प्रबन्धक (Returning Officer) उन्हें अभ्यर्थियों या उनके गुमाश्तों की उपस्थिति में गिनता है और फल की घोषणा कर देता है। ब्रिटेन में साधारण बहुमत पद्धति (Majority representation) द्वारा होता है, अर्थात्, विविध अभ्यर्थियों में से जिसको सबसे अधिक मत मिलते हैं, वह निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है।

ब्रिटेन की चुनाव-पद्धति की आलोचना—बहुमत पद्धति, जिसके द्वारा इंगलैण्ड और हमारे भारत में भी चुनाव होता है, एक दृष्टिकोण से बड़ी दोषपूर्ण है और वह यह कि इसमें राजनैतिक दलों द्वारा प्राप्त प्रतिनिधित्व और मतों की संख्या में अनुपात नहीं होता अर्थात् इस पद्धति में यह संभव है कि किसी दल को दूसरे की अपेक्षा मत तो अधिक मिलें, पर उसके निर्वाचन सदस्यों की संख्या दूसरे की अपेक्षा कम हो। मान लो १०० मतदाताओं वाले तीन निर्वाचन क्षेत्रों में अनुदार और मजदूर दल चुनाव लड़ रहे हैं, तो उनको मिले हुये मतों और प्रतिनिधियों की संख्या निम्नलिखित प्रकार की हो सकती है :—

दलों के नाम	नि० चे० अ	नि० चे० ब	नि० चे० स	
मतों की कुल संख्या	(१००)	(१००)	(१००)	योग
अनुदार दल द्वारा प्राप्त मत संख्या	५५	५३	२५	१३३
मजदूर दल द्वारा प्राप्त मत संख्या	४५	४७	७५	१६७

विजयी दल—अनुदार दल अनुदार दल—२ स्थान मजदूर दल—१ स्थान

यहाँ हम देखते हैं कि अनुदार दल को १३३ मत मिले और उसके दो सदस्य सफल हुए, पर मजदूर दल को १६७ मत मिलते हुये भी उसका केवल एक ही सदस्य चुना गया। इस दोष के कारण कभी-कभी ऐसा हो जाता है कि समस्त देश में जिस दल का बहुमत है उसका पार्लमेंट में अल्प मत ही रहता है, और जिस दल को मत-दाताओं की अपेक्षाकृत अल्प संख्या ही के मत मिले हैं, उसे पार्लमेंट में बहुमत मिल जाता है।

बहुमत निर्वाचन पद्धति के इस दोष के कारण कई लोगों ने यह प्रस्ताव किया है कि इसके स्थान में आनुपातिक निर्वाचन पद्धति का प्रयोग हो। बहुमत निर्वाचन में बड़े दलों को विशेष लाभ और छोटों को विशेष हानि होती है। आजकल ब्रिटेन में उदार दल क्षीण हो गया है। अतः उसके विचारक आनुपातिक पद्धति के प्रयोग का विशेष आग्रह करते हैं। उदाहरणार्थ, रामसे म्योर ने अपनी पुस्तक 'ब्रिटेन का शासन कैसे होता है' (How Britain is Governed), में आनुपातिक पद्धति का प्रबल समर्थन किया है। परन्तु आनुपातिक पद्धति का प्रधान दोष यह है कि इससे छोटे-छोटे अनेक दलों का उदय होकर बड़े दलों का ह्रास हो जाता है, और परिणाम-स्वरूप पार्लमेंट में बहुधा किसी भी दल का बहुमत नहीं स्थापित हो पाता। इससे सुदृढ़ मन्त्रिमण्डल बनाना असंभव हो जाता है और सरकारें निर्बल तथा अल्पजीवी हो जाती हैं। इसी कारण, बहुमत निर्वाचन पद्धति के दोषपूर्ण होते हुये भी इंगलैंड, अमेरिका, भारत आदि में इसी का प्रयोग होता है और आनुपातिक पद्धति का अनुसरण नहीं किया जाता।

चुनाव सम्बन्धी विवाद—असफल अभ्यर्थियों में से कोई भी यदि चाहे तो भ्रष्टाचार, नियमों की अवहेलना आदि के आधार पर सफल अभ्यर्थी के चुनाव के विरुद्ध आपत्ति कर सकता है। चुनाव सम्बन्धी आवेदन-पत्र एक विशेष न्यायालय द्वारा सुने जाते हैं। ऐसे प्रत्येक अभियोग की सुनवाई के लिए उच्च-न्यायालय (High Court of Justice) अपने किंग्स बेञ्च डिवीजन में से दो न्यायाधीश नियुक्त कर देता है। यदि अभियोग सिद्ध हो जाय तो न्यायालय सफल अभ्यर्थी के चुनाव को अवैध निर्णय करके उसके स्थान में अन्य अभ्यर्थी को निर्वाचित कर सकता है।

चुनाव सम्बन्धी अनुचित कार्य, भ्रष्टाचार और व्यय का नियंत्रण— ब्रिटेन में कानून घूस (bribery), खिलाने-पिलाने (treating) अनुचित दबाव या धमकी (intimidation), दूसरे के नाम में मतदान (Personation) और मतों के गिनने में बेईमानी (falsifying of the count) को भ्रष्टाचार की संज्ञा देता है। वैतनिक प्रचारकर्ताओं की नियुक्ति (hiring canvassers), किराये की गाड़ियों में मतदाताओं को मतदान के लिये ले जाना आदि चुनाव सम्बन्धी अनुचित कार्य समझे जाते हैं। भ्रष्टाचार और अनुचित कार्य दोनों ही निषिद्ध हैं और यदि कोई इन्हें करे या कराये, तो ऐसा प्रमाणित हो जाने पर उसका सफल चुनाव भी अवैध हो जाता है। चुनाव-व्यय पर भी नियन्त्रण रक्खा गया है। लोक प्रतिनिधित्व कानून १९४८ के अनुसार चुनाव में ४५० पौंड और देहाती क्षेत्रों में २ पेन्स प्रति मतदाता और शहरी क्षेत्रों में २½ पैंस प्रति मतदाता—इससे अधिक व्यय न होना चाहिये। प्रत्येक अभ्यर्थी को एक गुमाश्ता (agent) नियुक्त करना आवश्यक है। सब खर्च उसी के द्वारा होना चाहिये और चुनाव के ३५ दिनों के भीतर ही गुमाश्ते को खर्च का रसीदों समेत पूरा विवरण चुनाव क्षेत्र के प्रबन्धक (Returning officer) के पास जमा कर देना आवश्यक है। ऐसा न करने पर अभ्यर्थी अयोग्य करार दे दिया जाता है। चुनाव-व्यय के नियंत्रण का अभिप्राय यह है कि धनी लोग प्रचुर व्यय द्वारा साधारण स्थिति के लोगों का चुनाव असंभव न कर दें। पर वास्तव में धनिकों के प्रभाव को रोकना बहुत कठिन है। यह नियन्त्रण केवल चुनाव की लड़ाई के दिनों में किये हुए व्यय पर ही लागू होता है, और उससे पहिले या बाद वाले व्ययों पर नहीं। धनी लोग चुनाव के पहिले ही अपने निर्वाचन-क्षेत्र वालों को प्रसन्न करने के लिए हजारों पौंड चन्दे देकर या अन्य प्रकार से खर्च कर अपनी स्थिति मजबूत बना सकते हैं।

कामन्स सभा का आन्तरिक सङ्गठन

अध्यक्ष (The Speaker)— कामन्स सभा का अध्यक्ष स्पीकर या प्रवक्ता (speaker) कहलाता है। पिछले अध्यायों में बतलाया जा चुका है कि प्रारंभ में कामन्स सभा का काम कानून बनाना न होकर सम्राट् के सामने जनता की असुविधाओं को रखना तथा उन्हें दूर करने की प्रार्थना करना था। इसके लिए उनके सदस्य अपने ही लोगों में से एक व्यक्ति चुन लेते थे जो उनकी प्रार्थनाओं को सम्राट् के सामने रखता था। सभा के मत को सम्राट् से कहने (speak) वाला वह व्यक्ति स्पीकर या प्रवक्ता कहलाता था। उसका वह पुराना कार्य तो अब रहा नहीं, पर नाम वही बना है। अब स्पीकर कामन्स सभा की कार्यवाही का संचालन करने वाला अध्यक्ष है।

निष्पक्षता, दलबन्दी से अलग रहना और प्रत्येक सदस्य के अधिकार की समान रूप से रक्षा करना—यही स्पीकर के पद का सार है। औपचारिक रूप से तो प्रत्येक नई कामन्स सभा अपने स्पीकर का चुनाव करती है और जितने सदस्य चाहें, इस पद के अभ्यर्थी रूप में खड़े हो सकते हैं, पर व्यवहार में बहुत दिनों की चली आई प्रथा के अनुसार वह चुनाव सर्वसम्मत होना चाहिये। यह भी प्रथा है कि पुरानी पार्लमेंट का स्पीकर यदि अब भी सभा का सदस्य चुनकर आया हो और वह स्पीकर पद पर बना रहना चाहे तो उसी को फिर चुना जाय। इस प्रकार एक ही व्यक्ति बारंबार स्पीकर चुना जाता रहता है और नये व्यक्ति को चुनने का अवसर तभी आता है जब कि किसी कारण से पुराना स्पीकर उपलब्ध न हो। जब कभी ऐसा अवसर आता है तो उस समय का प्रधान मंत्री अपने ही दल में से किसी उपयुक्त व्यक्ति को चुनकर उसके कामन्स सभा द्वारा चुने जाने का प्रस्ताव करता है। उदाहरणार्थ १९४३ में तत्कालीन स्पीकर केप्टन फिट्‌जराय की मृत्यु हो जाने पर श्री चर्चिल ने क्लिफ्टन ब्राउन (Clifton Brown), का जो उन्हीं के अनुदार दल के थे, चुनाव करवाया। प्रधान मंत्री इस विषय में विपक्षी दल के नेता से भी परामर्श कर लेता है जिससे निर्विरोध चुनाव हो सके। साधारणतया इस पद के लिये प्रधान मन्त्री अपने दल के किसी ऐसे व्यक्ति को छाँटता है जिसकी संकीर्ण दलबन्दी के कार्यों के लिये कुख्याति न हो और जिसके प्रति विपक्षी दल वाले भी आदर-बुद्धि रख सकें। प्रधान मन्त्री ही भावी स्पीकर के नाम का प्रस्ताव करता है और विपक्षी दल का नेता उसका समर्थन करता है और स्पीकर निर्विरोध रूप से (unopposed) चुन लिया जाता है। एक बार चुन लिये जाने पर फिर प्रत्येक नई पार्लमेंट द्वारा वही बार-बार पुनर्निर्वाचित होता रहता है, चाहे जिस दल का भी बहुमत क्यों न हो। उदाहरणार्थ वर्तमान स्पीकर क्लिफ्टन ब्राउन अनुदार दल में से १९४३ में चुने गये थे, परंतु १९४५ में मजदूर दल का बहुमत हो जाने पर भी उन्हीं का फिर निर्वाचन हुआ। इतना ही नहीं, साधारणतया आम चुनाव के समय भी स्पीकर के निर्वाचन-क्षेत्र से कोई विरोधी अभ्यर्थी नहीं खड़ा किया जाता। इसका अपवाद केवल १९३५ में हुआ था जब मजदूर दल ने कैप्टन फिट्‌जराय के विरुद्ध आम-चुनाव में अपना अभ्यर्थी खड़ा किया था, पर उस दल के इस कृत्य की पर्याप्त निन्दा हुई और उसके बाद फिर ऐसा नहीं हुआ। अध्यक्ष के चुनाव की सम्राट् द्वारा स्वीकृति आवश्यक है, पर यह केवल एक औपचारिक बात है और सदा ही मिल जाती है।

अध्यक्ष की निष्पक्षता—जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, स्पीकर के पद का सारांश है पूर्ण निष्पक्षता और दलबन्दी से अलग रहना। चुनाव के समय तो स्पीकर

बहुमत दल का सदस्य रहता है और अपने दल की सहायता से ही चुना जाता है, परंतु चुनाव हो जाने के बाद वह दलबन्दी से अलग हो जाता है। सार्वजनिक रूप से वह कोई भी राजनैतिक चर्चा नहीं करता—न भाषण द्वारा, न लेख द्वारा और न अन्य किसी प्रकार से। वह किसी भी दल की किसी सभा या क्लब में भाग नहीं लेता। अधिक क्या, आम चुनाव के समय भी, जबकि वह स्वयं एक निर्वाचन क्षेत्र से अभ्यर्थी के रूप में खड़ा रहता है, वह कोई भाषण नहीं देता और न प्रचार करता है। वह उन सभी कार्यों से अलग रहता है जिनसे कुछ भी पक्षपात या दलबन्दी की गन्ध आती हो। कामन्स सभा के अध्यक्ष की इस प्रकार की पूर्ण निष्पक्षता ब्रिटिश राजनीति की एक विशिष्ट वस्तु है जो संसार के अन्य किसी भी देश में नहीं पाई जाती। इससे कई लाभ हैं। पहले तो निष्पक्षता ही के कारण स्पीकर का सर्वसम्मत और बारंबार पुनर्निर्वाचन सम्भव है। दूसरे, एक ही व्यक्ति के स्पीकर पद पर अधिक समय तक बने रहने से उसका नियमोपनियम सम्बन्धी ज्ञान और अनुभव परिपक्व हो जाता है। तीसरे निष्पक्ष अध्यक्ष होने से सभी दलों के सदस्यों को यह आश्वासन रहता है कि उनके अधिकारों की समान रूप से रक्षा होगी।

स्पीकर के अधिकार और कर्त्तव्य—स्पीकर का सर्व प्रथम कर्तव्य कामन्स सभा की बैठकों की अध्यक्षता करना है। केवल जब कामन्स सभा पूर्ण सभा की कमेटी के रूप में बैठती है तो स्पीकर अध्यक्षासन पर नहीं रहता, अन्यथा अन्य सभी कार्यवाहियों का वही अध्यक्ष रूप से संचालन करता है। एक रजत-दण्ड (mace) जिस पर राजमुकुट का चिह्न बना रहता है, उसके पद का प्रतीक है और सदा उसके सामने की मेज पर रक्खा रहता है। दूसरे, अध्यक्ष की हैसियत से स्पीकर ही सदस्यों को भाषण करने की अनुमति देता है। बिना उसकी अनुमति के कोई सदस्य वहाँ कुछ कह नहीं सकता। जो भी सदस्य कुछ बोलना चाहता है, उपयुक्त अवसर पर अपनी जगह पर खड़ा हो जाता है और यदि स्पीकर ने उसे देख लिया, और मौका दे दिया तो वह बोल सकता है। पार्लमेंट की पारिभाषिक-भाषा में इसे 'अध्यक्ष की दृष्टि आकर्षित करना' (Catching the Speaker's eye) कहते हैं। बोलते समय सदस्य सदैव स्पीकर को ही सम्बोधन करते हैं, एक दूसरे को नहीं। तीसरे, स्पीकर का यह कर्तव्य है कि वह सभा के वाद-विवाद में शांति (order) शिष्टता (decorum) और प्रासंगिकता (relevance) की रक्षा करे। यदि कोई सदस्य इन आदर्शों की अवहेलना करे, तो स्पीकर इसे रोक सकता है या अपने शब्द वापस लेने को कह सकता है। स्पीकर की आज्ञा न मानने पर वह अपराधी सदस्य को छोटे-बड़े कई प्रकार के दण्ड दे सकता है जैसे उसका नाम-निर्देश कर देना (naming), भर्त्सना करना, बैठक से चले जाने की आज्ञा देना, निश्चित दिनों तक सभा में आने से रोक देना (suspen-

sion) आदि बड़ी ही उद्दण्डता की दशा में उसे बल-प्रयोग द्वारा सभा के बाहर निकलवा देना आदि। चौथे कार्यवाही के नियम संबन्धी आपत्तियों (Points of Order) का स्पीकार ही निर्णय करता है और उसका निर्णय अंतिम समझा जाता है। पर्याप्त विवाद हो चुकने पर स्पीकार ही सभा के निर्णयार्थ प्रश्न प्रस्तुत करता है (puts the question) उन पर सदस्यों का मत लेता और फल की घोषणा करता है। पाँचवें, पार्लमेंट ऐक्ट १९११ के अनुसार जब किसी विधेयक के विषय में यह सन्देह उठता है कि वह अर्थ विधेयक है या नहीं तो उस पर स्पीकार का निर्णय ही अंतिम माना जाता है। यह एक बड़ा महत्त्वपूर्ण अधिकार है। अंतिम स्थान में, स्पीकर प्रत्येक बात में कामन्स सभा का प्रतिनिधि माना जाता है। वही सभा के नाम पर सम्राट् से अधिकार याचना करता है। कानन्स सभा के लिए भेजे हुए आवेदन-पत्र आदि उसी के पास आते हैं। जैसा पहिले बतलाया जा चुका है, १९४५ ई० से स्पीकार सीमा आयोगों (Boundary Commissions) का भी अध्यक्ष है, जो कि निर्वाचन-क्षेत्रों में परिवर्तन संशोधन करते हैं।

स्पीकार को १०००० पौंड वार्षिक वेतन और रहने के लिए सरकारी भवन मिलता है। पद की प्रतिष्ठा की दृष्टि से राज्य में उसको सातवाँ स्थान प्राप्त है। अपने पद से अवकाश ग्रहण करने पर उसे अवकाश वृत्ति (pension) मिलती है और लार्ड पदवी (peerage) प्रदान कर दी जाती है।

उपाध्यक्ष और साधन-समिति का सभापति (Deputy Speaker and the Chairman of the Committee of Ways and Means)—अध्यक्ष अथवा स्पीकर के अतिरिक्त कामन्स सभा का दूसरा अधिकार साधन समिति का सभापति (Chairman of the Committee of Ways and Means) है, जो कि उपाध्यक्ष (Deputy Speaker) भी होता। उसे कभी-कभी 'समितियों का सभापति' (Chairman of the Committees) भी कहा जाता है। उसे सरकार नामांकित (nominate) करती है, पर अध्यक्ष की भाँति ही उसे भी कार्य-संचालन में निष्पक्ष रहना होता है। जब कामन्स सभा पूर्ण सभा की समिति (Committee of the Whole) के रूप में बैठती है—चाहे वह आदान समिति (Committee of Supply) हो अथवा साधन समिति (Committee of Ways and Means) या अन्य कोई—तो उपाध्यक्ष (अर्थात् साधन समिति का सभापति) ही सभापतित्व करता है, स्पीकर या अध्यक्ष नहीं। ये समितियाँ आय-व्यय पत्रक सरीखे महत्त्वपूर्ण विषयों पर निर्णय करती हैं। अतः साधन समिति के सभापति अथवा उपाध्यक्ष का पद बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

इस अधिकारी की सहायता के लिए साधन समिति का एक उप-सभापति (De-

puty Chairman of Way sand Means) भी होता है। यह भी सरकार द्वारा नामांकित होता है और उपाध्यक्ष के रूप में कार्य कर सकता है।

साधन समिति के सभापति और उपसभापति जब अध्यक्ष की अनुपस्थिति में स्वयं कामन्स सभा की बैठकों की अध्यक्षता करते हैं, तो उनके अधिकार अध्यक्ष अर्थात् स्पीकर के से ही होते हैं परन्तु सब बातों में नहीं। उदाहरणार्थ वे संपुट (closure) के प्रयोग नहीं कर सकते और न संशोधन में से वाद-विवाद के लिये कुछ को चुन या अन्यों को छोड़ सकते हैं।

अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और सहायक उपाध्यक्ष के अतिरिक्त स्पीकर द्वारा नामांकित सभापतियों का एक मंडल (a panel of chairman) भी होता है। जब कामन्स सभा समिति के रूप में बैठती है तो इस मंडल के व्यक्ति उपाध्यक्ष अथवा सहायक उपाध्यक्ष का आसन अस्थायी रूप से ग्रहण करके उक्त अधिकारियों को आवश्यक विश्राम का अवसर दे सकते हैं। स्थायी समितियों के सभापति अलग होते हैं।

लिपिक (Clerks of the House)—कामन्स सभा का एक लिपिक (Clerk) और दो सहायक लिपिक (Clerks Assistant) होते हैं, ये कामन्स सभा के महत्त्वपूर्ण अधिकारी होते हैं। लिपिक की नियुक्ति प्रधानमंत्री के परामर्शानुसार सम्राट् द्वारा होती है और सहायक लिपिकों की स्पीकर के परामर्शानुसार। इनके बैठने का स्थान स्पीकर के मंच से नीचे परन्तु उसके सामने ही होता है। कामन्स सभा की कार्यवाहियों में 'लिपिकों की मेज' (Clerks' Table) का बहुधा उल्लेख पाया जाता है। स्पीकर के निर्देशन के अनुसार ये लिपिक कामन्स सभा का दैनिक कार्यक्रम (order paper) तैयार करते, सभा के निर्णयों को लेखबद्ध करते, कार्यवाही सम्बन्धी बातों पर स्पीकर तथा सदस्यों को परामर्श देते, और सभा में पूछने के लिए आये हुये प्रश्नों की ग्राह्यता अथवा अग्राह्यता का निर्णय करते हैं जो कि बहुत ही उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य है। यदा-कदा वे राष्ट्रमंडल के देशों और विदेशों की संसदों को भी संसदीय प्रक्रिया विषयक परामर्श देते हैं। इन के 'क्लर्क' नाम से इनकी स्थिति को साधारण न समझ लेना चाहिये। ये योग्य, अनुभवी तथा निष्पक्ष अधिकारी होते हैं। (कामन्स सभा के क्लर्कों में एरस्किन मे १८३१ से १८८६ तक पार्लमेंट के विविधि पदों पर कार्य कर रहे थे। (Erskine May) का नाम अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'पार्लमेंटरी प्रैक्टिस' के कारण अमर हो गया है।[१])

कामन्स सभा की समितियाँ (Committees of the House of Commons)—आजकल की विधान सभाओं का आकार इतना बड़ा होता है कि उन-

१. एरस्किन मे १८३१ से १८८६ तक पार्लमेंट के विविध पदों पर काम करते रहे।

के लिए किसी भी प्रश्न के विस्तार की बातों पर कामकाजी ढंग से विचार करना कठिन हो जाता है। बड़ी सभा के सामने जो कोई भाषण देने को खड़ा होता है वह शब्दाडंबर और लंबी वक्तृता देने के प्रलोभन को कठिनता से रोक पाता है। इसी कारण सभी देशों में विधान सभायें विचार और निर्णय की सुगमता के लिए अपने थोड़े से सदस्यों से बनी हुई समितियों का सहारा लेती हैं। कामन्स सभा में आठ प्रकार की समितियाँ पाई जाती हैं जिनका संक्षिप्त-वर्णन नीचे दिया जाता है।

१. पूर्ण सभा की समिति (Committee of the Whole)—पूर्ण सभा की समिति को समिति कहना अनुपयुक्त प्रतीत होता है क्योंकि इसमें कामन्स सभा के सभी सदस्य सम्मिलित रहते हैं, और इस प्रकार आकार की दृष्टि से वह समिति न होकर कामन्स सभा ही जान पड़ती है। परन्तु उसमें और कामन्स सभा में कार्यवाही की दृष्टि से दो महत्त्वपूर्ण अन्तर हैं। कामन्स सभा जब सभा के रूप में बैठती है तो स्पीकर अध्यक्ष-पद को ग्रहण करता है और उसका रजत दण्ड (mace) उसकी मेज पर रक्खा रहता है, पर पूर्ण सभा की समिति की बैठकों में स्पीकर अध्यक्ष नहीं होता। उसकी कुर्सी खाली रखती हैं, रजतदंड मेज के नीचे रख दिया जाता है और एक दूसरा अधिकारी जिसे चेयरमैन आफ दी कमिटी आफ वेज ऐंड मीन्स (Chairman of the Committee of Ways and Means) कहते हैं, अध्यक्षता करता है। दूसरा अंतर यह है कि जब सभा समिति के रूप में बैठती है तो उसके कार्यवाही के नियम कुछ ढीले और अधिक उदार कर दिये जाते हैं, जिससे वाद-विवाद अधिक स्वतंत्रता के साथ हो सके। कामन्स सभा की बैठकों से प्रत्येक प्रस्ताव का एक समर्थक होना चाहिये, पर समिति में यह आवश्यक नहीं। सभा की बैठकों में कोई सदस्य (प्रस्तावक के अतिरिक्त) किसी प्रश्न पर एक बार से अधिक नहीं बोल सकता, पर पूर्ण सभा की समिति में वह चाहे जितनी बार बोले। एक बार मात्र बोलने का बंधन नहीं है। सभा की बैठकों में वाद-विवाद को संपुट (closure) द्वारा संक्षिप्त किया जा सकता है, पर समिति के अधिवेशन में संपुट का प्रयोग निषिद्ध है।

कोई समय था जब सभी प्रकार के सार्वजनिक विधेयक (Public Bills) पूर्ण सभा की समिति ही के सामने विचारार्थ रक्खे जाते थे, परन्तु इसमें बड़ी देर लगती थी अतः १९०७ ई० के स्थायी नियम नं० ४६ के अनुसार इस का कार्यक्षेत्र संकुचित कर दिया गया और इसके सामने केवल तीन प्रकार के विधेयक आने लगे अर्थात् (१) अर्थ विधेयक विशेषतः आय-व्यय पत्रक, (२) अस्थायी आदेशों (Provisional orders) की पुष्टि करने वाले विधेयक, और (३) वे विधेयक जिन्हें कामन्स सभा अपने विशेष निर्णय द्वारा पूर्ण सभा की समिति के पास भेजना चाहे। व्यवहार में मंत्रिमंडल राजनीतिक मतभेद वाले सभी महत्त्वपूर्ण विधेयक को और बहुत

आवश्यक या बहुत छोटे विधेयकों को उपरोक्त व्यवस्था नं० ३ के अन्तर्गत पूर्ण सभा की समिति ही के पास रखवा लेता था।

समय की बचत के लिए १९४५ ई० में मजदूर दलीय सरकार ने इस प्रक्रिया में संशोधन कराया जिस से पूर्ण सभा की समिति के सामने अब केवल निम्नलिखित प्रकार के विधेयक आ सकते हैं।

(१) आय और व्यय विधेयक (Taxation and Appropriation Bills)।

(२) अस्थायी आदेशों की पुष्टि करने वाले विधेयक।

(३) जिन विधेयकों को अत्यन्त शीघ्र पारित करने की आवश्यकता हो।

(४) एक अनुच्छेद मात्र वाले विधेयक जिनके विस्तृत विवेचन की आवश्यकता न हो।

(५) उच्च कोटि के संवैधानिक महत्त्व वाले विधेयक।

इनके अतिरिक्त अब अन्य सभी सार्वजनिक विधेयक स्थायी समितियों के पास ही भेजे जाते हैं।

२. स्थायी समितियाँ (Standing Committees)—ऊपर बतला चुके हैं कि पूर्ण सभा को समिति में अधिक समय लगने के कारण वह उत्तरोत्तर असुविधाजनक प्रतीत होने लगी, विशेषतः शताब्दी के उत्तरार्ध में जब कि राज्य के कार्यों में वृद्धि होने के कारण पार्लमेंट का कार्य बहुत बढ़ गया। अतः १८८२ ई० में स्थायी समितियों की स्थापना की व्यवस्था की गई। इनकी कोई निश्चित संख्या नहीं है और आवश्यकतानुसार कम या अधिक होती रहती है। प्रारम्भ में केवल दो स्थायी समितियाँ थीं। फिर यह संख्या बढ़ते-बढ़ते प्रथम महायुद्ध के दिन में ६ तक पहुँच गई। बाद में वह फिर घटकर पाँच रह गई है; परन्तु १९४५ में पूर्ण सभा की समिति का क्षेत्र संकुचित हो जाने के उपरान्त स्थायी समितियों के समक्ष जाने वाले विधेयकों की संख्या बढ़ गई। अतः अब इनकी संख्या जितनी आवश्यकता हो उतनी बढ़ाई जा सकती है। प्रत्येक स्थायी समिति के २० साधारण सदस्य होते हैं, पर विभिन्न विधेयकों पर विचार करने के लिए इसमें ३० अतिरिक्त सदस्य भी जोड़े जा सकते हैं। इस प्रकार इनके सदस्यों की अधिकतम संख्या ५० तक हो सकती है। ये सभी कामन्स सभा के सदस्यों में से ही होते हैं। सदस्यों को विभिन्न स्थायी समितियों में रखने का काम ११ सदस्यों की एक चुनाव समिति (Committee of Selection) करती है। चुनाव समिति में विभिन्न दलों के सदस्य कामन्स सभा में उनकी संख्या के अनुपात में रखे जाते हैं। अतः स्थायी समितियों में भी मोटे तौर से सभी दलों का उनके

प्रभाव के अनुसार प्रतिनिधि रहता है, पर पूर्ण आनुपातिक रीति से नहीं। स्थायी समितियों की नियुक्ति प्रत्येक पार्लमेंट के प्रारम्भ में उसकी पूर्ण अवधि अर्थात् साधारणतया ५ वर्षों के लिए होती है।

अधिकांश सार्वजनिक विधेयक द्वितीय वाचन के बाद किसी स्थायी समिति के पास विचार और संशोधन के लिये भेज दिये जाते हैं। इनके अधिकार-क्षेत्र बटे नहीं हैं अर्थात् कोई भी विधेयक किसी भी समिति के पास भेजा जा सकता है। इसका एकमात्र अपवाद स्काटिश (Scottish) समिति है जिसके पास केवल स्काटलैंड से सम्बन्ध रखने वाले विधेयक जाते हैं। अन्य समितियों को अ, ब, स, द इत्यादि समितियाँ कहते हैं। कौन विधेयक किन समितियों के पास जायगा—वह स्पीकर के निर्णय पर निर्भर है।

स्थायी समिति के २० साधारण सदस्य तो उसके स्थायी सदस्य होते हैं, पर ३० तक अतिरिक्त सदस्य प्रत्येक भेजे जाने वाले विधेयक के लिए अलग-अलग नियुक्त किये जाते हैं। इस प्रकार ये प्रत्येक भेजे जाने वाले विधेयक के साथ बदलते रहते हैं। इनकी नियुक्ति में इस बात का ध्यान रक्खा जाता है कि जो विधेयक इनके सामने आने वाला है, उसके विषय के ये जानकार हों। प्रत्येक स्थायी समिति का एक अध्यक्ष (Chairman) होता है जो अध्यक्षों की एक नामावली (Panel of Chairman) में से स्पीकर द्वारा नियुक्त किया जाता है। साधारणतया स्थायी समितियों में भी सरकार का बहुमत रहता है, पर कभी-कभी इसका अपवाद भी हो जाता है।

स्थायी समितियों का कार्य अपने पास भेजे गये विधेयकों की बारीकी से जाँच करके उनमें आवश्यक संशोधनों का प्रस्ताव करना है। इन कमेटियों की बैठक कामन्स सभा की बैठक के साथ ही साथ भवन की दूसरी मंजिल के कमरों में चलती रहती है। केवल, जब किसी प्रश्न पर मत लिये जाने की घंटी बजती है, तो ये सदस्य अपना काम छोड़कर सभा में उपस्थित हो जाते हैं। इस व्यवस्था से साथ ही साथ दोहरा काम होता रहता है और समय की बचत होती है।

पहिले स्थायी समितियों में सम्पुट (closure) का प्रयोग निषिद्ध था, पर जब उन के पास बड़े और महत्वपूर्ण विधेयक भेजे जाने का निश्चय हुआ तो सम्पुट का प्रयोग भी आवश्यक हो गया। अब उनमें एक प्रकार के कुठार (Guillotine) का प्रयोग हो सकता है। प्रत्येक विधेयक के लिये एक तिथि नियत कर दी जाती है कि उस तक समिति अपना कार्य उस के संबन्ध में पूरा कर दे। उपलब्ध समय को विधेयक के विभिन्न भागों के लिये भी बाँट दिया जाता है। समय पूरा होते ही तत्संबंधी भाग या भागों पर विवाद समाप्त कर के मत ले लिये जाते हैं।

विचाराधीन विधेयक का प्रस्तावक (जो कि अधिकांश दशाओं में सम्बद्ध विभाग का मंत्री होता है स्थायी समिति के सदस्यों में सदैव ही सम्मिलित रहता है। अतः यदि समिति कोई ऐसे संशोधन करना चाहे जो उसे (अर्थात् सरकार को) मान्य न हो, तो वह उस पर आपत्ति कर सकता है। अधिकतर संशोधन उसकी सम्मति से ही होते हैं, क्योंकि साधारणतया स्थायी समितियों में भी सरकार का बहुमत रहता है। इस दशा में समिति द्वारा किये गये परिवर्तन संशोधन कामन्स सभा में शीघ्र और सरलता से स्वीकृत हो जाते हैं पर कभी-कभी इसका अपवाद भी हो जाता है और उस दशा में समिति के संशोधनों का सरकार, कामन्स सभा में आने पर, विरोध करती है और यदि समझौता न हो सका तो उन्हें अस्वीकृत करा देती है।

३. **विशिष्ट समितियाँ** (Select Committees)—विशिष्ट समितियों में साधारणतया १५ से अधिक सदस्य नहीं होते। विशिष्ट समिति की नियुक्ति किसी विशेष प्रश्न या समस्या का अध्ययन करने और उस पर सुझाव देने के लिये होती है। ये अपना अध्यक्ष स्वयं चुनती हैं, ये विचाराधीन प्रश्न पर विशेषज्ञों या अन्य जानकार लोगों की गवाही लेती हैं, अन्य आवश्यक अन्वेषण कराती हैं और फिर अपना मन्तव्य देती हैं। विशिष्ट समितियाँ अपने विचाराधीन प्रश्न का निर्णय करने के बाद विघटित (dissolve) हो जाती हैं। यही इनमें और स्थायी समितियों में प्रधान भेद है। कभी-कभी दोनों सभाओं के सदस्यों को मिला कर विशिष्ट समिति बनाई जाती है, और तब उसे संयुक्त विशिष्ट समिति (Joint Select Committee) कहते हैं। भारतीय विधान १९३५ के लिए ऐसी ही समिति बनाई गई थी। विशिष्ट समितियों की कोई निश्चित संख्या नहीं है। वह आवश्यकतानुसार घटती-बढ़ती रहती है, पर साधारणतया प्रत्येक अधिवेशन में इनकी संख्या २० के लगभग पहुँच जाती है।

४. **सत्रीय समितियाँ** (Sessional Committees)—जब तब कोई विशिष्ट समिति पार्लमेण्ट के पूरे अधिवेशन या सत्र-काल के लिए नियुक्त कर दी जाती है जैसे स्थायी समितियों के सदस्यों को नियुक्त करने वाली चुनाव समिति (Committee of Selection)। इस प्रकार की समितियाँ सत्रीय समितियाँ कहलाती हैं।

५. **विशेषाधिकार समिति** (The Committee of Privileges) कामन्स सभा का कार्य सुचारु रूप से चल सके, इसलिए उसे तथा उसके सदस्यों को कुछ परंपरागत विशेषाधिकार प्राप्त हैं जैसे भाषण की स्वतंत्रता, बन्दीकरण से स्वतंत्रता, न्यायालयों के समक्ष साक्षीरूप में उपस्थित होने से स्वतंत्रता, आन्तरिक कार्यवाही के विषय में न्यायालयों के हस्तक्षेप से स्वतंत्रता, अवमाव करने वालों का

दण्ड देने का अधिकार इत्यादि । जब कभी इनमें से किसी विशेषाधिकार के किसी द्वारा भंग किये जाने का प्रश्न उठता है, तो वह विशेषाधिकार समिति के पास विचारार्थ भेज दिया जाता है और यह समिति निर्णय करती है कि विशेषाधिकार पर आघात हुआ है या नहीं । इस समिति में १० सदस्य होते हैं और यह उपस्थित प्रश्न पर न्यायालयों की भाँति विचार करती है । इसे साक्षियों को अपने सामने बुलाने व आवश्यक कागज व पत्र व प्रमाणों के उपस्थित किये जाने के आदेश देने का अधिकार प्राप्त है ।

६-७. अनुमान समिति, सार्वजनिक लेखा समिति (Estimates Committee and the Public Accounts Committee)—ये दोनों अर्थ-प्रबन्ध संबंधी समितियाँ है और इन का वर्णन आठवें अध्याय में किया गया है ।

८. प्रत्यायुक्त विधि-निर्माण संबंधी समिति (The Committee on Statutory Instruments)—यह एक विशिष्ट समिति है जो १९५४ ई० में स्थापित की गई । इसका कार्य प्रत्यायुक्त विधि निर्माण के अन्तर्गत बनाये हुये नियमों की जाँच कर के यदि उनमें कोई आपत्तिजनक बातें पाई जायँ तो उनकी ओर कामन्स सभा का ध्यान आकर्षित करना है ।

अभ्यास

१. कामन्स सभा के वर्तमान संगठन का वर्णन करो । उसके सदस्यों के निर्वाचन के लिए मताधिकार किन लोगों को प्राप्त है ?

Describe the present composition of the House of Commons. Who are qualified to vote at the election of its members ?

२. कामन्स सभा के चुनाव पद्धति में क्या दोष बतलाया गया है ? क्या आनुपातिक प्रतिनिधित्व स्थापना का आप समर्थन करते हैं ?

What main defect has been pointed out in the method of representation for the House of Commons ? Do you think proportional representation would be better ?

३. स्पीकर की चुनाव-विधि, स्थिति और अधिकारों का वर्णन करो ।

Describe the method of the speaker's election, his position and powers.

४ कामन्स सभा की स्थायी समितियों के संगठन और कार्यों का वर्णन करो ।

Describe the functions and organizations of Standing Committee of the House of Commons.

५. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखो:—

ब्रिटेन में नाम-निर्देशन की रीति, चुनाव-सम्बन्धी भ्रष्टाचार, पूर्ण सभा की समिति, विशिष्ट समितियाँ, सत्रीय समितियाँ ।

Write short notes on the following :—

Nomination of Candidates, corrupt practices in elections, the Committee of the Whole House, a select committee, sessional committees.

सभा के भवन में उपस्थित होने को आमंत्रित करता है। वहाँ जाने पर उन्हें सत्र प्रारंभ होने का आज्ञापत्र (Letters patent) पढ़कर सुनाया जाता है और यदि नई पार्लमेंट का सत्र हुआ, तो लार्ड चान्सलर सम्राट् की ओर से उन्हें यह भी आदेश देता है कि वे किसी उपयुक्त व्यक्ति को अपना अध्यक्ष (Speaker) चुनें। कामन्स सभा के सदस्य तब अपने भवन में लौटकर अध्यक्ष का चुनाव करते हैं और दूसरे दिन अध्यक्ष समेत कामन्स सभा के सदस्य पुनः लार्ड सभा के भवन में उपस्थित होते हैं। वहाँ अध्यक्ष अपने चुनाव की घोषणा करता है और लार्ड चान्सलर उस पर सम्राट् की स्वीकृति पढ़कर सुनाता है। इसके उपरांत अध्यक्ष कामन्स सभा के 'सुनिश्चित और प्राचीन अधिकार' (Ancient and undoubted rights and privileges of the Commons) की औपचारिक ढङ्ग से माँग करता है, और सम्राट् की तरफ से उनके प्रदान करने का आश्वासन दिया जाता है। फिर अपने भवन में लौटकर कामन्स सभा के सदस्य राज-भक्ति की शपथ लेते हैं और सदस्यों की सूची पर अपने हस्ताक्षर करते हैं।

सम्राट् का भाषण—सत्र का कार्य प्रारंभ होने से पहिले कामन्स सभा के सदस्य एक बार पुनः लार्ड सभा में 'सम्राट् का भाषण' (The speech from the Throne) सुनने को जाते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि सम्राट् का भाषण स्वयं सम्राट् द्वारा ही पढ़ा जाय। यदि सम्राट् स्वयं नहीं उपस्थित होते तो पाँच लार्डों का एक आयोग (Commission), उनका प्रतिनिधित्व करता है और लार्ड चान्सलर भाषण को पढ़ देता है। यद्यपि यह 'सम्राट् का भाषण' कहलाता है, पर वास्तव में इसे प्रधान मन्त्री तैयार करता है। इस भाषण में देश की वर्तमान दशा पर प्रकाश डाला जाता है, गृह और वैदेशिक नीति की समस्याओं का सिंहावलोकन रहता है और सत्र में जो विधेयक आदि उपस्थित किये जाने वाले होते हैं उनकी पूर्व सूचना रहती है। यदि सम्राट् स्वयं भाषण देने आते हैं तो जलूस और धूम-धाम के साथ आते हैं। भाषण समाप्त होने के बाद कामन्स सभा के सदस्य अपने भवन में लौट जाते हैं। वहाँ भाषण पुनः पढ़ा जाता है और प्रधान मन्त्री उसका, सधन्यवाद उत्तर (Address in Reply) का प्रस्ताव करता है। विरोधी दल यदि मंत्रिमंडल के साथ अपने जोर को आजमाना चाहता है, तो सधन्यवाद उत्तर में संशोधन उपस्थित करता है कि सम्राट् के भाषण में अमुक बात न होनी चाहिये, अथवा अमुक बात होनी चाहिये और नहीं है। यदि विरोधी पक्ष का संशोधन स्वीकृत हो जाय तो यह सरकार की हार मानी जाती है। अतएव सरकार की ओर से इसका सदा विरोध किया जाता है। उत्तर के सभा द्वारा स्वीकृत हो जाने पर फिर अन्य कार्य प्रारम्भ होते हैं। अध्यक्ष का चुनाव और शपथ ग्रहण—ये दो बातें केवल नई पार्लमेंट के सत्र में होती हैं, अन्य सत्रों में नहीं।

छद्मविधेयक (Dummy Bill)—यह दिखाने के लिए कि पार्लमेंट की

क्षमता सम्राट् के भाषण में कहे गये विषयों तक ही सीमित नहीं है; किन्तु वह स्वेच्छानुसार अन्य बातों पर भी कानून बना सकती है, सबसे पहले पार्लमेंट एक छद्म विधेयक पारित करती है। इसे 'छद्म' इसलिए कहते हैं कि इसका किसी वास्तविक राजकीय विषय या आवश्यकता से कोई सम्बन्ध नहीं रहता। यह पार्लमेंट की स्वतंत्रता का प्रतीक मात्र है। पार्लमेंट के सत्रों के प्रारंभ में अन्य कई विचित्र रिवाजों और परम्पराओं का पालन किया जाता है। उदाहरणार्थ सत्र के पहले दिन एक जलूस सोलहवीं शताब्दी की पोशाक पहने व उसी समय की लालटेनें जलाये पार्लमेंट भवन के हर कमरे, बरामदे व तहखाने की तलाशी लेता है। सन् १६०५ में कुछ क्रांतिकारियों ने पार्लमेंट भवन को बारूद से उड़ा देने का षड्यन्त्र बनाया था। उसकी पुनरावृत्ति रोकने के लिए यह जलूस व तलाशी प्रारम्भ किये गये थे, पर साढ़े तीन सौ वर्ष बाद आज भी उनका पालन किया जाता है। यद्यपि अब पूरे भवन में बिजली से दिन का प्रकाश रहता है, पर सोलहवीं शताब्दी की लालटेनें अब भी इस मौके पर जला ली जाती हैं। वह ब्रिटिश जाति की परम्परा-प्रियता का एक ज्वलन्त उदाहरण है। ऐसी अनेक अन्य प्रथायें भी हैं जिनसे पार्लमेंट की कार्यप्रणाली बड़ी विचित्र और आकर्षक प्रतीत होती है।

पार्लमेंट का स्थान (Adjournment) **विसर्जन** (Prorogation) **और विघटन** (Dissolution)—सत्रों के सम्बन्ध में तीन प्रकार के विराम सूचक शब्द हैं अर्थात् स्थगन, विसर्जन और विघटन। इनके अन्तर को स्पष्ट रीति से समझ लेना आवश्यक है। स्थगन का अर्थ है थोड़े समय अथवा कुछ दिनों के लिए बैठक को स्थगित कर देना। स्थगन के बाद उससे पहले का असमाप्त कार्य जहाँ छोड़ा गया था वहीं से फिर आगे बढ़ाया जाता है। इससे उसकी संगति टूटती नहीं। स्थगन एक बैठक (Sitting) से दूसरी बैठक तक के विराम काल का नाम है, और स्वयं पार्लमेंट ही अपनी इच्छा और सुविधानुसार अपना स्थगन समय-समय पर करती रहती है।

विसर्जन सत्र के अंत में होता है और इसकी घोषणा मंत्रिमण्डल के परामर्शानुसार सम्राट् द्वारा की जाती है। विसर्जन का प्रभाव यह होता है कि सभी अधूरे कार्य रद्द समझे जाते हैं, और अगले सत्र में यदि आवश्यक हुआ तो उन्हें पुनः प्रारम्भ से ही करना पड़ता है। यदि किसी विधेयक के दो वाचन हो चुके हों, तो नये सत्र में तीसरे वाचन से कार्य प्रारम्भ न हो सकेगा, किन्तु पुनः प्रथम वाचन से ही चलना पड़ेगा। दोनों सभाओं का विसर्जन एक साथ ही होता है। विसर्जन के समय भी सत्र प्रारम्भ के अवसर के समान ही सम्राट् का भाषण पढ़ा जाता है जिसमें सदस्यों को उनके अच्छे कार्य के लिए धन्यवाद दिया जाता है।

विघटन से वर्तमान पार्लमेंट का जीवन समाप्त होकर नया चुनाव होना आवश्यक हो जाता है। विघटन की घोषणा भी मंत्रियों के परामर्शानुसार सम्राट् ही करता है। यों तो पार्लमेंट की अवधि ५ वर्षों की होती है, पर मंत्रियों के परामर्शानुसार सम्राट् समय के पहले भी विघटन की घोषणा कर सकता है, और ५ वर्ष का समय बीतने के कुछ पहले तो विघटन आवश्यक हो ही जाता है। परन्तु पार्लमेण्ट चाहे तो कानून बना कर अपनी अवधि बढ़ा सकती है। युद्ध या अन्य आपत्ति के समय में वह ऐसा करती भी है।

पार्लमेंट की दैनिक बैठकें—कामन्स सभा की बैठकें प्रति सप्ताह सोमवार से लेकर शुक्रवार तक अर्थात् ५ दिन हुआ करती हैं। बैठक २½ बजे दिन को प्रारम्भ होती है, पर शुक्रवार को ११ बजे। २½ बजे प्रारम्भ होकर बैठक साधारणतया १०½ या १२ बजे रात तक लगातार चलती रहती है और कार्य की भीड़ होने पर पूरी रात चल सकती है। लार्ड सभा की बैठकें सोमवार से बृहस्पतिवार तक ही होती हैं और साधारण दो घंटे से अधिक नहीं चलतीं। लार्ड सभा के पास उतना काम नहीं रहता।

बैठक के प्रारम्भ में पादरी (Chaplain), सशस्त्र परिचारक (Sergeant-at-arms) और रजत-दंड-वाहक (Mace-bearer), के साथ स्पीकर भवन में आता है। इसके बाद पादरी प्रार्थना करता है। फिर रजत-दंड स्पीकर की मेज पर रख दिया जाता है। स्पीकर देखते हैं कि ४० सदस्यों की गणपूर्ति संख्या (Quorum) उपस्थित है या नहीं। यदि यह संख्या पूरी न हो तो सभा भवन में बिजली की घंटियाँ बजने लगती हैं जिससे जो सदस्य इधर-उधर हों, वे भी आ जाएँ। फिर स्पीकर अपना स्थान ग्रहण करता है और द्वारपाल इसकी घोषणा करता है। फिर दैनिक कार्य प्रारंभ हो जाता है।

रात को दस या बारह बजे जब बैठक समाप्त होती है तो द्वारपाल पुनः चिल्लाता है कि 'कौन घर जायगा, कौन घर जायगा (Who goes home)'। यह उन दिनों की यादगार है जब इतनी रात को लन्दन की सड़कों से जाना सुरक्षित न था और सदस्य के साथ पहरेदार भेजने पड़ते थे। द्वारपाल इसलिए चिल्लाता था कि सभी सदस्य पहरेदारों के साथ चले जायँ, और कोई भूला-भटका पीछे न रह जाय। जब सदस्य भवन से निकलने लगते हैं तो भी द्वारपाल व अन्य कर्मचारी उन्हें अगले दिन की बैठक के लिए 'इसी समय कल फिर महाशय, इसी समय कल फिर (the usual time tomorrow, sir, the usual time tomorrow)' कहकर सावधान करते हैं। इस प्रकार ब्रिटिश पार्लमेंट प्राचीन रूढ़ियों और रिवाजों का कौतुकागार है।

पार्लमेंट का दैनिक कार्यक्रम—स्पीकर के आसन ग्रहण कर लेने के बाद

सबसे पहले कार्यक्रम में निर्दिष्ट व्यक्तिगत विधेयकों (private bills) पर विचार होता है। इसके बाद यदि पार्लमेंट के लिए कोई आवेदन-पत्र (petition) हुआ तो उसे लिया जाता है। इसके बाद प्रश्न वाला घंटा (Question hour) प्रारम्भ होता है। कोई भी सदस्य मंत्रियों से उसके विभाग के सम्बन्ध में प्रश्न और पूरक प्रश्न पूछ सकता है। किसी सदस्य द्वारा किसी एक दिन पूछे जाने वाले प्रश्नों की संख्या ३ से अधिक नहीं हो सकती। इसके बाद यदि कोई नये सदस्य चुन के आये हों तो उनका परिचय दिया जाता है। इसके बाद दैनिक कार्यक्रम पढ़कर सुनाया जाता है और कार्यक्रम पत्रक (Order Paper) पर निर्दिष्ट सर्वप्रथम सार्वजनिक विधेयक पर वाद-विवाद प्रारम्भ हो जाता है। पार्लमेंट का शेष समय प्रतिदिन विभिन्न विधेयकों या विषयों पर वाद-विवाद करने ही में बीतता है

कार्य स्थगन प्रस्ताव—यदि मंत्रियों द्वारा दिये हुए प्रश्नों के उत्तर सन्तोषजनक न हुए, तो प्रश्न के घंटे के बाद ही कोई सदस्य 'एक निश्चित, आवश्यक और सार्वजनिक महत्व के विषय पर बहस करने के लिए (To discuss a definite question of urgent public importance), कार्य स्थगन की माँग कर सकता है। यदि स्पीकर उसे आवश्यक और उचित समझे और उसका विरोध होने की दशा में कम से कम ४० सदस्य उसके पास खड़े हों, तो उसी दिन बैठक समाप्त होने से पहिले इस प्रस्ताव पर बैठक का समय निश्चित कर दिया जाता है। ऐसे प्रस्तावों के लिए जितना समय निश्चित रहता है, यदि उतने में वाद-विवाद समाप्त न हो सका, तो प्रस्ताव असफल समझा जाता है और कहा जाता है कि बातचीत मात्र में ही समाप्त (talked out) हो गया है। यदि उस पर मत लिये जा सकें और वह सफल हो गया तो उसका अर्थ होता है सरकार में अविश्वास प्रदर्शन। अतः सरकारी प्रयत्न यही रहता है कि कार्य स्थगन प्रस्ताव 'बात-चीत ही में समाप्त' हो जायँ और उन पर मत न लिया जा सके।

शासन की भूलों या उसके अत्याचारों की ओर देश का ध्यान आकर्षित करने का 'कार्य स्थगन प्रस्ताव' बहुत अच्छा साधन है, पर यह आवश्यक है कि उसके द्वारा जिस बात या विषय पर बहस होनी है वह (१) निश्चित हो, (२) आवश्यक महत्व का हो और (३) सार्वजनिक महत्व का हो। यदि इनमें से कोई भी शर्त पूरी न हुई, तो स्पीकर स्थगन प्रस्ताव को नियम-विरुद्ध कह कर अग्राह्य (out of order) कर देगा।

विवाद-सम्बन्धी कुछ नियम और प्रतिबन्ध—पार्लमेंट के वाद-विवाद में स्पीकर की अनुमति मिलने ही पर कोई सदस्य बोल सकता है। बहुधा विभिन्न दल वाले स्पीकर को अपने पक्ष से बोलने वालों के नाम की सूची दे देते हैं और स्पी-

कर उन्हीं में से लोगों को अवसर देता है। प्रत्येक सदस्य अपने स्थान ही से खड़ा होकर बोलता है, स्पीकर के मञ्च से नहीं। भाषणकर्ता सदैव स्पीकर को ही सम्बोधन करके बोलता है, सदस्यों को नहीं। पार्लमेंट में किसी सदस्य का नाम लेना निषिद्ध है। यदि किसी सदस्य की ओर संकेत करना ही हो, तो उसके निर्वाचन क्षेत्र का नाम लेकर किया जाता है, अर्थात् 'अमुक क्षेत्र के माननीय सदस्य' (The honourable member from such and such constituency)—ऐसा कहा जाता है। कोई सदस्य किसी भी विषय पर एक बार से अधिक नहीं बोल सकता—केवल प्रस्तावक (mover) को विवाद के अन्त में एक बार और बोलकर उत्तर देने का अधिकार रहता है।

सम्पुट (Closure)—यह स्पष्ट ही है कि यदि वाद-विवाद अनियन्त्रित रूप से चलने दिया जाय, तो कदाचित् वह कभी समाप्त ही न हो। कम से कम उसमें अधिक समय तो लगेगा ही। इसी कारण से १६०४ ई० में कामन्स सभा ने नियम बनाया कि वाद-विवाद में किसी समय कोई भी सदस्य इस आशय का प्रस्ताव कर सके कि 'अब मुख्य प्रश्न का निर्णय किया जाय' (The previous question be put now)। स्वीकृत हो जाने पर इस प्रस्ताव का प्रभाव यह होता था कि वाद-विवाद समाप्त होकर विचाराधीन मुख्य प्रश्न पर तुरन्त मत लेकर उसका निर्णय कर दिया जाता था।

आयरलैण्ड के प्रतिनिधियों ने उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में पार्लमेंट की कार्यवाही को अधिक से अधिक विलम्बपूर्ण करने की नीति का आश्रय लिया। वे अपने देश के लिए स्वराज्य चाहते थे। जब उन्होंने देखा कि पार्लमेंट उनकी माँग पूरी नहीं करती, तो उन्होंने उसके काम में इस प्रकार बाधा डालने का निश्चय किया। कोई भी प्रश्न हो, कोई न कोई आइरिश सदस्य बोलने को खड़ा हो ही जाता था और जब तक हो सकता, बोलता ही जाता। इससे सामान्य बातों पर भी विवाद, द्रौपदी के चीर की तरह, बढ़ जाता और किसी भी प्रश्न का शीघ्र निर्णय असम्भव हो जाता। इससे तङ्ग आकर पार्लमेंट ने १८८१ ई० में विवाद संक्षिप्त करने के कुछ उपायों का आविष्कार किया। विवाद खतम करने के इन उपायों को 'सम्पुट' (Closure) कहते हैं। इनका उत्तरोत्तर विकास होता गया और आजकल कामन्स सभा में तीन प्रकार के सम्पुट काम में लाये जाते हैं, जो निम्नलिखित हैं :—

१ साधारण सम्पुट (Simple closure)—इसके द्वारा कोई प्रस्ताव प्रस्तुत होने के बाद किसी भी समय कोई सदस्य यह माँग उपस्थित कर सकता है कि 'अब मुख्य प्रश्न पर मत लिये जायँ (The question be put now)। यदि अध्यक्ष इस माँग को अनुचित न समझे और बहुमत तथा कम से कम १०० सदस्य

इसके पक्ष में हों तो विवाद समाप्त होकर मुख्य प्रश्न पर तुरन्त ही मत ले लिया जाता है। इस साधारण सम्पुट का प्रयोग किसी भी समय हो सकता है, यहाँ तक कि किसी सदस्य के भाषण के बीच में भी। पर इसका अनुचित प्रयोग न हो, अल्पमत वालों को अपनी राय प्रकट करने का पर्याप्त अवसर मिले—इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये अध्यक्ष को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वह आवश्यक समझे तो साधारण सम्पुट के प्रयोग की माँग को अस्वीकृत कर दे।

२. **कुठार और कक्ष सम्पुट** (The Guillotine and Closure by Compartments)—कुठार सम्पुट का यह अर्थ है कि किसी विधेयक या प्रस्ताव पर वाद-विवाद के लिए समय की मात्रा निश्चित कर दी जाती है और उतना समय बीत जाने पर तुरन्त ही विवाद समाप्त करके मत ले लिया जाता है। इसमें निश्चित समय व्यतीत हो जाने पर विवाद पर सहसा कुठाराघात सा होकर वह एकदम समाप्त हो जाता है। इसी कारण इसे 'कुठार' (Guillotine) संज्ञा दी गई है।

कक्ष सम्पुट कुठार सम्पुट का संशोधित रूप है। किसी विधेयक के सम्बन्ध में कुठार सम्पुट का प्रयोग होने में यह देखा जाता था, कि निश्चित समय का अधिकांश उसकी प्रारम्भ की धाराओं के विवाद ही में समाप्त हो जाता था और बादवाली धाराओं पर बहुत कम विचार हो पाता था या बिल्कुल ही नहीं। अतः उपलब्ध समय को विधेयक के विभिन्न भागों पर विवाद के लिए आवश्यकतानुसार बाँट देने की प्रथा चलाई गई। उदाहरणार्थ यदि ३० धाराओं के विधेयक के लिए चार घंटे का समय निश्चित हुआ, तो धाराओं के महत्वानुसार समय का यों विभाजन हो सकता है कि पहली ५ धाराओं के लिए आधा घंटा, ६ से २५ धाराओं तक के लिए ३½ घंटे और अन्तिम ५ धाराओं के लिये आधा घंटा। इस प्रकार धारायें कक्षों में विभाजित कर दी जाती हैं और प्रत्येक कक्ष के लिए समय निश्चित हो जाता है। इसी कारण इसे कक्ष-सम्पुट कहा जाता है। इसमें प्रत्येक कक्ष के विवाद पर उसके लिए निश्चित समय बीत जाने पर कुठार गिरता है। इसमें प्रस्ताव या विधेयक के विभिन्न भागों के लिये उपलब्ध समय का अधिक सन्तुलित विभाजन सम्भव रहता है। कुठार की तुलना में कक्ष-सम्पुट की यही विशेषता है।

३. **कंगारू सम्पुट** (Kangaroo Closure)—कंगारू आस्ट्रेलिया का सुप्रसिद्ध पशु है जिसके अगले पैर छोटे और पिछले लंबे होते हैं और जो छलाँग मार-मार कर चलता है। जब समय की बचत के लिये यह निश्चय कर लिया जाता है कि विधेयक की सभी नहीं, किन्तु कुछ चुनी हुई महत्वपूर्ण धाराओं पर ही विवाद होगा, और शेष यों ही निर्णय के लिए रख दी जायँगी, तो विधेयक सम्बन्धी विचार की प्रगति कंगारू की चाल की भाँति हो जाती है। पहली धारा पर विवाद हुआ, फिर

आठ धारायें बिना विवाद के यों ही उचक गये, फिर तीन धाराओं पर पुनः विवादार्थ ठहरे और बाद की दस धाराओं को पुनः बिना विवाद ही लाँघ गये—यह प्रक्रिया कंगारू की चाल की तरह है। विवाद के इस प्रकार के नियन्त्रण को कंगारू-सम्पुट कहते हैं।

लार्ड सभा में सम्पुटों का प्रयोग नहीं होता। वहाँ विवाद पूर्णतया उन्मुक्त रूप से होता है।

मतप्रदान और निर्णय—जब किसी प्रस्ताव पर पर्याप्त विवाद हो चुकता है तो उस पर सदस्यों का निर्णयार्थ मत लिया जाता है। साधारणतया मतदान की रीति यह है कि प्रस्ताव के जो पक्ष में होते हैं वे स्पीकर के प्रश्न करने पर 'हाँ' (aye) और विपक्ष वाले 'ना' (no) कह कर चिल्लाते हैं। यदि हाँ का शब्द अधिक ज़ोर से आया तो प्रस्ताव स्वीकृत समझा जाता है और या 'ना' की ध्वनि प्रबलतर हुई तो वह अस्वीकृत समझा जाता है। पर कोई भी सदस्य इस प्रकार के निर्णय को अग्राह्य करके 'विभाजन' (Division) की माँग कर सकता है। विभाजन का अर्थ यह है कि प्रस्ताव के पक्ष और विपक्ष वाले सदस्य भवन के दो पृथक् कक्षों में जाकर खड़े हो जाते हैं और वहाँ स्पीकर द्वारा नियुक्त गणक (teller) उनकी अलग-अलग गिनती कर लेते हैं और इस प्रकार यह स्पष्ट निर्णय हो जाता है कि बहुमत किस ओर है। यदि किसी प्रस्ताव के पक्ष और विपक्ष में बराबर मत आयें तो स्पीकर को एक अतिरिक्त या निर्णायक मत (Casting vote) देकर निर्णय करने का अधिकार है। पर स्पीकर के निर्णयात्मक मत का प्रयोग उसकी स्वतंत्र इच्छा के अनुसार न होकर कुछ निश्चित नियमों के अनुसार किया जाता है।

विधि-निर्माण की प्रक्रिया

विधेयकों के विभिन्न प्रकार—विधि या कानून के पूर्वरूप या प्रस्तावित रूप को विधेयक कहते हैं। पार्लमेंट द्वारा पारित हो जाने पर विधेयक (Bill) विधि या कानून बन जाता है। अब हमें यह देखना है कि विधेयकों के पार्लमेंट द्वारा पारित होने की रीति क्या है। विधेयकों के विभिन्न प्रकार होते हैं और प्रत्येक प्रकार के पारित होने की रीति भिन्न होती है।

विधेयकों के मुख्यतः दो प्रकार होते हैं अर्थात् (१) सार्वजनिक विधेयक (Public Bills) और (२) व्यक्तिगत विधेयक (Private Bills)। सार्वजनिक विधेयक का सर्व-साधारण से सम्बन्ध होता है अर्थात् वे सभी पर लागू होते हैं, पर व्यक्तिगत विधेयक केवल किसी विशेष व्यक्ति या स्थानिक क्षेत्र पर लागू होता है। शिक्षा पद्धति या करों में कोई संशोधन या परिवर्तन करने वाला विधेयक सार्वजनिक विधेयक का उदाहरण है, पर कोई विधेयक जो किसी स्थानीय संस्था को कोई विशेष

अधिकार देता है या किसी विशेष व्यक्ति की स्थिति या अधिकारों में परिवर्तन करता है, व्यक्तिगत विधेयक का उदाहरण है।

सार्वजनिक विधेयक भी दो प्रकार के होते हैं—सरकारी और गैर सरकारी। सरकारी विधेयक वे होते हैं जिन्हें मंत्रिमण्डल के सदस्य सरकार के नाम में प्रस्तुत करते हैं। विधेयकों में से अधिकांश सरकारी होते हैं। गैरसरकारी विधेयक वह हैं जो मन्त्रियों के अतिरिक्त पार्लमेंट के किसी अन्य सदस्य द्वारा प्रस्तुत किया जाय। अँग्रेजी में सरकारी विधेयकों को 'गवर्नमेंट बिल' (Government Bill) और गैर सरकारी विधेयकों को 'प्राइवेट मेम्बर्स बिल' (Private Members' Bill) कहते हैं। पर गैरसरकारी विधेयक भी सार्वजनिक ही होते हैं, व्यक्तिगत नहीं। अतः अँग्रेजी नामों (Private members' bill and Private Bill) में कुछ समान शब्दों के होने के कारण इनमें गड़बड़ी न करनी चाहिये। ये दोनों एक दम विभिन्न प्रकार के होते हैं।

सरकारी विधेयकों के हम पुनः दो भेद कर सकते हैं अर्थात् (१) आर्थिक या वित्तीय विधेयक जिनका सम्बन्ध सरकारी आय, व्यय, करों आदि से होता है और (२) साधारण विधेयक, अर्थात् जिनका वित्त या अर्थ से सम्बन्ध नहीं होता। वित्तीय विधेयक सरकारी तौर से ही प्रस्तुत हो सकते हैं। कोई गैरसरकारी सदस्य उन्हें प्रस्तुत नहीं कर सकता।

विधेयकों के विभिन्न प्रकारों और उनके पारस्परिक सम्बन्धों को नीचे दिये हुए वृक्ष की सहायता से सरलता से हृदयङ्गम किया जा सकता है :—

विधेयक (Bill)

- सार्वजनिक (Public Bills) (सभी से जिनका सम्बन्ध हो)
  - सरकारी विधेयक (Government Bills) (मंत्रियों द्वारा प्रस्तुत)
    - अर्थ या वित्तीय विधेयक (Money Bills) (जिनका आय-व्यय कर आदि से सम्बन्ध हो)
    - साधारण विधेयक (Ordinary Bills) (जिनका अर्थ या वित्तीय विषयों से सम्बन्ध न हो)
  - गैरसरकारी विधेयक (Private Members' Bills) (मंत्रियों के अतिरिक्त पार्लमेंट के अन्य सदस्यों द्वारा प्रस्तुत—ये सभी साधारण विधेयक होते हैं)
- व्यक्तिगत विधेयक (Private Bills) (जिनका सम्बन्ध विशेष व्यक्ति, संस्था या स्थान से हो)

सार्वजनिक (सरकारी और साधारण) विधेयक के पारित होने की रीति

विधेयकों की उत्पत्ति—नये विधेयकों की सृष्टि अनेक कारणों से होती है। यदि कोई मंत्री किसी नई नीति का अनुसरण करना चाहता है तो उसके लिए कानून में आवश्यक परिवर्तन करने के लिये नये विधेयक की जरूरत हो सकती है। वर्तमान कानूनों की कठिनाइयाँ या दोष उन्हें कार्यान्वित करने के समय स्पष्ट होते हैं और उन्हें दूर करने के लिये सम्बद्ध विभागों के कर्मचारी अपने-अपने मंत्रियों से नये-नये विधेयकों को प्रस्तुत करने का अनुरोध करते रहते हैं।

जब कोई नया विधेयक प्रस्तुत करना होता है, तो पहिले जिन मुख्य बातों का उसमें समावेश करना होता है उनका एक संक्षिप्त विवरण एक स्मृतिपत्र (Memorandum) के रूप में तैयार कर लिया जाता है। विभाग का मंत्री उस पर मंत्रिमंडल की सम्मति प्राप्त कर लेता है। इसके बाद वह स्मरण-पत्र विधेयकों की पाण्डुलिपि तैयार करने वाले विशेषज्ञों (draftsman) के पास भेज दिया जाता है। राजकोष विभाग (Treasury Department) के अन्तर्गत पार्लमेण्ट के वकील (Parliamentary Counsal) का एक दफ्तर है जिसमें विधेयकों का आलेख्य (draft)बनाने में कुशल कई विशेषज्ञ होते हैं। ये अनुभवी वकील होते हैं। इनका काम है स्मरण-पत्र में दी हुई मोटी बातों के आधार पर विधेयक को तैयार करना। यह एक विशेष कला है। कानून की भाषा साधारण भाषा से भिन्न और विचित्र प्रकार की होती है। विधेयक के अभिप्रायों को उस भाषा में इस तरह ढालना पड़ता है कि कोई भाषा सम्बन्धी अस्पष्टता या सन्देह न रह जाय। विधेयक का पूर्व-रूप जब इस प्रकार तैयार हो चुकता है तो सम्बद्ध विभाग के मंत्री के पास भेज दिया जाता है। इसके बाद मन्त्रिमण्डल उस पर पुनः विचार करके उसे पार्लमेण्ट में प्रस्तुत करने का निर्णय करता है।

विधेयकों के पारित होने की प्रक्रिया के पाँच सोपान—किसी भी विधेयक के पारित होने के लिये आवश्यक है कि पार्लमेण्ट के प्रत्येक भवन में उसके तीन वाचन (Three readings) हों। इन्हें क्रमशः प्रथम, द्वितीय और तृतीय वाचन (First, second and third readings) कहा जाता है, परन्तु द्वितीय और तृतीय वाचन के बीच में दो और कड़ियाँ हैं अर्थात् समिति प्रक्रम (Committee Stage) और विवरण प्रक्रम (Report Stage) । इस प्रकार पार्लमेण्ट के किसी भवन में भी पारित होने के लिये प्रत्येक विधेयक को पाँच सोपानों या प्रक्रमों में से होकर जाना पड़ता है अर्थात् (१) प्रथम वाचन, (२) द्वितीय वाचन, (३) समिति प्रक्रम, (४) विवरण प्रक्रम और (५) तृतीय वाचन। नीचे क्रमशः इसका विवरण दिया जाता है।

१. प्रथम वाचन—जिस दिन विधेयक प्रस्तुत होना होता है, उस दिन निश्चित भवन के कार्यक्रम में उसका निर्देश होता है। १६०२ तक कोई विधेयक प्रस्तुत करने के पहले सभा की अनुमति लेनी आवश्यक होती थी। अनुमति साधारणतया मिल जाती थी, पर कभी-कभी इसका विरोध होकर लंबा वाद-विवाद होता था। आजकल अनुमति लेना (to obtain the leave of the house) आवश्यक नहीं।। कार्यक्रम में विधेयक के प्रस्तुत करने की सूचना मात्र पर्याप्त है। निश्चित समय पर स्पीकर के आदेश से कामन्स सभा का क्लर्क प्रस्तुत विधेयक का शीर्षक मात्र पढ़ देता है और इतने ही से प्रथम वाचन समाप्त हो जाता है। यदि विधेयक महत्त्वपूर्ण हुआ तो उसका प्रस्ताव एक संक्षिप्त भाषण में उसकी रूप-रेखा का सारांश दे देता है और विरोधी पक्ष भी एक संक्षिप्त भाषण में अपना विरोध प्रकट कर सकता है। प्रस्तावक चाहे तो सभा की अनुमति भी माँग सकता है। उस दशा में वह लंबा भाषण भी दे सकता है और तब पर्याप्त वाद-विवाद भी हो सकता है। पर आजकल यदा-कदा ही यह सब होता है। साधारणतया शीर्षक मात्र पढ़ कर संक्षिप्त पद्धति से ही काम चला लिया जाता है।

२. द्वितीय वाचन—प्रथम वाचन के कुछ दिनों बाद विधेयक पुनः सभा के कार्यक्रम में द्वितीय वाचन के लिये आता है। द्वितीय वाचन में विधेयक के मोटे-मोटे सिद्धान्तों पर बहस होती है। इस सोपान पर विस्तार की बातों में जाना या संशोधन उपस्थित करना आदि नियम-विरुद्ध है। द्वितीय वाचन का अभिप्राय सभा को यह निर्णय करने का अवसर देना है कि इस प्रकार के विधेयक की उसे आवश्यकता है या नहीं। विधेयक के समर्थन उसके मूल-भूत सिद्धान्तों को समझाते तथा उनकी उपयोगिता पर प्रकाश डालते हैं और विरोधी उन्हें अनावश्यक अथवा दोषपूर्ण सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं। अन्त में उस पर सभा का निर्णय लिया जाता है। विरोधी पक्ष या तो यह संशोधन उपस्थित करता है कि द्वितीय वाचन किया ही न जाय, अथवा यह प्रस्ताव करता है कि विधेयक 'आज से छः महीने बाद इसी दिन द्वितीय वाचन के लिये लाया जाय। (That this bill be read a second time this day six months) छः महीने बाद सभा का सत्र चालू न रहने के कारण, इस प्रकार के प्रस्ताव का अर्थ भी द्वितीय वाचन देने से इनकार करना ही है।

३. समिति प्रक्रम—(The Committee stage) पहले बतलाया जा चुका है कि द्वितीय वाचन के बाद विधेयक साधारणतया किसी स्थायी समिति या कुछ विशेष दशाओं में समस्त सभा की समिति अथवा किसी विशिष्ट समिति (Select Committee) के सिपुर्द कर दिया जाता है। समिति उस पर विस्तारपूर्वक विचार करके उसमें आवश्यक संशोधन-परिवर्तन का प्रस्ताव कर देती है और फिर

विधेयक इन संशोधनों के विवरण (reports) के साथ सभा के पास पुनः वापस आता है।

४. विवरण प्रक्रम—विवरण प्रक्रम (report stage) में विधेयक की प्रत्येक धारा पर पृथक्-पृथक् विचार होता है। इस प्रक्रम में कोई सदस्य विचाराधीन धारा में किसी भी संशोधन का प्रस्ताव कर सकता है। प्रत्येक संशोधन पर विवाद व निर्णय किया जाता है। जो संशोधन स्वीकृत होते हैं उनके अनुसार धारा में आवश्यक परिवतन कर दिये जाते हैं। सब संशोधनों पर निर्णय हो चुकने के बाद, उक्त धारा अब जिस अन्तिम रूप में है, उस सभा का मत लिया जाता है और अनुकूल मत होने पर वह पारित समझी जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक धारा और उसके प्रस्तावित संशोधनों पर विवाद तथा निर्णय होता जाता है जब तक कि सब धारायें समाप्त न हो जायँ। फिर विवरण प्रक्रम समाप्त हो जाता है।

५. तृतीय वाचन—अब विधेयक अपने अन्तिम संशोधित रूप में सभा के सामने तृतीय वाचन के लिये आता है। तृतीय वाचन में कोई महत्वपूर्ण संशोधन नहीं किये जाते। यदि कोई भाषा सम्बन्धी त्रुटि व अस्पष्टता हुई तो उसे दूर करने के लिये आवश्यक शब्द-परिवर्तन-मात्र किया जाता है। विरोधी पक्ष इस सोपान पर भी विधेयक को अस्वीकृत करने के लिये तर्क उपस्थित कर सकता है और यदि इनके परिणामस्वरूप तृतीय वाचन होने देना अस्वीकृत कर दिया जाय तो पहले का सब किया कराया मटियामेट हो जाता है और विधेयक अस्वीकृत समझा जाता है। पर ऐसा कदाचित् ही कभी होता है, कि विधेयक तृतीय वाचन में अस्वीकृत हो। यदि अस्वीकृत होना होता है, तो वह द्वितीय वाचन ही में हो जाता है।

द्वितीय सभा में विधेयक—एक भवन में तीनों वाचनों में पारित हो जाने पर विधेयक दूसरे भवन या सभा में भेज दिया जाता है, अर्थात् यदि वह कामन्स सभा में प्रारम्भ हुआ तो लार्ड सभा में भेज दिया जाता है, अन्यथा इसका उल्टा होता है। अधिकांश महत्वपूर्ण विधेयक पहिले कामन्स सभा ही में प्रस्तुत होते हैं और वहाँ पारित होने पर फिर लार्ड सभा में जाते हैं। दूसरी सभा में भी विधेयक के पूर्वोक्त रीति से ही (कुछ छोटे-मोटे अंतरों के साथ) तीन वाचन होते हैं और वहाँ भी पारित हो जाने पर वह सम्राट् की स्वीकृत के लिये उसके पास भेज दिया जाता है। लार्ड सभा में तृतीय वाचन के अवसर पर भी संशोधन उपस्थित किये जा सकते हैं।

पर ऐसा भी बहुधा हो जाता है कि जिस रूप में विधेयक कामन्स सभा में पारित हुआ है, उसमें वह लार्ड सभा में पारित न हो और दोनों सभाओं में मतभेद उत्पन्न हो जाय। ऐसी दशा में विधेयक पुनः उसी भवन में लौट आता है जहाँ वह प्रारम्भ हुआ था। उक्त सभा दूसरी सभा के मतभेदों पर विचार करती है और यदि उसने

दूसरी सभा के दृष्टिकोण को मान लिया तो विधेयक में तदनुसार आवश्यक परिवर्तन कर देती है और वह दोनों सभाओं द्वारा पारित समझ लिया जाता है, पर यदि मत-भेद बना ही रहा तो केवल दो उपाय हैं। या तो दोनों सभाओं की सम्मति के अभाव में विधेयक को यों ही छोड़ दिया जाय और उसका अन्त हो जाय, या यदि मतभेद लार्ड सभा के कारण उत्पन्न हुआ है तो पार्लमेण्ट ऐक्ट, १९११ और १९४९ की प्रक्रिया के अनुसार कामन्स सभा उसके विरोध का उल्लंघन (Override) करे। यह स्मरण रखने की बात है कि यदि विधेयक पहले लार्ड सभा द्वारा पारित हुआ है और कामन्स सभा उससे असहमत है, तो फिर उन विधेयकों को छोड़ ही देना पड़ता है। कामन्स सभा लार्ड सभा के विरोध को अग्राह्य कर सकती है, पर लार्ड सभा कामन्स सभा के वरोध का उल्लंघन नहीं कर सकसी।

सम्राट् द्वारा स्वीकृति (Royal Assent) —दोनों सभा में एक ही रूप में पारित होने के बाद विधेयक सम्राट् की स्वीकृति के लिए उसके पास भेजा जाता है और यह स्वीकृति मिल जाने पर कानून बन जाता है। जेसा कि पहले ही बतलाया जा चुका है, आजकल सम्राट् अपनी स्वीकृत देने से कभी इनकार नहीं करता।

गैरसरकारी विधेयक (Private Memberr's Bills)

ऊपर बतलाया जा चुका है कि गैरसरकारी विधेयक भी सार्वजनिक विधेयक ही होते है। अंतर केवल इतना है वे कि मंत्रियों द्वारा प्रस्तुत न किये जाकर किसी साधारण सदस्य द्वारा प्रस्तावित होते हैं। कामन्स सभा का अधिकांश समय सरकारी कार्य ही में लग जाता है, अतः गैर सरकारी विधेयकों को प्रति सप्ताह केवल एक दिन-शुक्रवार—का समय मिलता है। सत्र में उपलब्ध शुक्रवारों की संख्या २० तक सीमित है। उनमें से एक शुक्रवार विधेयकों के लिये, और उसके बाद वाला प्रस्तावों आदि के लिये सुरक्षित रहता है। इस प्रकार गैर सरकारी विधेयकों के लिये सत्र में १० से अधिक शुक्रवार नहीं मिल पाते। यह संख्या इतनी नहीं है कि उन सभी गैरसरकारी सदस्यों को जो अपने-अपने विधेयक प्रस्तुत करना चाहते हैं, अवसर मिल सके। अतः सत्र के प्रारम्भ में विधेयक प्रस्तुत करने वाले सदस्यों के नाम की चिट्ठी (Lot) डाल कर निर्णय किया जाता है। जिसका नाम पहले निकला उसके विधेयक या प्रस्ताव को पहला शुक्रवार मिलेगा, दूसरे को दूसरा और इसी प्रकार और भी। शुक्र की संख्या समाप्त होने के बाद जो नाम रह जाते हैं; उनके विधेयकों को मौका नहीं मिलता। अतः कुछ भाग्यशाली गैरसरकारी सदस्य ही विधेयक प्रस्तुत करने का अवसर पाते हैं।

गैरसरकारी विधेयक यदि प्रस्तुत हो भी गये, तो उनका भविष्य सरकार के

रूप पर निर्भर करता है। पारित होने के लिये यह आवश्यक है कि गैरसरकारी विधेयक को या तो मन्त्रिमण्डल की सहानुभूति प्राप्त हो, या कम से कम उसके विरोध का सामना करना पड़े। यदि मन्त्रिमण्डल ने विरोध किया तो गैरसरकारी विधेयक द्वितीय वाचन प्राप्त नहीं कर पाता। सरकारी बहुमत द्वारा उसे अस्वीकृत करा दिया जाता है। सरकारी विरोध होते हुए भी किसी विधेयक के पारित हो जाने का अर्थ है सरकार में अविश्वास-प्रदर्शन। वह स्पष्ट ही है कि ऐसा होना लगभग असंभव है।

इन दो विशेष बातों के अतिरिक्त, गैरसरकारी विधेयकों के पारित होने की प्रक्रिया बिल्कुल वही है जो सरकारी विधेयकों की। पूर्वोक्त-से ही उनके भी तीन वाचन होते हैं, और फिर दूसरी सभा द्वारा भी नियमानुसार पारित हो जाने पर वे सम्राट् की स्वीकृति पाकर कानून बन जाते हैं।

व्यक्तिगत विधेयक (Private Bills)

व्यक्तिगत विधेयकों का अर्थ ऊपर समझाया जा चुका है। वे सर्वसाधारण पर लागू न होकर किसी व्यक्ति या संस्था पर लागू होते हैं। इसी कारण उन्हें सार्वजनिक न कहकर 'व्यक्तिगत' कहा जाता है। इसके प्रस्तुत और पारित होने की प्रक्रिया सार्वजनिक विधेयकों की प्रक्रिया से नितान्त भिन्न है।

व्यक्तिगत विधेयक का श्रीगणेश पार्लमेंट में न होकर उसके बाहर होता है। जिस व्यक्ति या संस्था को अपने लिए किसी विशेष कानून की जरूरत होती है वह पार्लमेंट को इस आशय का एक आवेदन-पत्र देता है जिसके साथ प्रस्तावित विधेयक की एक प्रति नत्थी रहती है। आवेदनकर्ता के लिए यह भी आवश्यक है कि वह उन सभी स्वार्थों और समुदायों को जिनके हितों पर प्रस्तावित कानून का विपरीत प्रभाव पड़ेगा, लिखित सूचना दे जिससे कि वे आवश्यक समझें तो विरोध कर सकें। आवेदन पत्र और विधेयक के साथ इन सूचनाओं की प्रतियाँ व विधेयक से सम्बन्धित अन्य कागज-पत्र जैसे नक्शे, आँकड़े आदि भी होने आवश्यक हैं। यदि इन प्रारम्भिक कागज-पत्रों में कमी हुई, तो फिर आवेदन-पत्र पर विचार न होगा।

पार्लमेंट में आने पर यह आवेदन-पत्र पहले 'व्यक्तिगत विधेयकों के परीक्षक' (Examiner of Petitions for Private Bills) के पास भेजा जाता है। वह यह प्रमाणित करता है कि आवेदन-पत्र के साथ आवश्यक सूचनाओं की प्रतिलिपियाँ और अन्य आवश्यक कागज-पत्र मौजूद हैं। इसके बाद विधेयक दोनों में से किसी भी सभा में (अधिकतर लार्ड सभा में) प्रस्तुत किया जाता है। इसके बाद उसके प्रथम और द्वितीय वाचन सार्वजनिक विधेयकों की भाँति ही होते हैं। इसके बाद विधेयक 'व्यक्तिगत विधेयक समिति' (Committee on Private Bills) के पास भेजा

जाता है। यदि विधेयक का विरोध न हुआ तो वह 'निर्विरोध विधेयक समिति' (Committee on Unopposed Bills) के पास भेजा जाता है। इन दोनों प्रकारों की एक-एक समिति प्रत्येक सभा में रहती है। आवश्यकता हुई तो प्रत्येक सभा इस प्रकार की एक से अधिक समिति भी बना लेती है। इन समितियों में ऐसे सदस्य रखने का प्रयत्न किया जाता है जो अपने सामने आने वाले विधेयक में निस्पृह (Disinterested) और उसके विषय की जानकारी रखने वाले हों।

यह समितियाँ अपने सामने के विधेयकों के गुण-दोष पर न्यायालयों की भाँति विचार करती हैं। वे प्रस्तुत विधेयक के पक्ष और विपक्ष दोनों ही में गवाहियाँ लेती हैं, कागज-पत्र देखती हैं और बहस सुनती हैं। इनके सामने पक्ष और विपक्ष में बहस करने के लिए वकील भी लाये जाते हैं। ब्रिटेन में पार्लमेंट के सामने बहस करने वाले वकीलों का एक पेशा ही अलग है। व्यक्तिगत विधेयकों का विरोध करने वाले लोगों में वे लोग होते हैं जिनके हितों को उनसे हानि पहुँचने की संभावना होती है—अर्थात् कोई व्यवसाय समूह, स्थानिक संस्था या विषय से सम्बन्धित कोई विभाग। सरकारी विभागों का विरोध बहुधा विधेयक के लिए घातक सिद्ध होता है। अन्त में समिति अपना निर्णय देती है। साधारणतया पार्लमेंट इस निर्णय को ही स्वीकार कर लेती है। यदि निर्णय विरुद्ध हुआ तो विधेयक पार्लमेंट में अस्वीकृत हो जाता है, अन्यथा उसको तृतीय वाचन देकर पारित कर देते हैं और फिर वह दूसरी सभा में भी पारित होकर और सम्राट् की स्वीकृति पाकर कानून बन जाता है।

व्यक्तिगत विधेयकों की प्रक्रिया पर राजनैतिक प्रभाव यथासंभव कम ही रहता है। उनका पारित होना या न होना अधिकांश में उनकी उपादेयता (Utility) पर निर्भर रहता है। वे बहुधा 'अविवाद-ग्रस्त कार्य' (non-controversial work) की श्रेणी में आते हैं। उनके विषय में दोनों सभाओं में प्रायः मतभेद नहीं होता। समिति का अनुकूल निर्णय होने पर दोनों ही सभायें उन्हें सरलता से स्वीकार कर लेती हैं।

व्यक्तिगत विधेयकों के आवेदन-पत्र बहुधा स्थानिक संस्थाओं द्वारा अपनी अधिकार-वृद्धि के लिए प्रस्तुत किये जाते हैं। इससे लाभ यह होता है कि छोटी-बड़ी, सम्पन्न और निर्धन सभी स्थानिक संस्थाओं को एक ही कानून से नहीं बँधा रहना पड़ता। उनमें जो अधिक प्रगतिशील हैं वे व्यक्तिगत विधेयकों द्वारा नये अधिकार प्राप्त करके औरों की अपेक्षा जनता की अधिक सेवा कर सकती हैं। उन्हें यह प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती कि पार्लमेंट स्वयं ही कानून बनावे तो उन्हें अधिक अधिकार मिलें। वे स्वयं आगे बढ़कर पार्लमेंट का दरवाजा खटखटा सकती हैं और अधिक या नये अधिकारों की माँग कर सकती हैं। व्यक्तिगत विधेयकों की प्रणाली का एकमात्र दोष यही है कि उन्हें पारित कराने में बहुत समय लगता है और बहुत व्यय भी करना पड़ता है।

पार्लमेंट द्वारा अर्थ-प्रबन्ध (Parliamentary Finance)

अर्थ-प्रबन्ध पार्लमेंट के मुख्य कार्यों में से एक है। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि अर्थ-प्रबन्ध पार्लमेंट का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है। अपने अर्थ सम्बन्धी अधिकारों के द्वारा ही पार्लमेंट सम्राट् का नियन्त्रण करने में सफल हुई और आर्थिक नियंत्रण शासन पर नियन्त्रण करने का भी मुख्य साधन है। सभी सरकारी कार्यों में धन की आवश्यकता पड़ती है। धन का व्यय केवल पार्लमेंट (अथवा अब कामन्स सभा) मंजूर कर सकती है। इस मंजूरी को देने या न देने पर ही यह निर्भर है कि सरकार कौन काम कर सकेगी और कौन नहीं। इस प्रकार पार्लमेंट सरकार पर अपना अंकुश रखती है।

अर्थप्रबन्ध में मूल तत्व—पार्लमेंट द्वारा अर्थ-प्रबन्ध के चार मुख्य अङ्ग या मूल तत्व हैं अर्थात्—

(१) विभिन्न सरकारी विभागों और कार्यों के लिये आवश्यक धन मंजूर करना,

(२) सरकारी आय के साधनों, करों आदि को निश्चित करना,

(३) मंजूर रकमों के खर्च की रीति की देख-रेख और आलोचना करना; और

(४) सरकारी आय और व्यय और लेखा-परीक्षकों द्वारा उनकी परीक्षा की देख-रेख रखना।

नीचे इन कार्यों का विवरण दिया जाता है।

सरकारी अर्थ-व्यवस्था की विशेषतायें—सार्वजनिक अर्थ-प्रबन्ध में पहले व्यय पर विचार किया जाता है और फिर तदनुसार आय निश्चित की जाती है। व्यक्तिगत अर्थ-व्यवस्था में इसका उलटा होता है अर्थात् हममें से प्रत्येक आमदनी के अनुसार खर्च करता है। इस अन्तर का कारण यह है कि व्यक्ति अपनी आमदनी आवश्यकतानुसार बढ़ा नहीं सकता, अतः उसे आमदनी देखकर खर्च करना पड़ता है। खर्च आमदनी से ज्यादा हुआ तो उसे कम करना पड़ता है। परन्तु सरकार की आमदनी करों से आती है और करों को बढ़ाकर यह आमदनी आवश्यकतानुसार बढ़ाई जा सकती है। इसके विपरीत, सरकारी व्यय घटाना सरल नहीं होता। व्यय घटाने का अर्थ होता है सेना कम करना, स्कूल बन्द कर देना, स्वास्थ्य की सुविधाओं में कमी करना। यह सब करने से देश की सुरक्षा व उन्नति खतरे में पड़ जा सकती है और इन विभागों में काम करने वाले लोग बेकार हो जा सकते हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि सरकारी व्यय में कमी हो ही नहीं सकती, पर अभिप्राय यह है कि उसमें कमी की बहुत कम गुञ्जायश रहती है और मनमानी कमी नहीं की जा सकती। इसीलिए सरकारी अर्थ व्यवस्था में व्यय का अन्दाजा पहले लगाया जाता है और तदनुसार ही आय के साधनों में कमी-बेशी की जाती है।

सरकारी आय-व्यय एक समय में एक वर्ष के लिये ही निश्चित किये जाते

हैं। ब्रिटेन में आर्थिक वर्ष (Financial Year) पहली अप्रैल को प्रारम्भ होकर आगामी ३१ मार्च को समाप्त होता है और पार्लमेंट प्रत्येक वर्ष इतने ही समय के लिये आय-व्यय की व्यवस्था करती है। इसका यह अर्थ नहीं है कि आय-व्यय की प्रत्येक मद प्रति वर्ष नये सिरे से मंजूर की जाती है। कुछ ऐसे व्यय हैं जो प्रति वर्ष लगभग एक से ही रहते हैं और उन पर वार्षिक मंजूरी की आवश्यकता नहीं, और इसी प्रकार कुछ कर या आय के अन्य साधन भी अपेक्षाकृत स्थायी होते हैं। पर आय और व्यय के अधिकांश मदों की पार्लमेंट द्वारा वार्षिक मंजूरी आवश्यक है। सरकारी आय-व्यय के वार्षिक लेखे या अन्दाजे को आय-व्यय-पत्रक अथवा बजट (budget) कहते हैं और इसे प्रति वर्ष पारित करना पड़ता है।

आय-व्यय के अनुमान (Estimate) को तैयार करने की रीति— आगामी आर्थिक वर्ष के आय-व्यय-पत्रक की तैयारी वर्ष प्रारम्भ होने के ६-७ महीने पहिले ही प्रारंभ हो जाती है। मान लो सन् १९५४-५५ का आय-व्यय-पत्रक तैयार करना है, तो १९५३ के अक्टूबर मास में राजकोष विभाग (The Treasury) अन्य सभी विभागों के पास गश्ती चिट्ठी भेजकर उनसे अपने-अपने विभागों के आगामी वर्ष के आय और व्यय के अन्दाजों (Estimates) को तैयार करने को कहता है। वास्तव में इस विषय का कार्य अक्टूबर से पहले ही प्रारम्भ हो जाता है। जिन विभागों को कोई नई योजना चालू करनी होती है अथवा नया या अधिक व्यय करना होता है ये राजकोष विभाग से इस विषय में सितम्बर में या और पहले ही बातचीत प्रारम्भ कर देते हैं। इस विषय के विद्यार्थी को ब्रिटिश अर्थ-व्यवस्था की एक मूलभूत बात भलीभाँति हृदयङ्गम कर लेनी चाहिये कि ब्रिटेन का राजकोष विभाग वहाँ की अर्थ-व्यवस्था का संरक्षक है। प्रत्येक व्यय के लिए धन-संग्रह और प्रस्तुत करना उसी का कार्य है और इसीलिए कोई भी व्यय उसकी सम्मति के बिना आय-व्यय-पत्रक में सम्मिलित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक विभाग को प्रत्येक नये या गत वर्षों की अपेक्षा किसी मद पर अधिक खर्च के लिए राजकोष-विभाग की पूर्व-सम्मति लेनी आवश्यक है। यदि वह सम्मति न मिली, तो विभाग को या तो उस नये व्यय का विचार छोड़ देना पड़ता है, अथवा फिर उसे मन्त्रिमण्डल के सम्मुख निर्णयार्थ रखना पड़ता है। केवल मन्त्रिमण्डल ही राजकोष विभाग के विरोध का अतिक्रमण कर सकता है और कोई नहीं। मन्त्रिमण्डल भी बहुधा राजकोष-विभाग के निर्णय के विरुद्ध जाना नहीं चाहता।

अस्तु, राजकोष विभाग की गश्ती चिट्ठी मिलने के बाद प्रत्येक विभाग अपने विभाग के आगामी वर्ष के आय-व्यय का विस्तृत अन्दाजा तैयार करता है। यह काम गत दो-तीन वर्षों के आय-व्यय के आँकड़ों के आधार पर तैयार किया जाता है।

यदि किसी मद में विशेष कमी-बेशी हो, तो उसके कारण बतला कर स्पष्टीकरण करना पड़ता है। नये व्यय के पक्ष में सन्तोषजनक तर्क देने पड़ते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक आय-व्यय के अन्दाजे तैयार हो कर १५ जनवरी तक राजकोष विभाग के पास पहुँच जाते हैं। तब वहाँ उनकी जाँच प्रारंभ होती है। अधिक अथवा अनावश्यक व्यय काट दिया जाता है। इस काम के करने में राजकोष विभाग और अन्य सम्बन्धित विभागों के बीच निरंतर परामर्श चलता रहता है। इसके बाद खर्च के सभी अन्दाजे एक साथ जोड़ दिये जाते हैं, और आय के अन्दाजे अलग। अब आय-व्यय के सन्तुलन (Balancing the Budget) की समस्या सामने आती है। यदि आय के अन्दाजों का योग व्यय के अन्दाजों के योग से अधिक या उसके बराबर हुआ तब तो ठीक है, पर यदि कम हुआ तो नये या अधिक कर लगाने की बात सोची जाती है। यह सब हो जाने पर प्रस्तावित आय-व्यय-पत्र को अर्थ मंत्री (Chancellor of Exchequer) मन्त्रिमंडल के सम्मुख उसकी स्वीकृति के लिए रखता है। मन्त्रिमंडल द्वारा स्वीकृति हो जाने पर फिर यह आय-व्यय-पत्रक कामन्स सभा में प्रस्तुत करने की अवस्था में पहुँच जाता है।

यह बात भलीभाँति समझ लेनी चाहिये कि पार्लमेंट ऐक्ट १९११ के पारित हो जाने के बाद से अर्थ-व्यवस्था अब पूर्णतः कामन्स सभा के अधिकार में आ गई है। अर्थ विधेयक (जिसमें आय-व्यय-पत्रक प्रधान है) अब भी लार्ड सभा के पास भेजा जाता है, पर इसके एक मास बाद वह सम्राट् की स्वीकृति पा कर कानून बन जाता है, चाहे लार्ड सभा उसे स्वीकार करे या नहीं।

आय-व्यय-पत्रक पर कामन्स सभा द्वारा विचार—जनवरी के अन्तिम या फरवरी के प्रथम सप्ताह में आय-व्यय-पत्रक का व्यय वाला भाग पहिले कामन्स सभा के सामने रक्खा जाता है। वास्तव में व्यय के अन्दाजों पर समस्त सभा की समिति (Committee of the Whole) विचार करती है और इस कार्य को करने की दशा में उसे एक विशेष नाम दिया गया है अर्थात् 'आदान समिति' (Committee of Supply)। यह स्मरण रखना चाहिये कि आदान समिति कामन्स सभा ही है, केवल अध्यक्ष के आसन पर स्पीकर के स्थान में एक दूसरा व्यक्ति—समिति का अध्यक्ष—होता है और कार्यवाही के नियमों में थोड़ी ढील दे दी जाती है। अतः कामन्स सभा और समस्त सभा की आदान समिति के बीच का अन्तर औपचारिक (formal) मात्र है।

संचित निधि-विषयक व्यय (Consolidated Fund Charges)—समस्त सरकारी व्यय प्रत्येक वर्ष नये सिरे से नहीं निश्चित किया जाता। व्यय की बहुत-सी मदें ऐसी हैं जो एक बार निश्चित हो जाने पर प्रत्येक वर्ष बिना किसी हेर-

फेर के वैसी ही बनी रहती हैं। इसका यह अर्थ न समझना चाहिये कि कामन्स सभा इनमें परिवर्तन नहीं कर सकती है। इसका अभिप्राय इतना ही है कि इनमें परिवर्तन वाञ्छनीय होने के कारण अथवा इनमें परिवर्तन की गुंजायश न होने के कारण इन व्ययों पर सभा का मत नहीं लिया जाता। वे यों ही स्वीकृत समझे जाते हैं। इन व्ययों को ब्रिटेन में सञ्चितनिधि विषयक व्यय (Consolidated Fund Charges) कहा जाता है। ऐसे व्ययों के उदाहरण हैं सम्राट् को दी जाने वाली वार्षिक वृत्ति, न्यायाधीशों के वेतन और अवकाश वृत्ति, राष्ट्रीय ऋण का ब्याज, पार्लमेंट के चुनाव के सम्बन्ध का सरकारी व्यय इत्यादि। यह अनुमान किया जाता है कि सञ्चित निधि विषयक ये व्यय समस्त सरकारी व्यय के एक-चौथाई के लगभग हो जाते हैं। अतः व्यय के अन्दाजों के तीन-चौथाई ही पर प्रति वर्ष निर्णय करना पड़ता है।

व्यय के अन्दाजों की स्वीकृति—प्रत्येक विभाग के व्यक्ति के अन्दाजे पृथक्-पृथक् उनके मन्त्रियों या उपमन्त्रियों द्वारा उपस्थित किये जाते हैं। प्रत्येक पर वाद-विवाद होता है। इस विवाद की विशेषता यह है कि यह आर्थिक बातों को लेकर नहीं होता, किन्तु इसमें विभाग के विरुद्ध शिकायतों या असन्तोष का प्रदर्शन मात्र किया जाता है। मान लो कि शिक्षा विभाग के व्यय का अन्दाजा प्रस्तुत किया गया है। अब वाद-विवाद में विपक्ष का कोई सदस्य प्रस्ताव करेगा कि विभाग के प्रस्तावित व्यय में १०० पौंड की कटौती कर दी जाय और उसके समर्थन में वह जो भाषण देगा उसमें बतलायेगा कि शिक्षा विभाग ने यह काम ठीक नहीं किया, वह काम ठीक नहीं हो रहा है इत्यादि। वास्तव में उसका उद्देश्य यह नहीं होता कि विभाग के व्यय में १०० पौंड की किफायत की जाय। कटौती का प्रस्ताव तो विभाग के विरुद्ध असन्तोष प्रदर्शन (airing of grievances) का बहाना मात्र होता है। अन्त में विभाग-मंत्री उत्तर देता है और या तो असन्तोष के कारणों की आलोचना करके उन्हें निस्सार बतलाता है या आवश्यक सुधार या परिवर्तन करने का आश्वासन देता है। इसके बाद कटौती का प्रस्ताव साधारणतया वापस ले लिया जाता है और आदान-समिति विभाग के प्रस्तुत व्यय को मंजूर कर लेती है। कटौती का प्रस्ताव स्वीकृत हो जाय तो वह मंत्रिमंडल में अविश्वास का द्योतक होता है। अतः सरकार किसी ऐसे प्रस्ताव को स्वीकृत नहीं होने देती। प्रत्येक विभाग के अन्दाजे पर इसी प्रकार कटौती के एक या अधिक प्रस्ताव रख-रख कर बहस होती है और अन्त में आदान-समिति उन्हें स्वीकार करती जाती है। प्रत्येक विभाग का स्वीकृत व्यय एक अलग ही मत (vote) माना जाता है।

सभी विभागों से व्यय के अन्दाजों पर इस प्रकार के वाद-विवाद और निर्णय के लिये केवल २६ दिन दिये जाते हैं। ये दिन लगातार न दिये जाकर ४-५ महीनों

में बिखरे रहते हैं, अर्थात् आय-व्यय-पत्रक पर फरवरी से जुलाई तक बहस चलती रहती है, पर बीच-बीच में अन्य काम होते रहते हैं और इस अवधि में व्यय अन्दाजों के लिए कुल २६ दिन दिये जाते हैं। यदि अवधि में बहस समाप्त न हो तो सम्पुटी (Closure) का प्रयोग होता है।

यह एक स्मरण रखने की बात है कि कामन्स सभा के साधारण सदस्य प्रस्तुत व्ययों में कटौती या कमी का ही प्रस्ताव कर सकते हैं। उसमें वृद्धि का प्रस्ताव करना या खर्च की नई मदों को जोड़ना उनके अधिकार के बाहर की बात है। ब्रिटेन की अर्थ-व्यवस्था का यह मूल-भूत नियम है कि व्यय करने की अथवा कर लगाने या बढ़ाने की माँग सम्राट् के नाम में मंत्रियों द्वारा ही की जा सकती है, साधारण सदस्यों द्वारा कभी नहीं। साधारण सदस्य खर्च में किफायत, कटौती या कमी करने का अनुरोध कर सकते हैं, पर बढ़ती का नहीं। इसका कारण यह है कि शासन चलाना सरकार का काम है। वह व्यय के अन्दाजों के द्वारा जितना धन आवश्यक समझती है, माँगती है। हो सकता है कि वह आवश्यकता से अधिक माँग रही हो और इसी-लिये साधारण सदस्यों को कमी का प्रस्ताव करने का अधिकार है। पर जब सरकार स्वयं कहती है कि हम इतने व्यय में काम चला लेंगे, तो सभा के सदस्यों का यह कहना कि "नहीं जितना तुम कहते हो उससे अधिक व्यय लगेगा" ठीक उसी तरह की बात होगी जैसे—अपने नौकर के यह कहने पर कि अमुक वस्तु बाजार से रुपये सेर में ला दूँगा, कोई यह कहे कि नहीं-नहीं तुम वह वस्तु सवा रुपये सेर लाओ। कोई बुद्धिमान मालिक ऐसा कभी नहीं कहेगा। यदि कहेगा तो यही कि हो सके तो रुपये सेर से कम ही में लाना। साधारण व्यवहार के इसी नियम के अनुसार कामन्स सभा के सदस्यों को व्यय में वृद्धि का प्रस्ताव करने का अधिकार नहीं है।

व्यय की अग्रिम स्वीकृति—हम बतला चुके हैं कि व्यय के अन्दाजों की स्वीकृति देने का कार्य यद्यपि २६ दिनों ही में होता है पर वे २६ दिन फरवरी से लेकर जुलाई तक की अवधि में फैले रहते हैं। इसका यह अर्थ है कि व्यय के सभी मदों की मंजूरी कहीं जुलाई के अन्त तक हो पाती है। पर नया आर्थिक वर्ष पहली अप्रैल से ही प्रारम्भ हो जाता है और व्यय करना तभी से आवश्यक हो जाता है। इस कारण 'आदान-समिति' पहली अप्रैल के पहिले ही सरकार के ४-५ महीने अर्थात् अप्रैल से जुलाई तक के खर्च के लिये आवश्यक रकम मंजूर कर देती है। इसे अग्रिम स्वीकृति (Vote on Account) कहते हैं। इससे व्यय के अन्दाजों की अन्तिम स्वीकृति होने के समय तक का खर्च चलता रहता है। यदि खर्च कम पड़ा तो आगे चलकर आवश्यक रकम के लिये पुनः अन्तिम स्वीकृति ली जाती है।

आय के अन्दाजों पर विचार व निर्णय—आय-व्यय-पत्रक के दूसरे

भाग में आय के अन्दाजे रहते हैं। ये भी राजकोष विभाग के निरीक्षण में विभिन्न विभागों द्वारा तैयार किये जाते हैं और इनकी जाँच राजकोष विभाग और भी बारीकी से करता है। यदि अग्रिम वर्ष की अनुमान की हुई आय व्यय से कम हुई, तो नये कर लगाने या वर्तमान करों को बढ़ाने का प्रस्ताव रक्खा जाता है।

एक निश्चित दिन ब्रिटिश अर्थ मंत्री (Chancellor of Exchequer) इन आय सम्बन्धी अन्दाजों और प्रस्तावों को कामन्स सभा, अथवा यों कहना चाहिये कि समस्त सभा की समिति के सामने उपस्थित करता है। आय पर विचार करने वाली समस्त सभा की इस समिति को 'साधन समिति' (Committee of Ways and Means) कहते हैं।

जिस दिन आय के अन्दाजे व करों के सम्बन्ध के प्रस्ताव 'साधन समिति के सामने रक्खे जाते हैं, साधारण बोल-चाल की भाषा में वह आय-व्यय-पत्रक दिवस (The Budget Day) कहलाता है और इस अवसर पर अर्थ मंत्री जो भाषण देता है वह आय-व्यय-पत्रक भाषण (Budget Speech) कहलाता है। इस दिन और भाषण—दोनों ही का बड़ा महत्त्व है और लोग, विशेषतः व्यापारी वर्ग, इनकी बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करते है। कारण यह है कि इस दिन और इस भाषण से ही लोगों को ज्ञात होता है कि आगामी आर्थिक वर्ष में उन पर क्या कर-भार रहेगा अथवा क्या छूट मिलेगी। कर सम्बन्धी प्रस्तावों को इस दिन तक बड़ी सावधानी से रक्खा जाता है और यदि वे प्रकट हो जायँ तो उसके लिये जिम्मेदार मन्त्री को पद त्याग करना पड़ता है

अर्थ मन्त्री के बजट-भाषण में देश की आर्थिक दशा का सिंहावलोकन, आय-व्यय के प्रस्तावित आँकड़े और करों में परिवर्तन या कमी-वेशी के प्रस्ताव रहते हैं। पहिले ये भाषण काफी लम्बे होते थे, पर अब इनकी छपी प्रतियाँ तैयार करा के सदस्यों में बाट दी जाती हैं और अर्थ मन्त्री अपने भाषण में संक्षिप्त रीति से केवल मुख्य-मुख्य बातों पर ही प्रकाश डालता है। आयात-निर्यात-कर, आय-कर और उत्पादन-कर की संशोधित दरों को साधन समिति तुरन्त ही अपनी अस्थायी (Provisional) स्वीकृति दे देती है और वे दूसरे ही दिन से उन्हीं दरों पर वसूल किये जाने लगते हैं।

व्यय और आय विधेयक—इस प्रकार जब व्यय और आय दोनों ही के अन्दाजे क्रमशः आदान समिति (Committee of Supply) और साधन समिति (Committee of Ways and Means) में प्रस्तावों द्वारा स्वीकृत कर कामन्स सभा के पास भेज दिये जाते हैं, तो उन्हें दो विधेयकों के रूप में सङ्गठित किया जाता है। व्यय संबन्धी प्रस्तावों वाले विधेयक को व्यय विधेयक (Appro-

priation Bill) और आय सम्बन्धी प्रस्तावों वाले विधेयक को आय अथवा राजस्व विधेयक (Finance Bill) कहते हैं। ये विधेयक कामन्स सभा में उसी प्रकार तीन वाचनों द्वारा पारित किये जाते हैं जैसे अन्य विधेयक। केवल एक अन्तर यह होता है कि ये विधेयक स्थायी समितियों के पास नहीं भेजे जाते, क्योंकि समस्त सभा की दो समितियों द्वारा इन पर पहिले ही विचार हो चुका होता है। अर्थ या वित्तीय विधेयक होने के कारण लार्ड सभा इन्हें रोक नहीं सकती। उसके पास भेजे जाने के एक महीने के बाद ये सम्राट् की स्वीकृति के लिए उनके समक्ष रक्खे जाते हैं और स्वीकृति मिल जाने पर कानून बन जाते हैं।

ब्रिटिश अर्थ-व्यवस्था के गुण-दोष—ब्रिटेन की अर्थ व्यवस्था समस्त संसार में अनुकरणीय मानी जाती है। इसमें कई गुण हैं। पहला गुण तो यह है कि इसमें आय-व्यय संबंधी प्रस्ताव एक केन्द्रीय विभाग—राज्यकोष (Treasury) द्वारा भली-भाँति जाँच करके और सन्तुलित करके तभी पार्लमेंट के समक्ष आने पाते हैं। राज्यकोष विभाग प्रत्येक व्यय की मद के औचित्य, अनौचित्य को जाँच कर तभी उन्हें आय-व्यय-पत्रक में सम्मिलित करने की अनुमति देता है और साथ ही साथ इस बात का भी ध्यान रखता है कि राज्य का व्यय उसकी आय की सीमा का अतिक्रमण न करने पावे। सारांश यह है कि अर्थ-व्यवस्था के सभी पहलू एक ही विभाग के हाथों से गुजरने के कारण एकतासूत्र से गठित रहते हैं और उनमें परस्पर असम्बद्धता का दोष नहीं उत्पन्न हो सकता। ब्रिटिश व्यवस्था का दूसरा प्रधान गुण यह है कि मंत्रिमंडल ही, जिस पर शासन-संचालन की जिम्मेदारी रहती है, आय व्यय के प्रस्ताव भी तैयार करता है। उसे सरकारी आय-व्यय का पूर्ण अनुभव रहता है। अतः उसके या उसके अधीन विभागों के विशेषज्ञों द्वारा तैयार किये आय-व्यय के अंदाजे प्रामाणिक और उपयुक्त होते हैं। न तो आवश्यकता से अधिक रकम माँगी जाती है और न कम। इसका तीसरा गुण यह है कि कामन्स सभा के सदस्य किफायत या कटौती ही के प्रस्ताव रख सकते हैं। खर्च को या प्रस्तावित खर्च को बढ़ाने का प्रस्ताव नहीं कर सकते। हम देख चुके हैं कि कटौती के प्रस्ताव भी अधिकांश वापस ले लिये जाते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि आय-व्यय-पत्रक जिस रूप में मंत्रिमंडल द्वारा प्रस्तुत किया जाता है, लगभग उसी रूप में पारित भी हो जाता है। जहाँ साधारण सदस्यों को आय-व्यय के अन्दाजों में मनमाना हस्तक्षेप करने का अधिकार होता है (जैसा फ्रांस या संयुक्त राज्य अमेरिका में), वहाँ किसी निश्चित आर्थिक नीति का अनुसरण करना कठिन हो जाता है। सदस्यों की तोड़-मरोड़ के कारण प्रारम्भ में जो कुछ नीति या सिद्धांत रहते हैं, वे सब गायब हो जाते हैं। पर ब्रिटेन में ऐसा नहीं होता। सरकार ने सोच-विचार कर जो नीति रक्खी है, वह ज्यों की त्यों स्वीकार हो

जाती है। मंत्रिमण्डल अर्थ-व्यवस्था में पूर्ण रूप से नेतृत्व करता है और उसके लिये पूरी जिम्मेदारी लेता है। सदस्यों के अनुचित हस्तक्षेप के कारण मामला आधा तीतर और आधा बटेर नहीं होने पाता।

ब्रिटिश अर्थ-व्यवस्था सर्वथा निर्दोष हो, सो बात नहीं है। इसकी कई आलोचनायें भी की गई हैं। पहली आलोचना तो यह है कि जिस रूप में आय-व्यय-पत्रक बनाया जाता है, उससे सदस्यों को देश की वास्तविक आर्थिक स्थिति का पता नहीं चल पाता। उससे केवल यही ज्ञात हो पाता है कि आगामी वर्ष में किस मद से क्या आमदनी होगी या उस पर क्या व्यय होगा। पिछले वर्षों के आय-व्यय को भी देखते हुए देश पर कितना या क्या भार है सो ज्ञात नहीं होता। दूसरे स्थान में व्यय की मदों पर विचार के लिए केवल २६ दिन का समय मिलता है जो पर्याप्त नहीं है। इसी थोड़े समय में लगभग १ अरब पौण्ड के खर्च की मदों की स्वीकृति देनी पड़ती है। परिणाम यह होता है कि लाखों पौन्ड के खर्च वाली बहुत सी मदों पर बिना किसी वाद-विवाद ही के स्वीकृति दे देनी पड़ती है। तीसरी बात यह है कि समस्त सभा की समिति आय-व्यय-पत्रक पर विचार करने के लिए बहुत बड़ी है। इतने सदस्यों की समिति में कामकाजी ढङ्ग से विचार नहीं हो पाता। चौथे, आय-व्यय-पत्रक पर जो कुछ विचार होता भी है यह आर्थिक दृष्टिकोण से न होकर राजनैतिक आधार पर होता है। सदस्य लोग अपने भाषणों में सरकार के कार्यों या नीति के प्रति अपना असन्तोष मात्र व्यक्त करते हैं, आय-व्यय की आर्थिक दृष्टि से आलोचना नहीं करते। वास्तव में कामन्स सभा का आय-व्यय पर कोई प्रभावपूर्ण नियंत्रण नहीं रहता। जो कुछ नियंत्रण रहता है वह मंत्रिमंडल, विशेषतः राजकीय विभाग का। पार्लमेंट का आर्थिक व्यवस्था पर नियंत्रण कहने भर को ही है। पाँचवीं और अन्तिम बात यह है कि राजकीय विभाग का नियंत्रण भी दोषपूर्ण बतलाया जाता है। आलोचकों का कहना है कि पूर्ण जानकारी के साथ १०० से अधिक विभागों के व्यय और प्रस्तावों पर नियंत्रण रखना राजकीय विभाग के समर्थ के बाहर की बात है। इसके कर्मचारी कोई सर्वज्ञाता देवता तो हैं नहीं। ये भी सीमित क्षमता वाले मनुष्य ही हैं। अतः होता यह है कि जब तब राजकीय विभाग हजार-पाँच सौ की आवश्यक रकमों को तो काट देता है, पर लाखों की रकमों को आँख मूँद कर मान लेता है। यह भी कहा जाता है कि राजकीय विभाग का दृष्टिकोण दकियानूसी रहता है। उसका उद्देश्य होता है खर्च की कमी करना। जब राज्य का काम केवल पुलिस और सेना रखना मात्र था तब तो यह बात ठीक थी कि खर्च बढ़ने न पावे। पर आज राज्य का रूप और उसके उद्देश्य बदल गये हैं। आज उसका उद्देश्य सर्वाङ्गीण लोक-कल्याण है और लोक-कल्याण की योजनाओं पर सरकारी खर्च घटाने नहीं, किन्तु बढ़ाने की

आवश्यकता होती है। पर प्राचीन परम्पराबद्ध राजकोष विभाग नये दृष्टिकोण को अपना ही नहीं पाता।

अनुमान समिति (The Committee on Estimates)—ऊपर हम बतला चुके कि कामन्स सभा को व्यय के अंदाजों को बहुत जल्दी में केवल २६ दिन में स्वीकार कर लेना पड़ता है और उनमें से बहुतों की यथार्थ जाँच नहीं हो पाती। समस्त सभा की समिति द्वारा वाद-विवाद का दृष्टिकोण भी आर्थिक नहीं किन्तु राजनैतिक होता है। इस दशा में एक ऐसी संस्था की आवश्यकता प्रतीत हुई जो विभिन्न विभागों के व्यय के अन्दाजों पर आर्थिक और मितव्ययिता के दृष्टिकोण से यथार्थ विचार कर सके। अतः १९२० में एक विशिष्ट अनुमान समिति (Select Committee on Estimates) की व्यवस्था की गई। इसकी नियुक्ति प्रति सभा में नये सिरे से होती है। इसका काम यह है कि विभागों के व्यय के अन्दाजों की जाँच करके जहाँ कहीं मितव्ययता की गुञ्जायश हो, कामन्स सभा को बतलावे। यह समिति प्रति वर्ष बारी-बारी से दो या तीन विभागों के व्यय के अन्दाजों की जाँच करती है और यदि कहीं अनावश्यक व्यय या फजूलखर्ची पाती है तो उसकी ओर पार्लमेंट का ध्यान आकर्षित करती है। समिति को नीति-विषयक आलोचना का अधिकार नहीं है। यह केवल इतना मात्र देख सकती है कि सरकार की नीति को मान्यता देते हुये, उस पर जो व्यय हो रहा है, वह ठीक है या अधिक।

कुछ आलोचकों का कहना है कि इस समिति की उपयोगिता बहुत ही सीमित है। नीति के अन्तर्गत अनावश्यक या अधिक व्यय न हो—इसकी जाँच तो राजकोष और अन्य विभागों के विशेषज्ञ अन्दाजों के बनते समय ही कर लेते हैं। अन्दाजा समिति के सदस्य उनसे बढ़कर विशेषज्ञ या अनुभवी तो हो नहीं सकते। अतः वे नई बात क्या निकाल सकते हैं? जो कुछ पहिले हो चुका है, उसी का वे पिष्टपेषण मात्र कर सकते हैं। वे नीति को बदलने की बात कह ही नहीं सकते। अतः इस समिति की कोई विशेष उपयोगिता नहीं है।

व्यय पर राजकोष विभाग का नियन्त्रण—आय व्यय-पत्रक बनाने का लाभ तभी हो सकता है जब उसके अनुसार कार्य हो। उसे कार्यान्वित कराना राजकोष विभाग का काम है। यदि किसी मद में बचत हो, तो उसे राजकोष की अनुमति के बिना दूसरी मद में नहीं खर्च किया जा सकता है। प्रत्येक विभाग के अध्यक्ष का यह कर्तव्य है कि वह अपने विभाग के व्यय को आय-व्यय पत्रक की व्यवस्था के विरुद्ध न जाने दे। यदि किसी कारण से स्वीकृत रकम से अधिक खर्च करने की आवश्यकता आ ही पड़े, तो उसके लिए पार्लमेंट से पूरक माँग (Supplementary Demand) करनी पड़ती है। पूरक माँग के लिए भी राजकोष विभाग की पूर्व स्वीकृति

आवश्यक है—बिना उसके सहमत हुये वह पार्लमेंट के सामने नहीं रक्खी जा सकती। इस प्रकार राजकोष विभाग आदि से अन्त तक इस बात की चौकसी रखता है कि पार्लमेंट के आदेश के विरुद्ध न तो व्यय ही होने पावे और न उसके सामने कोई अनुचित माँग ही प्रस्तुत की जाय।

प्रधान वित्तदाता और लेखा परीक्षक—आय-व्यय पार्लमेंट के आदेशानुसार ही हो, इसकी चौकसी रखने के लिए स्वयं पार्लमेंट का भी एक स्वतन्त्र कर्मचारी होता है जिसे प्रधान वित्तदाता और लेखा-परीक्षक (The Comptroller and Auditor General) कहा जाता है। इसकी नियुक्ति तो सम्राट् (अर्थात् मंत्रिमंडल) द्वारा होती है, पर बिना पार्लमेंट के दोनों भवनों के प्रस्ताव (address) के इसे पदच्युत नहीं किया जा सकता है। इसका अभिप्राय यह है कि यह कर्मचारी सरकार के दबाव से सर्वथा मुक्त रह कर स्वतन्त्र रीति से कार्य करे।

इसके कार्य दो प्रकार के हैं। पहिले तो सरकारी निधि में से आवश्यक धन इसकी मंजूरी ही से मिल सकता है, अन्यथा नहीं। इसी से इसको वित्तदाता (Comptroller) कहते हैं। दूसरे जो धन खर्च होता है, उसके हिसाब की जाँच इसी के तत्वावधान में होती है। इसी कारण इसे प्रधान लेखा-परीक्षक (Auditor General) की संज्ञा दी गई है। इसके कार्यों को समझने के लिए हमें यह जान लेना आवश्यक है कि पार्लमेंट के आदेशानुसार सरकार की जितनी भी आमदनी होती है चाहे वह किसी भी मद से क्यों न हो, एकत्र ही जाकर जमा होती है, अर्थात् संचित निधि (Consolidated Fund) में। यह संचित निधि बैंक आफ़ इंगलैण्ड में रक्खी जाती है। इस संचित निधि में से ही सब विभागों का पार्लमेंट द्वारा स्वीकृति व्यय भी दिया जाता है। परन्तु, बिना प्रधान वित्तदाता और लेखा परीक्षक की अनुमति के सचित निधि में से किसी को एक पाई का भी भुगतान नहीं किया जा सकता।

अतः विभागों की आवश्यकता के अनुसार समय-समय पर राजकोष (Treasury) इस कर्मचारी के पास माँगें भेजता रहता है कि अमुक-अमुक कार्यों के लिये इतना धन दिलाओ। प्रधान वित्तदाता और लेखा-परीक्षक पार्लमेंट द्वारा स्वीकृत आय-व्यय-पत्रक से इन्हें मिलाकर देखता है कि उसमें इन माँगों की व्यवस्था है या नहीं। आय-व्यय पत्रक के अनुकूल होने पर वह आज्ञा देता है कि संचित निधि में से इतनी रकम राजकोष को दी जाय और फिर उसका भुगतान होता है। राजकोष इस रकम को विभिन्न विभागों में उनकी आवश्यकतानुसार बाँटता रहता है।

प्रत्येक विभाग को अपनी व्यय की हुई रकमों का रत्ती-रत्ती हिसाब रखना पड़ता है। प्रधान वित्तदाता और लेखा-परीक्षक द्वारा निश्चित रूप (form) में ही वह हिसाब रखना पड़ता है। आर्थिक वर्ष बीत जाने पर प्रधान वित्तदाता और लेखा

परीक्षक के विभाग के लेखा-परीक्षक (auditors) प्रत्येक विभाग के हिसाब की जाँच करते हैं और प्रत्येक सन्दिग्ध या नियमविरुद्ध व्यय के सम्बन्ध में विभाग वालों से जवाब माँगते हैं। सब विभागों के हिसाब की जाँच हो चुकने के बाद प्रधान वित्तदाता व लेखा-परीक्षक अपनी एक रिपोर्ट तैयार करता है जिसमें उन कुल बातों का उल्लेख रहता है जिनके सम्बन्ध में उसे विभागों से सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला है।

सार्वजनिक लेखा समिति (The Committee on Public Accounts) पार्लमेंट के सम्मुख रक्खे जाने के पहले इस रिपोर्ट पर सार्वजनिक लेखा समिति द्वारा विचार किया जाता है। यह कामन्स सभा ही की एक समिति होती है और इसका अध्यक्ष विपक्षी दल का नेता या अन्य कोई अनुभवी सदस्य होता है और यह इसलिये, कि हिसाब-किताब की जाँच अधिक से अधिक कठोरता के साथ हो। प्रधान लेखा परीक्षक इस समिति की सहायता करता है और प्रत्येक विभाग के हिसाब के सम्बन्ध में की हुई आपत्तियों के सम्बन्ध में उस विभाग के उत्तरदायी कर्मचारी, समिति के सामने बुलाये जाते हैं जिससे वे शंकाओं का यथासम्भव समाधान कर सकें। इस प्रकार पूरी रिपोर्ट पर विचार कर चुकने के बाद यह समिति कामन्स सभा के सम्मुख अपने सुझाव उपस्थित करती है जिसमें आगे चल कर वे त्रुटियाँ न हों जो सरकारी व्यय या हिसाब में गत वर्ष पाई गई हैं। कामन्स सभा इन सुझावों पर उचित कार्यवाही करती है।

पार्लमेंट के कार्यों का सिंहावलोकन

कानून निर्माण और आर्थिक नियंत्रण, पार्लमेंट के सरकार पर नियंत्रण रखने के लिए दो प्रधान साधन हैं। परन्तु जैसा अध्याय ४ में बतलाया जा चुका है, पार्लमेंट के पास मन्त्रिमंडल या सरकार पर नियंत्रण रखने के अन्य साधन भी हैं जैसे प्रश्न पूछना, काम रोकने का प्रस्ताव उपस्थित करके सार्वजनिक महत्त्व के आवश्यक मामलों पर सरकार को जवाबदेही करने को बाध्य करना, अन्य प्रस्तावों के द्वारा सरकार को कोई काम करने की प्रेरणा देना या उससे रोकना, महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर वाद-विवाद द्वारा सरकारी नीति का स्पष्टीकरण कराना, और सरकार का काम विशेष गड़बड़ होने पर उसके विरुद्ध निन्दा या अविश्वास का प्रस्ताव लाकर उसे पदत्याग करने को विवश करने की चेष्टा। इनी कार्यों का विस्तृत विवरण चौथे अध्याय में दिया जा चुका है।

कानून निर्माण और आर्थिक व्यवस्था में पार्लमेंट का भाग अपेक्षाकृत गौण है। हम देख चुके हैं कि इन दोनों महत्त्वपूर्ण बातों में उसे मन्त्रिमंडल का नेतृत्व मानकर काम करना पड़ता है। कदाचित् यह कहने में अत्युक्ति न होगी कि कानून-निर्माण और आय-व्यय-पत्रक के पारित करने में पार्लमेंट मन्त्रिमंडल के प्रस्तावों को स्वीकार मात्र करती है ; दलबन्दी के कारण मन्त्रिमंडल द्वारा रक्खे हुए किसी प्रस्ताव

को अस्वीकृत या महत्त्वपूर्ण ढंग से संशोधित करना पार्लमेंट के लिए सम्भव नहीं। इस दशा में यह प्रश्न उठता है कि पार्लमेंट की वास्तविक उपयोगिता क्या है। क्या वह स्वीकृति देने का यन्त्र-मात्र है अथवा उसके कुछ अपने वास्तविक कार्य भी हैं।

प्रोफेसर लास्की ने कामन्स-सभा और प्रकारान्तर से पार्लमेंट के चार महत्वपूर्ण वास्तविक कार्य बतलाये हैं और वे हैं :—

(१) असन्तोष-प्रदर्शन—कोई भी असन्तुष्ट व्यक्ति या समूह पार्लमेंट के किसी सदस्य द्वारा अपने असन्तोष को पार्लमेंट में प्रकट करा सकता है। इस प्रकार का असन्तोष-प्रदर्शन प्रश्नों द्वारा, काम रोको प्रस्ताव द्वारा, कटौती के प्रस्तावों आदि के द्वारा हो सकता है।

(२) सूचना और जानकारी प्राप्त करना—यह कार्य भी प्रश्नों द्वारा होता है। प्रश्नों और उनके उत्तरों द्वारा सरकारी कार्यों की त्रुटियों पर प्रकाश पड़ता रहता है और सरकार को सावधान रहना पड़ता है।

(३) पार्लमेंट सार्वजनिक नीतियों और प्रश्नों पर वाद-विवाद का केन्द्र-स्थान है। इससे न केवल जनता की राजनैतिक शिक्षा होती है, किन्तु सरकार को भी अपने कार्यों का औचित्य सिद्ध करने को बाध्य होना पड़ता है।

(४) पार्लमेंट—विशेषतः कामन्स-सभा का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है देश के भावी नेताओं की योग्यता व ईमानदारी की परीक्षा करके उन्हें प्रकाश में लाना और आगे बढ़ाना। पार्लमेंट की कार्यवाही ही में सदस्यों के नेतृत्व, दक्षता, विश्वसनीयता आदि गुणों की परीक्षा होती है। उत्कृष्ट और साधारण योग्यता वाले सदस्यों का अन्तर शीघ्र ही स्पष्ट हो जाता है और जनता को ज्ञात हो जाता है कि देश का कार्य-भार सँभालने के उपयुक्त व्यक्ति कौन-कौन हैं।

अभ्यास

१. नई पार्लमेंट के अधिवेशन के प्रारम्भ का वर्णन करो। सम्राट् के भाषण का क्या महत्त्व है।

How does the session of a new Parliament open? What is the significance of the "speech from the Throne".

२. पार्लमेंट के स्थगन, विसर्जन और विघटन के अन्तर को स्पष्ट रीति से समझाओ।

Clearly differentiate between adjournment, prorogation and the dissolution of Parliament?

३. सम्पुट का क्या अर्थ है और उसके कितने और कौन-कौन भेद हैं?

What do you understand by 'closure'? What are the different varieties of it?

४. सार्वजनिक विधेयक (आर्थिक के अतिरिक्त) के पार्लमेंट में पारित होने की रीति का वर्णन करो।

Describe the procedure 'an ordinary (non-financial) public bill follows in the course of its passage through Parliament.'

५. सार्वजनिक, गैर सरकारी और व्यक्तिगत विधेयकों के बीच के अन्तर को स्पष्ट करो। व्यक्तिगत विधेयक किस रीति से पारित होते हैं?

Clearly distinguish between, public and private member's bills. How is a private bill passed?

६. आय-व्यय पत्रक (बजट) के अन्दाजे किस प्रकार तैयार किये जाते हैं? उन पर राजकोष विभाग (ट्रेजरी) का क्या नियन्त्रण रहता है?

How are the budget estimates prepared? What control does the Treasury exercise over them?

७. आय-व्यय पत्रक के कामन्स सभा में पारित होने की रीति का वर्णन करो।

Describe the procedure by which the budget is passed in the House of Commons.

८. ब्रिटेन की आर्थिक व्यवस्था के क्या गुण-दोष हैं?

What are the merits and defects of the Parliamentary finance in Britain?

९. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखो :—

छद्म विधेयक, प्रश्न वाल घंटा, संचित निधि विषयक व्यय, व्यय की अग्रिम स्वीकृति, आदान समिति, साधन समिति, आय-व्यय-पत्रक भाषण, व्यय विधि, राजस्व विधि, अन्दाजा समिति, प्रधान वित्तदाता और लेखा परीक्षक, सार्वजनिक लेखा समिति।

Write short notes on the following—

A dummy bill, the question hour, the consolidated fund charges, votes on account, the Committee of Supply, the Committee of Ways and Means, the Budget Speech, the Appropriations Act, the Finance Act, the Estimates Committee, the Auditor and Comptroller General, the Public Accounts Committee.

अध्याय ६

ब्रिटिश राजनैतिक दल

राजनैतिक दल क्या है ?—प्रजातन्त्र और राजनैतिक दल—ब्रिटेन में राजनैतिक दलों का प्रारम्भिक इतिहास—कंजरवेटिव और लिबरल दल—मजदूर दल का उदय और स्थिति परिवर्तन—दलों का १६२२ ई० के बाद का इतिहास—लिबरल दल का ह्रास—प्रथम मजदूर सरकार १६२४—द्वितीय मजदूर सरकार (१६२६-३१)—राष्ट्रीय सरकारें १६३१-३६—द्वितीय विश्व युद्ध के समय की संयुक्त सरकार—१६४५ का चुनाव और मजदूर सरकार—१६५०-५१ के चुनाव और उसके बाद की परिस्थिति—ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति की प्रधानता—ब्रिटिश राजनैतिक दलों के सिद्धान्त, संगठन और कार्यप्रणाली—अ—अनुदार दल—ब—उदार दल—स—मजदूर दल—दलों के संगठन की रूपरेखा—संसदीय दल—मंत्रिमण्डल और छाया मन्त्रिमण्डल—सचेतक—दलों का पार्लमेण्ट के बाहर संगठन—अनुदार दल का राष्ट्रीय संगठन—नैशनल यूनियन आफ कंजरवेटिव ऐसोसियेशन्स—नैशनल लिबरल फेडरेशन—दलों के केन्द्रीय कार्यालय—मजदूर दल का संगठन—ब्रिटिश दलों की कार्यप्रणाली—अभ्यर्थियों का चुनाव—दलों की प्रचार रीतियाँ—दलों के द्रव्य कोष।

राजनैतिक दल क्या है ?—राजनैतिक दल किसी राज्य में रहने वाले नागरिकों के उस संगठित समूह का नाम है जिसका एक ही राजनैतिक लक्ष्य या उद्देश्य हो और जो उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शांतिमय और वैध साधनों को ही काम मे लाता हो। ये समूह जो राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बल-प्रयोग, लड़ाई-दङ्गों आदि को काम में लाते हैं; शुद्ध राजनैतिक दल नहीं कहे जा सकते। ऐसे समूहों को राजनैतिक दल न कह कर गुटबन्दी (factions) कहना उचित है। राजनैतिक दल संविधान को स्वीकार करके और उसके अन्तर्गत ही काम करता है, और अवैध उपायों का सहारा नहीं लेता। एक लेखक ने शुद्ध राजनैतिक दल और गुटों के अन्तर को इस प्रकार स्पष्ट किया है कि राजनैतिक दलों की कार्यप्रणाली शिरों को गिनना (मतों के द्वारा प्रश्नों का निर्णय करना) और गुटों की कार्यप्रणाली शिरों को तोड़ना (लड़ाई दङ्गा करना) है। गुटबन्दियाँ सभी प्रकार के राज्यों में पाई जाती हैं, पर राजनैतिक दलों का विकास केवल प्रजातन्त्र ही में सम्भव है, क्योंकि प्रजातन्त्र के अतिरिक्त और किसी प्रकार के राज्य में शान्तिमय उपायों से सरकार का परिवर्तन सम्भव नहीं

है। अन्य प्रकार के राज्यों में सरकार को बदलने का एकमात्र उपाय बल-प्रयोग और क्रान्ति ही हो सकता है। अतः उनमें वैधानिक ढङ्ग से कार्य करने से कोई लाभ नहीं हो सकता।

प्रजातंत्र और राजनैतिक दल—प्रजातन्त्र के संचालन के लिए राजनैतिक दल आवश्यक ही नहीं, किन्तु अनिवार्य है। प्रजातन्त्र बहुमत द्वारा शासन को कहते हैं। राजनैतिक बहुमत अपने आप ही नहीं बन जाता, उसे बनाना या संगठित करना पड़ता है। तभी वह शासन का कार्य-भार अपने हाथ में ले सकता है। बहुमत परिवर्तनशील होता है। आज एक दल का बहुमत है तो कल दूसरे का हो सकता है। बहुमत जनता या मतदाताओं की इच्छानुसार चुनावों द्वारा प्रदर्शित करता है। जिस दल के पक्ष के लोग अन्यों की अपेक्षा अधिक संख्या में चुने जायँ, अगले चुनाव तक उसी का बहुमत समझा जाता है।

अस्तु, राजनैतिक बहुमत सङ्गठित करने का कार्य राजनैतिक दल ही करते हैं। यदि ये दल न हों तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग ही पकावे। जैसे राजगीर ईंट पर ईंट जोड़ कर सुदृढ़ दीवार बना देता है उसी प्रकार राजनैतिक दल समान राजनैतिक विचार वाले व्यक्तियों में संपर्क स्थापित करके उनका सुदृढ़ सङ्गठन कर देते हैं। यदि राजनैतिक दल न हों तो देश में सङ्गठित बहुमत का निर्माण न होकर व्यवस्थापक मंडल के सभी सदस्य अपनी अलग-अलग राह जायँ और उनमें मिल-जुल कर काम करने का कोई प्रबन्ध ही न रहे।

प्रजातन्त्रीय शासन संचालन के सम्बन्ध में राजनैतिक दल निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण काम करते हैं:—

(१) मतदाताओं को अधिक से अधिक संख्या में अपने दल का सदस्य बनाना और मतदाताओं की सूची में उनका नाम लिखाना जिससे कि वे अगले चुनाव में मतदान कर सकें।

(२) भिन्न-भिन्न पदों के लिए निर्वाचन होता है, उनके लिए अपने दल में से योग्य अभ्यर्थी चुनना और मतदाताओं से उनका परिचय कराना।

(३) समाचार-पत्रों, पुस्तकों, व्याख्यानों, सभाओं तथा प्रदर्शनों द्वारा जनता में अपने दल के सिद्धान्तों का प्रचार और अन्य दलों की रीति-नीति की आलोचना करके मतदाताओं में राजनैतिक जागृति उत्पन्न करना।

(४) चुनाव लड़ना, मतदाताओं से अपने अभ्यर्थियों के लिए मतदान की प्रार्थना करना, चुनाव के दिन मतदाताओं को चुनाव-स्थल पर ले जाना।

(५) इन भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए चन्दे या अन्य रीतियों से आवश्यक धन संग्रह करना, और

(६) यदि चुनाव में विजय हो अर्थात् बहुमत मिले, तो अपना मंत्रिमंडल बनाकर देश का शासन करना अन्यथा विपक्ष में रह कर अन्य दल या दलों द्वारा बनाई सरकार के कार्यों की आलोचना करके उसे सतर्क रखना।

इस प्रकार प्रजातंत्रीय शासन प्रणाली में आदि से अन्त तक सब काम राजनैतिक दलों की सहायता से ही होता है। प्रत्येक प्रजातन्त्रीय सरकार किसी विशेष दल के व्यक्तियों से ही बनी होती है। विरोधी दल भी प्रजातन्त्रीय पद्धति का आवश्यक अङ्ग है, क्योंकि वह सरकार की आलोचना करके उसे सतर्क रखता है। इसी कारण ब्रिटेन में विपक्षी दल को सम्राट् का ही विपक्षी दल (His Majesty's Opposition) कहा जाता है और १६०७ ई० से उसके नेता को भी मंत्रियों ही की भाँति राजकोष से २००० पौंड वार्षिक वेतन मिलता है।

राजनैतिक दलों का इतना महत्त्व होते हुए भी संविधान की व्यवस्थाओं में उनका कोई वर्णन नहीं होता। ब्रिटेन का तो अलिखित संविधान है, पर संयुक्त राष्ट्र अमरीका, भारत आदि लिखित संविधान वाले देशों में भी संविधान में किसी राजनैतिक दल का नाम तक नहीं पाया जाता। इसका कारण यह है कि राजनैतिक दलों का कानून द्वारा नियमन असंभव है। वे तो लोकमत के अनुसार बनते-बिगड़ते अथवा परिवर्तित होते रहते हैं। राजनैतिक दल और उनकी कार्यप्रणाली कानून की पहुँच के बाहर हैं। वे अवैधानिक तो नहीं कहे जा सकते, क्योंकि संविधान में उनका निषेध नहीं रहता, पर उनकी व्यवस्थाओं के क्षेत्र के बाहर की वस्तु होने के कारण उन्हें अतिरिक्त—वैधानिक व्यवस्था (extra constitutional device) की संज्ञा दी जाती है।

ब्रिटेन में सजनैतिक दलों का प्रारम्भिक इतिहास—प्रजातन्त्र की जन्म-भूमि होने के कारण ब्रिटेन स्वाभाविकतया राजनैतिक दलों की भी जन्म-भूमि है। यों तो ब्रिटेन में राजनैतिक गुटबन्दियों का आभास बहुत पहिले ही से मिलता है जैसे पन्द्रहवीं शताब्दी के लैंकेस्ट्रियन और यार्किस्ट, या सत्रहवीं शताब्दी के कैवेलियर और राउण्डहेड दल; परन्तु ये सच्चे राजनैतिक दल नहीं कहे जा सकते। विशुद्ध राजनैतिक दलों का उदय तभी संभव था जब सम्राट् की निरंकुशता नियमित होकर प्रजातन्त्रीय पद्धति का विकास होता। १६८८ ई० की क्रान्ति के बाद यह स्थिति बहुत कुछ अंशों में उत्पन्न हो गई, अतएव इसी समय दो विशुद्ध राजनैतिक दलों की नींव पड़ी जिन्हें ह्विग (Whig) और टोरी (Tory) कहा जाता था। ये दल यों तो सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ ही से मौजूद थे, पर १६८८ के बाद इन्हें आजकल के पारिभाषिक अर्थ में राजनैतिक दलों का रूप दिया गया। १६८८ के बाद लगभग १५० वर्षों तक ये ही दोनों दल बारी-बारी से शासन संचालन करते रहे। १६८८ से १७८३ तक

ह्विग लोगों के हाथ में सत्ता रही और उसके बाद १८३० तक टोरी पदारूढ़ रहे। इसी समय लगभग इन दलों के नामों में परिवर्तन हुआ। ह्विग दल उदार या लिबरल (liberals) और टोरी दल अनुदार या कंज़रवेटिव (conservative) नाम से प्रसिद्ध हुआ। १८३० के बाद कुछ विराम कालों को छोड़कर उदार दल १८७४ तक पदारूढ़ रहा और उसके बाद कुछ संक्षिप्त अन्तरालों को छोड़कर १९०५ तक अनुदार दल के हाथ में सत्ता रही। इसके बाद दस वर्षों अर्थात् १९१५ तक पुनः उदार दल पदारूढ़ रहा और फिर प्रथम महायुद्ध के कारण सभी दलों की संयुक्त सरकार बनी जो कि ७ वर्षों तक अर्थात् १९२२ ई० तक काम करती रही। १९२२ के बाद के दलीय इतिहास का वर्णन आगे चलकर कुछ अधिक विस्तृत रूप से किया जायगा।

कंज़रवेटिव और लिबरल दल—१६८८ ई० से १९२२ तक के लगभग सवा दो सौ वर्षों के दीर्घकाल में ब्रिटेन में दो ही दलों की प्रधानता रही जिन्हें पहले ह्विग और टोरी और बाद में कंज़रवेटिव और लिबरल कहते थे। [illegible] पर अन्य समूह भी बने पर वे चिरस्थायी न हो सके। उदारदल अपने को उन्नति और सुधारवादी दल कहता था और मताधिकार का विस्तार, आयरलैण्ड को स्वराज्य और कई अन्य आवश्यक सुधार इस दल के द्वारा ही किये गये। अनुदार दल साधारणतया वर्तमान व्यवस्थाओं को ज्यों का त्यों बनाये रखने का पक्षपाती था और परिवर्तनों का विरोधी; पर कुछ सुधार इस दल ने भी किये जैसे १८६७ ई० का मताधिकार विषयक सुधार। इन दलों का केवल थोड़े से विषयों पर ही मतभेद रहा करता था। इनमें से एक विषय था-आयात निर्यात कर सम्बन्धी नीति। उदार दल इन करों के विरुद्ध और उन्मुक्त व्यापार-नीति (Free trade) का समर्थक था और अनुदार दल संरक्षण नीति (Protectionist policy) का। दूसरा महत्वपूर्ण भेद रहता था वैदेशिक नीति में। उदार दल अधिकतर अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और वैदेशिक मामलों में नरम नीति का पक्षपाती था, पर अनुदार दल साम्राज्यवादी और सुदृढ़ वैदेशिक नीति का। तीसरा महत्वपूर्ण विवाद का विषय था आयरलैण्ड का प्रश्न। ग्लैडस्टन (Gladstone) के नेतृत्व में उदार दल ने आयरलैण्ड को स्वराज्य देने की नीति को अपनाया और अनुदार दल इसका वरोधी था। आयरलैंड के प्रश्न पर उदार दल में मतभेद हो गया और १८८६ ई० में प्रथम आयरलैण्ड स्वराज्य विधेयक के उपस्थित होने पर इस दल के दो टुकड़े हो गये जिसमें से एक ने उक्त विधेयक का विरोध किया। उदार दल के इस अंश ने कुछ समय तक तो यूनियनिस्ट अथवा एकतावादी दल के नाम से अपना अलग अस्तित्व रक्खा पर बाद में वह अनुदार दल से मिल गया और कुछ समय तक अनुदार दल का ही नाम एकतावादी दल (Unionist party) हो गया।

दोनों दलों के मतभेद का एक अन्य महत्त्वपूर्ण विषय था लार्ड सभा के सुधार का प्रश्न। लार्ड सभा अधिकांश में अनुदार मनोवृत्ति की थी और उदार दल के सुधार प्रस्तावों का विरोध किया करती थी। इस कारण उदार दल वाले उसके अधिकारों को इतना कम कर देना चाहते थे कि वह कामन्स सभा द्वारा पारित विधेयकों की हत्या न कर सके, पर अनुदार दल लार्ड सभा के अधिकारों के ह्रास का विरोधी था। समय-समय पर पारस्परिक मतभेद के अन्य प्रश्न भी उठ खड़े होते थे, पर ऊपर लिखे तीन-चार विषयों में दोनों दलों में काफी लम्बा संघर्ष रहा। परन्तु १६२२ ई० तक व्यापारिक नीति के प्रश्न को छोड़कर अन्य सब हल हो गये। मताधिकार लगभग सभी वयस्क नागरिकों को मिल गया। लार्ड सभा का आवश्यक सुधार १६११ ई० में हो गया और आयरलैण्ड को १६२२ ई० में स्वराज्य दे दिया गया।

इस प्रकार यद्यपि उदार और अनुदार दलों में विस्तार की और सामयिक बातों को लेकर मतभेद रहा करता था, परन्तु देश के आर्थिक और राजनैतिक ढाँचे के विषय में दोनों में मतैक्य था। दोनों ही दल व्यक्तिगत सम्पत्ति, पूँजीवादी व्यवस्था, और संविधान की मौलिक, बातों पर सहमत थे। दोनों की कार्यप्रणाली भी एक ही थी, अर्थात् वैधानिक रीति से संविधान के अन्तर्गत ही कार्य करना। दोनों ही दलों का नेतृत्व उच्च वर्गीय लोगों (Aristocratic classes) के हाथ में था। इस काल की राजनीति वास्तव में एक फुटबाल के खेल की तरह थी। खिलाड़ियों के दोनों पक्ष एक दूसरे को हराने का प्रयत्न करते थे, पर खेल के नियम दोनों ही को समान रूप से मान्य थे और आपस में शत्रुता या मनोमालिन्य न होकर सौहार्द्रपूर्ण भाव रहता था। प्रोफेसर लास्की ने लिखा है कि "१६८८ से राज्य की बागडोर वास्तव में एक ही दल के हाथ में रही है। निःसन्देह यह दल दो पक्षों में विभक्त रहा है। उनमें परिवर्तन की गति और दिशा के सम्बन्ध में पारस्परिक मतभेद रहा है, पर परिवर्तन सम्बन्धी मौलिक सिद्धान्तों के विषय में उनमें कभी कोई महत्त्वपूर्ण मतभेद न था।"[१]

मजदूर दल का उदय और स्थिति-परिवर्तन—पर बीसवीं शताब्दी प्रारम्भ में ब्रिटेन में एक नये दल का प्रादुर्भाव हुआ जिसके कारण ऊपर वर्णित स्थिति बड़ा परिवर्तन हो गया। यह दल था मजदूर दल। यह दल एक नई विचारधारा और एक नये दृष्टिकोण को लेकर आगे बढ़ा अर्थात् समाजवादी। समाजवादी नीति के कार्यान्वित होने के लिए देश के आर्थिक और सामाजिक ढाँचे में आमूल-परिवर्तन की आवश्यकता होती। अतः इस नये दल और पहले दलों में मौलिक संघर्ष उत्पन्न हुआ जिनमें पारस्परिक समझौते के लिए कोई स्थान न था।

[१] Laski, Parliamentary Government in England, p.

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब तब एकाध मजदूर सदस्य उदार दल के अभ्यर्थियों के रूप में पार्लमेंट के सदस्य चुन लिये जाते थे। १८९३ ई० में एक स्वतन्त्र मजदूर दल की स्थापना हुई, पर १९०० ई० तक इसे पार्लमेंट में एक भी स्थान न मिल सका। १९०० में मजदूर प्रतिनिधित्व समिति (Labour Representation Committee) नामक एक नया संगठन बना और १९०६ ई० के चुनाव में इसे कामन्स सभा में २४ स्थान मिले। इसके बाद इसने मजदूर दल (Labour party) का नाम ग्रहण किया। इस समय से लेकर प्रथम महायुद्ध के बाद तक कामन्स सभा में मजदूर दल के सदस्यों की संख्या ४०-४५ रहा करती थी और वह उदार दल के सहयोग से काम करता था। इसका प्रधान उद्देश्य रहता था, श्रमिक वर्गों की सुविधा के कानून यथासम्भव बनवाना।

प्रथम महायुद्ध ने वस्तु-स्थिति में बड़ा परिवर्तन कर दिया। मजदूर वर्ग में अधिक जागृति फैली। युद्धकालीन कठिनाइयों से उनके असन्तोष की वृद्धि हुई। सिडनी वेब और रामसे मैकडानल्ड सरीखे नेताओं ने तत्परता के साथ प्रचार प्रारम्भ किया। १९१८ ई० में मजदूर दल के संगठन और कार्यक्रम में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये जिनसे वह अपेक्षाकृत अधिक लोकप्रिय हो गया। पहले मजदूर सभाएँ, और समाजवादी समितियाँ तथा उनके सदस्य ही मजदूर दल के सदस्य हो सकते थे, पर अब यह नियम रक्खा गया कि दल के सिद्धान्तों में विश्वास रखने वाला कोई भी व्यक्ति इसका सदस्य बन सकता है। यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि केवल हाथ के काम करने वाले ही नहीं, किन्तु दिमागी काम करने वालों की भी श्रमजीवियों ही में गणना की जायगी। इन परिवर्तनों से मजदूर दल का आधार पहले की अपेक्षा कहीं अधिक विस्तृत हो गया और उसके सदस्यों और सहायकों की संख्या में भारी वृद्धि हुई। १९२२ ई० के चुनाव में मजदूर दल को पार्लमेंट में १९१ स्थान प्राप्त हुए जिससे कि अनुदार दल के बाद इसका दूसरा नम्बर हो गया। अब उदार दल के स्थान में इसे ही प्रधान विपक्षी दल स्वीकार किया गया और १९२४ ई० में इसे अपना प्रथम मंत्रिमंडल बनाने का अवसर मिला।

१९२२ ई० के बाद के राजनैतिक दलों का इतिहास

उदार दल का ह्रास—हम पहले बतला चुके हैं कि १९०५ से १९१५ ई० तक उदार दल की प्रधानता रही। जब प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ हुआ तो उदार दल ही ऐसक्विथ (Asquith) के नेतृत्व में पदारूढ़ था। युद्धकालीन परिस्थितियों के कारण १९१५ ई० में सब दलों का संयुक्त मंत्रिमंडल (Coalition Cabinet) ऐसक्विथ ही के नेतृत्व में बनाया गया जिसमें अनुदार और उदार दलों के मंत्री बराबर संख्या में रक्खे गये और मजदूर दल को भी स्थान दिया गया। अगले वर्ष १९१६ में ऐस-

क्विथ का स्थान लायड जार्ज ने ले लिया। यह संयुक्त मंत्रिमंडल ७ वर्ष अर्थात् १६-२२ ई० तक बना रहा, पर शीघ्र ही इसके विभिन्न दलों में फूट उत्पन्न हो गई। सबसे पहले उदार दल ही में झगड़ा उत्पन्न होकर उसके दो टुकड़े हो गये और फिर १६१८ ई० में मजदूर दल विरुद्ध पक्ष में चला गया। १६१८ ई० के चुनाव में संयुक्त मंत्रिमंडल की विजय हुई, पर इसमें अनुदार दल को ४७८ स्थान मिले, मजदूर दल को ६३ और स्वतन्त्र उदार दल को केवल २८। अब परिस्थिति यह हो गई कि कामन्स सभा में अनुदार दल का स्पष्ट बहुमत हो गया, पर मंत्रिमंडल अब भी संयुक्त रहा और उदार दल के नेता लायड जार्ज प्रधान मंत्री बने रहे। बहुमत एक दल का हो और प्रधान मंत्री दूसरे दल का—यह स्थिति बहुत दिनों तक न चल सकती थी, पर तो भी १६२२ तक बनी रही।

आन्तरिक फूट के कारण १६१८ ई० में उदार दल को जो धक्का लगा उससे वह फिर कभी नहीं सँभल सका। उसका उत्तरोत्तर ह्रास ही होता चला गया। इस दल के दो पक्षों और उनके नेताओं ऐसक्विथ और लायड जार्ज में तीव्र मतभेद था। परिणाम यह हुआ कि नरम विचारों वाले उदार दल के सदस्य अनुदार दल की ओर झुके और उग्र विचार वाले मजदूर दल में सम्मिलित होने लगे। चक्की के इन दो पाटों के बीच उदार दल पिस-सा गया। १६२२ और उसके बाद के वर्षों में फूट दूर करने के कई बार प्रयत्न किये गये और एकाध बार वे सफल भी हुए, पर इसका दल की स्थिति पर कोई प्रभाव न पड़ा। १६२२ के बाद से उदार दल का स्थान मजदूर दल ने ले लिया। १६३१ ई० में उदार दल अनेक छोटे-छोटे टुकड़ों में बँट गया और तब से पार्लमेण्ट में उसके सब सदस्यों की संख्या ५०-६० से आगे न बढ़ सकी। उदार दल या उसके विभिन्न खंड अब भी अपना अलग अस्तित्व बनाये हुए हैं, और आशा करते हैं कि कदाचित भविष्य में उन्हें पुनः अपना पहले का स्थान प्राप्त हो जाय, पर ऐसा होना सम्भव नहीं दिखता।

उदार दल के ह्रास के, आन्तरिक फूट के अतिरिक्त, अन्य भी कई कारण थे। सबसे मुख्य कारण यह था कि जिन प्रश्नों और समस्याओं के आधार पर यह दल संगठित था उनमें के अधिकांश—जैसे मताधिकार का विस्तार, आयरलैण्ड को स्वराज्य, लार्ड सभा का सुधार आदि—१६२२ तक हल हो चुके थे। अतः इस दल के पास आगे के लिये कोई स्वतन्त्र सिद्धान्त या कार्यक्रम न रहा जिनके आधार पर वह अन्य दलों का सामना कर सकता। नये युग के प्रधान प्रश्न थे समाजवाद, उद्योगों का राष्ट्रीकरण, श्रमिकवर्ग के अधिकारों की वृद्धि आदि। इन प्रश्नों का समर्थन करने को मजदूर दल था और विरोध करने को अनुदार दल। इन दोनों के बीच में किसी तीसरे दल या दृष्टिकोण के लिए स्थान न था। अतः उदार दल आधारशून्य होने के कारण

उत्तरोत्तर प्रभावहीन होता गया। दूसरे, ब्रिटेन की चुनाव पद्धति भी इस प्रकार की है कि उससे बड़े और सुदृढ़ दलों को लाभ और छोटे दलों की हानि होती है। समस्त देश में कुल मिला कर उदार दल के समर्थकों की अब भी काफी बड़ी संख्या है, पर एकसदस्यीय निर्वाचन-क्षेत्र और बहुमत निर्वाचन पद्धति के कारण अधिकांश स्थानों में ये समर्थक अल्पमत की स्थिति में अर्थात् निर्वाचन-क्षेत्र के समस्त मतदाताओं की संख्या के आधे से कम पड़ जाते हैं और अपना सदस्य चुनने में सफल नहीं होते। इसी कारण इस दल के विचारक जैसे रामसे म्योर आनुपातिक निर्वाचन पद्धति (Proportional Representation) की मांग करते हैं जिसमें उनके दल को प्राप्त मतों के अनुपात में प्रतिनिधित्व मिल सके।

१६२२-२३ के चुनाव—१६२२ ई० के चुनाव में युद्धकालीन संयुक्त व्यवस्था समाप्त करके विभिन्न दल अलग-अलग मैदान में उतरे और इसमें अनुदार दल की विजय हुई, पर इस दल के नेता बाल्डविन (Baldwin) ने अगले ही वर्ष संरक्षण नीति (Protection) के प्रश्न पर पुनः चुनाव कराया। इस चुनाव में उन्हें स्पष्ट बहुमत न मिला। मजदूर और उदार दल के सदस्यों की संख्या अनुदारों से अधिक थी। इन दोनों में मजदूर दल अपेक्षाकृत बड़ा था, अतः उसे मन्त्रिमंडल बनाने का अवसर दिया गया।

प्रथम मजदूर सरकार (१६२४)—इस प्रकार १६२४ में मजदूर दल के नेता रामसे मैकडानल्ड ने प्रथम मजदूर मन्त्रिमंडल बनाया, पर मजदूर दल का स्पष्ट बहुमत (clear majority) न था। अतः उसे उदार दल के सहयोग पर निर्भर होना पड़ा। इस सहयोग को बनाये रखने के लिये उसने बहुत ही नरम नीति का आश्रय लिया। समाजवाद को अलग ही रक्खा। यह सब करने पर भी प्रथम मजदूर सरकार अधिक समय न टिक सकी। 'साम्यवाद के विरोध' के प्रश्न पर उसकी कामन्स सभा में बुरी हार हुई, और पार्लमेंट का विघटन (dissolution) होकर फिर नया चुनाव हुआ।

१६२४ के चुनाव में अनुदार दल की विजय हुई और अगले पांच वर्षों में वही पदासीन रहा। १६२६ ई० के अगले चुनाव में फिर किसी दल को स्पष्ट बहुमत न मिला, पर मजदूर दल को सबसे अधिक सदस्य मिले। अतः उसने १६२६ में अपनी द्वितीय सरकार बनाई।

द्वितीय मजदूर सरकार (१६२६-३१)—द्वितीय मजदूर सरकार को भी अपना स्पष्ट बहुमत न होने के कारण उदार दल की सहायता पर निर्भर रहना पड़ा। शीघ्र ही मजदूर दल के नेताओं में ही मतभेद हो गया। पुराने और वयोवृद्ध नेता तो नरम नीति के पक्षपाती थे, परन्तु अधिकांश नववयस्क और उग्र विचार के सदस्य

चाहते थे कि तुरन्त ही समाजवादी नीति को कार्य-रूप में परिणत कर दिया जाय। यह संघर्ष चल ही रहा था कि १६२६-३० की मन्दी और आर्थिक संकट की समस्या सामने आई। इसका सामना करने के लिए विशेषज्ञों ने कुछ ऐसे उपाय बतलाये जिनसे मजदूरों की सुविधाओं में कमी होती थी। मजदूर दल के नेता रामसे मैकडानल्ड ने इन उपायों का अवलम्बन लेने का निश्चय किया, पर मन्त्रिमंडल के अधिकांश सदस्यों ने इस बात में उनका साथ देने से इनकार किया। अतः रामसे मैकडानल्ड ने अपना इस्तीफा दे दिया और सम्राट् के सुझाव पर एक राष्ट्रीय सरकार (National Government) का निर्माण हुआ। थोड़े से मजदूर दल के सदस्य रामसे मैकडानल्ड के साथ रहे, पर अधिकांश ने उनका साथ छोड़ दिया। रामसे मैकडानल्ड और और उनके अनुयायी मजदूर दल से बाहर निकाल दिये गये। इस प्रकार मजदूर दल के दो टुकड़े हो गये। १६३१ ई० में पार्लमेंट का विघटन होकर नया चुनाव हुआ। इसमें राष्ट्रीय सरकार को ७०७ सदस्यों की कामन्स सभा में ५५६ सदस्यों का भारी बहुमत मिला। मजदूर दल को १६२६ की अपेक्षा बहुत कम स्थान मिले और उस समय तो यही प्रतीत होता था कि अब यह दल न सँभल सकेगा।

राष्ट्रीय सरकारें (१६३१-१६३६)—१६३१ से १६३६ तक के लगभग १० वर्षों में ब्रिटेन में दलों और सरकारों की एक विचित्र-सी स्थिति रही। १६३१ के चुनाव में राष्ट्रीय सरकार को जो ५५६ का बहुमत मिला उसमें अधिकांश सदस्य अनुदार दल के थे और केवल मुट्ठी भर मजदूर और उदार दल के। अतः वास्तविक बहुमत था अनुदारों का, पर प्रधान मन्त्री थे मजदूर दल के रामसे मैकडानल्ड। इसका परिणाम वही हुआ जो होना चाहिये था। प्रधान मन्त्री का प्रभाव नाम मात्र को रह गया और वास्तविक शक्ति अनुदार दल के हाथों में रही। १६३५ ई० में रामसे मैकडानल्ड ने स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण अवकाश ग्रहण किया और अनुदार दल के नेता स्टैनली बाल्डविन प्रधान मन्त्री बने। इस प्रकार जिस दल की वास्तविक प्रधानता थी, उसी का प्रधान मन्त्री भी पदासीन हुआ। अतः वास्तव में १६३५ से आगे चलकर दलीय सरकार ही पुनः स्थापित हो गई, पर नाम के लिए अब भी यह 'राष्ट्रीय' ही होने का नाट्य करती थी क्योंकि इसमें थोड़े से उदार दल के सदस्य और रामसे मैकडानल्ड के अनुयायी भी सम्मिलित थे। १६३७ में स्टैनली बाल्डविन ने अवकाश ग्रहण किया और उनके स्थान में नेवाइल चेम्बरलेन (Neville Chamberlain) प्रधान मन्त्री बने। समय साधारण रहता तो शीघ्र ही स्पष्ट रूप से दलीय सरकार पुनः स्थापित हो जाती, पर १६३६ में द्वितीय विश्वयुद्ध के छिड़ जाने से पुनः संयुक्त सरकार स्थापित करनी पड़ी, जो कि उसकी समाप्ति के समय अर्थात् १६४५ तक पदासीन रही।

द्वितीय विश्व महायुद्ध के समय की संयुक्त सरकार (१६३६-४५)— द्वितीय महायुद्ध के प्रारंभ होते ही प्रधान मन्त्री चेम्बरलेन ने मजदूर दल और उदार दल दोनों को आमंत्रित किया कि वे उनके साथ मिलकर संयुक्त सरकार बनायें। इन दलों ने यह बात तो नहीं स्वीकार की, पर चेम्बरलेन को अपना सहयोग देते रहे। १६४० में ब्रिटिश सेनाओं की फ्रांस और नारवे में बुरी तरह हार होने के कारण देश में तीव्र असन्तोष फैला। चेम्बरलेन को अलग होना पड़ा और उनका स्थान विन्सटन चर्चिल (Winston Churchill) ने ग्रहण किया। अब उन्होंने सब दलों के सहयोग से पाँच सदस्यों का संयुक्त मंत्रिमण्डल बनाया जो कि जर्मनी की हार के समय अर्थात् १६४५ तक बना रहा।

१६४५ का चुनाव और तृतीय मजदूर सरकार—ज्यों-ज्यों युद्ध का अन्त समीप आता गया, संयुक्त सरकार की सहयोग की भावना क्षीण होती गई। चर्चिल चाहते थे कि युद्ध के बाद भी पुनर्निर्माण (reconstruction) का कार्य करने के लिए संयुक्त सरकार ही बनी रहे, पर मजदूर दल ने इससे इनकार किया। अतः पार्लमेंट का विघटन होकर जुलाई १६४५ में पूरे दस वर्षों के बाद आम चुनाव हुआ। चर्चिल का विचार था कि युद्ध जीतने के श्रेय में उन्हें देश पुनः बहुमत देगा। चुनाव कालीन प्रचार में उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय और साम्राज्य सम्बन्धी समस्याओं को ही प्रधानतया आगे रक्खा। यद्यपि उनके कार्यक्रम में कई सामाजिक महत्त्व की योजनायें भी थीं, पर मजदूर दल का प्रधान कार्यक्रम था देश में शीघ्रातिशीघ्र समाजवादी व्यवस्था की स्थापना। उसने मतदाताओं को वचन दिया कि विजयी होने पर वह प्रधान महत्त्व के उद्योगों का जैसे गैस, बिजली, कोयला, यातायात, लोहा इत्यादि का राष्ट्रीकरण कर देगा, भारत को स्वराज्य देगा, साम्राज्य के अन्य भागों में स्वराज्य की दिशा में विकास का प्रयत्न करेगा, और देशव्यापी आर्थिक, स्वास्थ्य और सुरक्षा की योजना (National insurance and health insurance schemes) को कार्यान्वित करेगा।

इस चुनाव का अप्रत्याशित परिणाम हुआ। लोग समझते थे कि चर्चिल और अनुदार दल ही विजयी होंगे। पर परिणाम उल्टा हुआ। मजदूर दल को पहिली बार ३६३ सदस्यों का स्पष्ट और स्वतन्त्र बहुमत मिला और अनुदार दल के केवल १६८ सदस्य चुने गये। उदार दल को केवल १२ स्थान मिल सके। इसका प्रधान कारण यह था कि गत २५ वर्षों (अर्थात् १६२१) से वास्तव में अनुदार दल ही सर्वेसर्वा रहा था और लोग इस स्थिति में परिवर्तन करके मजदूर दल को मौका देना चाहते थे।

१६४५-५० तक मजदूर दल पदारूढ़ रहा। उसने अपने चुनाव-समय के दिये हुए वचनों को पूरा किया। लार्ड सभा के विरोध का निराकरण करने के लिये पार्लमेण्ट ऐक्ट १६४६ द्वारा उसके अधिकार और भी क्षीण कर दिये गये। अब वह

कामन्स सभा द्वारा चाहे हुए किसी विधेयक को एक वर्ष से अधिक न रोक सकता था। बैंक आफ इंगलैण्ड, कोयला, गैस और बिजली, रेल और यातायात के अन्य साधन, और लोहा और इस्पात के उद्योगों का राष्ट्रीकरण कर दिया गया।

१९५०-५१ के चुनाव और उसके बाद की परिस्थिति—पार्लमेंट की ५ वर्षों की अवधि पूरी होने पर १९५० में पुनः चुनाव हुआ। इसमें भी मजदूर दल को बहुमत मिला परन्तु बहुत छोटा—केवल १७ सदस्यों का। इतने छोटे बहुमत से काम न चल सकता था, अतः कुछ ही मास बाद १९५१ के ग्रीष्म में पुनः चुनाव हुआ। इसमें अनुदार दल को बहुमत मिला, पर वह भी छोटा ही। चर्चिल यह चुनाव समाजवाद को और आगे बढ़ने से रोकने के आधार पर लड़े थे। उन्होंने लोहा और इस्पात के उद्योग के विराष्ट्रीकरण (denationalization) का वचन दिया था। श्री चर्चिल एप्रिल १९५५ तक प्रधान मन्त्री रहे और तदुपरान्त उन्होंने अवकाश ग्रहण किया। उनके स्थान में सर एन्थानी ईडन दल के नेता चुने गये व प्रधान मन्त्री बने। स्वेज नहर के मामले और मिश्र से युद्ध करने के अपयश के कारण १९५६ में सर एन्थानी को भी अवकाश ग्रहण करना पड़ा और उनके स्थान में श्री मैकमिलन (Mac Millan) प्रधान मन्त्री बने। लिखने के समय (मई १९५७) में श्री मैकमिलन ही की अनुदारदलीय सरकार पदासीन है।

ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति की प्रधानता—इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी से लेकर अब तक के दलों के इतिहास का सिंहावलोकन करने पर हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि इस देश में सदा ही दो दलों की ही प्रधानता रही है जो बारी-बारी से पदारूढ़ अथवा विपक्ष में रहे हैं। समय-समय पर दलों की आन्तरिक फूट के कारण अथवा सामयिक प्रश्नों के आधार पर अधिक दल भी बने हैं, पर अन्त में पुनः उसकी संख्या दो ही पर आ गई है। या तो दो की संख्या के ऊपर बने दल क्षणभंगुर सिद्ध हुए जैसा कि गत शताब्दी में लिबरल-यूनियनिस्ट दल के साथ हुआ, अथवा यदि मजदूर दल की भाँति उन्होंने चिरजीवनशक्ति दिखलाई तो पुराने दलों में से ही एक क्षीण हो गया है जैसा कि वर्तमान समय में उदार दल के साथ हुआ है। देश के दो सुदृढ़ दल अपने बीच में अन्य दलों को पनपने नहीं देते। ब्रिटिश राजनैतिक जीवन की यह एक बड़ी भारी विशेषता है और इस देश में संसदीय पद्धति की सरकार (Parliamentary government) की सफलता का मुख्य श्रेय इसी को है। जिन देशों में अनेक दल होते हैं वहाँ सुदृढ़ मंत्रिमंडल नहीं बन पाते। फ्रांस इस का प्रधान उदाहरण है। वहाँ छोटे-छोटे दर्जनों राजनैतिक दल हैं, और उनमें से किसी का भी पार्लमेंट में स्पष्ट बहुमत नहीं हो पाता। अतः वहाँ सभी मंत्रिमंडल संयुक्त मंत्रिमंडल (Coalition Cabinets) होते हैं और साधारणतया ८-९ महीने से अधिक नहीं टिक पाते।

यदा-कदा ब्रिटेन में भी संयुक्त सरकारें बनानी पड़ी हैं। कभी-कभी तो यह किसी दल का स्पष्ट बहुमत न होने के कारण हुआ जैसे १६२४ और १६३१ में जब कि मजदूर दल के उदार दल के सहयोग से सरकार बनानी पड़ी थी, और कभी-कभी संकटकालीन परिस्थियों में जब कि राष्ट्रीय हित के लिए सभी दलों का सहयोग वाञ्छनीय समझा गया। पर जैसा डिजरेले (Disraeli) ने कहा था, ब्रिटेन संयुक्त सरकारों को नहीं पसन्द करता (Britain does not love Coalitions), अतः इस देश में साधारणतया हर समय एकदलीय सरकार ही बनती हैं और दूसरा दल विपक्ष में रह कर उसकी आलोचना करता रहता है। इस आलोचना के कारण सरकार को सतर्क रहना पड़ता है। अतः ब्रिटेन में विपक्षी दल प्रजातन्त्रीय शासन-व्यवस्था का एक आवश्यक अङ्ग माना जाता है और जैसे सरकार सम्राट् की सरकार (King's government) कही जाती है वैसे ही विपक्षी दल भी सम्राट् ही का विपक्षी दल (The King's opposition) कहा जाता है। इतना ही नहीं, किन्तु विपक्षी दल के नेता को मंत्रियों ही के समान ५ हजार पौण्ड वार्षिक वेतन भी दिया जाता है। जनमत के परिवर्तन के कारण जो आज विपक्षी दल है कल वही अपनी सरकार बना सकता है और आज की सरकार को कल विपक्षी दल का स्थान ग्रहण करना पड़ सकता है। प्रजातन्त्र की वास्तविकता इसी में है कि जनता इच्छानुसार वर्तमान सरकार को बदल सके और वह तभी संभव है जब कि पद-ग्रहण का भार स्वीकार करने लायक कोई दूसरा दल मौजूद हो। अतः देश में केवल एक दल का होना और विपक्षी का अभाव या बहुत कमजोर होना प्रजातन्त्र के लिए खतरे की घंटी है।

ब्रिटेन के राजनैतिक जीवन से हमें यह शिक्षा मिलती है कि प्रजातन्त्रीय शासन पद्धति के सुचारु संचालन के लिए न तो दो से कम दल होने चाहियें और न दो से अधिक ही। द्विदलीय व्यवस्था ही एक प्रकार से आदर्श व्यवस्था है और ब्रिटेन को इस व्यवस्था को बनाये रखने का सौभाग्य प्राप्त है। यह बात कानून द्वारा नहीं पैदा की जा सकती। यह बतलाना सरल नहीं है कि ब्रिटेन में दो से अधिक दल क्यों नहीं पनपने पाते, जब कि अन्य देश प्रयत्न करने पर भी दलों की बरसाती बाढ़ को नहीं रोक सकते। इसका प्रधान कारण ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति की प्राचीन परम्परा और व[illegible] है। एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों और साधारण बहुमत निर्वाचन पद्धति भी, इस व्यवस्था की सहायक है, पर केवल इन्हीं के द्वारा द्विदलीय पद्धति चिर-स्थायी नहीं हो सकती। मुख्य बात यही है कि ब्रिटेन के लोग दो ही दलों के होने की उपयोगिता को समझते हैं और इसकी विरोधी प्रवृत्तियों का समर्थन नहीं करते।

ब्रिटिश राजनैतिक दलों के सिद्धान्त, संगठन और उनकी कार्य-प्रणाली

अ-अनुदार दल (The Conservative Party)

अनुदार दल के सिद्धान्त—अनुदार दल अतीत काल से चली आई हुई परम्परा का प्रेमी है और उसका विश्वास है कि इस परम्परा ही के आधार पर सुदृढ़ सामाजिक व्यवस्था बन सकती है, अन्यथा नहीं। इस कारण वर्तमान व्यवस्था में परिवर्तन तब तक नहीं होने चाहिये जब तक कि उनकी आवश्यकता पूर्णरूप से सिद्ध न हो जाय और आवश्यकता प्रमाणित हो जाने पर भी बहुत क्रमशः ही परिवर्तन होना चाहिये जिससे परम्परागत स्थिति से उनका मेल मिला रहे। यह समझना भूल है कि अनुदार दल सभी परिवर्तनों या सुधारों का विरोधी है। विपरीत इसके, अनेक महत्त्वपूर्ण सुधार और परिवर्तन इस दल के द्वारा भी किये गये हैं। पर यह अवश्य है कि अनुदार मनोवृत्ति शीघ्र या क्रान्तिकारी परिवर्तनों की विरोधी है। केवल तर्क या सिद्धान्त के आधार पर की गई सुधार की माँग या परिवर्तन को यह दल अविश्वास की दृष्टि से देखता है।

यह तो हुआ अनुदार दल का साधारण या मौलिक दृष्टिकोण। विस्तार की बातों में यह दल सम्राट्, लार्ड सभा, ऐङ्गलिकन चर्च और जमींदारों के अधिकारों का समर्थक है, बड़े-बड़े उद्योगपतियों (विशेषतः मद्यउद्योग) के भी स्वार्थों का यह संरक्षक है। समाजवाद तथा राष्ट्रीकरण का विरोध, व्यक्तिगत सम्पत्ति की रक्षा और स्वतन्त्रता और वर्ग युद्ध वाली सभी विचार-धाराओं का विरोध भी अनुदार दल की नीति के मुख्य स्तम्भ हैं। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में यद्यपि अन्य दलों ही की भाँति यह दल भी अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और शान्ति का समर्थक है, पर इसका यह भी विश्वास है कि शान्तिरक्षा के लिये ब्रिटेन को अपनी सैन्यशक्ति और अस्त्र-शस्त्रों की प्रचुरता पर अधिक निर्भर रहना उचित है। निःशस्त्रीकरण के प्रस्तावों को यह सन्देह की दृष्टि से देखता है। यह प्रबल और सुदृढ़ वैदेशिक नीति और ब्रिटेन की बाह्य प्रतिष्ठा और आन को बनाये रखने का पक्षपाती है। साम्राज्यवाद भी इस दल की नीति का एक अंग है और ब्रिटेन के अधीन देशों को स्वतन्त्रता देकर ब्रिटिश साम्राज्य को छिन्न-भिन्न करने की नीति का यह विरोधी है। व्यापारिक क्षेत्र में यह दल सदा से संरक्षण नीति (protectionist policy) का समर्थक रहा है।

अनुदार दल के प्रभाव क्षेत्र—अनुदार दल के प्रधान समर्थक धनी और उच्च वर्गों के लोग होते हैं। इसका कारण स्पष्ट ही है। ऐसे लोगों को परिवर्तन से सदा आशङ्का रहती है कि उनकी समृद्धता कहीं जाती न रहे। बड़े-बड़े जमींदार, उद्योगपति, व्यवसायी, साहूकार, वकील, डाक्टर, विश्वविद्यालयों के प्रोफेसर आदि अधिकांश अनुदार दल ही के अनुयायी हैं। कोई समय था जब कृषक-वर्ग और खेती

में काम करने वाले मजदूर भी सब के सब अनुदार दल के ही समर्थक थे। आज भी इन वर्गों के बहुतेरे लोग इसी दल के साथ रहते हैं। भौगोलिक दृष्टि से बड़े-बड़े व्यापारिक केन्द्र, नगरों के धनिक वर्गों के मुहल्ले और देहात अनुदार दल के मुख्य प्रभाव-क्षेत्र माने जाते हैं।

ब-उदार दल

उदार दल के सिद्धान्त—उन्नीसवीं शताब्दी में उदार दल ही मुख्य सुधार-वादी दल था, और मताधिकार का विस्तार, आयरलैण्ड को स्वराज्य, स्त्रियों को मताधिकार, स्थानिक संस्थाओं का सुधार, लार्ड सभा का सुधार, श्रमिक वर्ग की रक्षा और हित के अनेक कानूनों का निर्माण—यह सब इसी दल के नेतृत्व में हुआ। उदार दल का क्रमशः सुधार में विश्वास था, परन्तु उग्र विचारों और आकस्मिक क्रान्तिकारी परिवर्तनों का यह दल भी विरोधी था। वैदेशिक और साम्राज्य सम्बन्धी मामलों में यह दल शान्ति, स्वतंत्रता तथा प्रजातन्त्र का समर्थक था। व्यापारिक मामलों में यह संरक्षण-नीति का विरोधी और उन्मुक्त व्यापार (Free Trade) का समर्थक था। अनुदारों की अपेक्षा इस दल में प्राचीनता-प्रेम और रूढ़िवाद की मात्रा कम थी और यद्यपि धनिक वर्ग के कुछ लोग इस दल में भी सम्मिलित थे, किन्तु तो भी इसकी सहानुभूति मुख्यतया छोटे किसानों, व्यापारियों और श्रमिकों के साथ थी।

आज यह दल शक्तिहीन तथा टुकड़े-टुकड़े हो गया है और यह बतलाना कठिन है कि उन्मुक्त व्यापार नीति (Free trade) को छोड़ कर अन्य किस सिद्धान्त सम्बन्धी बात में इसका अनुदार दल से मतभेद है। वास्तव में पृथक नीति और सिद्धान्तों का अभाव उदार दल के ह्रास के मुख्य कारणों में से एक है। लोगों का यह विचार है कि अब इस दल का समय बीत गया और इसका पुनरुत्थान असंभव है।

उदार दल का प्रभाव मुख्यतया मध्य वर्ग और श्रमिकों (middle and industrial labour classes) में था। बौद्धिक वर्ग यथा वकीलों, डाक्टरों, शिक्षकों में से भी बहुत से लोग इस दल के समर्थक थे। स्काटलैण्ड, वेल्स और मध्य और उत्तरी इंगलैंड इस दल के मुख्य प्रभाव क्षेत्र थे। अब उदार दल के अधिकांश समर्थक मजदूर दल के साथ हो गये हैं, पर अब भी इस दल के अनुया-यियों की संख्या लाखों है, परन्तु ये लोग इस भाँति बिखरे हुए हैं कि पार्लमेंट में अपने अधिक सदस्य नहीं भेज पाते।

स-मजदूर दल

मजदूर दल के सिद्धान्त—मजदूर दल का प्रारंभिक इतिहास ऊपर दिया जा चुका है। इस दल का मौलिक उद्देश्य समाजवादी व्यवस्था वाले राज्य की शान्ति-मय और वैधानिक उपायों द्वारा स्थापना है। यह उद्देश्य व्यक्तिगत और प्रतियोगिता-

मूलक उद्योगों को उत्तरोत्तर सार्वजनिक अधिकार, प्रबन्ध व नियंत्रण में लाने से पूरा हो सकता है। इस प्रकार मजदूर दल की नीति पूँजीवाद की विरोधी है। यह दल श्रमिक वर्गों के हितों को प्रमुखता देता है। गृहनीति में समाजवादी व्यवस्था, राष्ट्रीकरण और श्रमिक वर्ग के संरक्षण के अतिरिक्त मजदूर दल लार्ड सभा के अधिकारों और संविधान की अन्य अप्रजातन्त्रात्मक व्यवस्थाओं का विरोधी रहा है। वैदेशिक नीति में यह दल अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और संयुक्तराष्ट्र संघ तथा निःशस्त्रीकरण आदि का समर्थक है। साम्राज्य नीति में मजदूर दल साम्राज्य के विभिन्न देशों में स्वराज्य के क्रमशः विकास का पक्षपाती है।

मजदूर दल के सहायक और समर्थक मुख्यतः औद्योगिक-श्रमिक वर्ग के लोग हैं, पर उदार दल के पहिले के बहुत से अनुयायी भी अब इस दल में सम्मिलित हो गये हैं। निम्न मध्य वर्ग (lower middle class) के लोग, सरकारी नौकरियों के बहुतेरे कर्मचारी, शिक्षक, पत्रकार, छोटे व्यापारी व दुकानदार और कृषक अब अधिकतर मजदूर दल ही का साथ देते हैं। उच्च वर्गों के कुछ इने-गिने लोग भी इस दल में पाये जाते हैं। इस प्रकार यद्यपि आज दिन मजदूर दल में ब्रिटिश समाज के सभी वर्गों के लोग न्यूनाधिक संख्या में सम्मिलित हैं, पर संगठित मजदूर वर्ग ही इसका मेरु-दण्ड है। मजदूर सभाएँ ही इसके लिए आपस में चन्दे द्वारा आवश्यक धन एकत्र करती हैं और उनके सदस्य ही इसके सबसे बड़े सहायक हैं। मजदूर दल के संगठन में मजदूर सभाओं का प्रचुर प्रभाव रहता है। मजदूरों के हितों की रक्षा व उनकी स्थिति का सुधार ही इस दल का मुख्य ध्येय भी है।

वास्तव में मजदूर दल पुराने दलों से मूलतः भिन्न है। उदार और अनुदार दल राजनैतिक आधार पर बने थे और उनमें देश की आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था की मौलिक बातों पर मतैक्य था। वे किसी वर्ग-विशेष के स्वार्थ से बँधे न थे, अर्थात् कम से कम वे खुली रीति से यह नहीं कहते थे कि हम किसी एक वर्ग ही के हित के लिए प्रयत्नशील हैं। मजदूर दल पूँजीवादी व्यवस्था को उलट देना चाहता है और इसके कुछ विचारकों (जैसे हैरोल्ड लास्की) की राय में यदि इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए संविधान की कुछ बातों की अवहेलना करनी पड़े, तो वैसा भी करना चाहिये। मजदूर दल, यद्यपि वर्गयुद्ध या हिंसामय क्रान्ति में विश्वास नहीं रखता, पर तो भी प्रधानतः वह एक वर्ग-विशेष—मजदूर वर्ग—के स्वार्थों को खुल्लमखुल्ला सर्वोपरि मान कर चलता है।

ब्रिटिश दलों के संगठन और उनकी कार्य पद्धति

दलों के संगठन की रूप-रेखा—विस्तार की बातों में थोड़ा-बहुत अन्तर

होते हुए भी तीनों ब्रिटिश राजनैतिक दलों के संगठन की रूप-रेखा एक ही प्रकार की है।

प्रत्येक राजनैतिक दल को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं अर्थात् दल का वह भाग जो पार्लमेंट में है और उसका वह भाग जो पार्लमेंट के बाहर। किसी भी दल के अनुयायियों की संख्या लाखों होती है और उनमें से कुछ सौ ही पार्लमेंट के सदस्य चुने जाते हैं। दल के जो सदस्य पार्लमेंट के सदस्य चुन लिये गये हैं उन्हीं के समूह को उस दल का पार्लमेंट वाला अथवा संसदीय भाग कहते हैं और जो सदस्य पार्लमेंट में नहीं हैं, वे उसका बाहर का भाग बनाते हैं। यह स्पष्ट ही है कि संसदीय भाग दल के बाह्य भाग की अपेक्षा संख्या में बहुत छोटा होता है, पर राजनैतिक कार्य और प्रभाव का केन्द्र पार्लमेंट ही में होने के कारण, संसदीय भाग छोटा होने पर भी बाह्य भाग की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण होता है और इस कारण दल के प्रधान-प्रधान व्यक्ति उसके संसदीय भाग ही में पाये जाते हैं। दल के संसदीय और बाह्य भागों के अपने अलग-अलग संगठन होते हैं, पर इनमें पारस्परिक सम्बन्ध भी रहता है। अब हम दलों के संसदीय और बाह्य संगठनों का पृथक-पृथक वर्णन करके फिर उनके पारस्परिक सम्बन्ध की विवेचना करेंगे।

दल के संसदीय भाग के संगठन के तीन अंश होते हैं अर्थात् (१) पार्लमेंट (विशेषतः कामन्स सभा) में दल के सदस्यों का पूरा समूह जिसे संसदीय दल (parliamentary party) कहते हैं, (२) इस समूह के नेता जो दल के पदासीन होने पर मन्त्रिमंडल अथवा उनके विरुद्ध में होने पर छाया-मन्त्रिमंडल (Shadow cabinet) बनाते हैं और (३) दल के सचेतक (whips)। दल के बाह्य भाग के संगठन के दो मुख्य अंश होते हैं अर्थात् (१) विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में स्थापित दल के स्थानीय संगठन और (२) दल का केन्द्रीय अथवा राष्ट्रीय संगठन जो स्थानीय संगठनों का एक प्रकार का संघ कहा जा सकता है। केन्द्रीय संगठन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण अंश 'केन्द्रीय कार्यालय' (Central office) कहलाता है और इसी के द्वारा दल के संसदीय और बाह्य भागों में आवश्यक सम्पर्क स्थापित किया जाता है। अब हम दलों के दोनों भागों का अलग-अलग विवरण देंगे।

संसदीय दल का संगठन

१. संसदीय दल—ऊपर बतला चुके हैं कि किसी दल के उन समस्त सदस्यों को जो पार्लमेंट में हैं संसदीय कहते हैं। संसदीय दल अपने पार्लमेंट के अन्दर के कार्य के विषय में पूर्णतया अथवा लगभग स्वतन्त्र रहता है, अर्थात् दल का बाह्य भाग उसे किसी कार्य करने या न करने को बाध्य नहीं कर सकता। संसदीय दल और उसके नेता अपने विवेक के अनुसार स्वतन्त्र रीति से अपनी नीति निश्चित करते

हैं। केवल मजदूर दल में यह व्यवस्था पाई जाती है कि प्रत्येक सत्र या अधिवेशन के प्रारंभ में संसदीय दल और वाह्य भाग की कार्यकारिणी समिति आपस में मिल-जुल कर दल की नीति निश्चय करें और संसदीय दल वाले कोई ऐसा काम न करें जो दल के संविधान या आदेशों के विरुद्ध हो। पर इस नियंत्रण के होते हुये भी, व्यवहार में मजदूर संसदीय दल को पर्याप्त स्वतंत्रता रहती है। अन्य दलों की भाँति ही वह भी अपने नेता, उपनेता, सचेतकों आदि को चुनने, और दल के दाँव-पेचों को निश्चित करने में स्वतन्त्र ही है। जो कुछ नियंत्रण है वह दल के सिद्धान्तों के पालन मात्र के विषय में है, विस्तार की बातों के विषय में नहीं।

२. मन्त्रिमण्डल अथवा छाया मंत्रिमण्डल—जब कोई संसदीय दल बहुमत में होने के कारण पादासीन होता है, तो उसके संगठन का सबसे महत्त्वपूर्ण अंश मंत्रिमण्डल होता है जो उसके नेता और अन्य प्रधान व्यक्तियों से मिलकर बना होता है।

उन्नीसवीं शताब्दी में दलों के नेता (Leader) की नियुक्ति का कोई निश्चित नियम न था। जो मनुष्य दल में सबसे प्रभावशाली तथा योग्य और लोकप्रिय होता था वह अपने आप ही नेता मान लिया जाता था और फिर उस पद पर तब तक रहता था जब तक कि वह वृद्धावस्था या अन्य किसी कारण से अवकाश न ग्रहण कर ले। पर आजकल नेता को संसदीय दल द्वारा निर्वाचन करने की रीति चल पड़ी है। अनुदार दल में यह निर्वाचन अनौपचारिक रीति (informally) से और अनिश्चित समय तक के लिए होता है, पर उदार और मजदूर दलों का नेता दल के वार्षिक अधिवेशन में प्रतिवर्ष चुना जाता है। इसका यह अर्थ नहीं कि इन दलों के नेता प्रति वर्ष बदलते रहते हैं, पर यह अवश्य है कि दल वाले चाहें तो उन्हें बदलने का अवसर प्रति वर्ष मिलता रहे। दल के नेता का प्रभाव बहुत अधिक होता है। अनुदार दल में तो यदि नेता कोई बात दल की बिना राय लिये भी कह दे तो वह मान्य समझी जाती है। अन्य दलों में नेता को इस प्रकार की स्वतंत्रता तो नहीं है, पर अन्य बातों में उनका भी बड़ा प्रभाव रहता है। दल का पार्लमेंट में बहुमत होने पर नेता ही प्रधान मन्त्री बनता है और यदि दल को विपक्ष में रहना पड़ा तो विपक्षी नेता।

१९४२ ई० तक प्रधान मन्त्री ही (यदि वह लार्ड न हो कामन्स सभा का नेता भी होता था, पर इस वर्ष से कामन्स सभा के पृथक नेता नियुक्त करने की पद्धति चली, जिससे प्रधान मन्त्री का कार्य-भार हलका हो जाय। सन् १९४२-४५ तक चर्चिल मन्त्रिमण्डल में श्री बटलर, १९४५-५१ तक एटली मन्त्रिमंडल में श्री हर्बर्ट मारिसन, और वर्तमान चर्चिल मन्त्रिमंडल (१९५१) श्री हैरी क्रुकशैङ्क सभा के नेता रहे हैं। यह पद किसी महत्त्वपूर्ण मन्त्री ही को दिया जाता है।

पदासीन दल की नीति निर्धारण उसका मंत्रिमंडल करता है। मंत्रिमंडल के विषय में पहिले ही विस्तार से लिखा जा चुका है। यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि मंत्रिमण्डल में दल का प्रधान नेता, प्रधान मन्त्री और दल के अन्य प्रभावशाली सदस्य मंत्रियों के रूप में सम्मिलित रहते हैं। अतएव स्थिति यह है कि पदासीन संसदीय दल की रीति-नीति उसके मंत्रिमण्डल में सम्मिलित नेताओं द्वारा ही निश्चित की जाती है। यदि यह दल विपक्ष हुआ तो भी उसके नेता लोग ही सम्मिलित रूप से उसकी नीति निर्धारित करते हैं। विपक्षी दल के मुख्य नेताओं के समूह को 'छाया-मंत्रिमण्डल' (Shadow Cabinet) कहने की प्रथा है।

यहाँ यह बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी आवश्यक है कि ब्रिटेन में संसदीय दलों की रीति-नीति का निर्णय उसके नेता लोग करते हैं। नीति सम्बन्धी प्रश्न साधारणतया समस्त दल के सामने उसके निर्णयार्थ नहीं रक्खे जाते। कुछ देशों में ऐसी प्रथा भी है कि सभी बातों का निर्णय पूरा संसदीय दल ही करे और नेता लोग उस निर्णय से बाध्य हों, जैसे संयुक्त राष्ट्र अमरीका में अथवा आस्ट्रेलिया के मजदूर दल में। इस प्रथा को 'गोष्टी प्रथा' (Caucus System) कहते हैं, पर ब्रिटेन में इसका अनुकरण कभी नहीं हुआ। वहाँ निर्णयाधिकार नेताओं के हाथ में है और दल के साधारण सदस्यों का कर्तव्य माना जाता है कि जो कुछ नेताओं का निर्णय हो उसे मानें। यदि कोई ऐसा न करे तो उसके विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही करके उसे दल से बाहर निकाल दिया जा सकता है। जब-तब पूरे दल की भी बैठक होती है और उसमें सामयिक प्रश्नों पर नेता लोग भाषण देते अथवा स्पष्टीकरण करते हैं, परन्तु इन बैठकों में किसी भी प्रश्न पर न तो मत लिये जाते हैं और न दल से उन पर निर्णय देने ही को कहा जाता है। इन बैठकों का उद्देश्य इतना मात्र है कि नेता लोग साधारण सदस्यों के सम्पर्क में आवें और अपने भाषणादि द्वारा इन्हें उत्साहित कर सकें। नेतृत्व नेताओं ही के हाथ में रहता है, दल के साधारण सदस्यों के हाथ में नहीं। इससे यह स्पष्ट है कि दल की आन्तरिक गति-विधि के निर्णय में जनतन्त्रात्मक नहीं किन्तु अल्पतन्त्रात्मक (aristocratic) व्यवस्था रहती है। एक अनुभवी राजनीतिज्ञ ने तो यहाँ तक कहा है कि देश में प्रजातन्त्र के सुचारु संचालन के लिए दल की आन्तरिक कार्यवाहियों में अल्पतन्त्र आवश्यक है (In the interest of democracy outside, there must be oligarchy within the party)। यह इसलिये होता है सर्वसाधारण की बुद्धि या उनके अनुभव का स्तर ऊँचा नहीं होता। यदि दल की नीति का निर्णय पिछलगू सदस्यों (rank and file) के हाथ में रहे और नेता लोग उसे मानने को बाध्य हों, तो उचित तथा दूरदर्शितापूर्ण-निर्णय होने असंभव हो जायें।

इसका यह अर्थ न समझना चाहिये कि नेता लोग दल के साधारण सदस्यों के मतामत की परवाह ही नहीं करते या जानबूझ कर उनकी इच्छाओं की अवहेलना करते हैं। यदि वे ऐसा करें तो दल में फूट पड़कर वह छिन्न-भिन्न हो जाय। नेता लोग सदस्यों की विचारधारा को जानने के लिये सदैव सचेष्ट रहते हैं। बात केवल इतनी ही है कि नीति सम्बन्धी प्रश्नों का निर्णय ये उनके द्वारा नहीं करवाते, किन्तु उनके मत और इच्छाओं को दृष्टि में रखते हुए, स्वयं ही कर लेते हैं।

मजदूर और अनुदार दोनों ही दलों में नेताओं और दल के साधारण सदस्यों में सद्भाव बनाये रखने के लिये विशेष प्रबन्ध किया गया है। १९४५ ई० में जब मजदूर दल तृतीय बार पदासीन हुआ तो दल के मंत्रियों और साधारण सदस्यों में सहयोग बनाये रखने के लिये एक सम्पर्क समिति की स्थापना की गई। इस में एक सभापति, २ उपसभापति, कामन्स सभा में दल का नेता (यह पिछले कई वर्षों से प्रधानमन्त्री से भिन्न होता है।) मुख्य सचेतक, और एक मज़दूर दलीय लार्ड ये ही सदस्य सम्मिलित थे। सभापति, उपसभापति आदि दल के साधारण सदस्यों में से छ चुने जाते थे और समिति में साधारण सदस्यों ही का बहुमत था। सम्पर्क समिति का कार्य यह था कि वह जब भी दल के साधारण सदस्यों और किसी मन्त्री में मतभेद या दुर्भावना की आशंका देखे तो सम्बन्धित मंत्री या मंत्रियों को पूरे दल की सभा में बुला कर पारस्परिक स्पष्टीकरण करा के उस मतभेद को दूर कर दे। इससे साधारण सदस्यों को सदा यह सन्तोष रहता था कि वे जब भी चाहें, प्रधान मन्त्री या अन्य मन्त्रियों को अपने सामने बुलाकर उनके सामने अपना मत प्रकट कर सकते तथा उनकी नीतियों का स्पष्टीकरण माँग सकते हैं। श्री हर्बर्ट मारसिन (जो मजदूर सरकार में मन्त्री व कामन्स सभा के नेता थे) के मतानुसार इस प्रबन्ध में दल के नेताओं और सदस्यों से सफलतापूर्वक सद्भाव बनाये रक्खा जा सकता है।

सम्पर्क समिति (Liaison Committee) के अतिरिक्त मजदूर दल में अनेक क्षेत्रीय और विषय वर्ग भी पाये जाते हैं जो अपने-अपने क्षेत्रों और विषयों के सम्बन्ध में दल के नेताओं का ध्यान आवश्यक बातों की ओर आकर्षित करते रहते हैं। १९५२-५३ में मजदूर दल में निम्नलिखित क्षेत्रीय वर्ग (Area groups) थे:— स्काटलैण्ड, वेल्स, उत्तरीय, लङ्काशायर, और चेशायर, यार्कशायर, वेस्ट मिडलैण्डस, ईस्ट मिडलैण्डस, ईस्टर्न, लन्दन और मिडलसेक्स, और दक्षिणी और दक्षिणी-पश्चिमी क्षेत्रों के। विषय वर्ग (Subject groups) निम्नलिखित थे; :—कृषि मत्स्यपालन और खाद्य; कला और सुविधाएँ, राष्ट्रमंडल और उपनिवेश; प्रतिरक्षा और सैनिक शिक्षा; राजस्व और आर्थिक, वैदेशिक सम्बन्ध; स्वास्थ्य और सामाजिक बीमा; वैधानिक

और न्यायिक; स्थानीय, स्वशासन; राष्ट्रीकृत उद्योग; सार्वजनिक सूचना; उपनियम और मजदूर सभाओं सम्बन्धी।

इन विषयों में वर्गों की अपनी-अपनी स्थायी समितियाँ होती हैं। पार्लमेंट के सामने आने वाले विधेयकों और सरकारी नीतियों पर संबंधित वर्ग वाद-विवाद करते रहते हैं। आवश्यक होने पर ये मन्त्रियों और बाहरी विशेषज्ञों को भी अपने सामने बुला लेते हैं। इनके वाद-विवादों द्वारा साधारण सदस्यों का मत-प्रकाशन होता, उन की जानकारी बढ़ती, तथा दल के नेताओं की नीतियों व कार्यों के विषय में उनका समाधान होता रहता है।

मजदूर दल की सम्पर्क समिति की भाँति ही अनुदार दल की भी एक समिति है जिसे 'अनुदार सदस्यों की समिति' (Conservative Members Committee) अथवा १६२२ समिति (1922 Committee) कहते हैं। मजदूर दल की भाँति ही अनुदार दल में भी बहुत से विषय-वर्ग हैं।

परन्तु यह सब होते हुए भी नीतिविषयक निर्णय दल के नेता ही करते हैं। साधारण सदस्य अपने निर्णय उन पर लाद नहीं सकते। दल के नेताओं और साधारण सदस्यों के संबंध की तुलना गाड़ी के कोचवान और घोड़ों के संबंध से की जा सकती है। कोचवान रहता है घोड़ों के पीछे, परंतु उनकी रास और लगाम उसी के हाथ में रहती है।

२. सचेतक (The whips)—नेताओं और दल के साधारण सदस्यों में सम्पर्क बनाये रखने के लिए प्रत्येक दल के कुछ सचेतक (whips) होते हैं। अनुदार दल के कामन्स सभा में १९५१ ई० से एक मुख्य सचेतक (Chief Whip), दो संयुक्त उपसचेतक (Joint Deputy chief whips) और दस सचेतक होते हैं और मजदूर दल के एक मुख्य सचेतक, एक उपसचेतक और १० सचेतक होते हैं। अनुदार दल में मुख्य सचेतक को दल का नेता चुनता है और फिर मुख्य सचेतक अपने सहयोगियों को। मजदूर दल में मुख्य सचेतक दल के द्वारा चुना जाता है और फिर वह अपने सहयोगियों को दल में से नियुक्त करता है। सभी सचेतक कामन्स सभा के सदस्य होते हैं। जब दल पदासीन रहता है तो प्रधान सचेतक राजकोष के संसदीय सचिव के (Parliamentary Secretary to the Treasury) और शेष सचेतक राजकोष के जूनियर लार्डों (Junior Lords of the Treasury) या अन्य पदों पर रहते हैं। सचेतकों के ये पद एक प्रकार के मन्त्री पद ही हैं और इनके लिए उन्हें मन्त्रियों ही के समान वेतन मिलता है। विरुद्ध में रहने वाले दलों के सचेतक अवैतनिक होते हैं। लार्ड सभा में प्रत्येक दल के दो सचेतक रहते हैं।

सचेतकों का कार्य उनके नाम से ही प्रकट है, अर्थात् दल के सदस्यों को खबरदार या सचेत रखना। उनका प्रधान कर्तव्य मत विभाजन (division) के अवसरों पर अपने दल के पर्याप्त सदस्यों को उपस्थित रखना है जिससे यथासंभव

उसकी हार न होने पावे। इसके अतिरिक्त वे नेताओं के आदेशों को दल के सदस्यों के पास पहुँचाते रहते हैं कि अमुक-अमुक बात करनी है और दल के सदस्यों की राय को नेताओं को सूचित करते रहते हैं। इस प्रकार वे नेताओं और दल के साधारण सदस्यों के बीच मध्यस्थ का काम करते हैं। विभिन्न समितियों के लिए दल के सदस्यों को छाँटना, मत विभाजन के समय सदस्यों या मतों की गणना करना, असन्तुष्ट या विद्रोही सदस्यों को समझा-बुझाकर या दबाव डालकर दल के साथ मिलाये रखना, बेपरवाह सदस्यों को डरा-धमका कर सचेष्ट करना आदि उनके अनेक काम हैं। राजनैतिक दलों पर सुप्रसिद्ध ग्रन्थ के रचयिता आस्ट्रोगोरस्की की भाषा में सचेतक पार्लमेंट में होने वाले राजनैतिक नाटक के सूत्रधार (stage-managers) हैं और लावेल (Lowell) ने उन्हें नेताओं के 'सहायक और सूचना-विभाग (aids-camp and the intelligence department) कहा है। पदासीन और विपक्षी दलों के आपस के बहुतेरे समझौते भी उनके प्रधान सचेतकों द्वारा ही आपस में तै कर लिये जाते हैं।

दलों का पार्लमेंट से बाहर का संगठन

ऊपर दलों के संसदीय भाग के संगठन का वर्णन किया गया है, पर प्रत्येक दल का अधिकांश भाग तो पार्लमेंट से बाहर, देश में उसके अनुयायियों के समूह से मिलकर बना हुआ, रहता है। अब हमें दलों के पार्लमेंट से बाहर के संगठन का वर्णन करना है।

ये बाहर के संगठन १८३२ के सुधारों के बाद बनने प्रारम्भ हुए और उनका राष्ट्रीय रूप तो १८६७ में बना। जब १८३२ के सुधार के बाद मतदाताओं की संख्या बढ़ने लगी, तो इन संगठनों की आवश्यकता पड़ी। पहले तो चुनाव के अभ्यर्थी (candidates) ही अपने मित्रों की सहायता से चुनाव सम्बन्धी अपना सभी काम कर लेते थे, क्योंकि मतदाताओं की संख्या बहुत थोड़ी थी। सुधारों के परिणाम-स्वरूप जब यह संख्या बढ़ी तो सबसे पहले दलों ने विभिन्न निर्वाचित क्षेत्रों में पंजीयन-समितियाँ (registration societies) स्थापित की जिनका काम था नये मताधिकार-प्राप्त लोगों का मतदाताओं की सूची में नाम लिखाना। शीघ्र ही ये समितियाँ चुनाव-प्रचार और चुनाव के दिन मतदाताओं को मतदान के लिये चुनाव-स्थल पर ले जाने का काम भी करने लगीं। क्रमशः इन समितियों ने स्थायी स्थानिक संगठनों (permanent local organization) का रूप धारण कर लिया है।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में इन स्थानिक संगठनों का रूप अधिक व्यापक बनाकर उन्हें राष्ट्रीय संगठनों या संघों में गूँथ देने का कार्य हुआ। इसमें दलों को बरमिंघम नगर के उदार दल के संगठन से प्रेरणा मिली। बरमिंघम के उदार

दलीय नेता जोज़ेफ़ चेम्बरलेन ने अमेरिका का अनुकरण करते हुए यह व्यवस्था की कि प्रत्येक मुहल्ले में दल के समस्त अनुयायियों की एक सभा हो, प्रत्येक मुहल्ले की दलीय सभा कुछ प्रतिनिधि चुनकर नगर की केन्द्रीय दल-सभा में भेजे और केन्द्रीय सभा चुनाव के अभ्यर्थी छाँटे और चुनाव की लड़ाई का संचालन करे। यह संगठन बहुत ही सफल सिद्ध हुआ और शीघ्र ही इसका देशव्यापी अनुकरण होने लगा। पंजीयक समितियाँ दलों के थोड़े से उत्साही कार्यकर्ताओं से ही मिल कर बनी थीं, पर नई संगठन-व्यवस्था की यह विशेषता थी कि उसमें प्रत्येक स्थान—गाँव, मुहल्ले या नगर—के दल के सभी सदस्यों को सम्मिलित करके समितियाँ या समुदाय बनाये गये और इन स्थानिक समुदायों के प्रतिनिधियों को सम्मिलित करके दल का अखिल देशीय या राष्ट्रीय संगठन स्थापित हुआ। अनुदार दल ने १८६७ ई० में और उदार दल ने १८७७ ई० में अपने राष्ट्रीय संगठन बनाये जिनके नाम क्रमशः नैशनल यूनियन आफ़ कान्सरवेटिव ऐसोसियेशन्स (National Union of Conservative Associations) और नैशनल लिबरल फ़ेडरेशन (National Liberal Federation) थे। मजदूर दल ने भी शक्तिशाली होने पर इसी प्रणाली का अनुसरण किया।

प्रत्येक दल के संगठन में मौलिक बातों में समानता होते हुए भी विस्तार की बातों में थोड़ा-बहुत भेद है। अतः प्रत्येक के संगठन का पृथक्-पृथक् वर्णन दिया जाता है।

अनुदार दल का राष्ट्रीय संगठन—अनुदार दल के राष्ट्रीय संगठन का नाम है नैशनल यूनियन आफ़ कान्सरवेटिव ऐसोसियेशन्स (The National Union of Conservative Associations)। जैसा इनके नाम से ही प्रकट है, इनकी सदस्यता केवल दल के स्थानीय या अन्य समुदायों (Associations) ही को प्राप्त हो सकती है, व्यक्तियों को नहीं। एक गिनी प्रति वर्ष शुल्क देकर कोई भी अनुदार समुदाय या संगठन इसका सदस्य बन सकता है। यह राष्ट्रीय संगठन तीन संस्थाओं से मिलकर बना है अर्थात् (१) कान्फ़रेन्स (२) काउन्सिल (३) अध्यक्ष, कोषाध्यक्ष और बोर्ड आफ़ ट्रस्टीज़।

कान्फ़रेन्स इस संगठन की प्रतिनिधि-संस्था है। इसमें प्रत्येक सदस्य समुदाय के दो प्रतिनिधि और दल के पदाधिकारी लोग सम्मिलित रहते हैं। इसकी तुलना हमारे देश के कांग्रेस दल के वार्षिक अधिवेशन से की जा सकती है। उसी की भाँति यह भी प्रति वर्ष देश के विभिन्न नगरों में अपनी बैठक किया करती है। इसके अधिवेशन में सामयिक सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर वाद-विवाद होता तथा प्रस्ताव पारित किये जाते हैं। इन प्रस्तावों का उद्देश्य दल के संसदीय भाग का पथ-प्रदर्शन करना

होता है, पर वास्तव में संसदीय दल के लोग इनकी बहुत ही कम परवा करते हैं और जैसा पहले बताया जा चुका है, स्वतन्त्र-नीति से काम करते हैं।

काउन्सिल में कान्फरेन्स द्वारा चुने हुए २४ सदस्य पदाधिकारी लोग, २० प्रांतीय समुदायों के प्रतिनिधि और कुछ अन्य सम्मानित सदस्य होते हैं। इसकी तुलना हमारे यहाँ की आल इंडिया काँग्रेस कमेटी से की जा सकती है।

कान्फरेन्स और काउन्सिल के अतिरिक्त यूनियन का एक अध्यक्ष, एक कोषाध्यक्ष और एक ट्रस्टियों की समिति (Board of trustees) होती है। इसे कदाचित् हम अपने यहाँ की काँग्रेस कार्यकारिणी समिति (Working committee) के समकक्ष समझ सकते हैं।

इस बाह्य संगठन या यूनियन का कार्य क्या है? हम बतला चुके हैं कि संसदीय दल पर तो इसका कोई नियन्त्रण है नहीं और न यह इसके प्रस्तावों या आदेशों की परवाह ही करता है। वास्तव में जैसा लावेल ने कहा है यह केवल चुनाव लड़ने वाली एक संस्था (An electioneering body) है। इसका कार्य जहाँ जरूरत हो वहाँ दल के स्थानीय संगठनों की स्थापना करना, उन्हें प्रोत्साहन और आवश्यक सहायता देना, दल के साहित्य को तैयार और वितरण करना, सूचना देना इत्यादि है। दल के नेता के चुनने में इसका कोई भाग नहीं होता और न दल की नीति ही पर इसका प्रभाव होता है। ये सब बातें संसदीय दल के क्षेत्रान्तर्गत हैं। विशेषतः नीति निर्धारण दल के नेता का कार्य है।

नैशनल लिबरल फेडरेशन—यह उदार दल का एक राष्ट्रीय संगठन है और इसकी बनावट भी अनुदारों की यूनियन ही के समान है। स्थानीय संगठनों के प्रतिनिधियों को सम्मिलित करके इसकी एक असेम्बली (Assembly) बनती है जो प्रति वर्ष विभिन्न स्थानों में अपना अधिवेशन करती है, जिसमें कि यह एक अध्यक्ष, एक कोषाध्यक्ष और एक सेक्रेटरी को चुनती है। असेम्बली के अतिरिक्त एक दूसरी संस्था जनरल कमेटी है। इसमें अध्यक्ष, कोषाध्यक्ष और सेक्रेटरी के अतिरिक्त विभिन्न स्थानिक संगठनों के प्रतिनिधि और २५ अन्य सदस्य होते हैं। इनके अतिरिक्त एक छोटी कार्यकारिणी समिति भी होती है जो संसदीय दल के नेताओं के निकट सम्पर्क में रहती है। अनुदार दल के संगठन की भाँति ही नैशनल लिबरल फेडरेशन भी संसदीय दल को नीति-विषयक आदेश देने में असफल रहा है और मुख्यतः संगठन तथा चुनाव सम्बन्धी कार्य ही करता है।

दलों के केन्द्रीय कार्यालय—ऊपर दिए हुये विवरण से यह ज्ञात होता है कि दलों का पार्लमेण्ट से बाहर का संगठन संसदीय दल पर कोई नियन्त्रण नहीं रख पाता, बल्कि इसका कार्यक्षेत्र अलग ही है अर्थात् पार्लमेण्ट से बाहर देश में दल को

पुष्ट रखना, उसमें उत्साह का संचार करना और चुनाव सम्बन्धी कार्य करना। इन सब कामों के संचालन के लिये प्रत्येक दल का एक केन्द्रीय कार्यालय (Central office) होता है।

अनुदार दल के केन्द्रीय कार्यालय का एक अध्यक्ष (Chairman) होता है जिसे दल का नेता संसदीय दल के सदस्यों में से नियुक्त करता है और जो साधारणतया मंत्रिपद की योग्यता रखता है। अध्यक्ष ही संसदीय दल और बाह्य दल को जोड़ने वाली कड़ी का काम करता है। अध्यक्ष के नीचे उपाध्यक्ष (Vice-chairman) संचालक (Director), सूचना संचालक (Director of Information) और कई अन्य वैतनिक कर्मचारी होते हैं। दल का प्रधान सचेतक भी इनसे निकट सम्पर्क बनाये रखता है। केन्द्रीय कार्यालय के ये कर्मचारी ही बाह्य संगठन की समस्त कार्यवाही का संचालन करते हैं। संगठन और प्रचार कार्य के अतिरिक्त ये दल के लोगों में से चुनाव के उपयुक्त अभ्यर्थियों की सूची भी तैयार रखते हैं जिससे यदि किसी निर्वाचन-क्षेत्र को कोई योग्य स्थानीय अभ्यर्थी न मिल सके, तो वे उसकी सहायता करें। अन्य दलों के भी ऐसे ही केन्द्रीय कार्यालय हैं।

इस प्रकार ब्रिटिश दल केवल अवैतनिक कार्यकर्ताओं पर ही नहीं निर्भर रहते। दल का वास्तविक मेरुदंड केन्द्रीय कार्यालय और उसके वैतनिक और विशेषज्ञ कार्यकर्ताओं से मिलकर बना है। प्रत्येक दल का एक गुमाश्ता या पार्टी एजेण्ट (Party agent) भी होता है जो चुनाव सम्बन्धी समस्याओं का अनुभवी विशेषज्ञ होता है।

इस प्रकार ब्रिटिश दलों का संचालन ऊपर से होता है, न कि नीचे से। दलों के आन्तरिक प्रबन्ध व संचालन में प्रजातान्त्रिक पद्धति नहीं चलती, किन्तु नेताओं की ही प्रधानता देखने में आती है। इसका कारण यह है कि दलों का प्रधान ध्येय चुनाव-युद्ध में सफलता प्राप्त करना होता है और युद्ध या संघर्ष के लिये सैनिक ढङ्ग का संगठन ही उपयुक्त होता है जिसमें थोड़े से बड़े अफसर आज्ञा देते हैं और शेष लोग बिना मीन-मेष निकाले ही उसका पालन करते हैं।

मजदूर दल का संगठन—मजदूर दल का संगठन अन्य दो पुराने दलों की भाँति ही है, पर उसकी कुछ अपनी विशेषतायें भी हैं।

मजदूर दल का अपना लिखित संविधान है जो १९१८ में बनाया गया था और १९२९ और १९३७ ई० में संशोधित किया गया।

मजदूर दल की संगठन संस्थायें निम्नलिखित हैं :—(१) पार्टी कान्फ्रेन्स,

(२) नैशनल इक्जीक्यूटिव कमेटी अर्थात् राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति (३) केन्द्रीय कार्यालय।

अन्य दलों की भाँति ही मजदूर दल की पार्टी कान्फरेन्स का अधिवेशन प्रति वर्ष भिन्न-भिन्न नगरों में होता है। आवश्यकता पड़ने पर वार्षिक के अतिरिक्त और भी अधिवेशन किये जा सकते हैं। इस कान्फरेन्स में मजदूर सभाओं (Trade unions), समाजवादी सभाओं के (Socialist societies), प्रान्तीय मजदूर दलों और अन्य सम्बद्ध संस्थाओं के प्रतिनिधि सम्मिलित होते हैं। इस कान्फरेन्स के अधिकार अन्य दलों की कान्फरेन्सों की अपेक्षा कहीं अधिक है। वास्तव में सिद्धान्त रूप से मजदूर दल की यही सर्वोच्च संस्था है और इसे दल के संविधान में परिवर्तन करने, ⅔ बहुमत से दल के कार्यक्रम को निश्चित करने और दल के सभी कार्यों पर नियन्त्रण रखने का अधिकार है। यही दल की कार्यकारिणी समिति का चुनाव भी करती है। इसके इस प्रकार के अधिकार संसदीय दल और उसके नेताओं के लिए बड़ी कठिनाई का कारण होते हैं, पर व्यवहार में कान्फरेन्स अपने अधिकारों का मनमाना प्रयोग नहीं करती और संसदीय दल तथा उसके नेताओं को मजदूर दल में भी लगभग वही स्वतन्त्रता रहती है जो अन्य दलों में।

मजदूर दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी के नियन्त्रण से उसके संसदीय दल व नेताओं की स्वतन्त्रता पर सन् १६४५ के लास्की-एटली-चर्चिल विवाद से महत्त्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। उक्त वर्ष में प्रोफेसर हैरोल्ड लास्की मजदूर दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष थे, और श्री एटली संसदीय दल के नेता तथा श्री चर्चिल युद्धकालीन सर्वदलीय सरकार में मन्त्री। चर्चिल ने ब्रिटेन, अमेरिका व रूस के पाट्सडैम नामक स्थान में आयोजित सम्मेलन में भाग लेने के लिये श्री एटली को आमंत्रित किया। इस पर प्रोफेसर लास्की ने एक वक्तव्य निकाल कर यह कहा कि श्री एटली उक्त सम्मेलन में केवल पर्यवेक्षक (observer) के रूप में जा सकते हैं, और उस सम्मेलन में स्वीकृत किसी निर्णय से मजदूर दल तब तक बाध्य नहीं होगा जब तक कि उसे दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति स्वीकृत न कर ले। लास्की के वक्तव्य का अभिप्राय यह था कि मजदूर दल के संसदीय नेता को स्वतन्त्र रूप से कोई निर्णय करने का अधिकार नहीं है और उसके द्वारा स्वीकृत नीति या निर्णय को दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी स्वीकार या अस्वीकार करने का अधिकार रखती है। जुलाई १६४५ के आम चुनाओं से कुछ पहिले इस प्रश्न को लेकर एक ओर प्रोफेसर लास्की और श्री एटली और दूसरी ओर चर्चिल थे। चर्चिल और एटली में बड़ा वाद-विवाद चला। चर्चिल ने मजदूर दल पर यह लांछन लगाया कि लास्की के वक्तव्यानुसार मजदूर दलीय सरकार व नेता पार्लमेंट के प्रति उत्तरदायी न होकर अपने दल

के प्रति उत्तरदायी हैं जो कि ब्रिटिश लोकतंत्रीय शासन के सिद्धान्त के विरुद्ध है। इस से मंत्रिमण्डल की कार्यवाही की गोपनीयता में बाधा पड़ती है। उन्होंने यह भी कहा कि यदि ऐसी बात नहीं है तो श्री एटली को लास्की द्वारा प्रकाशित मत का सार्वजनिक रूप से खंडन करना चाहिये। इसके उत्तर में श्री एटली ने प्रोफ़ेसर लास्की द्वारा किये हुये दावे निराधार और भ्रान्त बतलाया और कहा कि मजदूर दल के संविधानानुसार अथवा उसके वार्षिक सम्मेलन के किसी निर्णयानुसार मजदूर संसदीय दल समिति के राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के नियंत्रणाधीन या किसी प्रकार उस के प्रति उत्तरदायी नहीं है। इस पर प्रोफ़ेसर लास्की ने कहा कि उन्हें व्यर्थ ही में बलिदान का बकरा (scape-goat) बनाया गया और उन्होंने श्री एटली द्वारा प्रतिपादित वैधानिक स्थिति से अपनी पूर्ण सम्मति प्रकट की।

राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति (National Executive Committee)—मजदूर दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति में दल का नेता, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष पदेन (Ex-officio) सदस्य के रूप में सम्मिलित रहते हैं। इनमें से १२ मजदूर सभाओं के प्रतिनिधि, ७ निर्वाचन-क्षेत्रों के मजदूर दलों के प्रतिनिधि ५ स्त्री सदस्य और १ समाजवादी और सहकारी समितियों का प्रतिनिधि होते हैं। मजदूर सभायें, निर्वाचन क्षेत्रों के मजदूर दल और समाजवादी तथा सहकारी समितियाँ स्वयं ही अपने-अपने प्रतिनिधियों को मनोनीत करती हैं, परन्तु ५ स्त्री सदस्यों को कान्फरेन्स चुनती है।

कार्यकारिणी समिति की बैठक प्रतिमास या मास में दो बार हुआ करती है और यह अपना कार्य कई उपसमितियों द्वारा करती है। इसके कार्य निम्नलिखित हैं:—

(१) प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र में मजदूर दल की शाखायें स्थापित करना,

(२) कान्फरेन्स के निर्णयों को कार्यान्वित करना,

(३) दल के संविधान विषयक विवादों का निर्णय करना,

(४) दल के संविधान के विरुद्ध काम करने वाले व्यक्तियों या संगठनों के विरुद्ध अनुशासन की कार्रवाही करना या उन्हें दल से बहिष्कृत कर देना,

(५) केन्द्रीय कार्यालय के विविध कार्यों की देख-रेख रखना।

मजदूर दल के संगठन में मजदूर सभा कांग्रेस (Trade Union Congress) का बड़ा प्रभाव रहता है। कार्यकारिणी के २५ सदस्यों में से १२ मजदूर सभाओं के प्रतिनिधि होते हैं। दल के लिए आवश्यक द्रव्य भी मजदूर सभायें ही अपने सदस्यों पर अनिवार्य चन्दा (Compulsory political levy) लगा कर एकत्र करती है। दल के अनुयायियों में सबसे बड़ी संख्या संगठित मजदूरों की है। मजदूर सभा कांग्रेस के अतिरिक्त मजदूर दल की अन्य दो सहायक संस्थायें भी हैं अर्थात् मजदूर

दल (The Independent Labour Party or I. L. P.) और फैबियन सोसाइटी (Fabian society)। ये दोनों दल की बौद्धिक पक्ष (Intellectual Front) से सहायता करती हैं।

अन्य दलों की भाँति ही मजदूर दल का भी केन्द्रीय कार्यालय (Central office) है जो दल के कोषाध्यक्ष और सेक्रेटरी के तत्वावधान में कार्य करता है। इसका संगठन भी अन्य दलों के केन्द्रीय कार्यालयों के संगठन की भाँति का है। इसमें बहुत से विशेषज्ञ और वैतनिक कर्मचारी भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यों को करने के लिए अनेक विभागों में सङ्गठित हैं।

ब्रिटिश दलों की कार्यप्रणाली

अभ्यर्थियों का चुनाव—प्रत्येक दल को चुनाव के लिये योग्य अभ्यर्थी छाँटने पड़ते हैं जो उसके नाम पर खड़े किये जा सकें। उदार और अनुदार दलों में तो दल की स्थानीय शाखाओं को अपने-अपने क्षेत्रों के लिए अभ्यर्थी छाँट लेने की स्वतन्त्रता है। इन दलों का केन्द्रीय या राष्ट्रीय संगठन इस मामले में हस्तक्षेप नहीं करता। यदि किसी निर्वाचन-क्षेत्र को उपयुक्त अभ्यर्थी ढूँढ़ने में कठिनाई हो और वह सहायता चाहे, तो केन्द्रीय संगठन या कर्यालय उसे कोई उपयुक्त नाम बतला देंगे, अन्यथा वे हस्तक्षेप नहीं करते।

मजदूर दल की व्यवस्था इससे भिन्न है। इसमें स्थानीय शाखाओं द्वारा छाँटे हुए नामों पर दल के केन्द्रीय संगठन की स्वीकृति लेनी आवश्यक है। यह अवश्य है कि केन्द्रीय सङ्गठन इस स्वीकृति को देने से साधारणतया इनकार नहीं करता, पर उसे इनकार करने का अधिकार है जिसका जब तब प्रयोग भी होता है। इस कारण स्थानी शाखायें अपने अभ्यर्थी अधिकतर केन्द्रीय संगठन द्वारा स्वीकृत एक सूची में से ही, जो पहले ही तैयार कर ली जाती है, छाँटती हैं। अभ्यर्थियों को दल की नीति व नेताओं का अनुशासन मानने का वचन देना पड़ता है। इस वचन को भङ्ग करने से अगली बार अभ्यर्थी नहीं बनाये जाते। सदस्यों पर दल का इस प्रकार का अनुशासन केवल मजदूर दल ही में नहीं, किन्तु अन्य दलों में भी पाया जाता है।

दलों की प्रचार-रीतियाँ—चुनाव जीतने के लिए उसी समय का किया हुआ प्रचार पर्याप्त नहीं होता। दलों को निरन्तर ही प्रचार कार्य में लगा रहना पड़ता है जिससे उनके अनुयायियों का उत्साह बढ़ता रहे और मतदाताओं की राजनैतिक शिक्षा होती रहे। इसके लिए राजनैतिक दल अनेक प्रकार के उपायों का सहारा लेते हैं जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं।

(१) विभिन्न दल अपने नवयुवक संगठन (Youth Organizations) बनाते हैं जिनके द्वारा वे नवयुवकों पर प्रभाव डाल सकें और उन्हें अपना समर्थक बना लें। अनुदार दल का 'यंग कान्जरवेटिव आरगनाइजेशन' (Young Conservative Organization), उदार दल की 'नैशनल लीग आफ यंग लिबरल्स' (the National League of Young Liberals) और मजदूर दल की 'लेबर लीग आफ यूथ (Labour League of Youth) इस प्रकार के संगठनों के उदाहरण हैं। स्कूलों, कालिजों और विश्वविद्यालयों में भी विभिन्न दलों का प्रभाव देखा जाता है, अर्थात् उनमें से कुछ में एक दल की विचार-धारा से सहानुभूति देखी जाती है, तो अन्यों में अन्य दलों की। पादरियों और गिर्जाघरों का भी यही हाल है। उनके उपदेशों में यदा-कदा राजनैतिक पुट भी रहता है।

(२) विभिन्न दल अपने-अपने मतों की पुष्टि के लिए अन्वेषण तथा प्रकाशन (research and publication) का भी आश्रय लेते हैं। वे छोटी-छोटी पुस्तिकायें, विद्वतापूर्ण ग्रन्थ, पत्रिकायें, समाचार-पत्र आदि प्रकाशित करते हैं। प्रत्येक दल के अपने-अपने अलग समाचार-पत्र हैं; जैसे अनुदार दल का डेली टेलीग्राफ, उदार दल का न्यूज़ क्रानिकल, मजदूर दल का डेली हेराल्ड, [illegible] का डेली [illegible]। ये पत्र तो खुले रूप से विभिन्न दलों का पक्ष लेते हैं, पर राष्ट्रीय महत्त्व के पत्रों का भी इस या उस दल की ओर झुकाव देखा जाता है जैसे 'टाइम्स' अनुदार दल से और मैनचेस्टर गार्जियन उदार दल से सहानुभूति रखता है।

(३) कार्यकर्ताओं के शिक्षण और पथ-प्रदर्शन के लिए विभिन्न दल ग्रीष्म-शालाओं (summer schools) और कालिजों का आयोजन करते हैं। दल के लोगों को मिलने-जुलने और राजनैतिक चर्चा का अवसर देने के लिए प्रत्येक दल के अपने अलग-अलग क्लब हैं जैसे अनुदारों का कार्लटन क्लब, उदार दल का नैशनल लिबरल क्लब इत्यादि।

(४) प्रत्येक दल के कई-कई सहायक संगठन (ancillary organizations) भी हैं जो उनके दृष्टिकोण का समर्थन व प्रचार करते हैं जैसे अनुदार दल की प्रिम रोज लीग (the Prim Rose League), व मजदूर दल का फैबियन सोसायटी (Fabian Society), उदार दल की नैशनल रिफार्म यूनियन (the National Reform Union), सोशलिस्ट मेडिकल ऐसोसियेशन आदि। विभिन्न दलों के नवयुवक संगठनों की चर्चा पहले की जा चुकी है।

(५) दलीय प्रचार के लिए व्याख्यानों, सभाओं, जलूसों, सिनेमा, रेडियो, वार्ताओं का भी आश्रय लिया जाता है—विशेषतः चुनाव के दिनों में।

दलों के द्रव्य-कोष (Party funds)—दलों को प्रचार कार्य करने तथा चुनाव लड़ने में बहुत-सा धन खर्च करना पड़ता है। यह सब कहाँ से और कैसे इकट्ठा किया जाता है ? दलों द्वारा अपनी धन-संग्रह की प्रणाली को साधारणतया गुप्त रक्खा जाता है। और विभिन्न दलों में इस विषय में एक दूसरे का छिद्रान्वेषण न करने का समझौता-सा दिखलाई पड़ता है। तो भी प्रत्येक दल की धन-संग्रह की प्रणाली के विषय में कुछ बातें ज्ञात हैं और वे निम्नलिखित हैं :—

अनुदार और उदार दलों के कोष की पूर्ति सदस्यों द्वारा दिये हुये चन्दों से होती है। कहने को तो ये चन्दे हैं, पर इनके पीछे देने वालों का स्वार्थ भी छिपा रहता है। अनुदार दल को अपने बड़े-बड़े अनुयायियों से बड़ी-बड़ी रकमें मिलती हैं—विशेषतः बड़े-बड़े जमींदारों, साहूकारों, मद्य उद्योगपतियों और पूँजीपतियों से। उदार दल को भी अपने समर्थकों से चन्दे के रूप में ही धन मिलता था। प्रथम महायुद्ध के बाद लायड जार्ज ने उपाधियों की बिक्री की प्रथा निकाली अर्थात् अपने दल को बड़े-बड़े चन्दे देने वालों को उपाधियाँ देना प्रारम्भ किया और इस प्रकार उदार दलके लिए एक बड़ी निधि एकत्र की। परन्तु उदार दल कभी अनुदार दल की भाँति समृद्ध न था और आजकल अपने ह्रास के दिनों में उसे आर्थिक कठिनाई में रहना स्वाभाविक ही है।

मजदूर दल की आमदनी का अधिकांश सदस्यता-शुल्क से प्राप्त होता है। मजदूर सभाओं, समाजवादी समितियों और अन्य सदस्य संस्थाओं को दल के केन्द्रीय कोष में ६ पेंस प्रति सदस्य वार्षिक के हिसाब से देना पड़ता है, अर्थात् यदि किसी मजदूर-सभा के १००० सदस्य हों तो उसे ६००० पेंस वार्षिक देना पड़ेगा, पर सदस्यों की संख्या चाहे जितनी कम हो, ६ पौण्ड वार्षिक निम्नतम शुल्क है, अर्थात् इससे कम किसी सदस्य संख्या से नहीं लिया जाता। मजदूर दल को अनुदार दल की भाँति धनी अनुयायियों से बड़ी-बड़ी रकमें प्राप्त होने की सुविधा नहीं है।

अभ्यास

१. राजनैतिक दल का क्या अर्थ है ? प्रजातन्त्रीय शासन से उनका क्या महत्त्व है ?

What do you understand by a political party ? What part do they play in the working of democratic government ?

२. 'ब्रिटेन के उदार और अनुदार दल वास्तव में एक ही दल के दो पक्ष थे', लास्की के इस मत की आलोचनात्मक व्याख्या करो।

'The conservatives and the liberals were really the two wings of the same party.' Critically discuss this view of Prof. Laski.

३. द्विदलीय पद्धति की प्रधानता से ब्रिटेन को क्या लाभ हुए हैं ? ब्रिटेन में इस पद्धति के स्थायित्व के क्या कारण हैं ?

What advantages has the two party system given to Britain ? What are the reasons for its strength ?

४. विभिन्न ब्रिटिश दलों के सिद्धांतों और प्रभाव क्षेत्रों का संक्षिप्त विवरण दो।

Briefly describe the principles and the spheres of influence of the several British political parties.

५. ब्रिटिश दलों का संसदीय संगठन किस प्रकार का है ? दल के [illegible] से उसका कैसा सम्बन्ध है ?

Describe the parliamentary organisation of the British political parties. What is the relationship between it and the party organisation outside parliament ?

६. मजदूर दल के संगठन पर संक्षिप्त निबन्ध लिखो।

Write a short essay on [illegible] the British labour party.

७. ब्रिटेन के राजनैतिक दल अपना प्रचार किन-किन रीतियों से करते हैं ?

What methods of propaganda and political education of the people do the British political [illegible] ?

८. ब्रिटिश दलों की आय के कौन-कौन साधन हैं ?

In what ways are the party funds collected in Britain ?

९. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखो :—

छाया [illegible], सचेतक, नैशनल यूनियन आफ [illegible] ऐसोसियेशन्स, नैशनल लिबरल फेडरेशन, दलों के केन्द्रीय कार्यालय।

Write short notes on the following :—

Shadow cabinet, whips, the National Union of the Conservative Associations, the National Liberal Federations, the central offices of the parties.

अध्याय १०

ब्रिटिश कानून और न्याय व्यवस्था

तीन प्रकार के ब्रिटिश कानून—कामन ला—इक्विटी—पार्लमेंट द्वारा निर्मित कानून—ब्रिटिश न्यायालयों का संगठन—नीचे का दीवानी न्यायालय—नीचे की फौजदारी अदालतें—जूरीप्रथा—न्यायाधीशों द्वारा कानूनों की व्याख्या तथा निरीक्षण—प्रशासनीय न्याय व्यवस्था—ब्रिटिश न्याय-पद्धति की उत्कृष्टता—ब्रिटिश न्याय व्यवस्था के मूल सिद्धान्त—न्याय-पद्धति की सरलता और शीघ्रगामिता—न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता और निष्पक्षता—ब्रिटिश वकील लार्ड चान्सलर और उसके कार्य—जुडीशल कमिटी आफ़ प्रिवी काउन्सिल।

अ—ब्रिटिश कानून

तीन प्रकार के ब्रिटिश कानून—कानून की परिभाषा के विषय में विधान शास्त्रियों (Jurists) में बहुत कुछ मतभेद है। कोई उन्हें शाश्वत नैसर्गिक नियम कहते हैं तो कोई केवल राजाज्ञा। ब्रिटेन में कानून की एक व्यावहारिक परिभाषा सर्व-सम्मत है और वह यह कि जिन किन्हीं नियमों को न्यायालय मानें और व्यवहार में लावें वे कानून हैं। वे कहाँ से आये अथवा कैसे बने—ये सब गौण बातें हैं। कानून की पहिचान यही है कि न्यायालय उनका पालन करें और करायें।

अपने उद्गम-स्थान और निर्माण-रीति के भेद के अनुसार ब्रिटेन में तीन प्रकार के कानून प्रचलित हैं अर्थात्—(१) कामन ला अथवा देश का सामान्य कानून, (२) इक्विटी (Equity) या नैसर्गिक न्याय रक्षार्थ बना हुआ कानून और (३) स्टैट्यूट ला (Statute law) अर्थात् पार्लमेंट द्वारा निर्मित कानून। इनकी अधिकार मात्रा उत्तरोत्तरोत्कर्षक्रम (in ascending order) से है अर्थात् इक्विटी कामन ला का उल्लंघन (override) कर सकती है और स्टैट्यूटला, कालन ला और इक्विटी दोनों का।

कामन ला (the Common law) या लोकविधि—कामन ला प्राचीन समय से चले आये हुए देश के रीति-रिवाजों से मिलकर बना है। इसका इतिहास सैक्सनकाल से प्रारम्भ होता है। उन दिनों देश कई टुकड़ों में बँटा था और सभी स्थानों के रीति-रिवाज भी एक से न थे, पर कालान्तर में इनमें के कुछ रीति-रिवाज अपनी उत्तमता या उपादेयता के कारण सभी या अधिकांश स्थानों

में मान्य हो गये और उन्हीं के समूह का 'कामन ला' नाम पड़ा। नार्मन-विजय के बाद जब ब्रिटेन में केन्द्रीय सत्ता के प्रभाव की वृद्धि होने लगी, तो स्थानीय न्यायालयों के स्थान में सम्राट् द्वारा नियुक्ति न्यायाधीश स्थान-स्थान का दौरा करके न्याय करने लगे। इन्होंने कामन ला की एकसूत्रता के विकास में बड़ी सहायता की। यह स्वाभाविक ही था, क्योंकि ये सब न्यायाधीश केन्द्रीय सत्ता के कर्मचारी थे और मिलते-जुलते रहकर उन सामान्य निमयों की आपस में चर्चा करते रहते थे जिनके अनुसार न्याय होना चाहिये। फल यह हुआ कि इस काल में, विशेषतः हेनरी द्वितीय (११५४–८९) के शासन समय में, न्यायाधीशों ने स्थान-स्थान के विभिन्न रीति-रिवाजों का मन्थन करके उनके आधारभूत सामान्य तत्वों को पृथक् करके उन्हें ही देशव्यापी मान्यता दिया और इस प्रकार एक अखिल-देशीय कामन ला की सृष्टि की।

इस विकास-इतिहास से कामन ला के प्रमुख लक्षणों पर प्रकाश पड़ता है। कामन ला न्यायाधीशों द्वारा निर्मित (Judge-made) कानून है और उन्हीं द्वारा दिये हुये निर्णयों (decisions) में निहित है। इन निर्णयों में आधारभूत नियमों या सिद्धान्तों का यत्र-तत्र स्पष्टीकरण पाया जाता है। एक मामले में सिद्धान्त निर्धारित हुआ, वह भविष्य के लिये नजीर (Precedent) बन गया। अर्थात् भविष्य में उठने वाले उसी प्रकार के मामलों का उसी नियम या सिद्धान्त के अनुसार निर्णय होने लगा। इन नियमों या सिद्धान्तों के समूह का ही नाम कामन ला है।

इसका यह अर्थ न समझना चाहिये कि कामन ला न्यायालयों के निर्णयों में ही बिखरा पड़ा है और एकत्र कहीं पाया ही नहीं जाता। यह अवश्य है कि अधिकृत रूप से सरकार द्वारा यह कभी उस रूप में एकत्रित व प्रकाशित नहीं किया गया जैसे कि पार्लमेंट द्वारा निर्मित कानून होते हैं। पर समय-समय पर विद्वान विधान-शास्त्रियों (Jurists) ने कामन-ला को एकत्र कर टीका-टिप्पणी समेत पुस्तकाकार प्रकाशित किया है जैसे रेनल्फ ग्लैनविल ने बारहवीं और ब्लैकस्टन ने अठारहवीं शताब्दी में। इनकी टीकाओं द्वारा कामन-ला न केवल एकत्रित हुआ है, किन्तु उत्तरोत्तर विकसित भी हुआ है।

पन्द्रहवीं शताब्दी में जब ब्रिटिश जाति ने अन्य द्वीपों में अपने उपनिवेश बनाने प्रारम्भ किये, तो वे अपने साथ कामन ला को भी ले गये। फलस्वरूप कामन ला आज न केवल ब्रिटेन में किन्तु सागर पार अँग्रेज जाति द्वारा बसाये अन्य देशों में भी पाया जाता है—जैसे संयुक्त राज्य अमरीका में।

पार्लमेंट का उत्कर्ष होने के बाद कानून निर्माण का कार्य उसके द्वारा होने लगा और आजकल तो प्रति वर्ष पार्लमेंट लगभग सौ नये कानून बनाती है। कामन ला की इस प्रकार की अब वृद्धि नहीं होती। पर ब्रिटिश कानून व्यवस्था का आधार

आज भी कामन ला ही है। पार्लमेण्ट द्वारा बनाये कानून उसके पूरक हैं न कि प्रतिद्वन्द्वी। यदि कामन ला को अलग कर दिया जाय, तो केवल पार्लमेण्ट द्वारा निर्मित कानून कानूनी व्यवस्था के छिन्न-भिन्न पैवंदों की भाँति दिखेंगे जिनका मूलाधार-वस्त्र उड़ गया है। पर पार्लमेंट द्वारा निर्मित कानून कामन ला का किसी भी व्यवस्था में परिवर्तन कर सकता है और दोनों में किसी भी बात पर विरोध होने पर पार्लमेण्ट का निर्मित कानून ही मान्य समझा जायगा।

इक्विटी (Equity) या नैसर्गिक न्याय—इक्विटी का अर्थ है समान या नैसर्गिक न्याय, पर ब्रिटेन में यह शब्द एक विशेष अर्थ में रूढ़ हो गया है अर्थात् कानून की वह शाखा जिसका विकास, कामन ला की त्रुटियों को दूर करने के प्रयत्न में हुआ। इक्विटी का इतिहास भी बहुत पुराना है और एङ्लिवेन या कदाचित नार्मन काल हीं से प्रारम्भ होता है। इसकी उत्पति इस सिद्धान्त से हुई कि सम्राट् सभी कानूनों के ऊपर है और आवश्यक हो तो सच्चे न्याय के हित में कानून की धाराओं का उल्लंघन करके भी निर्णय दे सकता है। अतएव, जो लोग यह समझते थे कि उनके मामलों में कामन ला का अनुसरण करने से यथार्थ न्याय नहीं हो सका है, उन्होंने सम्राट् से आवेदन-पत्र द्वारा प्रार्थना करना प्रारम्भ किया है कि वे अपने न्याय-विवेक के अनुसार उनके मामलों का पुनर्निर्णय करें। इस प्रकार सम्राट् के विवेक (conscience) के अनुसार निर्णय की प्रथा चली। कालान्तर में इस प्रकार के आवेदन-पत्रों की संख्या इतनी बढ़ गई कि स्वयं सम्राट् को उसका निर्णय करने को पर्याप्त समय न मिल सकता था। अतः उन्होंने यह कार्य अपने कार्यालय के अध्यक्ष 'चान्सलर' (chancellor) के सिपुर्द कर दिया। चान्सलर इस काम के लिये उपयुक्त भी था, क्योंकि उन दिनों वह प्रधान पादरियों में से नियुक्त होता था और न्याय, नैतिकता, विवेक आदि के प्रश्नों के निर्णय के लिये उससे अच्छा अधिकारी और कौन होता ? अतः सम्राट् के बदले चान्सलर ही ऐसे मामलों का निर्णय करने लगा और उसे 'सम्राट के विवेक का रक्षक' (the keeqer of the king's conscience) कहा जाने लगा और आगे चलकर यह काम चान्सलर के लिये भी बहुत अधिक हो गया और तब उसके सहायक नियुक्त किये गये जिन्हें मास्टर्स इन चान्सरी, (masters in chancery) कहते थे। अन्त में इन्हें एक पृथक न्यायालय के ही रूप में सङ्गठित कर दिया गया जिनका नाम 'कोर्ट आफ चान्सरी' (court of chancery) पड़ा। इस न्यायालय के निर्णयों के आधार-भूत नियमों या सिद्धान्तों को मिला कर ही कानून की 'इक्विटी' शाखा की सृष्टि हुई।

कामन ला की भाँति ही 'इक्विटी' भी न्यायाधीशों द्वारा ही निर्मित कानून है। इसे कामन ला का एक प्रकार का संशोधन कहा जा सकता है, पर इसे उससे

पृथक् और कानून की एक स्वतंत्र शाखा मानने की परिपाटी चल पड़ी है। कार्य-सिद्धान्त पक्ष में यह रोमन ला से विशेष प्रभावित हुआ है और इसकी अपनी अलग पद्धति (Procedure) भी है। पहले इसके न्यायालय भी पृथक थे, पर अब ऐसा नहीं है।

इक्विटी का क्षेत्र अपेक्षाकृत छोटा ही है। उसमें केवल दीवानी मामले आते हैं। फौजदारी कानून या मामलों से इसका कोई सम्बन्ध नहीं। फिर, दीवानी मामलों के भी कुछ ही प्रकार इक्विटी के क्षेत्र में आते हैं जैसे (trustees) द्वारा सम्पत्ति-प्रबन्ध के मामले। अन्य प्रकार के मामले साधारण न्यायालयों में ही जाते हैं। कुछ ऐसे भी मामले होते हैं जिन्हें वैकल्पिक रीति से चाहे 'इक्विटी' के अनुसार निर्णय कराया जा सकता है चाहे साधारण कानून के अनुसार।

पार्लमेंट द्वारा निर्मित कानून—कामन ला और इक्विटी—ये ब्रिटिश कानून की प्राचीन शाखाएँ हैं और यद्यपि इनका उपयोग आज भी पहले ही की भाँति हो रहा है, पर अब इनका विकास बन्द है अर्थात् इनके क्षेत्र का नई दिशाओं में विस्तार नहीं होता। अब नये नियमन की जो कुछ आवश्यकता पड़ती है वह पार्लमेंट द्वारा निर्मित कानून या स्टैट्यूट (statute) से पूर्ण होती है। स्टैट्यूट की सर्वोपरि मान्यता भी है। उसके द्वारा पार्लमेंट कामन ला या इक्विटी के किसी भी नियम को संशोधित या रद कर सकती है।

ब्रिटिश न्यायालय व्यवस्था

ब्रिटिश न्यायालयों का संगठन—अब से ७०-८० वर्ष पहले ब्रिटिश न्यायालयों का सुव्यवस्थित संगठन न था। अनेक प्रकार के न्यायालय देश भर में बिखरे पड़े थे जैसे दीवानी न्यायालय, फौजदारी न्यायालय, इक्विटी न्यायालय, उत्तराधिकार तथा तलाक सम्बन्धी न्यायालय, धार्मिक (ecclesiastical) न्यायालय इत्यादि। इनके पारस्परिक सम्बन्धों और अधिकार क्षेत्रों को समझना केवल विशेषज्ञों के लिए ही संभव था और बहुधा विशेषज्ञों में भी इस बात पर मतभेद हो जाता था कि कौन मामला किस न्यायालय में जाना चाहिये। इस गड़बड़ी का अन्त और स्पष्ट तथा सुबोध व्यवस्था करने के लिए १८७३-७६ में महत्त्वपूर्ण सुधार हुए जिनके परिणाम-स्वरूप सभी न्यायालय एक ही सूत्र में बाँध दिये गये और उनके पारस्परिक सम्बन्ध निश्चित हो गये। जितने भी न्यायालय थे उन सब को एक ही सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court of Judicature) की शाखाओं का रूप दे दिया गया। लार्ड सभा का न्याय-कार्य समुचित रूप से करने के लिए उसके सदस्यों में कानूनी लार्डों की नियुक्ति करने की व्यवस्था हुई।

ब्रिटिश न्यायालयों के वर्तमान संगठन के शिखर पर लार्ड सभा और लार्ड-चान्सलर हैं। इनके नीचे सर्वोच्च न्यायालय है जिसे अँग्रेजी में सुप्रीम कोर्ट आफ जुडीकेचर (Supreme Court of Judicature) कहते हैं। इस सर्वोच्च न्यायालय के दो विभाग हैं—(१) कोर्ट आफ अपील और (२) हाईकोर्ट आफ जस्टिस या उच्च न्यायालय। उच्च न्यायालय की पुनः तीन शाखाएँ हैं जिनके नाम हैं (अ) किंग्स (अथवा क्वीन्स) बेञ्च, (King's or Queen's Bench) (ब) चान्सरी और (स) प्रोबेट, डाइवोर्स ऐण्ड ऐडमिरल्टी (Probate, Divorce and Admiralty)। इन शाखाओं में से चान्सरी (Chancery) के पास इक्विटी (Equity) सम्बन्धी मामले जाते हैं और प्रोबेट, डाइवोर्स, ऐडमिरल्टी शाखा के पास उत्तराधिकार-पत्र सम्बन्धी (वसीयतनामा probate) तलाक सम्बन्धी (divorce) या समुद्र-यात्रा करते हुये जहाजों पर हुये अपराधों सम्बन्धी (Admiralty) मामले जाते हैं। अन्य सभी प्रकार के मामले, चाहे वे दीवानी हों या फौजदारी, किंग्स बेञ्च, शाखा के पास जाते हैं। कोर्ट आफ़ अपील उच्च न्यायालय की इन शाखाओं के फैसलों की अपील सुनती है और उसके भी ऊपर लार्ड सभा में अपील होती है।

यह तो हुआ चोटी के न्यायालयों का वर्णन। उच्च न्यायालय (High Court of Justice) के नीचे छोटी दीवानी और फ़ौजदारी न्यायालयों की दो अलग-अलग शृङ्खलाएँ हैं जिनमें से प्रत्येक का पृथक् वर्णन आवश्यक है।

नीचे के दीवानी न्यायालय—हाईकोर्ट के नीचे के दीवानी न्यायालयों को काउंटी कोर्ट (County Courts) कहते हैं। काउण्टियाँ ब्रिटेन के उपविभाग हैं जैसे हमारे भारत के जिले, और इनकी संख्या ६२ है, पर न्याय प्रबन्ध के लिए ये लगभग ५०० क्षेत्रों (districts) में बँटी हैं और हर क्षेत्र में एक न्यायालय-भवन (Court House) है। इन ५०० क्षेत्रों को ६० हल्कों (Circuits) में जोड़ दिया गया है और प्रत्येक हल्के के लिए एक न्यायाधीश होता है जिसकी नियुक्ति लार्ड चान्सलर करता है। हल्के का न्यायाधीश अपने अधीन प्रत्येक क्षेत्र के न्यायालय-भवन में बारी-बारी से महीने में कम से कम एक बार दौरा करने जाता है और वहाँ के मुकदमों को सुनता और निर्णय करता है। इन्हीं क्षेत्रीय न्यायालयों का नाम 'काउंटी' न्यायालय है, यद्यपि इनका अधिकार-क्षेत्र काउण्टी की अपेक्षा कहीं छोटा होता है। इन न्यायालयों में २०० पौंड से कम मूल्य के ही मुकदमे दायर होते हैं और उनमें अधिकांश तो १० या ५ पाउण्ड मूल्य के ही होते हैं। ५ पौंड से अधिक मूल्य होने पर जूरी (Jury) द्वारा विचार की प्रार्थना की जा सकती है।

काउण्टी कोर्ट के फैसलों की अपील उच्च न्यायालय में होती है। यदि मुकदमे का मूल्य काउण्टी न्यायालय के अधिकार-क्षेत्र के बाहर हुआ तो वह सीधे हाईकोर्ट

ही के 'किंग्स बेञ्च डिवीजन' में दायर होता है। बिना हाईकोर्ट या कोर्ट आफ़ अपील की अनुमति के हाईकोर्ट से आगे कोई मामला नहीं बढ़ाया जा सकता। यदि मामला इक्विटी या तलाक आदि का हुआ, तो भी सीधे हाईकोर्ट की उपयुक्त शाखा में दायर होता है। इस प्रकार हाईकोर्ट आफ़ जस्टिस के अधिकार (Jurisdiction) कुछ मामलों में प्रारंभिक (original) और अन्यों में अपील सुनने के (appellate) हैं। बड़े मूल्य या महत्त्व के मामले कोर्ट आफ़ अपील और उससे भी आगे लार्ड-सभा के समक्ष अपील द्वारा ले जाये जा सकते हैं।

नीचे की फ़ौजदारी अदालतें—फौजदारी मामले सर्वप्रथम एक या अधिक जस्टिसेस आफ़ पीस (Justices of Peace) के सामने लाये जाते हैं। इन जस्टिसों की तुलना अपने यहाँ के आनरेरी मैजिस्ट्रेटों से की जा सकती है। उन्हीं की भाँति ये अवैतनिक होते और सरकार द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। इन जस्टिसों का अधिकार-क्षेत्र काउण्टी (County) होता है या बरो, पर इनमें से कई-कई जस्टिस आफ पीस होते हैं। किसी-किसी काउण्टी में तो उनकी संख्या ३०० या और अधिक होती है। सम्पूर्ण देश में २०,००० के लगभग जस्टिस आफ पीस हैं। इनकी नियुक्ति लार्ड चान्सलर स्थानीय समितियों के परामर्श से करता है। बहुतेरे जस्टिस अपने पद की न तो शपथ ही लेते हैं और न काम ही करते हैं। प्रत्येक क्षेत्र में सार्वजनिक प्रवृत्तिवाले कुछ ही ऐसे जस्टिस आफ पीस होते हैं जो कार्यशील रहते हैं।

अपने सामने मामला आने पर यदि वह छोटा छोटा हुआ तो जस्टिस आफ पीस उसका स्वयं ही निर्णय कर देता है पर वह २० शिलिंग से अधिक जुर्माना या १४ दिन से अधिक कैद की सजा नहीं दे सकता। यदि जस्टिस देखता है कि मामला उसके अधिकारक्षेत्र से बाहर है और प्रारम्भिक सबूत के आधार पर सच्चा मालूम होता है, तो वह अपराधी को विचार-सुपुर्द (Commits for Trial) कर देता है, अन्यथा उसे छोड़ देता है। विचार सुपुर्द-अभियुक्त को जमानत पर छोड़ने या न छोड़ने का भी उसे अधिकार होता है।

विचार सुपुर्द अभियुक्त का मामला 'पेटी सेशन्स' (Petty Sessions) या 'क्वार्टर सेशन्स' (Quarter sessions) नामक न्यायालयों में जाता है। ये दोनों न्यायालय भी जस्टिस आफ पीस लोगों से ही मिलकर बने होते हैं, पर अन्तर यह है कि पेटी सेशन्स में पास-पड़ोस के ही कम से कम दो जस्टिस होने से काम चल जाता है, लेकिन क्वार्टर सेशन में पूरी काउण्टी के जस्टिस सम्मिलित हो सकते हैं यद्यपि वास्तव में भाग लेने वालों की संख्या १० १२ से अधिक नहीं होती। पेटी सेशन्स न्यायालय ५० पौण्ड तक जुर्माना और ६ मास तक की सजा दे सकता है। इसके निर्णयों के विरुद्ध 'क्वार्टर-सेशन्स' में अपील होती है।

अधिक गंभीर मामलों में जिनमें अभियुक्त पर लिखित और निश्चित आरोप लगाये गये हों, 'क्वार्टर सेशन्स न्यायालय' या 'असाइजेज न्यायालय' (Assizes Courts) में जाते हैं। असाइजेज न्यायालय अपने यहाँ के सेशन जज की अदालत का समकक्ष है। उसमें उच्च न्यायालय के किंग्स बेञ्च विभाग (King's Bench Division) के २ न्यायाधीश होते हैं, जो दौरा करते हुये बारी-बारी से काउण्टियों के मुख्य नगरों में जाते और वहाँ के मामलों को सुनते हैं। इस न्यायालय में अभियुक्त नागरिकों में से चुने हुये १२ व्यक्तियों की जूरी की सहायता से विचार करने की प्रार्थना कर सकता है और वह इनमें से किसी व्यक्ति के नाम पर आपत्ति भी कर सकता है अर्थात् वह भी कह सकता है कि अमुक व्यक्ति जूरी में न रक्खा जाय।

जूरी-प्रथा—जूरी द्वारा विचार (Trial by Jury) अँग्रेजी न्याय-पद्धति की एक प्रमुख विशेषता है। इसका उपयोग दीवानी और फौजदारी दोनों प्रकार के मामलों में होता है, पर विशेषतः फौजदारी में। इसका अभिप्राय यह है कि किसी नागरिक को अपराधी ठहराने में दस भले-मानस नागरिकों की राय लेकर काम हो। इसके अन्दर 'पंच-परमेश्वर' की भावना का आभास मिलता है, और केवल कानून-विशेषज्ञों की तथ्य तक पहुँचने की क्षमता के प्रति किंचित् अविश्वास। छोटी अदालतों में जूरी-प्रथा नहीं है और न पेटी सेशन्स में, क्योंकि यहाँ विचारक लोग नागरिकों में से ही चुने जस्टिस होते हैं, कानून-पण्डित नहीं। जहाँ जूरी की सहायता से न्याय होता है वहाँ तथ्य की बातों (Facts) पर निर्णय देने का अधिकार जूरी को और कानून के प्रश्नों का निर्णय करने का अधिकार न्यायाधीश को रहता है। अभियुक्त दोषी है या नहीं—यह जूरी के लोग निर्णय करते हैं, और नियमानुसार विचार और क्या दंड दिया जाय, यह न्यायाधीश निश्चित करता है। जूरी यदि किसी व्यक्ति को निर्दोष ठहरायें, तो फिर उसे छोड़ देना पड़ता है।

असाइजेज न्यायालय के फैसलों की अपील कोर्ट आफ क्रिमिनल अपील में होती है जिसमें कम से कम ३ न्यायाधीश रहते हैं। यह न्यायालय सर्वोच्च न्यायालय का ही एक अङ्ग है। इसके आगे लार्ड सभा में अपील की जा सकती है पर केवल कानून के प्रश्नों पर, और वह भी तब जब वह प्रश्न सार्वजनिक महत्त्व का हो। लार्ड सभा के न्याय-कार्य का वर्णन पहले ही किया जा चुका है।

न्यायाधीशों द्वारा कानून की व्याख्या तथा आलोचना (Judicial Interpretation and Review)—साधारणतया न्यायाधीशों का कार्य यही समझा जाता है कि वे पार्लमेंट के द्वारा बनाये गये या अन्य कानूनों के अनुसार मुकदमों का फैसला कर दें। कानून-निर्माण उनका काम नहीं माना जाता। पर सूक्ष्म विचार करने से ज्ञात होता है कि औपचारिक ढङ्ग से कानून बनाने का अधिकार न्याया-

धीशों को न होने पर भी, वास्तविक दृष्टि से कानूनों का रूप स्थिर व निश्चित करने में उनका बहुत कुछ हाथ रहता है। पार्लमेण्ट या विधान मंडल किसी कानून को चाहे जितनी सावधानी से बनाये, उसमें सभी परिस्थितियों पर लागू होने वाली व्यवस्थायें स्पष्ट रूप से नहीं दी जा सकतीं। अतः न्यायाधीशों को प्रत्येक मुकदमें में सोचना और निर्णय करना पड़ता है कि इस मुकदमें की परिस्थिति विशेष में पार्लमेण्ट द्वारा निर्मित कानून का क्या अभिप्राय होना चाहिये और उसे किस प्रकार लागू किया जाय। इस प्रकार न्यायाधीशों को कानूनों की निरंतर व्याख्या करनी पड़ती है। इस व्याख्या के द्वारा विस्तार की बातों को भर कर कानून की रूपरेखा को पूर्ण तथा स्पष्ट बनाया जाता है। दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिये कि पार्लमेण्ट द्वारा निर्मित कानून केवल एक रेखा चित्र की भांति होता है जिसमें रङ्ग भरने का काम न्यायाधीश करते हैं। इस प्रकार कानून के अन्तर्गत सूक्ष्म नियमों और सिद्धान्तों की सृष्टि न्यायाधीशों की व्याख्या द्वारा ही होती है। इस कारण कुछ लोगों का कहना है कि न्यायाधीश न केवल न्याय करते हैं, किन्तु कानून-निर्माण भी करते हैं। अन्य लोगों के मत से यह कानून-निर्माण नहीं, किन्तु पहले ही से वर्तमान कानून की घोषणा या स्पष्टीकरण मात्र है।

इन दोनों मतों का केवल अन्तर शब्द-मात्र का है। यह सुनिश्चित है कि कानून को लागू करने में न्यायाधीशों को उसमें अपनी तरफ से भी बहुत कुछ जोड़ना पड़ता है। इसे कानून-निर्माण कहा जाय, या उसका स्पष्टीकरण मात्र कहा जाय—यह कहने वालों की इच्छा और रुचि पर निर्भर है। इंगलैंड के न्यायाधीशों का कानून के इस प्रकार के विस्तार में सदा से बहुत बड़ा हाथ रहा है। हम देख ही चुके हैं कि कामन ला और इक्विटी मुख्यतः न्यायाधीशों ही की देन है और उन्हीं के निर्णयों के आधार पर बने हैं। पार्लमेंट द्वारा निर्मित कानूनों का भी न्यायालय व्याख्या करते रहते हैं।

कुछ देशों में न्यायालयों के कानूनों का न्यायिक निरीक्षण करके उन्हें अवैधानिक (Unconstitutional) घोषित करने का भी अधिकार रहता है। यह व्यवस्था उन्हीं देशों में पाई जाती है जहाँ किसी कारण से विधान-मंडल के कानून निर्माण के अधिकार सीमित अथवा प्रतिबन्ध-युक्त रहते हैं। ऐसा बहुधा संघीय देशों में होता है जहां कानून-निर्माण के अधिकार संविधान द्वारा संघीय विधान-मंडल और राज्यों के विधान-मंडलों में बँटे रहते हैं जैसे संयुक्त राज्य अमरीका, भारत, आस्ट्रेलिया आदि में। यहाँ इस बँटवारे के कारण संघीय और राज्य वाले दोनों ही प्रकार के विधान मंडलों के अधिकार-क्षेत्र सीमित और पृथक् रहते हैं और इस बात की व्यवस्था की आवश्यकता रहती है कि यदि कोई भी विधान-मंडल अपने क्षेत्र से बाहर के विषयों पर कानून बनावे, तो उसके कानून अवैध ठहरा दिये जायँ। अतः इन देशों में सर्वोच्च तथा अन्य न्यायालयों को कानूनों की वैधानिकता की जाँच या आलो-

चना करने का अधिकार होता है और जो भी कानून संविधान के विरुद्ध पाये जाते हैं उन्हें न्यायालय अवैध और रद्द (Void) घोषित कर देते हैं। कानूनों की वैधानिकता की इस प्रकार की न्यायालयों द्वारा जाँच को कानूनों का न्यायिक निरीक्षण (Judicial Review of Legislation) कहते हैं।

ब्रिटेन की पार्लमेंट पूर्ण-प्रभुत्व सम्पन्न (Sovereign) है और उसके अधिकारों पर किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं है। संविधान भी पार्लमेंट के साधारण कानून से ही बदला जा सकता है। अतः ब्रिटेन में पार्लमेंट के किसी कानून का संविधान-विरुद्ध होना असम्भव ही नहीं है और न न्यायालयों द्वारा कानूनों की वैधानिकता की जाँच का ही सम्भावना। अतएव ब्रिटेन में कानूनों के न्यायिक निरीक्षण (Judicial Review of Legislation) की व्यवस्था नहीं पाई जाती। वहाँ के न्यायालय पार्लमेंट द्वारा पारित प्रत्येक कानून को मान्य समझने को बाध्य हैं। पर, यह बात प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण (Delegated Legislation) के विषय में लागू नहीं है। जैसा पहले बतलाया जा चुका है प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण शासन-विभागों अथवा अन्य सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा पार्लमेंट के कानूनों के अन्तर्गत होता है। शासन-विभाग और ये संस्थाएँ पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न न होकर पार्लमेंट के नीचे (Subordinate) हैं और उनके बनाये नियम पार्लमेंट के कानूनों के संगत ही होने चाहिये। यदि वे असंगत हों, तो न्यायालय उन्हें उनके निर्माताओं के शक्ति-परस्तात् (Ultra-vires) घोषित करके रद्द कर सकते हैं। अतः ब्रिटेन में न्यायालय पार्लमेंट के कानूनों का निरीक्षण (Review) तो नहीं कर सकते, पर अन्य संस्थाओं द्वारा निर्मित नियमों-उपनियमों के निरीक्षण का उन्हें अधिकार है।

प्रशासनीय न्यायव्यवस्था—पाँचवें अध्याय में यह बतलाया जा चुका है कि वर्तमान युग की पेचीदगियों के कारण आज ब्रिटेन में सम्पूर्ण न्यायव्यवस्था साधारण न्यायालयों के हाथ में ही नहीं है किन्तु अनेक बातों में न्यायाधिकार प्रशासनीय न्यायालयों (Administrative Tribunals) या अधिकारियों को दे दिया गया है जिनमें से कुछ के निर्णयों की साधारण न्यायालयों में अपील हो सकती है और कुछ की नहीं। पर ब्रिटेन में फ्रांस की भाँति प्रशासनीय न्यायालयों की एक अलग शृंखला नहीं पाई जाती। प्रशासनीय न्यायालय विशेष प्रकार के मामलों का निर्णय करने के लिए और यत्र-तत्र ही पाये जाते हैं।

लास्की सरीखे कुछ आलोचकों की राय में साधारण न्यायालय परम्परागत कुछ कानूनी रूढ़ियों और धारणाओं से इस प्रकार जकड़े हुए हैं कि वे आधुनिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर और नये सिद्धान्तों के अनुसार बनाये हुए कानूनों का यथार्थ अभिप्राय या तो समझ ही नहीं पाते या समझना ही नहीं चाहते। न्यायाधीश

विशेषतः ऊँचे न्यायालयों के न्यायाधीश, सम्पन्न वर्ग के ही होते हैं, अतः वर्ग-स्वार्थ की भावना उन्हें अज्ञात रूप से पुरानी रूढ़ियों के अनुसार ही न्याय करने को विवश कर देती है। परिणाम यह हुआ है कि श्रमिकों और अन्य निम्न वर्गों की रक्षा अथवा हित के लिए पार्लमेंट ने समय-समय पर जो कानून बनाये हैं, उनका इन न्यायालयों ने जब तब अर्थ का अनर्थ कर डाला है। विशेषतः लार्ड सभा ने कई बार इस प्रकार के कानूनों के सम्बन्ध में ऐसे निर्णय दिये हैं जो पार्लमेंट के अभिप्राय के विरुद्ध थे और जिन्हें पार्लमेंट को नये कानून बना कर पलटना पड़ा। अतः लास्की का कहना है कि श्रमिक और अन्य निम्न वर्गों का साधारण न्यायालयों की यथार्थ स्वतन्त्रता और निष्पक्षता पर से विश्वास उठता जाता है। यही कारण है कि प्रशासनीय न्यायालयों की संख्या और अधिकार-क्षेत्र का विस्तार निरंतर बढ़ता जा रहा है। साधारण न्याया-लयों की एक और आलोचना यह है कि वे बहुत ही महँगे हैं। उनसे न्याय प्राप्त करना गरीब लोगों की सामर्थ्य से बाहर है। १९३० ई० के एक कानून द्वारा (Poor Prisioners, Defence Act, 1930) गरीब अभियुक्तों के लिए सरकारी खर्च से वकील आदि नियुक्त कर देने की व्यवस्था की गई है, पर तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि धनिक लोगों को न्याय पाना निर्धनों की अपेक्षा अधिक सुगम नहीं है।

ब्रिटिश न्याय-पद्धति की उत्कृष्टता

इन दो-एक दोषों के होते हुये भी अनुभवी विद्वानों का कहना है कि ब्रिटिश न्याय व्यवस्था कदाचित् संसार की सबसे उत्कृष्ट न्याय-व्यवस्था है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि संसार के अन्य देशों ने इस व्यवस्था से बहुत कुछ सीखा है और जहाँ कहीं भी न्याय सुधार होता है वहाँ अधिकतर ब्रिटिश-पद्धति का ही अनुकरण होता है। ब्रिटिश न्यायाधीशों का कानून-पाण्डित्य उनकी न्याय-प्रियता, स्वतन्त्रता और निष्पक्षता जगत्प्रसिद्ध है। ब्रिटिश सरकार के विरोधी भी बहुधा ब्रिटिश न्याया-लयों की निष्पक्षता में विश्वास रखते देखे जाते हैं।

ब्रिटेन की न्याय-व्यवस्था की इस उत्कृष्टता के तीन प्रधान कारण बतलाये गये हैं अर्थात् (१) यह व्यवस्था न्याय के कुछ मूल-भूत सिद्धान्तों पर अवलंबित है जिनका अनुसरण करने से अन्याय होने की संभावना ही नहीं रह जाती, (२) ब्रिटिश न्यायालयों की कार्यपद्धति सरल, अनुभव-सिद्ध और शीघ्रगामी है और (३) ब्रिटिश न्यायाधीशों की स्वतंत्रता यत्नपूर्वक सुरक्षित रक्खी गई है जिससे वे पूर्णतया निष्पक्ष रह सकें।

१. ब्रिटिश न्याय-व्यवस्था के मूल-भूत सिद्धान्त—एडवर्ड जेन्क्स (Edward Jenks) ने अपनी पुस्तक 'दि बुक आफ इंगलिश लॉ' में ब्रिटिश न्याय-व्यवस्था के निम्नलिखित मूल सिद्धान्त बतलाये हैं :—

(अ) मुकदमों का निर्णय अदालत में होता है जहाँ जनता स्वतंत्रता-पूर्वक जा और कार्यवाही को देख सुन सकती है। गुप्त रूप से न्याय नहीं किया जाता।

(ब) वादी और प्रतिवादी दोनों को वकीलों की सहायता लेने का पूर्ण अधिकार है और दोनों ही पक्षों को अपने तर्क न्यायाधीशों के सामने पृथक्-पृथक् रखने का अधिकार है।

(स) प्रमाण का भार वादी अथवा दोष लगाने वाले पर रहता है। यदि वह पर्याप्त प्रमाण न दे सके तो प्रतिवादी अथवा अभियुक्त निर्दोष समझा जाता है।

(द) दोष प्रमाणित होने के लिए सभी प्रकार के प्रमाण ग्राह्य नहीं माने जाते। इसके भी कानून द्वारा निश्चित नियम हैं। कानून की यह शाखा 'प्रमाण कानून' (Law of Evidence) कहलाती है।

(य) सभी गम्भीर फौजदारी मामलों में अभियुक्त जूरी द्वारा विचार की प्रार्थना कर सकता है और कुछ दीवानी मामलों में भी। केवल न्यायाधीश ही अपराधों का निर्णय नहीं करते।

(ह) निर्णय खुली अदालत में सुनाया जाता है और निर्णय सकारण दिये जाते हैं।

(ल) लगभग प्रत्येक मामले में निर्णय करने वाले न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध कम से कम एक उच्चतर न्यायालय में पुनर्विचार-प्रार्थना (Appeal) की जा सकती है। इसके कुछ अपवाद हैं, पर नाम-मात्र के।

२. न्याय-पद्धति की सरलता और शीघ्रगामिता—मामलों की सुनवाई में कार्य-पद्धति (Procedure) का बहुत बड़ा महत्व है। बहुत से देशों में न्याय की पद्धति ऐसी अनगढ़ और जटिल होती है कि बहुत सा समय कौन सी पद्धति ग्रहण की जाय, इस विवाद ही में नष्ट हो जाता है। पद्धति सम्बन्धी नियम बनाना न्याय कार्य के अनुभवी विशेषज्ञों का है। जहाँ यह कार्य विधान मण्डल द्वारा किया जाता है, वहाँ सदस्यों की अपटुता के कारण दोषयुक्त न्याय-पद्धति स्थापित होती है। संयुक्त राज्य अमरीका इसके लिए बदनाम है।

पहले ब्रिटेन में भी न्याय पद्धति बड़ी जटिल थी, पर १८८१ ई० के एक कानून के अनुसार न्याय-कार्यवाही सम्बन्धी नियमों को बनाने के लिए एक 'नियम समिति' (Rule Committee) स्थापित की गई। इसमें ११ सदस्य होते हैं—लार्ड चान्सलर, छः अन्य महत्त्वपूर्ण न्यायाधीश, और चार सुप्रसिद्ध वकील। इस विशेषज्ञ समिति के बनाये हुये नियमों पर पार्लमेंट की स्वीकृति आवश्यक है, पर पार्लमेंट ने अभी तक कभी भी यह स्वीकृति देने से इनकार नहीं किया है। इस विशेषज्ञ समिति द्वारा बनाये हुये न्याय-कार्य-पद्धति के नियम बड़े ही उपयुक्त सिद्ध हुए

है। इन नियमों के मूल में यह भावना पाई जाती है कि न्याय शीघ्रातिशीघ्र हो और नियम सम्बन्धी कठिनाई को न्यायकार्य में बाधक न होने दिया जाय। अतः ब्रिटिश न्यायाधीश व्यर्थ के कानूनी नुक्ते निकालने की प्रवृत्तियों को पनपने नहीं देते।

२. न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता और निष्पक्षता—निष्पक्ष न्याय के लिये यह आवश्यक है कि न्यायाधीश लोग अपनी नियुक्ति, पदच्युति, वेतन, उन्नति आदि के विषय में सभी प्रकार के दबावों और आशंकाओं से मुक्त हों जिससे वे निर्भय और स्वतन्त्र रीति से न्याय कर सकें। अमरीका की भाँति के कुछ देशों में न्यायाधीश जनता द्वारा एक निश्चित समय के लिये चुने जाते हैं। यह बहुत ही बुरी पद्धति है, क्योंकि इसमें न्यायाधीशों को अपने पुनर्निर्वाचन के लिए जनता को सन्तुष्ट रखना पड़ता है और वे अप्रिय निर्णय नहीं दे सकते।

ब्रिटेन में छोटे-बड़े सभी न्यायाधीशों की नियुक्ति होती है। जस्टिस आफ पीस लोगों और छोटी अदालतों के न्यायाधीशों की नियुक्ति लार्ड चान्सलर करता है जो ब्रिटेन का सर्वोच्च न्यायाधीश (लार्ड सभा का अध्यक्ष) होता है और ऊँची अदालतों के न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रधानमन्त्री के परामर्शानुसार सम्राट् करता है। वास्तव में प्रधानमंत्री भी अपना परामर्श लार्ड चान्सलर और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की सलाह से ही देता है। अतः सदैव योग्य और न्यायकार्य के अनुभवी व्यक्ति ही न्यायाधीश नियुक्त होते हैं। दूसरी बात यह है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति लगभग आजीवन अर्थात् ६५-७० वर्ष की अवस्था हो जाने के समय तक होती है। कोई न्यायाधीश अपने पद से तभी च्युत किया जा सकता है जब पार्लमेंट के दोनों भवन इस आशय की सम्राट् से प्रार्थना करें। इसका यह अर्थ है कि बिना बहुत ही गम्भीर कारण हुए, कोई न्यायाधीश पदच्युत हो ही नहीं सकता। तीसरे किसी भी न्यायाधीश का वेतन उसका पद-अवधि में घटाया नहीं जा सकता। इस प्रकार ब्रिटिश न्यायाधीश सभी प्रकार की आशंका या राजनैतिक प्रभाव से मुक्त रक्खे गये हैं जिसमें वे पूर्ण निष्पक्ष होकर न्याय करें।

ब्रिटिश वकील—ब्रिटिश न्यायाधीशों की नियुक्ति वकीलों में से ही होती है। ब्रिटेन में वकीलों के दो वर्ग होते हैं। पहले वर्ग वाले सालिसिटर या अटार्नी (Solicitors or Attorneys) कहलाते हैं और दूसरे वाले बैरिस्टर (Barristers)। सालिसिटर या अटार्नी लोग ही मुवक्किलों के मुकद्दमे लेते, उनकी बात सुनते और उनके मुकद्दमों को तैयार करते हैं। ये लोग अदालतों के सामने नहीं जाते। अदालत में मुकद्दमे को पेश करना और बहस करना आदि बैरिस्टरों का काम है। बहुधा सालिसिटर ही अपने लिये हुए मुकद्दमों के लिए उपयुक्त बैरिस्टर चुनता और मुवक्किल से उन्हें नियुक्त करता है। हमारे देश के वकीलों में इस प्रकार का श्रम-विभाजन

नहीं पाया जाता। यहाँ के वकील मुकदमा तैयार करने से लेकर अदालत के सामने बहस करने तक के सभी काम करते हैं। ब्रिटिश पद्धति में श्रम-विभाजन के काम से सालिसिटर और बैरिस्टर दोनों ही अपने-अपने क्षेत्रों में अधिक कुशलता प्राप्त करने का अवसर पाते हैं। पर इससे मुकदमे का खर्च अधिक बढ़ जाता है।

लार्ड चान्सलर और उसके कार्य—इस अध्याय में प्रसंगवश कई स्थानों पर लार्ड चान्सलर और उसके कार्यों का वर्णन आया है। यहाँ उसकी स्थिति और कार्यों का एकत्र वर्णन देना आवश्यक है।

जैसा पहले बतलाया जा चुका है लार्ड चान्सलर मंत्रिमंडल का एक प्रमुख सदस्य और लार्ड सभा का अध्यक्ष होता है। उसे १०,००० पौण्ड अर्थात् प्रधानमंत्री के समान ही वेतन मिलता है। उसका पद है तो राजनैतिक और प्रधान मंत्री उसे अपने दल के सदस्यों में से ही चुनता है, पर वह किसी ख्याति-प्राप्त वकील या बैरिस्टर ही को चुनता है। ब्रिटिश मंत्रिमंडल में न्याय मंत्री का कोई पद नहीं होता। लार्ड चान्सलर ही अन्य देशों के न्यायमंत्रियों के पद के निकटतम है, पर लार्ड चान्सलर को केवल न्यायमंत्री नहीं कह सकते, क्योंकि उसके त्रिविध काम हैं। न्यायमन्त्रियों की भाँति ही वह काउंटी न्यायालयों के न्यायाधीशों को नियुक्त और पदच्युत करता है और ऊँचे न्यायाधीशों की नियुक्ति उसी के परामर्श पर होती है। जस्टिस आफ पीस भी उसी के द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। पर उसके निम्नलिखित अन्य काम भी हैं, अर्थात्

(१) उच्च न्यायालय के चान्सरी विभाग, और कोर्ट आफ् अपील का वह प्रधान न्यायाधीश होता है।

(२) लार्ड सभा जब न्यायालय के रूप में बैठती है तो वह उसका भी प्रधान न्यायाधीश होता है।

(३) प्रिवी काउन्सिल की जुडीशल कमेटी अर्थात् न्याय-समिति का भी वह प्रधान न्यायाधीश होता है।

(४) लार्ड सभा की सभी बैठकों का वह अध्यक्ष होता है, और

(५) मंत्रिमंडल का वह प्रधान कानूनी सलाहकार होता है, यद्यपि कानून सम्बन्धी परामर्श के लिये दो अन्य कर्मचारी—अटार्नी जनरल और सालिसिटर-जनरल भी होते हैं जो सम्राट् के कानून अधिकारी (Law Officers of the Crown) कहलाते हैं।

जुडीशल कमेटी आफ प्रिवी काउन्सिल—जिस न्याय-व्यवस्था और न्यायालयों के संगठन का ऊपर वर्णन हुआ है वह केवल इंगलैंड और वेल्स के विषय में लागू है। स्काटलैंड और उत्तरी आयरलैंड का इससे मिलता-जुलता परन्तु

पृथक् न्याय-संगठन है। ब्रिटिश राष्ट्रमंडल (Commonwealth of Nations) और साम्राज्य (Empire) की भी अपनी स्वतन्त्र ही न्याय-व्यवस्था है, पर इंगलैण्ड में एक ऐसा भी न्यायालय है जो साम्राज्य के सभी और राष्ट्रमंडल के अधिकांश (भारत और आयरलैण्ड को छोड़कर) देशों के लिए सर्वोच्च न्यायालय है। इसे जुडीशल कमेटी आफ प्रिवी काउंसिल (Judicial Committee of the Privy Council) कहते हैं। इसमें लार्ड चान्सलर, भूतपूर्व लार्ड सभा वाले कानूनी लार्ड और साम्राज्य के विभिन्न भागों के कुछ न्यायाधीश सम्मिलित रहते हैं। साम्राज्य और राष्ट्रमंडल के कुछ देशों के सर्वोच्च न्यायालयों की अपील यहाँ सुनी जाती है और इसका निर्णय अन्तिम होता है। स्वतन्त्रता के पूर्व भारत से भी यहाँ अपीलें आती थीं, पर वह व्यवस्था अब भंग कर दी गई है। स्वतन्त्रता-प्राप्त उपनिवेशों (Dominions) से भी बहुत कम ही अपीलें आती हैं, पर साम्राज्यान्तर्गत देशों में अब भी अपीलें अन्तिम निर्णय के लिए यहीं आती हैं।

अभ्यास

१. ब्रिटेन में विभिन्न प्रकार के कौन-कौन कानून प्रचलित हैं? उनकी विशेषताओं और पारस्परिक सम्बन्धों को बतलाओ।

What different systems of law do we find in Britain? How are they related to one another?

२. ब्रिटेन के सुप्रीम कोर्ट आफ जुडीकेचर के संगठन का संक्षिप्त वर्णन करो।

Briefly describe the organization of the British Supreme Court of Judicature.

३. ब्रिटेन के दीवानी न्यायालयों के संगठन का वर्णन करो।

How are the British Civil Courts organized?

४. ब्रिटेन में मुख्य-मुख्य फौजदारी न्यायालय कौन हैं और उनका क्षेत्राधिकार किस प्रकार का है?

What are the principal Criminal Courts of britain? Indicate the jurisdiction of each.

५. जूरी प्रथा से क्या अभिप्राय है? जूरी का क्या कार्य है?

What do you understand by the 'jury system'? What are the functions of a jury?

६. क्या न्यायाधीश कानून-निर्माण कर सकते हैं? ब्रिटेन की व्यवस्था से उदाहरण देकर अपने उत्तर की पुष्टि करो।

Do the judges make law? Support your answer by examples from Britain.

७. कानून के न्यायिक-निरीक्षण का क्या अर्थ है ? क्या ब्रिटेन में इस प्रकार का निरीक्षण प्रचलित है ?

What do you understand by 'judicial review of legislation'? How far does it exist in Britain?

८. लार्ड चान्सलर के न्याय सम्बन्धी कार्य बतलाओ।

What are the judicial functions of the Lord Chancellor?

९. संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—

जुडीशल कमेटी आफ प्रिवी काउंसिल, जस्टिसेज आफ पीस, प्रशासनीय न्याय व्यवस्था।

Write short notes on—the judicial committee of the Privy Council, the Justices of the Peace, administrative justice.

अध्याय ११

स्थानीय शासन-व्यवस्था

स्थानीय शासन की आवश्यकता—ब्रिटेन में स्थानीय संस्थाओं का इतिहास—नगर स्थानीय शासन-व्यवस्था का सुधार—देहाती क्षेत्र के स्थानीय शासन का सुधार—स्थानीय शासन के वर्तमान क्षेत्र और अधिकारी—काउंटियाँ—काउंटी कौंसिल के अधिकार तथा कर्तव्य—कौंसिल की कार्यविधि—स्थायी कर्मचारी—डिस्ट्रिक्ट और पैरिश—बरो और काउंटी बरो—बरो कौंसिल—कौंसिल की समितियाँ—स्थायी कर्मचारी—स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय नियन्त्रण—नियन्त्रण के विभिन्न प्रकार—ब्रिटेन में स्थानीय शासन का भविष्य।

स्थानीय शासन की आवश्यकता—पिछले अध्यायों में ब्रिटेन के जिस शासन-संगठन का वर्णन हुआ है वह समस्त देश के लिये एक ही केन्द्र अर्थात् लन्दन से संचालित होता है और इस कारण उसे केन्द्रीय अथवा राष्ट्रीय शासन-व्यवस्था (Central or National Government) कहते हैं। किसी भी देश में केन्द्रीय शासन सभी विषयों का प्रबन्ध नहीं देख सकता। वह केवल उन्हीं विषयों का समुचित प्रबन्ध कर सकता है जिनके लिए समस्त देश में एक ही प्रकार की व्यवस्था आवश्यक है। परन्तु नित्यप्रति के जीवन से सम्बन्धित अनेक ऐसी बातें भी हैं जिनका परिस्थिति-भेद के कारण विभिन्न स्थानों में विभिन्न प्रकार का प्रबन्ध होना आवश्यक है। उदाहरणार्थ घने बसे नगरों और खुले देहात की स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताएँ एक सी नहीं होतीं। अतः इस प्रकार के स्थानीय विषयों के प्रबन्ध के लिए छोटे-बड़े कई प्रकार के स्थानीय क्षेत्र (Local Areas) और स्थानीय अधिकारी (Local Authorities) स्थापित किये जाते हैं। स्थानीय संस्थाओं के द्वारा केन्द्रीय सरकार का कार्य भार भी हल्का हो जाता है और स्थानीय विषयों का प्रबन्ध भी अच्छे ढंग से होता है। इसके अतिरिक्त स्थानीय संस्थाओं के द्वारा नागरिकों को बड़ी संख्या में सार्वजनिक कार्य में भाग लेने का अवसर प्राप्त होता है। इस कारण प्रजातन्त्र की पुष्टि और नागरिकों की राजनैतिक शिक्षा के लिए स्थानीय संस्थाओं का बड़ा महत्व माना जाता है और उन्हें प्रजातन्त्र की शिक्षा भूमि (Training Ground for Democracy) कहा जाता है।

ब्रिटेन में स्थानीय संस्थाओं का इतिहास—ब्रिटेन में स्थानीय शासन संस्थाओं का इतिहास बहुत प्राचीन काल से ही प्रारम्भ होता है। एक प्रकार से हम

यों कह सकते हैं कि किसी न किसी रूप में स्थानीय संस्थायें सदा से ही वर्तमान थीं। केन्द्रीय सरकार का संगठन तब न हुआ था, तब लोग अपनी सार्वजनिक आवश्यकताओं का जो कुछ भी प्रबन्ध सम्भव था, अपने-अपने गाँवों या नगरों में अलग-अलग ही अर्थात् स्थानीय संस्थाओं द्वारा ही करते थे। सेक्सन काल की स्थानीय संस्थाओं का प्रथम अध्याय में वर्णन दिया जा चुका है और तब से अब तक इनका अटूट अस्तित्त्व बना रहा है। यह अवश्य है कि सामयिक आवश्यकता के अनुसार स्थानीय संस्थाओं के रूप, क्षेत्र और संगठन में परिवर्तन होते रहे हैं और अब भी हो रहे हैं, पर उनका अभाव कभी भी नहीं हुआ।

ब्रिटेन की स्थानीय शासन व्यवस्था का वर्तमान रूप मुख्यतः उन्नीसवीं शताब्दी में निर्धारित हुआ। पुरानी व्यवस्था में १८३५ ई० से परिवर्तन प्रारम्भ हुये। अतः हमें पहले १८३५ ई० में जो स्थिति थी उसका सिंहावलोकन कर लेना चाहिये और फिर बाद में किये गये सुधारों को समझ लेना सरल हो जायगा।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में देहाती क्षेत्रों का स्थानीय शासन काउंटियों और पैरिशों (Parish) द्वारा संचालित होता था। काउटियाँ सैक्सन-कालीन शायर का परिवर्तित रूप थीं और पैरिश (parish) उनके उपविभाग और प्राचीन टाउनशिपों (Townships) के स्थानापन्न थे। समस्त देश में ५२ काउंटियाँ थीं। उन दिनों काउंटी के शासन-संगठन में चार प्रकार के अधिकारी होते थे अर्थात् (१) शेरिफ जिसे केन्द्रीय सरकार अपने आदेशों को पालन करने के लिए नियुक्त करती थी, (२) लार्ड लेफ्टिनेण्ट (Lord Lieutenant), इसकी भी नियुक्ति केन्द्रीय सरकार द्वारा ही होती थी और इस पर सैनिक बातों का उत्तरदायित्व था, (३) कारोनर लोग (Coroners) जिनका काम आकस्मिक या दुर्घटना से हुई मृत्यु के कारणों की जाँच करना था और (४) जस्टिसेज आफ पीस (Justices of Peace) जिनकी भिन्न-भिन्न काउटियों में भिन्न संख्या होती थी। इनके न्याय-कार्य का पिछले अध्याय में वर्णन हो चुका है, पर उन दिनों इन्हीं पर स्थानीय शासन अर्थात् शान्ति और सुव्यवस्था, सड़कों आदि—का भी भार था। जस्टिस आफ पीस लोग स्थानीय जमींदारों और पादरियों में से केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किये जाते थे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस समय तक देहाती क्षेत्रों के स्थानीय शासन में प्रजातान्त्रिक व्यवस्था न थी।

शहरी क्षेत्रों की स्थानीय शासन-व्यवस्था एक दूसरे ही प्रकार की थी। इंगलैंड में स्थानीय शासन की पारिभाषिक भाषा में नगरों को बरो (Boroughs) कहते हैं। इनकी संख्या ३०० से ऊपर थी और इन्हें समय-समय पर स्थानीय-शासन सम्बन्धी अधिकार-पत्र मिले थे। इनके अधिकारों में बहुत कुछ विभिन्नता थी, पर मोटे तौर से

यह कहा जा सकता है कि नगरों को अपनी स्थानीय बातों का प्रबन्ध करने की स्वतंत्रता प्राप्त थी। यह अधिकार नागरिकों की एक विशिष्ट श्रेणी संघ (Corporation) को दिया गया था। संघ में सम्मिलित नागरिक 'स्वतन्त्र' नागरिक (Freemen) कहलाते थे। प्रारम्भ में प्रत्येक बरो में इनकी पर्याप्त संख्या रही होगी, पर बाद में नये स्वतन्त्र नागरिक न बनाये जाने के कारण वह कम होती गई और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में बहुत से नगरों में इनकी संख्या इनी-गिनी ही रह गई थी। पर, स्थानीय शासन इन्हीं थोड़े से लोगों में केन्द्रित था। अतः नगर-शासन में भी प्रजातन्त्रीय व्यवस्था न होकर अल्प-सत्तात्मक व्यवस्था थी। इस कारण अधिकांश नगरों का स्थानीय शासन खराब और भ्रष्टाचार-पूर्ण था।

नगर स्थानीय शासन-व्यवस्था का सुधार—उपरोक्त स्थानीय शासन व्यवस्था से पहले के समय की आवश्यकताओं की पूर्ति ज्यों त्यों करके हो जाती थी, पर अठारहवीं शताब्दी के चतुर्थांश में इंगलैण्ड में औद्योगिक क्रान्ति हुई जिसके फलस्वरूप नगरों की जनसंख्या तेजी से बढ़ गई। इससे स्वास्थ्य, निवास-स्थान आदि सम्बन्धी अनेक ऐसी समस्याएँ उत्पन्न हुई जिनको सुलझाना आवश्यक था। उस समय की स्थानीय संस्थाये इस नये कार-भार को ग्रहण करने में अक्षम थीं। कुछ समय तक तो इन विभिन्न कार्यों के लिये नई और पृथक् संस्थाएँ बनाई गईं, पर १८६२ वाले कामन्स सभा के सुधार के बाद नगर-संघों का भी सुधार करना निश्चय हुआ जिससे ये संस्थाएँ ही नई समस्याओं का समाधान करने में समर्थ हो सकें। इसके फलस्वरूप १८३५ ई० का नगर संघ सुधार कानून (Municipal Corporations Act, 1835) पारित हुआ। इसके द्वारा सभी नगरों की स्थानीय शासन-व्यवस्था को एकरूपता प्राप्त हुई। नगर के स्थानीय शासन का प्रबन्ध कर-दाताओं द्वारा निर्वाचित एक नगर समिति (Council) के हाथ में दिया गया और उसके अधिकार निश्चित कर दिये गये। इस प्रकार नगरों में अल्प-सत्तात्मक (Oligarchic) व्यवस्था का अन्त होकर उसके स्थान में प्रजातन्त्रीय पद्धति का अनुसरण प्रारम्भ हुआ।

देहाती क्षेत्र के स्थानीय शासन सुधार—देहाती क्षेत्रों के स्थानीय शासन का सुधार इसके लगभग ५० वर्ष बाद हुआ। इस बीच में इन क्षेत्रों की समस्याओं को हल करने के लिये पार्लमेंट ने प्रत्येक नये कार्य के लिये नई और पृथक् संस्थायें स्थापित की जैसे शिक्षा के लिये अलग स्कूल बोर्ड, कङ्गालों की सहायता के लिये अलग अभिभावक समितियाँ (Board of Guardians), सफाई के लिये समितियाँ (Conservancy Boards), सड़कों के लिये अलग समितियाँ (Highway boards)। अन्त में इतने भिन्न-भिन्न अधिकारियों के कारण बड़ी

जटिलता और गड़बड़ी उत्पन्न हुई और सुधार करना आवश्यक हो गया। यह सुधार कई कानून द्वारा हुआ, पर इन सभी कानूनों में दो उद्देश्य निहित थे अर्थात् (१) स्थानीय शासन के सूत्रों को भिन्न-भिन्न और पृथक्-पृथक् अधिकारियों के हाथ से लेकर सभी को सब प्रकार का प्रबन्ध करने वाली एक ही संस्था (All-purpose authorities) के हाथ में केन्द्रित करना और (२) इन स्थानीय संस्थाओं को प्रजातन्त्रीय रूप देना। लोकल गवर्नमेण्ट ऐक्ट १८८८ के द्वारा काउन्टियों में निर्वाचित काउन्टी कौंसिलें स्थापित की गईं और उनके अधिकार निश्चित कर दिये गये। डिस्ट्रिक्ट और पैरिस काउन्सिल ऐक्ट १८९४ के द्वारा काउन्टी के उपविभागों—जिलों (Districts) और गावों (Parishes) में भी निर्वाचित काउसिन्सलें स्थापित हुई। शांति रक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, कृषि और पशुओं की उन्नति, सड़कों का निर्माण व मरम्मत—ये सब काम पृथक् अधिकारियों से लेकर काउन्टियों, जिलों, गाँवों और नगरों की एकमात्र स्थानीय संस्थाओं अर्थात् काउन्सिलों को दे दिया गया। १९०२ ई० के शिक्षा कानून (Education Act, 1902) के द्वारा प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षा और लोकल गवर्नमेंट ऐक्ट १९२९ के द्वारा गरीबों की सहायता (Poor relief) का कार्य भी पृथक् संस्थाओं के हाथ से लेकर इन्हीं स्थानीय संस्थाओं को दे दिया गया। १९२९ के बाद भी अनेक सुधार-कानूनों द्वारा काउन्टियों, जिलों, गाँवों और नगरों के पारस्परिक कार्य-विभाग और सम्बन्धों में अनेक परिवर्तन हुये हैं जिनमें कि शिक्षा कानून १९४४ (Education Act 1944), पुलिस कानून १९४५ (Police Act 1943) और लोकल गवर्नमेंट ऐक्ट १९३३ और १९४८ विशेष महत्त्वपूर्ण हैं।

स्थानीय शासन के वर्तमान क्षेत्र और अधिकारी (Present-day Local Areas and Authorities)

इन सब सुधारों के परिणामस्वरूप आज इंगलैंड और वेल्स में छः प्रकार के स्थानीय क्षेत्र और अधिकारी पाये जाते हैं अर्थात् (१) काउन्टी, (२) काउन्टी बरो (County borough), (३) बरो अथवा म्युनिसिपल बरो (Boroughs or Municipal Borough), (४) अरबन डिस्ट्रिक (Urban district), (५) रूरल डिस्ट्रिक (Rural district), और (६) पैरिश (Parish)। समस्त देश में ६१ काउन्टियाँ हैं। काउन्टियाँ अरबन और रूरल डिस्ट्रिक्टों अर्थात् जिलों में बँटी हैं जिनमें कि अरबन डिस्ट्रिक्टों की संख्या ५७२ और रूरल डिस्ट्रिक्टों की संख्या ४७५ है। इन दो प्रकार के डिस्ट्रिक्टों में केवल यही भेद है कि अरबन डिस्ट्रिक्टों की आबादी घनी है और रूरल डिस्ट्रिक्टों की देहात की भाँति विरला। दोनों प्रकार के जिले पैरिशों में बँटे हैं जिन्हें क्रमशः अरबन और रूरल पैरिश

कहते हैं । इनमें से अरबन पैरिश स्थानीय शासन के क्षेत्र नहीं हैं, पर रूरल पैरिश हैं । इन्हीं विभिन्न क्षेत्रों के बीच में ८३ काउण्टी बरो और ३०६ बरो बिखरे पड़े हैं । ये दोनों ही शहरी क्षेत्र हैं, पर इनमें भेद यह है कि काउन्टी बरो काउन्टी के क्षेत्र और अधिकार से सर्वथा स्वतन्त्र और उसके समकक्ष हैं जब कि बरो काउन्टी का ही एक भाग माना जाता है और कई बातों में उसके अधिकार के अन्तर्गत है । लन्दन की अपनी अलग ही स्थानीय शासन-व्यवस्था है ।

इन स्थानीय शासन-क्षेत्रों और अधिकारियों में काउण्टियों और काउण्टी बरो का स्थान सर्वोच्च है । कुछ निश्चित शर्तों को पूरा करने पर बरो को काउन्टी बरो का पद प्राप्त हो सकता है; अथवा अरबन डिस्ट्रिक्ट या रूरल डिस्ट्रिक्ट का कोई भाग बरो का पद प्राप्त कर सकता है । शर्तें मुख्यतः जनसंख्या व अन्य प्रकार के महत्व से सम्बन्ध रखती हैं ।

काउण्टियाँ - स्थानीय शासन की जो ६१ काउण्टियाँ हैं उनमें और ऐतिहासिक ५२ काउण्टियों (The Historic Counties) में भेद है । ऐतिहासिक काउण्टियों का स्थानीय-शासन से कोई सम्बन्ध नहीं । ये मुख्यतः न्याय कार्य और पार्लमेंट के चुनाव से सम्बन्ध रखने वाले क्षेत्र हैं । इनके प्राचीन अधिकारी शेरिफ, लार्ड लेफ्टिनेण्ट और जस्टिस आफ पीस इत्यादि अब भी पहिले ही की भांति नियुक्त होते और अपना कार्य करते हैं ।

स्थानीय शासन वाली काउंटियों को ऐतिहासिक काउंटियों से पृथक करने के लिए उन्हें एक नया नाम दिया गया है अर्थात् प्रशासन काउंटी (Administrative County) । प्रशासन काउंटी ही स्थानीय-शासन का काम करती है ।

प्रत्येक काउंटी में स्थानीय शासन के संचालन के लिए एक काउंटी काउंसिल होती है । इसके दो प्रकार के सदस्य होते हैं अर्थात् (१) काउन्सिलर और (२) आल्डरमन (Aldermen) । प्रत्येक काउन्सिल के सदस्यों की संख्या सरकार द्वारा निश्चित की जाती है और इनका चुनाव एक सदस्यीय निर्वाचन-क्षेत्रों से सर्वसाधारण मताधिकार (Universal Suffrage) के अनुसार ३ वर्षों के लिए होता है । मताधिकार के नियम वही हैं जो पार्लमेंट के चुनाव के मताधिकार के । चुनाव आदि की रीति भी वही है ।

जब काउन्सिलरों का चुनाव हो चुकता है तो वे अपनी संख्या के $\frac{1}{3}$ के बराबर आल्डरमैन चुनते हैं । आल्डरमैन लोगों का चुनाव चाहे काउंसिलर लोग अपने ही में से करें और चाहे बाहर से । यदि कोई काउन्सिलर आल्डरमैन के पद के लिये चुन लिया गया तो उसका काउन्सिलर वाला स्थान रिक्त हो जाता है और उप चुनाव द्वारा उसकी फिर से पूर्ति करनी पड़ती है । आल्डरमैन लोगों की पद-अवधि ६ वर्षों

की होती है, पर उनमें के आधे प्रति दूसरे वर्ष चुने जाते हैं, अर्थात् प्रबन्ध ऐसा है कि प्रत्येक नई काउन्सिल के चुनाव के बाद आधे आल्डरम्यन तो ऐसे रहते हैं जिनकी पद-अवधि तक भी ३ वर्ष और बाकी रहती है और आधे ऐसे जिनकी पद-अवधि समाप्त हो चुकी होती है और जिनके स्थानों के लिए नया चुनाव आवश्यक है। इस प्रकार प्रत्येक नई काउन्सिल आल्डरम्यन लोगों की आधी संख्या को चुनने का अवसर पाती है। आल्डरम्यन साधारणतया पुराने और अनुभवी काउन्सिलरों में से चुने जाते हैं। इस शब्द का अर्थ ही है अधिक पुराने लोग (Older men)। ये लोग काउन्सिलरों के साथ ही बैठते हैं, किसी पृथक सभा में नहीं और उनके कार्य और अधिकार भी उन्हीं के समान हैं। एकमात्र अन्तर चुनाव की रीति और पद-अवधि में है। व्यवहार में अपने अधिक अनुभव के कारण आल्डरम्यन लोग ही साधारणतया समितियों के अध्यक्ष आदि (Chairmen of Committees) चुने जाते हैं।

जब काउन्सिलर और आल्डरम्यन में दोनों का चुनाव हो चुकता है तो वे मिल कर एक अध्यक्ष या चेयरमैन चुनते हैं। चेयरमैन चाहे इन्हीं लोगों में से चुना जाय अथवा बाहर से। यदि वह बाहर से चुना गया, तो उसे काउन्सिल की पदेन सदस्यता (Ex-officio membership) प्राप्त हो जाती है। चेयरमैन का मुख्य कार्य काउण्टी कौंसिल की बैठकों में सभापति का आसन ग्रहण करना और कार्यवाही का संचालन करना है। उसे शासन सम्बन्धी अधिकार नहीं होते।

काउन्टी काउन्सिल के अधिकार तथा कर्त्तव्य—ब्रिटेन में स्थानीय शासन के क्षेत्र में अधिकार-पृथक्ता (Separation of Powers) का सिद्धान्त नहीं लागू किया गया है। काउंटी काउन्सिल ही के हाथ में नियम-निर्माण, अर्थ-व्यवस्था और शासन सम्बन्धी सभी प्रकार के अधिकार केन्द्रित हैं। काउन्सिल नागरिकों के 'सुरक्षा, स्वास्थ्य और सुविधा' के लिए उपनियम (Bylaws) बनाती है, कर लगाती है, व्यय की स्वीकृति देती है, आवश्यक कर्मचारियों को नियुक्त करती तथा उन पर अनुशासन रखती है और स्थानीय शासन का संचालन तथा उसकी देख-रेख करती है। ये विविध अधिकार न केवल काउंटी काउन्सिलों किन्तु सभी स्थानीय क्षेत्रों की काउन्सिलों को प्राप्त हैं, पर उनके कार्य के विषय (Functions) भिन्न-भिन्न हैं। काउंटी काउन्सिलों का कार्य है स्थानीय पुलिस का प्रबन्ध, प्रारंभिक और माध्यमिक तथा औद्योगिक शिक्षा, सड़कें और पुल, काउंटी के अधीन सार्वजनिक इमारतों का निर्माण व उनकी मरम्मत, नदियों के जल को दूषित होने से बचाना, पागलखानों का प्रबन्ध, विभिन्न प्रकार के लैसंसों (मद्य लैसंसों को छोड़ कर) को देना डिस्ट्रिक्ट काउन्सिलों के कार्यों की देख-रेख इत्यादि। स्थानिक क्षेत्रों में काउंटी ही सब से बड़ी है, अतः उसके अधिकार १८८८ से लेकर १९२९ तक बढ़ते ही रहे।

ऊपर गिनाये गये कार्यों के अतिरिक्त जो सभी काउंटियों में समान रूप से पाये जाते हैं, विशेष काउंटियों को व्यक्तिगत कानूनों द्वारा (by private legislation) विशिष्ट अधिकार भी दिये गये हैं। सभी ब्रिटिश स्थानीय संस्थाओं के अधिकार कानून द्वारा ही नियमित हैं। कोई भी अधिकार जो कानून द्वारा स्पष्ट रीति से उन्हें नहीं दिया गया है, उनके क्षेत्र से बाहर है। अपने कानून-निर्धारित क्षेत्र से बाहर जाने पर उनका कोई भी कार्य वह चाहे जितना अच्छा या आवश्यक हो, अवैध अथवा शक्ति-परस्तात् (ultra vires) माना जाता है और न्यायालय उसे रद्द घोषित कर देते हैं।

यद्यपि काउंटी का भौगोलिक क्षेत्र अन्य स्थानिक संस्थाओं के क्षेत्र की अपेक्षा बड़ा है, पर वर्तमान युग की कुछ आवश्यकताओं के लिये वह भी अपर्याप्त सिद्ध हुआ है। इस कारण विद्युत उत्पादन, पीने के पानी को पहुँचाने, दूषित जल को निकालने, शिक्षा और पुलिस-प्रबन्ध सम्बन्धी कार्यों की कुछ समस्याओं को सुलझाने के लिए काउंटी से भी बड़े क्षेत्रों (Regions) की स्थापना हुई है और तत्सम्बन्धी अधिकार काउंटी के हाथों से निकल गये हैं या निकलते जा रहे हैं।

काउन्सिल की कार्यविधि—स्थानीय काउन्सिलें पार्लमेंट की भाँति केवल नियम-निर्मात्री या आलोचना करने वाली सभायें नहीं हैं। वे यह काम भी करती हैं पर उनका अधिकांश कार्य शासन-सम्बन्धी होता है। शासन-कार्य काफी वृहत होता है और काउन्सिलों के पास इतना समय नहीं होता कि वे स्वयं ही सभी कुछ कर सकें। अतः कार्य की सुविधा के लिए काउन्सिलें अपने सदस्यों की अनेक छोटी-बड़ी स्थायी समितियाँ बना देती हैं और प्रत्येक समिति के अधीन एक-एक या अधिक विभागों का काम रख दिया जाता है। काउंसिल की तो प्रति मास एक या दो बैठकें ही होती हैं जिनमें वह समितियों के निर्णयों की सरसरी जाँच करके उन पर अपनी स्वीकृति दे देती है, पर समितियों की प्रति वर्ष सैकड़ों बैठकें होती हैं। वास्तव में स्थानीय शासन का संचालन इन समितियों द्वारा ही होता है और स्थानीय शासन-प्रबन्ध में इनका वही स्थान है जो केन्द्रीय शासन में मंत्रियों का। ये समितियाँ कई प्रकार की होती हैं। इनमें कुछ तो कानून ही द्वारा अनिवार्य बना दी गई हैं और इस कारण 'स्टैच्यूटरी' समितियाँ (Statutory Committees) कहलाती हैं। काउंटी में ऐसी समितियों के उदाहरण हैं—अर्थ समिति (Finance Committee), स्थायी संयुक्त पुलिस समिति (The standing joint committee), शिक्षा समिति, कृषि समिति, गृह निर्माण समिति, मातृत्व और शिशु-कल्याण समिति आदि-आदि। अनिवार्य समितियों के अतिरिक्त काउन्सिल अपनी इच्छानुसार अन्य समितियाँ भी जितनी चाहे उतनी स्थापित कर सकती है। दो या अधिक स्थानीय संस्थाएं

मिलकर संयुक्त-समितियाँ (joint committees) भी स्थापित कर सकती हैं जो ऐसे विषयों का प्रबन्ध करती हैं जिनमें सभी सम्मिलित संस्थाओं का स्वार्थ या हित हो। समितियों में काउन्सिल के सदस्यों के अतिरिक्त एक-तिहाई तक बाहर के भी सदस्य लिये जा सकते हैं। अँग्रेजी में इस व्यवस्था को 'कोआप्शन' अर्थात् वरण कहते हैं और इसका अभिप्राय यह है कि समितियों को ऐसे अनुभवी और विशेषज्ञ लोगों का भी सहयोग प्राप्त हो सके जो चुनाव में खड़े होने की झंझट को नहीं पसन्द करते।

इंगलैंड की स्थानीय संस्थाओं में हमारे भारत के स्थानीय संस्थाओं के 'चेयरमैन' या 'प्रेसीडेंट' की भाँति शासन अधिकार-सम्पन्न कोई अधिकारी नहीं होता। जैसा पहिले बतलाया गया है काउंटी काउन्सिल के चेयरमैन का काम काउन्सिल की बैठकों का सभापतित्व करना मात्र है। उसे शासन सम्बन्धी कोई अधिकार नहीं प्राप्त हैं। इंगलैंड में स्थानीय शासन का काम काउन्सिल, समितियाँ और स्थायी कर्मचारी लोग ही करते हैं।

स्थायी कर्मचारी—भारत की भाँति ही ब्रिटेन में भी प्रत्येक स्थानीय संस्था के अपने कर्मचारियों का पृथक पृथक समूह होता है। केन्द्रीय नौकरियों की भाँति उनका देश-व्यापी संगठन नहीं है और इस कारण उनका स्थान परिवर्तन (transfer) नहीं हुआ करता। काउंटी के प्रधान कर्मचारी व विभागाध्यक्ष होते हैं, काउंटी क्लर्क (जो हमारे यहाँ के सेक्रेटरी का समकक्ष है), सरवेयर (इंजीनियर), डायरेक्टर आफ् एजूकेशन, कोषाध्यक्ष, माप और तौल का इंस्पेक्टर, स्वास्थ्य अफसर इत्यादि। इनके नीचे बहुत से छोटे कर्मचारी, लेखक आदि होते हैं। बड़े कर्मचारियों की नियुक्ति स्वयं काउन्सिल करती है और छोटों की समितियाँ या विभागाध्यक्ष। स्थानीय नियुक्तियों के लिये प्रतियोगिता-परीक्षाओं आदि की व्यवस्था नहीं है और पद-अवधि भी काउन्सिल की इच्छानुसार (during the pleasure of the council) है, पर वास्तव में नियुक्तियाँ योग्यता के आधार पर होती हैं, दलबन्दी या सिफारिशों को महत्व नहीं दिया जाता। एक बार नियुक्त हो जाने पर कर्मचारी स्थायी रूप से अपने पद पर अवकाश ग्रहण करने की आयु तक बने रहते हैं। इस प्रकार स्थानीय संस्थाओं ने, कानून का बन्धन न होते हुए भी, अपने सद्विवेक से ही अपने कर्मचारियों का संगठन उचित रीति से कर रक्खा है। आजकल इस बात का आन्दोलन चल रहा है कि केन्द्रीय नौकरियों की भाँति ही स्थानीय नौकरियों में भी नियुक्ति, योग्यता, वेतन, छुट्टी आदि के मामलों में एकरूपता स्थापित कर दी जाय।

डिस्ट्रिक्ट और पैरिश—काउंटियाँ अरबन और रूरल डिस्ट्रिक्टों में बँटी हैं और रूरल डिस्ट्रिक्ट पैरिशों में विभाजित पाये जाते हैं। प्रत्येक डिस्ट्रिक्ट में चाहे

वह अरबन हो या रूरल—स्थानीय प्रबन्ध के लिये एक डिष्ट्रिक काउन्सिल होती है जो कि मतदाताओं द्वारा ३ वर्षों के लिये चुनी जाती है। डिस्ट्रिक्ट काउन्सिलों में आल्डरमैन नहीं होते। दोनों प्रकार के जिलों या डिस्ट्रिक्टों के कार्य एक ही प्रकार के हैं। इनकी स्थापना सार्वजनिक स्वास्थ्य के प्रबन्ध के लिये हुई थी और इनके प्रधान कार्य हैं सफ़ाई, पीने के पानी का प्रबन्ध, रहने के लिये घरों का निर्माण इत्यादि। अरबन जिलों को जनता के सुख-सुविधा विषयक कुछ अधिक अधिकार भी प्राप्त हैं। जैसा पहिले बतलाया जा चुका है, आबादी बढ़ने पर रूरल डिस्ट्रिक्ट अरबन डिस्ट्रिक्ट का अथवा अरबन डिस्ट्रिक्ट बरो का पद प्राप्त कर सकता है।

पैरिश हमारे गाँवों की भाँति हैं और वे केवल डिस्ट्रिक्टों में ही स्थानीय संस्थाओं का कार्य करते हैं। अरबन डिस्ट्रिक्टों के पैरिश इंगलैंड के चर्च (Church) संगठन के उपविभाग हैं और स्थानीय शासन से उनका सम्बन्ध नहीं।

जिन रूरल पैरिशों की जनसंख्या ३०० या उससे ऊपर होती है वहाँ ८ से १५ सदस्यों की एक पैरिश की काउन्सिल होती है। छोटी पैरिशों में काउन्सिल नहीं होती वहाँ के सभी नागरिक (मतदाता) ही एक सभा (Assembly) के रूप में एकत्र होकर स्थानीय संचालन का प्रबन्ध करते हैं। पैरिशों, काउन्सिलों या सभाओं के काम हमारी ग्राम-पंचायतों के कामों की भाँति होते हैं अर्थात् गाँवों की सफ़ाई, सड़कों और गलियों की मरम्मत, आग बुझाने का प्रबन्ध, सार्वजनिक इमारतों या सम्पत्ति की देख-रेख इत्यादि। यदि ऊपर की संस्थायें जैसे रूरल डिस्ट्रिक्ट काउन्सिल अपने कार्य को पैरिश में ठीक से न करे, तो पैरिश अधिकारी उनकी काउंटी काउन्सिल से शिकायत कर सकते हैं। पैरिशों को न्यायकार्य से कोई सम्बन्ध नहीं है।

बरो और काउन्टी बरो (Borough)

बरो और काउन्टी बरो इंगलैंड की नगर-पालिकायें अथवा म्युनिसिपैल्टियाँ हैं। काउन्टी बरो का पद बरो से ऊँचा और उसके अधिकार भी अधिक वृहत होते हैं। बरो जिस काउन्टी में स्थित होता है उसका एक अंश माना जाता है और कई विषयों में वह काउन्टी के अधीन होता है, पर काउन्टी बरो काउंटियों से सर्वथा स्वतन्त्र और उसके समकक्ष होता है। उसे वे सब अधिकार प्राप्त होते हैं जो बरो को और इसके अतिरिक्त उसे अपने क्षेत्र में काउंटियों के अधिकार भी प्राप्त रहते हैं। बरो की जनसंख्या १००,००० से अधिक होने पर वह काउन्टी बरो का पद प्राप्त करने के लिये प्रयत्न कर सकता है। पर यह कठिन कार्य है और समय तथा व्यय-साध्य है। बरो को काउन्टी बरो बनाने के लिये पार्लमेंट द्वारा नया कानून बनवाना पड़ता है। बरो पद प्राप्त करना भी सरल नहीं। उसके लिये सम्राट् तथा प्रिवी काउन्सिल से आज्ञापत्र (Charter) प्राप्त करना होता है।

बरो काउन्सिल (Borough Council) और मेयर

काउन्टी काउन्सिल की भाँति ही बरो काउन्सिल में भी मतदाताओं द्वारा निर्वाचित निश्चित संख्या में काउन्सिलर होते हैं और उन काउन्सिलरों द्वारा अपनी संख्या के एक-तिहाई के बराबर आल्डरम्यन चुने जाते हैं। काउन्सिलरों की अवधि ३ और आल्डरम्यन लोगों की ६ वर्षों की होती है। पूरी बरो काउन्सिल का एक साथ चुनाव नहीं होता, किन्तु एक-तिहाई काउन्सिलर प्रति वर्ष चुने जाते हैं। आल्डरम्यन भी इकट्ठे नहीं चुने जाते, किन्तु उसमें एक-तिहाई प्रति दूसरे वर्ष चुने जाते हैं। काउन्सिलर और आल्डरम्यन—दोनों मिलकर काउन्सिल के अध्यक्ष को अपने ही में से या बाहर से चुनते हैं। बरो में अध्यक्ष को चेयरमैन न कह कर मेयर (Mayor) कहा जाता है, और नगरों (Cities) के मेयर को लार्ड मेयर (Lord Mayor) कहते हैं। मेयर का पद-काल एक ही वर्ष होता है। काउन्टी काउन्सिल के चेयरमैन की भाँति ही मेयर को भी शासन-सम्बन्धी अधिकार नहीं प्राप्त होते। वह केवल बरो काउन्सिल की बैठकों में सभापति का आसन ग्रहण करता है, पर मेयर का पद बड़ी प्रतिष्ठा का माना जाता है। मेयर अपने नगर का प्रमुख नागरिक (First citizen) समझा जाता है और सभी प्रकार के सामाजिक आयोजनों (Social functions) में उसकी उपस्थिति अथवा अध्यक्षता वाञ्छनीय मानी जाती है। मेयर को वेतन मिलता है, पर वास्तव में अनेक प्रकार के भोजों और चन्दों इत्यादि में उसे जो कुछ खर्च करना पड़ता है, यह वेतन से अधिक ही हो जाता है।

बरो काउन्सिल के अधिकार—काउन्टी की भाँति ही बरो में भी सभी अधिकार काउन्सिल ही के हाथ में केन्द्रित होते हैं। ये अधिकार तीन प्रकार के हैं अर्थात् नियम-निर्माण सम्बन्धी (legislative), आर्थिक (financial) और शासन सम्बन्धी (administrative)। काउन्सिल उपनियम (bylaws) बनाती है कर लगाती है और आय-व्यय पत्रक (budget) को स्वीकृत करती है तथा शासन सम्बन्धी कार्य—जैसे नियुक्तियाँ, महत्वपूर्ण शासन-प्रश्नों का निर्णय—आदि करती है। दिन-प्रति दिन का शासन कार्य यहाँ भी स्थायी अथवा वैतनिक कर्मचारियों द्वारा ही किया जाता है। पर उनके काम की देख-रेख और नीति सम्बन्धी प्रश्नों का निर्णय—यह काउन्सिल और उसकी समितियों का काम है।

काउन्सिल की समितियाँ (The Committees of the Borough Council)—काउन्सिल की प्रतिमास एक या दो बैठक ही होती है। अतः काउन्सिल के शासन की देख-रेख सम्बन्धी अधिकांश कार्य उसकी समितियाँ करती हैं। यहाँ भी कुछ समितियाँ कानून द्वारा अनिवार्य (Compulsory or Statutory) और शेष काउन्सिल की इच्छानुसार होती हैं। इन समितियों की संख्या १०-

१२ से लेकर २५-३० तक पाई जाती है। काउन्सिल के सामने आने के पहले लगभग प्रत्येक कार्य किसी न किसी समिति के पास जाता है जो उस पर सविस्तार विचार करके अपना निर्णय सिफारिश के रूप में काउन्सिल के पास भेजती है। काउन्सिल को समितियों के निर्णयों को स्वीकार, अस्वीकार अथवा संशोधन करने का अधिकार होता है। साधारणतया वह इन्हें ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया करती है और यह इस कारण कि वह जानती है कि समितियों ने अपना निर्णय पूर्ण विचार के बाद ही भेजा है।

स्थायी कर्मचारी (Municipal Service)—स्थायी कर्मचारियों की नियुक्ति आदि की व्यवस्था उसी प्रकार की है जैसी काउन्टियों के विषय में बतला आये हैं। कुछ बड़े अफसरों जैसे काउन्टी क्लर्क (सेक्रेटरी), कोषाध्यक्ष, सर्वेयर (इञ्जीनियर), स्वास्थ्य अफसर आदि की नियुक्तियों को समितियों के परामर्शानुसार काउन्सिल स्वयं करती है और यद्यपि प्रतियोगितानुसार परीक्षाओं के आधार पर नियुक्ति की व्यवस्था नहीं पायी जाती, परन्तु फिर भी व्यवहार में इन ऊँचे अफसरों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर ही होता है। यह संभव है कि यदि दो अभ्यर्थी लगभग समान योग्यता के हों, तो उनमें से एक राजनैतिक या दो संबन्धी कारणों से नियुक्त हो जाय और दूसरा न नियुक्त हो, पर ऐसा कभी नहीं होता कि इन कारणों से कम योग्यता वाला अधिक योग्यता वाले अभ्यर्थी के मुकाबले में बाजी मार ले जाय। निम्नतर कर्मचारियों की नियुक्ति समितियाँ अथवा विभागाध्यक्ष लोग ही कर लेते हैं और यहाँ भी योग्यता का ध्यान रक्खा जाता है यद्यपि उतना नहीं जितना उच्च पदों के विषय में। कर्मचारियों की पद-अवधि काउन्सिल की इच्छानुसार होती है अर्थात् एक निश्चित अवधि की सूचना दे कर उन्हें कभी भी अलग किया जा सकता है। पर व्यवहार में ऐसा लगभग कभी भी नहीं होता और एक बार नियुक्त हो जाने पर कर्मचारी लोग, यदि वे स्वयं कोई गंभीर भूल या अपराध न करें तो, यावज्जीवन (अर्थात् ६०-६५ वर्ष की अवस्था तक) अपने पद पर बने रहते हैं। कुछ प्रकार के कर्मचारी की पदच्युति बिना केन्द्रीय सरकार की अनुमति के नहीं की जा सकती, और अन्यों की पद-अवधि ठेके की शर्तों द्वारा (By Contract) निश्चित रहती है।

ब्रिटेन में स्थानिक शासन-कर्मचारियों की शिक्षा पर अधिकाधिक ध्यान दिया जा रहा है। विश्वविद्यालयों और व्यक्तिगत संस्थाओं द्वारा उनके लिये सार्वजनिक शासन व अन्य संबन्धी विषयों में अनेक प्रकार के पाठ्यक्रम प्रस्तुत किये गये हैं और उन्हें शिक्षण संबन्धी आवश्यक सुविधाएँ दी जाती हैं। स्थानिक कर्मचारियों के अपने अनेक प्रकार के सङ्गठन और सङ्घ (Associations) हैं जो स्थानिक शासन का स्तर ऊँचा करने और अपने सदस्यों के उचित हितों की संरक्षा के लिए निरन्तर

प्रयत्नशील रहते हैं। इन संघों में 'नैशनल ऐसोशियेसन आफ लोकल गवर्नमेंट आफिसर्स' जिसे संक्षेप में 'नाल्गो (Nalgo) भी कहते हैं, जगत्प्रसिद्ध है।

स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय नियन्त्रण (Central Control)—एक शताब्दी पूर्व ब्रिटेन की स्थानीय संस्थाओं—काउन्टियों और बरो—पर केन्द्रीय नियंत्रण लगभग नहीं के बराबर था। स्थानीय संस्थाओं का सङ्गठन और उनके अधिकार कानून या आज्ञापत्रों द्वारा निश्चित अवश्य थे, पर शासन-संचालन पर कोई नियंत्रण न था। १८३५ के पहले जिस कुव्यवस्था का हम वर्णन कर आये हैं, उसके प्रधान कारणों में से एक यह भी था कि स्थानिक संस्थाओं की देख-रेख की कोई व्यवस्था न थी और वे जैसा चाहती थीं वैसा करती थीं।

जब स्थानिक संस्थाओं का सुधार प्रारम्भ हुआ, तो उसका एक आवश्यक अङ्ग यह भी माना गया कि इन पर केन्द्रीय सरकार का कुछ नियंत्रण रहे जिससे भ्रष्टाचार या गड़बड़ी की रोक-थाम हो सके। बेन्थम और जान स्टुअर्ट मिल सरीखे विचारकों ने इस बात पर बड़ा जोर दिया। केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों की पटुता और उनका अनुभव स्थानिक संस्थाओं के कर्मचारियों की अपेक्षा कहीं अधिक विस्तृत और व्यापक होता है। अतः वे स्थानीय संस्थाओं के कार्यों का निरीक्षण करके उन्हें शासन-सुधार के लिये बहुमूल्य परामर्श दे सकते हैं। फिर, १८३५ के बाद से केन्द्रीय कोष से स्थानीय संस्थाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, गृहनिर्माण, यातायात आदि के साधनों को अधिक उन्नत और व्यापक बनाने के लिए आर्थिक सहायता (grants-in-aid) भी दी जाने लगी। आज-कल इन संस्थाओं की कुल आय का लगभग ४०% केन्द्रीय कोष से सहायता के रूप में ही आता है। जब केन्द्रीय सरकार इन्हें इतना धन देती है तो उसे यह देखने का अधिकार होना ही चाहिये कि उस धन का सदुपयोग हो रहा है या नहीं। इन कारणों में वर्तमान समय में ब्रिटेन में स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार का बहुत कुछ नियंत्रण है। नियंत्रण के कुछ अधिकार तो कानून द्वारा ही केन्द्रीय सरकार को मिले हैं और शेष आर्थिक सहायता देने के बल से। जो पैसा देता है वह अपनी इच्छानुसार काम करवा ही सकता है। फल यह हुआ है कि आज केन्द्रीय और स्थानीय सरकारें परस्पर सम्बद्ध और एकता के सूत्र में गुँथ-सी गई हैं। आज-कल का सिद्धान्त यह है कि केन्द्रीय सरकारें एक दूसरे की प्रतिद्वन्द्वी नहीं, किन्तु जनता की सेवा के महान् कार्य में, एक दूसरे की सहयोगी और सहायक हैं। केन्द्रीय सरकार की लोक-कल्याण संबन्धी बहुतेरी नीतियाँ स्थानीय संस्थाओं द्वारा कार्यान्वित की जाती हैं और स्थानीय संस्थाओं को अपने कार्यों में धन या कुशल परामर्श का अभाव न रहे—इसकी व्यवस्था केन्द्रीय सरकार को करनी पड़ती है।

नियंत्रण करने वाले अधिकारी—ब्रिटेन में स्थानीय संस्थाओं पर नियंत्रण

रखने का अधिकार सरकार के किसी एक विभाग के हाथों में केन्द्रित नहीं है। स्थानीय संस्थाओं के कार्यों से संबन्ध रखने वाले विभिन्न केन्द्रीय विभाग अपने-अपने विषयों का नियंत्रण करते हैं जैसे शिक्षा विभाग शिक्षा का, होम मिनिस्ट्री पुलिस का, कृषि-विभाग कृषि का, स्वास्थ्य-विभाग स्वास्थ्य कार्य का, राजकोष-विभाग कुछ आर्थिक बातों का, यातायात विभाग यातायात प्रबन्ध का, इत्यादि। १९५१ ई० तक स्वास्थ्य-विभाग का नियंत्रण इन सबसे अधिक व्यापक था। वह स्थानिक संस्थाओं के स्वास्थ्य-प्रबन्ध के अतिरिक्त, उन सभी बातों पर नियंत्रण रखता था जो किसी अन्य विभाग के अधिकार-क्षेत्र में न आती थीं जैसे [illegible], ऋण लेने की मंजूरी देना, [illegible] की जाँच, अधिकार वृद्धि इत्यादि, पर जनवरी सन १९५१ में स्वास्थ्य-विभाग के ये कार्य उनसे लेकर मिनिस्ट्री आफ लोकल गवर्नमेंट ऐण्ड प्लैनिङ्ग (Ministry of Local Government and Planning) को दे दिये गये। अब स्वास्थ्य विभाग स्थानीय संस्थाओं के स्वास्थ्य-प्रबन्ध मात्र की देख-रेख करता है। इन शासन विभागों के अतिरिक्त प्रिवी काउन्सिल, पार्लमेंट और न्यायालय भी स्थानीय संस्थाओं पर विभिन्न प्रकार के नियंत्रण रखते हैं। यूरोपीय देशों में स्थानीय संस्थाओं का [illegible] अधिकार सब का सब एक ही [illegible] गृह-विभाग (Ministry of Interior) के हाथों में केन्द्रित रहता है। पर इंगलैण्ड में वह अनेक अधिकारियों के बीच बिखरा हुआ (Diffused) है।

नियंत्रण के विभिन्न प्रकार—ब्रिटेन में स्थानीय संस्थाओं के अधिकार और उन पर केन्द्रीय सरकार का नियंत्रण—ये दोनों कानून द्वारा निश्चित हैं। अतः केन्द्रीय सरकार का नियंत्रण-अधिकार असीम नहीं है। वहाँ केन्द्रीय सरकार स्थानीय संस्थाओं का विघटन (Dissolution) या [illegible] (Suppression) नहीं कर सकती और न सदस्यों या अन्य स्थानीय अधिकारियों को पदच्युत कर सकती है जैसा कि यूरोपीय देशों या भारत में होता है। स्थानीय कार्य वहाँ स्थानीय संस्थाओं द्वारा ही कराना पड़ेगा, पर केन्द्रीय सरकार को निम्नलिखित नियंत्रण के अधिकार हैं अर्थात्—

(१) स्थानीय शासन के सुचारु रूप से संचालन के सम्बन्ध में नियम (Rules) बनाने का,

(२) ऋण लेने के प्रस्ताव और कुछ अन्य प्रकार के प्रस्तावों पर मंजूरी देने का,

(३) स्थानीय संस्थाओं से आवश्यक सूचना व कागज-पत्र प्राप्त करने का,

(४) निरीक्षण (Inspection) और जाँच करने का,

(५) स्थानीय संस्थायें कोई काम ठीक न करें तो उन्हें निश्चित समय के

अन्दर कमी को पूरी करने का आदेश देने का, और यदि फिर भी वे कमी पूरी न करें तो उस कार्य को स्वयं करवा लेने का (Action in default),

(६) स्थानीय कर्मचारियों को योग्यता संबन्धी नियम बनाने का, या बिना सरकारी मंजूरी के उन्हें बर्खास्त न होने देने का इत्यादि।

केन्द्रीय सरकार जो आर्थिक सहायता (Grant-in-aid) देती है उसके कारण स्थानीय संस्थाओं पर उसका पर्याप्त दबाव (Pressure) या प्रभाव रहता है। इस प्रभाव के द्वारा वह अपने द्वारा दिये हुये परामर्शों को मान्य करा सकती है। यदि स्थानीय संस्थायें न मानें तो केन्द्रीय सरकार आर्थिक सहायता को बन्द कर देने की धमकी देती है और तब उन्हें मानना ही पड़ता है क्योंकि बिना इस आर्थिक सहायता के किसी स्थानीय संस्था का काम चल नहीं सकता। इसीलिए कहा जाता है कि कानून द्वारा दिये गये नियंत्रण अधिकारों के अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार ने और भी बहुत कुछ अधिकार धन दे कर खरीद लिए हैं।

ब्रिटेन में स्थानीय शासन का भविष्य

स्थानीय-शासन सीमा आयोग (The Local Government Boundary Commission)—ब्रिटेन के वर्तमान स्थानीय शासन-क्षेत्रों में बड़ी विषमता और जटिलता पाई जाती है। कहीं तो (जैसे काउण्टी बरो में) एक अधिकारी के हाथ में स्थानीय शासन का सब कार्य केन्द्रित है, और कहीं एक के ऊपर एक, दो या तीन नीचे-ऊँचे अधिकारी हैं। जैसे हम पैरिशों को लें तो उनका कुछ स्थानीय प्रबन्ध पैरिश काउन्सिल, कुछ रूरल डिस्ट्रिक्ट काउन्सिल और शेष काउण्टी काउन्सिल के हाथ में है। बरो में कुछ विषयों का प्रबन्ध बरो काउन्सिल और कुछ का काउण्टी काउन्सिल करती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न काउंटियों और काउंटी बरो के विस्तार और जन-संख्या में भी बड़ा अंतर है। कुछ काउटियों की जन-संख्या आधे लाख से भी कम और कुछ की १० लाख से ऊपर है।

इन विषमताओं को दूर करने के लिए १९४५ ई० में पार्लमेंट ने एक स्थानीय शासन सीमा आयोग (Local Government Boundary Commission Act, 1945) नामक कानून बनाया। इसके अनुसार एक सीमा आयोग (Boundary Commission) की स्थापना की गई और उसे यह अधिकार दिया गया कि वह विषमताओं को दूर करने के लिए वर्तमान क्षेत्रों की सीमा और पदों में आवश्यक परिवर्तन करे जिससे स्थानीय शासन के क्षेत्र सुविधाजनक और उपयुक्त बन जायँ।

दो वर्ष तक परिस्थिति का अध्ययन करके सीमा आयोग ने १९४७ में अपनी रिपोर्ट दी। इसमें यह बतलाया गया कि यत्र-तत्र सीमा-परिवर्तन या काट-छाँट करने

से काम न चलेगा, किन्तु स्थानीय क्षेत्रों का नये सिरे से पुनर्निर्माण आवश्यक है। आयोग ने पुनर्निर्माण के कुछ मूल-भूत सिद्धान्त भी बतलाये जिनका आशय यह था कि विभिन्न स्तरों के कई प्रकार के क्षेत्रों और अधिकारियों के स्थान में केवल दो प्रकार के क्षेत्र और अधिकारी रक्खे जायँ अर्थात् (१) काउंटी और (२) डिस्ट्रिक्ट। इस योजना के अनुसार वर्तमान काउंटी बरो भी काउंटी कहे और समझे जायँगे, पर वे उपक्षेत्रों या डिस्ट्रिक्टों में विभाजित न होंगे, परन्तु अन्य काउंटियाँ डिस्ट्रिक्टों में विभाजित रहेंगी। अरबन रूरल डिस्ट्रिक्ट का भेद हटा दिया जायगा और आजकल के बरो भी काउंटी के अन्तर्गत डिस्ट्रिक्ट ही माने जायँगे यद्यपि उनके अधिकार अन्य डिस्ट्रिक्टों की अपेक्षा अधिक रहेंगे।

इस रिपोर्ट के फलस्वरूप १९४९ ई० में सीमा आयोग कानून को रद्द करके सीमा आयोग का अन्त कर दिया गया पर उसकी सिफारिशों को अद्यावधि (अगस्त १९५२ तक) कार्यान्वित नहीं किया गया है। भविष्य में क्या होगा सो कहना कठिन है, क्योंकि स्थानीय क्षेत्रों में किसी भी क्रान्तिकारी परिवर्तन का वर्तमान स्थानीय अधिकारी अपने स्वार्थों पर आघात होने के कारण तीव्र विरोध करते हैं। किसी भी दल की सरकार यह अप्रिय कार्य करके अप्रिय बनने को तैयार नहीं। अतः दिखलाई यही देता है कि ब्रिटेन की परम्परा के अनुसार यदि परिवर्तन हुआ भी तो बहुत धीरे-धीरे और फुटकर तरीके से ही होगा।

अभ्यास

१. स्थानीय शासन का क्या महत्त्व है?

What is the need for and inportance of Local Government?

२. इंगलैंड में काउंटियों की शासन-व्यवस्था किस प्रकार की है?

Describe the local administration of a county in England.

३. बरो और काउंटी-बरो में क्या अन्तर है? बरो काउन्सिल के संगठन और कार्यविधि का वर्णन करो।

What is the difference between a borough and a county borough? Describe the organization and working of a borough Council in England.

४. स्थानीय शासन में स्थायी कर्मचारियों की स्थिति पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखो।

Write a short note on the position of the municipal services in England.

५. स्थानीय संस्थाओं का ब्रिटेन में केन्द्रीय सरकार से क्या सम्बन्ध है? केन्द्रीय सरकार उन पर क्या नियंत्रण रखती है और किस रीति से?

What are the relations between the central government and the local bodies in England ? By what methods does the former control the latter ?

६. अँग्रेजी स्थानीय शासन की वर्तमान मुख्य समस्यायें क्या हैं और सीमा आयोग ने उनके सम्बन्ध में क्या सिफारिशें की हैं ?

What are the principal problems facing English local government today ? What recommendations did the Boundary Commission make in this connection ?

७. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखो :

टाउन-क्लार्क, मेयर, पैरिश, अरबन डिस्ट्रिक्ट, सीमा आयोग ।

Write short notes on the following :—

The town-clerk, the Mayor, the Parish, the Urban district, the Boundary Commission.

अध्याय १२

ग्रेट ब्रिटेन राष्ट्रमंडल (The Commonwealth) और साम्राज्य

साम्राज्य का ब्रिटिश संविधान से सम्बन्ध—साम्राज्य के विभिन्न अवयव—ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड का संयुक्त राज्य—वेल्स—स्काटलैंड—इंगलैंड—उत्तरी आयरलैंड की शासन व्यवस्था—ब्रिटिश राष्ट्रमंडल—औपनिवेशिक स्वराज्य का विकास—वर्तमान स्वाधीन उपनिवेश—स्वाधीन उपनिवेशों की वैधानिक स्थिति—राष्ट्रमंडल और भारत—ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत भाग—ब्रिटिश साम्राज्य का अर्थ—अर्ध स्वाधीन उपनिवेश—राजकीय उपनिवेश—संरक्षित प्रदेश—अभिभावकत्वाधीन देश—ब्रिटिश सरकार का साम्राज्य के अस्वाधीन भागों पर नियन्त्रण।

साम्राज्य का ब्रिटिश संविधान से सम्बन्ध—ब्रिटेन के साथ एक विशाल साम्राज्य भी सम्बद्ध है। स्वयं ब्रिटेन ही में तीन उपभाग—इंगलैंड, वेल्स और स्काटलैंड सम्मिलित हैं। ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैंड को मिलाकर युनाइटेड किंगडम आफ ग्रेट ब्रिटेन और नार्दर्न आयरलैंड (United Kingdom of Great Britain and Northern Ireland) बनता है। पिछले अध्यायों में जिस शासन-व्यवस्था का वर्णन किया है वह पूर्ण रूप से केवल इंगलैंड ही पर लागू होता है। उसका अधिकांश वेल्स और स्काटलैंड पर भी लागू होता है, पर कुछ थोड़ी सी बातों में इन उपविभागों के लिए पृथक् व्यवस्था व शासन संगठन है। उत्तरी आयरलैंड को तो सभी आन्तरिक बातों में स्वाधीनता (Home Rule or Autonomy) है। अतः पहले तो हमें युनाइटेड किंगडम आफ ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के अन्दर वेल्स, स्काटलैंड और उत्तरी आयरलैंड की विशेष स्थिति को समझ लेना चाहिये और फिर इस संयुक्त राज्य का जो साम्राज्य से सम्बन्ध है उसे समझना आवश्यक है। साम्राज्य के अनेक भागों का अपना पृथक् शासन-संगठन है, पर ब्रिटिश अथवा युनाइटेड किंगडम की सरकार उनसे इस प्रकार गुँथी है और उसका उन पर इतने विभिन्न प्रकारों का प्रभाव पड़ता है कि साम्राज्य-सम्बन्धों को जाने बिना ब्रिटिश सरकार का यथार्थ ज्ञान नहीं हो सकता, किन्तु अधूरा रह जाता है। जैसे सौरमंडल में एक सूर्य के चारों ओर कितने ही ग्रह और उपग्रह घूमा करते हैं वैसे ही युनाइटेड किंगडम के भी प्रभाव-क्षेत्र में अनेक देश भू-विभाग आदि हैं और उनकी उपस्थिति ब्रिटिश सरकार के संगठन और कार्यविधि को वैसे ही प्रभावित करती है जैसे ग्रहों और उपग्रहों की मध्याकर्षण शक्तियाँ सूर्य की स्थिति को।

साम्राज्य के विभिन्न अवयव—इस दृष्टि से हमें चार मुख्य तत्वों पर विचार करना आवश्यक है अर्थात् (१) वे भू-भाग जो इंगलैण्ड के साथ संयुक्त होकर युनाइटेड किंगडम (United Kingdom) आफ ग्रेट ब्रिटेन ऐण्ड नार्दर्न आयरलैंड का निर्माण करते हैं। ये हैं वेल्स, स्काटलैंड और उत्तरी आयरलैंड, (२) साम्राज्य के स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेश, (३) भारत की भाँति के कुछ स्वतन्त्र देश जो ब्रिटिश राष्ट्रमंडल (British Commonwealth of Nations) नामक राष्ट्र-समूह में सम्मिलित है और (४) ब्रिटिश साम्राज्य का अस्वतन्त्र अथवा पराधीन भाग।

१. ग्रेट ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैंड का संयुक्त राज्य—(United Kingdom)

अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से ब्रिटेन (इंगलैंड, वेल्स और स्काटलैंड) और उत्तरी आयरलैंड एक ही राज्य हैं, परन्तु आन्तरिक दृष्टि से इनकी स्थिति में थोड़ा भेद है। जिस ब्रिटिश संविधान का हम पिछले अध्यायों में वर्णन कर आये हैं वह इंगलैंड में पूर्ण रूप से लागू होता है, वेल्स में लगभग पूर्ण रीति से, स्काटलैंड में अधिकांश रूप से और उत्तरी आयरलैंड में आन्तरिक मामलों को छोड़कर अन्य में। अब इनमें प्रत्येक की स्थिति अलग-अलग स्पष्ट की जाती है।

वेल्स—वेल्स ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से इंगलैंड से भिन्न है, पर राजनैतिक और वैधानिक दृष्टि से इंगलैंड का ही भाग है। १३०१ में एडवर्ड प्रथम ने इसको इंगलैंड ही के ढङ्ग पर संगठित करके अपने ज्येष्ठ पुत्र को 'वेल्स के राजकुमार' (Prince of Wales) की उपाधि दी और तभी से सम्राट् का ज्येष्ठ पुत्र, सम्राट् पदारूढ़ होने तक 'प्रिन्स आफ वेल्स' कहा जाता है। अष्टम हेनरी ने वेल्स और इंगलैंड की एकता और सुदृढ़ कर दी। वेल्स को पार्लमेंट में प्रतिनिधित्व दिया और वहाँ जो कानून या प्रथायें अंग्रेजी कानून या प्रथाओं से भिन्न थीं, इन्हें समाप्त करके उनके स्थान में अँग्रेजी पद्धति का ही प्रचार कर दिया गया। तब से वेल्स इंगलैंड ही का अभिन्न अङ्ग बन गया है। दोनों के न्यायालय और स्थानीय शासन एक ही हैं और पार्लमेंट के सभी कानून वेल्स में भी लागू होते हैं। वेल्स के लिए यदा-कदा कुछ ही अलग कानून बनते हैं। १९२० ई० में एक और अन्तर यह हुआ कि ऐङ्गलिकन चर्च वेल्स का संस्थापित चर्च (established church) न रहा। वेल्स में जब-तब यह माँग भी की जाती रही है कि उसे आन्तरिक स्वतंत्रता और एक अलग स्थानीय पार्लमेंट मिले और इनके आधार पर जब-तब एक राष्ट्रीय आन्दोलन भी चला है। पर ये माँगें या आन्दोलन कभी प्रबल नहीं हुये और साधारणतया वेल्स वाले इंगलैंड से पृथक् होने के लिए बहुत उत्सुक नहीं मालूम पड़ते।

स्काटलैंड—स्काटलैंड बहुत समय तक एक अलग और स्वतन्त्र राज्य था।

१६०३ ई० में स्काटलैंड का राजा जेम्स चतुर्थ उत्तराधिकार क्रम से इंगलैंड का भी जेम्स प्रथम के नाम से राजा बन गया और तब से लगभग सौ वर्षों तक दोनों देश एक ही सम्राट् होने के कारण सम्बद्ध रहे, पर स्काटलैंड का पृथक् राज्य संगठन बना रहा। उसकी पार्लमेंट, सेना, अदालतें—सभी कुछ अलग थीं। १७०७ ई० में ऐक्ट आफ यूनियन (Act of Union) द्वारा स्काटलैंड अपना पृथक् अस्तित्व छोड़कर इङ्गलैंड के साथ एक ही राज्य में मिल गया और उसे अँग्रेजी पार्लमेंट में प्रतिनिधित्व दे कर उसकी पृथक् पार्लमेंट का अन्त कर दिया गया। यह सब जोर-जबर्दस्ती से नहीं हुआ, किन्तु औद्योगिक और व्यावसायिक दृष्टि से इंगलैंड के अधिक उन्नत होने के कारण स्काटलैंड वालों ने उससे मिल जाने में अपना लाभ समझा। परन्तु कुछ बातों में स्काटलैंड की पृथकता बनी रही। उसका दीवानी और फौजदारी कानून, उसके न्यायालय और न्यायव्यवस्था, उसका प्रेसबिटीरियन धार्मिक संगठन (Presbyterian Church), और शिक्षा संगठन अलग ही रहा और आज भी है।

१७०७ से आज तक स्काटलैंड की वैधानिक स्थिति पूर्ववत ही है। सामान्य महत्व के सभी कानून इङ्गलैंड, स्काटलैंड और वेल्स में समान रूप से लागू होते हैं पर कुछ महत्वपूर्ण कानून स्काटलैंड में आवश्यक परिवर्तनों के साथ ही लागू होते हैं, और उसके लिए कुछ बातों में पृथक् कानून भी बनते हैं। कानून-निर्माण के विषय में स्काटलैंड की पृथक् सत्ता मानी जाती है। कामन्स सभा में स्काटलैंड के प्रतिनिधियों की एक स्थायी समिति बना दी गई है और केवल स्काटलैंड के लिये प्रस्तावित सभी विधेयक उसके सुपुर्द कर दिये जाते हैं, जिससे वह आवश्यक संशोधन-परिवर्तन का सुझाव दे सके। सामान्य कानून, यदि स्काटलैंड को स्पष्ट रूप से उनसे मुक्त न रक्खा गया हो, तो स्काटलैंड में अपने आप ही लागू होते हैं।

शासन के मामलों में भी १९२६ ई० से स्काटलैंड के लिए एक अलग मंत्री होता है जिसे सेक्रेटरी आफ स्टेट फार स्काटलैंड कहते हैं। यह मंत्रिमंडल का सदस्य होता है। स्काटलैंड के सम्बन्ध में इसका वही स्थान और कार्य है जो इङ्गलैंड के लिये गृहमंत्री, स्वास्थ्य मंत्री और शिक्षा मंत्री को मिला कर। इसके विभाग में कोई अंडर सेक्रेटरी, लार्ड, एडवोकेट, सालिसिटर जनरल, रजिस्ट्रार जनरल, बोर्ड आफ हेल्थ और अन्य कई अधिकारी रहते हैं। स्काटलैंड का स्थानीय शासन भी इंगलैंड से थोड़ा भिन्न है। न्यायालय, न्याय-व्यवस्था, दीवानी और फौजदारी कानून और धार्मिक संगठन या चर्च—ये स्काटलैंड के लिए एकदम पृथक् हैं। वहाँ का शिक्षा-प्रबन्ध भी इंगलैंड से भिन्न और श्रेष्ठतर है।

आयरलैंड—आयरलैंड का इंगलैंड से सम्बन्ध स्काटलैंड और वेल्स से बिल्कुल भिन्न रहा है। ये देश इंगलैंड के साथ स्वेच्छापूर्वक मिले, पर आयरलैंड

को इंगलैंड वालों ने अनेक बार आक्रमण करके पराजित किया और उस पर जबर-दस्ती अपना शासन स्थापित किया। आयरलैंड और इंगलैंड में धर्म की भी विभिन्नता थी। आयरलैंड के लोग कैथलिक और इंगलैंड, स्काटलैंड और वेल्स के अधिकांश लोग प्रोटेस्टैण्ट मत के अनुयायी थे। इन कारणों से आयरलैंड इंगलैंड के साथ मिलकर रहने से सदा ही असन्तुष्ट रहा। वह इसमें पराधीनता और अत्याचार का अनुभव करता था। सदैव ही वहाँ स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए आन्दोलन चलता रहा और प्रथम युद्ध के दिनों में तथा उसके बाद उसका बड़ा उग्र रूप हो गया। १६२२ ई० में आयरलैंड (उत्तरी भाग को छोड़कर) को औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त हुआ, पर वहाँ के लोग इससे भी सन्तुष्ट न हुये, और धीरे-धीरे एक के बाद एक बन्धन हटाते हुए, १६४६ ई० में उन्होंने अपने देश की पूर्ण स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी। अतः दक्षिणी आयरलैंड अब आयर (Eire) के नाम से एक पूर्णतया स्वतंत्र गणतंत्र (Republic) है।

उत्तरी आयरलैंड—किन्तु आयरलैंड की स्वतंत्रता के इतिहास में वही कठिनाइयाँ उत्पन्न हुईं जो भारत के। उसका उत्तरी भाग जिसमें छः काउंटियाँ हैं, दक्षिणी भाग से कई बातों में भिन्न था। उत्तरी आयरलैंड के अधिकांश लोग ब्रिटेन से आये हुये प्रवासी और प्रोटेस्टैंट मतानुयायी थे जब कि दक्षिण आयरलैंड के लोग कैथलिक। आर्थिक दृष्टि से उत्तरी आयरलैंड उद्योग प्रधान (industrial) और दक्षिणी आयरलैंड कृषिप्रधान था। अतः जैसे भारत की स्वतंत्रता के समय मुसलिम-प्रधान भागों ने पाकिस्तान की माँग की, वैसे ही १६२२ में जब आयरलैंड को औपनिवेशिक स्वराज्य देने का निश्चय हुआ, तो उत्तरी आयरलैंड वालों ने उनके साथ सम्मिलित होने से इनकार किया और आन्तरिक विषयों में स्वराज्य के साथ ब्रिटेन के साथ मिले रहना चाहा। अन्त में भारत की भाँति ही आयरलैंड का भी विभाजन हुआ और उत्तरी आयरलैंड ब्रिटेन के साथ मिला रहा। दक्षिणी आयर-लैंड या आयर ने इस विभाजन को कभी भी स्वीकार नहीं किया और पूरे देश को फिर से संयुक्त करने के लिए उसने अनेक बार प्रयत्न भी किया, पर इसमें सफलता नहीं मिली।

उत्तरी आयरलैंड का पृथक् शासन—इस प्रकार उत्तरी आयरलैंड ग्रेट ब्रिटेन के साथ एक ही राज्य—यूनाइटेड किंगडम—का अंश है, पर गवर्नमेंट आफ आयरलैंड ऐक्ट १६२० के अनुसार उसे आन्तरिक बातों के प्रबन्ध में स्वाधीनता है और इसके लिए उसका अलग शासन-संगठन भी है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उत्तरी आयरलैंड का कोई स्थान नहीं है और ब्रिटिश पार्लमेंट में अब भी उसके १३ प्रतिनिधि सम्मिलित हैं।

उत्तरी आयरलैंड का पृथक् शासन-संगठन इस प्रकार है कि शासनाधिकार (executive power) ब्रिटिश सम्राट् के हाथों में है जो कि अपने प्रतिनिधि के रूप में वहाँ के लिए एक गवर्नर नियुक्त करता है। गवर्नर एक मंत्रिमंडल की सहायता और परामर्श के अनुसार शासन करता है। संसदीय शासन प्रणाली वाले अन्य देशों की भाँति ही मंत्रिमंडल उत्तरी आयरलैंड की कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायी है। विधान-मंडल द्विसभात्मक है जिसमें निचले भवन को कामन्स सभा और ऊपरी भवन को सिनेट कहते हैं। कामन्स सभा में ५२ सदस्य हैं जो ब्रिटेन ही की भाँति सर्वसाधारण मताधिकार द्वारा एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों से चुने जाते हैं। सिनेट में २६ सदस्य हैं जिनमें २ पदेन (ex-officio) सदस्य हैं और शेष २४ कामन्स सभा द्वारा अनुपातिक पद्धति से ८ वर्षों के लिए चुने जाते हैं। दोनों भवनों में मतभेद होने पर, उनका संयुक्त बैठक द्वारा निर्णय होता है। यदि मतभेद अर्थ विधेयक (money bill) पर हो, तो तुरन्त उसी सत्र में संयुक्त अधिवेशन द्वारा निर्णय करा दिया जाता है, किन्तु साधारण विधेयक पर मतभेद होने पर, यदि उसे कामन्स सभा दूसरे सत्र में पुनः पारित करे, तब गवर्नर संयुक्त अधिवेशन करा सकता है। अर्थ विधेयक केवल कामन्स सभा में ही प्रस्तुत किये जाते हैं। सिनेट उन्हें अस्वीकृत कर सकती है, पर संशोधित नहीं।

ब्रिटिश राष्ट्रमंडल (The British Commonwealth of Nations)

ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में स्वयं ग्रेट ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैंड और कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका, सीलोन और पाकिस्तान के औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त देश (Dominions) सम्मिलित हैं। भारत स्वतंत्र देश है, किन्तु वह भी राष्ट्रमंडल का सदस्य है।

औपनिवेशिक स्वराज्य का विकास—औपनिवेशिक स्वराज्य-प्राप्त सभी देश पहले ब्रिटिश साम्राज्य के अंग और ब्रिटेन के अधीन देश थे, पर इनकी राजनैतिक प्रगति के साथ-साथ उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से इन्हें क्रमशः स्वाधीनता देने की नीति का सूत्रपात हुआ। उस समय ब्रिटेन में यह भावना काम कर रही थी कि उपनिवेश बेकार हैं और कभी न कभी अलग हो ही जायेंगे। परंतु उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में अनेक आर्थिक कारणों से साम्राज्यवाद का पुनरुत्थान हुआ। उपनिवेश बहुमूल्य समझे जाने लगे। अतएव अब ब्रिटेन के राजनीतिज्ञों में मत-परिवर्तन हुआ और उन्होंने उन्नत उपनिवेशों की स्वाधीनता के साथ साम्राज्य की एकता के सामंजस्य के उपाय ढूंढ़ने प्रारम्भ किये। इस विषय में अनेक सुझाव उपस्थित किये गये। कुछ लोगों का कहना था कि साम्राज्य के स्वाधीनता-प्राप्त सभी देशों को मिलाकर एक संघ-राज्य बना देना चाहिये और अन्य लोग वैधानिक उपायों का आश्रय न लेकर पार-

स्परिक समझौतों और सहयोग द्वारा ही साम्राज्य की एकता बनाये रखने के पक्षपाती थे। अंत में इस दूसरी नीति का ही अनुसरण हुआ। १८८७ ई० में सम्राज्ञी विक्टोरिया की स्वर्ण-जयंती के अवसर पर लंदन में साम्राज्य के विभिन्न भागों के प्रतिनिधियों की उपस्थिति से लाभ उठाकर एक औपनिवेशिक सम्मेलन (Colonial Conference) का आयोजन पारस्परिक विचार-परिवर्तन व परामर्श के लिए किया गया। इसी प्रकार के सम्मेलन १८६७, १६०२ और १६०७ में भी हुए। ११०७ के सम्मेलन में यह निर्णय हुआ कि प्रति चौथे वर्ष इस प्रकार की बैठकें हुआ करें और अब से उन्हें औपनिवेशिक-सम्मेलन न कहकर साम्राज्य-सम्मेलन (Imperial Conference) कहा जाय।

इन सम्मेलनों में समान हित वाले सभी विषयों की चर्चा होती थी जैसे साम्राज्य की सुरक्षा का प्रश्न, वैदेशिक और व्यापारिक नीति तथा साम्राज्य के विभिन्न भागों का ब्रिटेन से वैधानिक सम्बन्ध आदि। इन्हीं सभाओं के द्वारा ब्रिटेन और साम्राज्य के स्वाधीन भागों की वर्तमान सम्बन्ध-व्यवस्था का क्रमशः विकास हुआ। प्रथम युद्ध के पहले स्थिति यह थी कि इन साम्राज्य-भागों को आन्तरिक विषयों में स्वाधीनता थी, पर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उनकी न तो पृथक् स्थिति थी और न कोई अधिकार। प्रथम महायुद्ध में उपनिवेशों ने ब्रिटेन को जो बहुमूल्य सहायता दी उसके फलस्वरूप उनके अधिकारों की बाह्य अथवा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी वृद्धि हुई। १६२१ के साम्राज्य-सम्मेलन में सिद्धान्त रूप से यह बात मान ली गई कि अब से ब्रिटेन और स्वाधीनता-प्राप्त उपनिवेश सभी बातों में बराबरी के दर्जे पर रहें और १६२३ में उन्हें विदेशों से पृथक् रूप से सन्धि करने की सुविधा दी गई। १६२६ ई० के साम्राज्य-सम्मेलन में सुविख्यात बालफोर रिपोर्ट (Balfour Report) द्वारा स्वाधीनता प्राप्त उपनिवेशों की स्थिति को यों स्पष्ट किया गया कि 'ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत वे (ब्रिटेन और स्वाधीनता प्राप्त उपनिवेश) स्वाधीन समुदाय हैं जो कि आपस में बराबर पद के हैं और जिनमें से कोई भी अपने आन्तरिक या बाह्य मामलों में किसी के किसी प्रकार अधीन नहीं है, यद्यपि एक ही सम्राट् के प्रति राजभक्ति द्वारा वे परस्पर सम्बद्ध हैं और स्वेच्छापूर्वक ही ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के सदस्य हैं।'[१] १६३० ई० के साम्राज्य-सम्मेलन ने निर्णय किया कि स्वाधीन उपनिवेशों की वैधानिक स्थिति में बालफोर घोषणा से असंगत जो कुछ भी प्रतिबन्ध

[१] "The (Britain and the Dominions) are autonomous communities within the British Empire, equal in status, in no way subordinate to one another in any aspect of their domestic or external affairs, though united by a common allegiance to the crown, and freely associated as members of the British Commonwealth of Nations."

बच रहे हैं उन्हें कानून द्वारा समाप्त कर दिया जाय। फलस्वरूप १६३१ ई० में स्टैट्यूट आफ़ वेस्टमिन्स्टर (Statute of Westminster) नामक महत्त्वपूर्ण कानून द्वारा पार्लमेंट ने स्वाधीन उपनिवेशों की पूर्ण स्वतन्त्रता में बाधक जो कुछ भी नियंत्रण थे उन्हें हटा दिया।

वर्तमान स्वाधीन उपनिवेश—वेस्टमिन्स्टर कानून में कनाडा, न्यूफ़ाउन्डलैंड, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, दक्षिण अफ्रीका और आइरिश फ्री स्टेट—इन छः स्वाधीन उपनिवेशों का उल्लेख था। इनमें से न्यूफ़उण्डलैंड १६४६ में कनाडा मिलकर उसका एक प्रान्त बन गया, आइरिश फ्री स्टेट १६४६ में आयर नाम का स्वतंत्र राज्य बन गया। इस प्रकार पुराने स्वाधीन उपनिवेशों में से केवल ४ बच रहे। १६४७ में भारत, पाकिस्तान और सीलोन के तीन स्वाधीन उपनिवेश पद वाले देशों का जन्म हुआ, पर इनमें से भारत १६४६ में पूर्ण स्वतंत्र पृथक् राज्य बन गया और स्वाधीन उपनिवेशों की संख्या पर्ववत् छः ही रही। अर्थात् चार पुराने और पाकिस्तान और सीलोन—दो नये।

स्वाधीन उपनिवेशों के संविधान थोड़ी-बहुत भिन्नता के साथ ब्रिटिश संविधान ही की भाँति संसदीय पद्धति के हैं। प्रत्येक स्वाधीन उपनिवेश में सम्राट् का प्रतिनिधिस्वरूप एक गवर्नर-जनरल होता है जिसकी स्थिति सम्राट् ही के समान अर्थात् वैधानिक अध्यक्ष की होती है। सभी में मन्त्रिमंडल है, जो व्यवस्थापक मंडल की निचली सभा के प्रति उत्तरदायी होती है। सभा में द्विसभात्मक व्यवस्थापक-मंडल है जिनमें निचली सभायें सर्वसाधारण मताधिकार के अनुसार चुनी जाती हैं। ऊपरी सभा कनाडा में नियुक्त किए सदस्यों से बनी है, आस्ट्रेलिया में उसका जनता द्वारा निर्वाचन होता है, और दक्षिणी अफ्रीका में उसके सदस्य प्रान्तीय विधान-सभाओं के सदस्यों द्वारा निर्वाचित होते हैं। न्यूज़ीलैंड और दक्षिणी अफ्रीका की सरकारें एकात्मक और कनाडा तथा आस्ट्रेलिया की संघात्मक हैं।

स्वाधीन उपनिवेशों की वैधानिक स्थिति—यद्यपि स्वाधीन उपनिवेश आज दिन पूर्णतया स्वतंत्र हैं और ब्रिटिश राष्ट्रमंडल या साम्राज्य से जब चाहे तभी अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर सकते हैं, पर जब तक वे ऐसा नहीं करते तब तक उनमें और ब्रिटेन में निम्नलिखित वैधानिक सम्बन्ध पाया जाता है :—

(१) ब्रिटिश सम्राट् स्वाधीन उपनिवेशों का भी सम्राट् है और उसके पद या उपाधियों में परिवर्तन ब्रिटेन और उपनिवेशों की पार्लमेंटों की सम्मति से ही हो सकता है।

(२) किसी स्वाधीन उपनिवेश की प्रार्थना पर ब्रिटिश पार्लमेंट अब भी उसके

लिए कानून बना सकती है। कनाडा में कुछ प्रकार के वैधानिक परिवर्तन अभी तक ब्रिटिश पार्लमेंट के कानून द्वारा ही किये जा सकते हैं।

(३) स्वाधीन उपनिवेशों के सर्वोच्च न्यायालयों से अपीलें अब भी ब्रिटिश प्रिवी काउन्सिल के पास जा सकती हैं, यद्यपि आजकल ऐसी अपीलों की संख्या लगभग नहीं के बराबर है।

(४) अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में पूरे राष्ट्रमंडल के हित की बातों को तय करने में ब्रिटेन की अब भी प्रमुखता है, यद्यपि कोई स्वाधीन उपनिवेश उसके किये हुये निर्णय को मानने को बाध्य नहीं है।

(५) सैनिक सुरक्षा का प्रमुख भार ब्रिटेन पर ही है। कोई स्वाधीन उपनिवेश सुरक्षा के विषय में अभी स्वयं-पर्याप्त नहीं है।

साथ ही साथ यह भी स्मरण रखने को बात है कि :—

(१) स्वाधीन उपनिवेश ब्रिटिश पार्लमेंट के किसी भी कानून के विरुद्ध कानून बना सकते हैं, अपने संविधान में परिवर्तन कर सकते हैं और ब्रिटेन और राष्ट्रमंडल से जब चाहें तब अपना सम्बन्ध तोड़ सकते हैं।

(२) वे किसी युद्ध में ब्रिटेन का साथ देने को बाध्य नहीं हैं और चाहें तो तटस्थ रह सकते हैं।

(३) बाह्य नीति में अपने हितों की रक्षा के लिए वे स्वतंत्र मार्ग का अनुसरण कर सकते हैं तथा अलग सन्धि कर सकते हैं।

(४) अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में वे पृथक् राज्य माने जाते हैं और उनके अलग कूटनीतिक प्रतिनिधि भी अनेक देशों में पाये जाते हैं।

संक्षेप में राष्ट्रमंडल की सदस्यता किसी पराधीनता की द्योतक न होकर समान दृष्टिकोण वाले कुछ राष्ट्रों की सहयोग-संस्था है। ये राष्ट्र पहले वैधानिक रूप से एक ही राज्य के अंग थे। अतः पुराने बन्धनों के कुछ अवशेष नाममात्र को अब भी रह गये हैं, पर वे इन राज्यों की स्वेच्छा से ही हैं और वे जब चाहें तोड़ सकते हैं।

राष्ट्रमण्डल और भारत—स्वतंत्र होने के बाद भारत के सामने यह प्रश्न था कि वह ब्रिटिश राष्ट्रमंडल से किस प्रकार का सम्बन्ध रक्खे। पूर्णस्वतन्त्र गणराज्य बनने के बाद वह स्वाधीन उपनिवेशों की भाँति ब्रिटिश सम्राट् को सम्राट् रूप से तो स्वीकार कर नहीं सकता था, अतः प्रश्न यह उपस्थित हुआ कि ब्रिटिश राष्ट्रमंडल को क्या ऐसा रूप दिया जा सकता है कि भारत की भाँति के गणतन्त्र भी उसके सदस्य हो सकें। १९४८ ई० में लन्दन में राष्ट्रमंडल के सभी प्रधान मंत्रियों का एक सम्मेलन हुआ जिसमें पं० जवाहरलाल नेहरू ने भी भाग लिया। उस सभा में दो निर्णय हुये जिनमें पहला तो यह था कि कोई राष्ट्र यदि ब्रिटिश सम्राट् को राष्ट्रमंडल

का प्रतीकरूप प्रमुख (Symbolical head) भी मान ले तो वह उसका सदस्य हो सकता है और दूसरे यह कि अब से राष्ट्रमण्डल के पूर्व 'ब्रिटिश' शब्द का प्रयोग अनिवार्य न होकर वैकल्पिक रूप से हो, अर्थात् जो चाहे उसे ब्रिटिश राष्ट्रमंडल कहे और जो वैसा न चाहे वह केवल राष्ट्रमंडल ही कहे। इस प्रकार 'ब्रिटिश राष्ट्रमंडल' से जो ब्रिटेन की प्रमुखता प्रकट होती थी और जिससे उसके सदस्यों की स्वातंत्र्य-भावना को ठेस पहुँचती थी वह बात भी जाती रही। इन समझौतों के आधार पर भारत ने भी राष्ट्रमंडल का सदस्य बने रहना स्वीकार किया। उसकी और स्वाधीन उपनिवेशों की स्थिति में यह अन्तर है कि उसका राष्ट्रमंडल से वैधानिक सम्बन्ध कुछ भी नहीं है। जो कुछ है सो सुविधा और समझौते के अनुसार ही है।

ब्रिटिश साम्राज्य के अस्वाधीन भाग

ब्रिटिश साम्राज्य का अर्थ—ब्रिटिश साम्राज्य के साधारण और कानूनी अर्थ में थोड़ा अंतर है। समान्य अर्थ से तो यही विदित होता है कि ब्रिटेन स्वय भी साम्राज्य के अन्तर्गत और उसका भाग होगा, पर कानून की परिभाषा में साम्राज्य का अर्थ होता है 'युनाइटेड किंगडम' (ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैंड) के बाहर के वे सभी देश जो समावेश के राज्यान्तर्गत हैं। इनमें स्वाधीन उपनिवेशों का भी समावेश हो जाता है, और उन भागों का भी जो स्वाधीन नहीं हैं। स्वाधीन भागों का ऊपर वर्णन किया जा चुका है। अब साम्राज्य के अस्वाधीन भागों का वर्णन किया जाता है। अस्वाधीन भागों को चार वर्गों में बाँटा जा सकता है अर्थात्—

(१) अर्धस्वाधीन उपनिवेश,
(२) राजकीय उपनिवेश या क्राउन कालोनीज (Crown Colonies)
(३) संरक्षित देश (Protectorates), और
(४) प्रन्यस्त भूभाग (Trusteeship territories)

अर्धस्वाधीन उपनिवेश या देश—१९४७ ई० तक इस वर्ग का सबसे बड़ा देश भारत था। पर अब उसके स्वतंत्र हो जाने के बाद और सीलोन के स्वाधीन उपनिवेश बन जाने के बाद, अब इस श्रेणी में केवल माल्टा और दक्षिणी रोडेशिया बच रहे हैं। इन दोनों देशों की भी प्रगति स्वाधीन उपनिवेश पद की ओर ही हो रही है। रोडेशिया का सम्बन्ध ब्रिटेन के औपनिवेशिक विभाग के हाथों से निकाल कर राष्ट्रमंडल-सम्बन्ध विभाग (Commonwealth Relations Office) को दे दिया गया है जो उसकी उच्चतर श्रेणी का परिचायक है और माल्टा को भी १९४७ ई० में एक नया संविधान प्राप्त हुआ जिसके अनुसार उसके अधिकार स्वाधीन उपनिवेशों की अपेक्षा कुछ ही कम रह गये हैं।

राजकीय उपनिवेश (Crown Colonies)—इस वर्ग में ब्रिटिश गायना, जमेका, बरम्यूडा, बहामास, स्ट्रेट्ससेटिलमेण्ट, केनिया, जिब्राल्टर, सेण्ट हेलेना इत्यादि हैं। इनमें समानता यही है कि ये कालोनियल आफिस के अधीन हैं और इनके अधिकांश निवासी युरोपीय नहीं हैं। अन्यथा इनकी वैधानिक स्थितियों में बड़ा भेद है। कुछ, जैसे ब्रिटिश गायना, बरमूडा, बहामास आदि में द्विसभात्मक व्यवस्था मंडल है जिनकी निचली सभा निर्वाचित और ऊपरी सभा नियुक्त सदस्यों से मिलकर बनी है। कुछ, जैसे केनिया और स्ट्रेट्स सेटिलमेंट में केवल एक सभा वाली लेजिस्लेटिव काउन्सिल है जिसके कुछ सदस्य निर्वाचित और कुछ नियुक्त होते हैं। अन्यों जैसे हांगकांग और ब्रिटिश हंडूरास में केवल नियुक्त सदस्यों की कौंसिलें हैं। अन्त में जिब्राल्टर और सेंट हैलेना की भाँति के कुछ ऐसे भी उपनिवेश हैं जहाँ व्यवस्थापिका सभा या काउन्सिल है ही नहीं। राजकीय उपनिवेशों की क्रमशः पदोन्नति हो रही है, परन्तु बहुत धीरे-धीरे। इसका मुख्य कारण है कि इनमें से बहुतों का ब्रिटिश साम्राज्य की सुरक्षा की दृष्टि से सैनिक महत्व है।

संरक्षित प्रदेश (Protectorates)—सिद्धांत की दृष्टि से संरक्षित प्रदेशों को ब्रिटिश साम्राज्य का भाग नहीं कहा जा सकता। केवल उनकी बाह्य नीति पर ही ब्रिटेन का नियन्त्रण माना जा सकता है। पर ब्रिटेन का कानून उन्हें भी साम्राज्य का भाग ही मानता है। ये संरक्षित प्रदेश मुख्यतः अफ्रीका महाद्वीप में हैं और इनमें से मुख्य-मुख्य हैं उत्तरी रोडेशिया, युगैण्डा, न्यासालैंड, बेचुआनालैंड और ब्रिटिश सोमालीलैण्ड। १९२२ तक मिश्र भी संरक्षित राज्य था पर उक्त वर्ष वह स्वतन्त्र हो गया। संरक्षित प्रदेश बहुधा संरक्षक देश के राज्य में आगे चलकर मिला लिये जाते हैं और बेचुआनालैंड, स्वाजीलैंड इत्यादि में आन्तरिक मामलों में भी ब्रिटेन का इतना प्रभाव है कि इन्हें ब्रिटिश साम्राज्य का भाग मानने में कोई अत्युक्ति न होगी।

प्रन्यस्त भू-भाग (Trusteeships)—प्रथम महायुद्ध के बाद एशिया और अफ्रीका के वे देश जो पहले तुर्की और जर्मनी के साम्राज्य के अधीन थे और जो स्वतन्त्र होने की स्थिति में न थे, लीग आफ़ नेशन्स की देख-रेख में ब्रिटेन, फ्रांस और जापान के अधीन रक्खे गये। इस व्यवस्था का नाम था आज्ञापित व्यवस्था (Mandates System)। इन आज्ञापित प्रदेशों में से कई ब्रिटेन के हिस्से में भी आये जैसे इराक, पैलेस्टाइन, टेङ्गानियेका, टोगोलैंड, ब्रिटिश कैमरून आदि और कुछ ब्रिटेन के स्वाधीन उपनिवेशों को भी मिले। द्वितीय महायुद्ध के बाद आज्ञापित व्यवस्था को प्रन्यास-व्यवस्था (Trusteeship System) नाम दिया गया, पर उसका मुख्य अभिप्राय लगभग वही है जो पहले था। ब्रिटेन के अधीन प्रदेशों में से इराक और पैलेस्टाइन तो स्वतन्त्र राज्य बन गये हैं, पर शेष अभी भी ब्रिटेन के पास हैं। संरक्षित

प्रदेशों की भाँति ही सैद्धांतिक रूप से इन्हें ब्रिटिश साम्राज्य का भाग नहीं कहा जा सकता, पर संयुक्तराष्ट्र संघ की देख-रेख में उनके सुशासन का भार ब्रिटेन पर ही है।

ब्रिटिश सरकार का साम्राज्य के अस्वाधीन भागों पर नियन्त्रण—ब्रिटिश साम्राज्य के अस्वाधीन भागों का शासन-सञ्चालन लन्दन-स्थित ब्रिटिश सरकार अथवा उसके द्वारा नियुक्त गवर्नरों या अन्य प्रतिनिधियों के द्वारा होता है। जहाँ व्यवस्थापिका सभायें स्थापित हैं, वहाँ बहुत-से विषयों पर कानून निर्माण वे ही करती हैं, पर गवर्नर ऐसे कानूनों को अस्वीकृत कर सकता है। क्राउन कालोनीज़ के लिए कुछ कानून ब्रिटिश पार्लमेंट बनाती है और शेष आर्डर-इन काउंसिल के रूप में प्रिवी काउंसिल। कार्यकारिणी का स्थानीय अध्यक्ष गवर्नर होता है, पर वह ब्रिटिश सरकार, मुख्यतः कलोनियल आफिस (Colonial Office) के नियंत्रण में काम करता है। अस्वाधीन उपनिवेशों में स्थानीय न्यायालय होते हैं जिनके न्यायाधीश ब्रिटेन से ही नियुक्त होकर आते हैं। इन न्यायालयों के निर्णयों की अंतिम अपील प्रिवी काउंसिल में होती है। इस प्रकार शासन के तीनों अंगों—व्यवस्थापिका, कार्यकारिणी और न्याय—पर ब्रिटिश सरकार का नियंत्रण रहता है।

अभ्यास

१. ब्रिटिश संविधान पर ब्रिटिश साम्राज्य का किस प्रकार प्रभाव पड़ता है ?

In what ways does the Empire affect the British Constitution ?

२. ब्रिटेन के अंतर्गत वेल्स और स्काटलैण्ड की विशेष स्थिति पर प्रकाश डालो।

Throw light on the special status of Wales and Scotland within the United Kingdom.

३. उत्तरी आयरलैण्ड और ब्रिटेन का वैधानिक सम्बंध कैसा है ?

What is the constitutional relationship between U. K. and Northern Ireland ?

४. औपनिवेशिक स्वराज्य के विकास पर एक लेख लिखो। स्वाधीन उपनिवेशों की वर्तमान वैधानिक स्थिति क्या है ?

Write an essay on the evolution of 'dominion status.' What is the present constitutional position of the dominions ?

५. क्या राष्ट्रमंडल की सदस्यता का पूर्ण स्वतंत्रता से कोई विरोध है ? भारत की राष्ट्रमंडल के अंतर्गत स्थिति कैसी है ?

Is the membership of the Commonwealth of Nations

incompatible with independence ? Clarify the position of India in this connection.

६. कानून की दृष्टि से ब्रिटिश साम्राज्य का क्या अर्थ होता है ? साम्राज्य के अस्वाधीन भागों का उनकी वैधानिक स्थिति के अनुसार वर्गीकरण करो।

What is the legal connotation of the term 'British Empire' ? Classify the dependent parts of the Empire according to their constitutional status.

७. साम्राज्य के अस्वाधीन भागों पर ब्रिटिश सरकार का किस प्रकार का नियंत्रण रहता है ?

What control does the British Government exercise over the dependent possessions of the Empire ?

८. संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—

राजकीय उपनिवेश, प्रन्यस्त-भू-भाग, संरक्षित प्रदेश।

Write short notes on :—

Crown colonies, trust territories, protectorates.

परिशिष्ट

पारिभाषिक शब्द-सूची

१. ब्रिटिश संविधान सम्बन्धी

Constitution—संविधान

Constitutional—संवैधानिक

Constitutional Amendment—संवैधानिक संशोधन

Conventions of the Constitution—संविधान की प्रथायें या रीति-रिवाज

Enacted constitution—निर्मित संविधान

Evolved constitution—विकसित संविधान

Flexible constitution—नमनीय, लोचदार या लचीला संविधान

Rigid constitution—कठोर, दृढ़, अनमनीय या अलोचदार संविधान

Rule of law—विधि-राज्य

Unconstitutional—असंवैधानिक, अवैधानिक

Unwritten constitution—अलिखित संविधान

Written constitution—लिखित संविधान

१. सम्राट् और राजतन्त्र सम्बन्धी

Abdicate—राजपद त्याग करना

Abdication—राजपद त्याग

Appoint—नियुक्त करना

Appointment—नियुक्ति

Assent—स्वीकृति देना

Charters of Incorporation—आज्ञापत्र

Civil list—राजकीय वृत्ति—सम्राट् की वार्षिक वृत्ति

Commander-in-chief—प्रधान सेनापति

Confer honours—उपाधियाँ देना, सम्मान-पद देना

Conclude peace—संधि करना

Crown—राजत्व, राजमुकुट, सम्राट्

Declare war—युद्ध-घोषणा करना

Despotism—निरंकुशता

Despot—निरंकुश शासक

Despotic—निरंकुशतापूर्ण

Dismiss—पदच्युत करना, बर्खास्त करना

Dismissal—पदच्युति, बर्खास्तगी

Dissolve—विघटन करना

Dynasty—वंश

Executive—कार्यपालिका, कार्यपालिका सम्बन्धी, शासन-सम्बन्धी

Execute—कार्यान्वित करना

Figurehead—नाममात्र का अध्यक्ष

Foreign relations—परराष्ट्र सम्बन्ध
Fountain of honour and justice—सम्मान और न्याय का स्रोत
Golden link—स्वर्ण-शृङ्खला
Hereditary—वंश-क्रमानुगत, उत्तराधिकार मूलक
Immunity—छूट, विमुक्ति, स्वतन्त्रता
Judicial power—न्याय सम्बन्धी अधिकार
King—सम्राट्, राजा
Kingship—राजत्व, राजतन्त्र
King can do no wrong—सम्राट् अपराध नहीं कर सकते, सम्राट् अपराध से परे हैं
Limited—सीमित, नियन्त्रित
Legislative Powers—कानून-निर्माण सम्बन्धी अधिकार, विधि-निर्माण सम्बन्धा अधिकार
Loyalty—राजभक्ति
Majority—वयस्कता
Make treaties—सन्धि करना
Minority—अवयस्कता
Monarch—सम्राट् या सम्राज्ञी
Monarchy—राजतन्त्र
Neutral—तटस्थ
Neutrality—तटस्थता
Popular—लोक-प्रिय, प्रजातन्त्रीय
Prerogative—परम्परागत अधिकार, विशेषाधिकार, विवेक-निर्भर अधिकार
Prerogative of mercy—क्षमा प्रदान का अधिकार
Primogeniture—ज्येष्ठाधिकार
Prorogue, Prorogation—विसर्जन करना, विसर्जन
Public power—सार्वजनिक अधिकार
Public—जनता
Queen—सम्राज्ञी, रानी
Regent—अभिभावक
Regency—अभिभावकता
Royal—राजकीय, सम्राट् सम्बन्धी
Rules of Succession—उत्तराधिकार नियम
Summon the Parliament—पार्लमेंट का अधिवेशन बुलाना
Symbol—प्रतीक
Veto—अस्वीकृत करना
Veto power—निषेधाधिकार

३. मन्त्रिमण्डल सम्बन्धी

Appeal to the country—देश से पुनर्विचार की प्रार्थना करना
Cabinet—मंत्रिमंडल
Cabinet Government—उत्तरदायी शासन
Cabinet responsibility—मंत्रिमंडल का उत्तरदायित्व
Cabinet Committees—मंत्रिमंडल की समितियाँ
Cabinet Secretariat—मंत्रिमंडल का कार्यालय
Coalition Cabinet—संयुक्त मंत्रिमंडल
Deputation—शिष्ट-मण्डल
Dictator—अधिनायक, निरंकुश शासक

Dictatorship of the Cabinet—मंत्रिमंडल की निरंकुशता
Inner Cabinet—अन्तरंग मन्त्रिमंडल
Joint Responsibility—संयुक्त उत्तरदायित्व
Ministry—मन्त्रि समुदाय, मंत्रित्व
Minister—मन्त्री
Minister without portfolio—पदरहित मन्त्री
National Government—राष्ट्रीय सरकार, सर्वदलीय सरकार
Parliamentary Under-Secretary—संसदीय उपसचिव
Prime Minister—प्रधान मन्त्री
Primus inter pares—समकक्षों में प्रथम
Privy Council—प्रिवी काउन्सिल
Responsibility—उत्तरदायित्व
Secrecy—गोपनीयता
Snap vote—आकस्मिक निर्णय
Vote of no-confidence—अविश्वास प्रस्ताव

४. शासन-विभाग और स्थायी कर्मचारियों सम्बन्धी

Administration—प्रशासन
Administrative—प्रशासनीय, प्रशासन सम्बन्धी
Administrative class—प्रशासी वर्ग
Administrative courts—प्रशासनीय न्यायालय
Administrative law—प्रशासनीय कानून
Administrative justice—प्रशासनीय न्याय
Appointment—नियुक्ति
Assistant Secretary—सहायक सचिव
Branch—शाखा
Candidate—अभ्यर्थी, उम्मेदवार
Chancellor of Exchequer—अर्थ मन्त्री
Civil Service—स्थायी नौकरियाँ, असैनिक नौकरियाँ
Civil Service Commission—सिविल सर्विस कमीशन, स्थायी नौकरियों सम्बन्धी आयोग
Clerical class—लेखक वर्ग
Competitive Examination—प्रतियोगिता मूलक परीक्षा
Co-ordination—समन्वय, सामञ्जस्य
Copyists, Typists—लिपिक वर्ग
Corporation—निगम, संघ
Delegated Legislation—[illegible] विधि-निर्माण
Details—विस्तार की बातें
Department—विभाग
Division—उप-विभाग
Director—सञ्चालक
Discipline—अनुशासन
Disciplinary Action—अनुशासन कार्रवाई, दण्ड-व्यवस्था
Dismissal—पदच्युत, बर्खास्तगी
Executive class—अधिशासी वर्ग

Expert—विशेषज्ञ
Head of Department—विभागाध्यक्ष
Layman—साधारण व्यक्ति
Making of Policy—नीति-निर्धारण
Patronage System—सिफारिशी प्रथा
Pension—अवकाश-वृत्ति
Permanent Under-Secretary—स्थायी उपसचिव
Permanent servants—स्थायी कर्मचारी
Policy—नीति
Political neutrality—राजनैतिक तटस्थता
Probation—परिवीक्षा
Promotion—पदोन्नति, पदवृद्धि
Principal—प्रधान
Recruitment—भरती, नियुक्ति
Recruitment by merit—योग्यतानुसार नियुक्ति
Retirement—अवकाश-ग्रहण
Section—अनुविभाग
Security of tenure—पदावधि अथवा कार्यकाल की सुरक्षा
Semi-government—अर्ध सरकारी
Training—शिक्षण
Treasury—राजकोष विभाग

५. लार्ड सभा सम्बन्धी

Appellate jurisdiction—पुनर्विचार सम्बन्धी अधिकार क्षेत्र, अपीलीय अधिकार क्षेत्र
Disabilities—अयोग्यतायें
Ecclesiastical Peers—धार्मिक लार्ड, पादरी लार्ड
Hereditary Peers—पैतृकाधिकारानुसार लार्ड
Impeachment—महाभियोग
Law Lords—न्यायाधीश लार्ड, न्यायकर्ता लार्ड, कानून लार्ड
Land Value Duties—भूमि-मूल्य-कर
Lord Chancellor—लार्ड चान्सलर
Original Jurisdiction—प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र
Peerage—लार्ड समुदाय
Peers of blood royal—राजवंशी लार्ड
Representative Peers—प्रतिनिधि लार्ड
Swamping—पूरित करना, पूरण

६. मताधिकार, चुनाव और कामन्स-सभा सम्बन्धी

Adult suffrage—वयस्क मताधिकार
Address—वक्तव्य
Borough—नगर
Candidate—अभ्यर्थी
Catching the Speaker'seye—स्पीकर की दृष्टि आकर्षित् करना
Committee of the whole house—पूर्ण सभा की समिति
Constituency—निर्वाचन-क्षेत्र
Canvass—प्रचार करना
Canvasser—प्रचारकर्ता

Corrupt practice—भ्रष्टाचार
Electoral Roll—निर्वाचक-सूची
Electorate—निर्वाचक-समूह
Election—चुनाव, निर्वाचन
Industrial Revolution—औद्योगिक क्रांति
Issue—प्रश्न, समस्या
Majority—बहुमत
Majority Representation—बहुमत पद्धति का निर्वाचन
Mace—रजतदण्ड
Naming—नाम निर्देशन करना
Nomination—नाम-निर्देशन
Nursing a constituency—निर्वाचन क्षेत्र का पोषण
One man one vote—एक व्यक्ति, एक मत
People's Representation Act—लोक प्रतिनिधित्व कानून
Plural-membered Constituencies—बहुसदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र
Platform—मञ्च
Pocket borough—जेबी निर्वाचनक्षेत्र
Points of order—कार्यवाही के नियम सम्बन्धी आपत्तियाँ
Proposer—प्रस्तावक
Proportional Representation—आनुपातिक प्रतिनिधित्व
Representation—प्रतिनिधित्व
Representative—प्रतिनिधि
Relevance—प्रासंगिकता
Returning officer—चुनाव प्रबन्धकर्ता
Rotten borough—सड़े हुए निर्वाचन क्षेत्र
Seconder—समर्थक
Secret Ballot—गुप्त मतदान
Select Committee—विशिष्ट समिति
Sessional Committee—सत्रीय समिति
Single-membered Constituency—एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र
Speaker—स्पीकर, प्रवक्ता, अध्यक्ष
Standing Committee—स्थायी समिति
Unopposed—निर्विरोध
Vote—मत, वोट
Voting—मतदान

७. पार्लमेंट की कार्यवाही सम्बन्धी

Address-in-reply—धन्यवाद उत्तर
Adjourn, Adjournment—स्थगित करना, स्थगन
Airing of Grievances—असन्तोष प्रदर्शन
Appropriation Act—व्यय कानून
Aye—हाँ
Balancing the Budget—आय-व्यय पत्रक को सन्तुलित करना
Bill—विधेयक
Budget—आय-व्यय-पत्रक, आय-व्यय का लेखा, बजट
Budget Speech—बजट भाषण, आय-व्यय-पत्रक सम्बन्धी भाषण
Calling a Session—अधिवेशन बुलाना

Casting Vote—निर्णायक मत
Chaplain—पादरी
Circular Letter—गश्ती चिट्ठी
Closure—सम्पुट, संवरण
Closure by Compartments—कक्ष सम्पुट
Committee on Public Accounts—सार्वजनिक लेखा समिति
Committee on Estimates—अनुमान-समिति, अन्दाजा समिति
Committee Stage—समिति प्रक्रम
Committee of Supply—आदान समिति
Committee on Ways and Means—साधन समिति
Comptroller and Auditor-General—वित्तदाता और प्रधान लेखा-परीक्षक
Consolidated Fund Charges—संचित-निधि-विषयक व्यय
Cut motion—कटौती का प्रस्ताव
Debate—वाद-विवाद
Demand—माँग
Dissolution—विघटन
Dummy bill—छद्म विधेयक
Estimates—अनुमान, अन्दाजे
Finacce—अर्थ, अर्थ-व्यवस्था
Finacial Year—आर्थिक वर्ष
Finance Acts—राजस्व कानून
Government Bill—सरकारी विधेयक
Guillotine—कुठार सम्पुट
Introduce—प्रस्तुत करना, पेश करना
Kangaroo Closure—कंगारू सम्पुट
Legislation—विधि निर्माण
Legislature—विधान मण्डल, व्यवस्थापक मण्डल
Mace-Bearer—रजनदण्ड वाहक
Memorandum—स्मृतिपत्र
Money Bill—अर्थ विधेयक
Mover—प्रस्तावक
Move—प्रस्ताव करना
Motion—प्रस्ताव
No-confidence—अविश्वास
Non-controversial—विवाद-रहित
Official Business—सरकारी काम
Official Bill—सरकारी विधेयक
Order paper—कार्यक्रम पत्रक
Parliament—पार्लमेण्ट, संसद
Parliamentary—संसदीय, संसदोचि
Parliamentary Government—संसदीय प्रणाली की सरकार
Parliamentary Finance—संसदीय अर्थ-व्यवस्था, पार्लमेंट द्वारा अर्थ प्रबन्ध
Parliamentary Counsel—पार्लमेंट का वकील
Petition—आवेदन-पत्र
Private Bill—व्यक्तिगत विधेयक
Private Member's Bill—गैर सरकारी विधेयक
Procedure—प्रक्रिया, कार्यविधि
Pass—पारित करना
Passage—पारण
Prorogation—विसर्जन
Public Bill—सार्वजनिक विधेयक

Question hour—प्रश्न का घंटा
Quorum—गणपूर्ति संख्या
Reading—वाचन
Report Stage—विवरण सोपान, विवरण प्रक्रम
Royal Assent—सम्राट् द्वारा स्वीकृति
Sergeant-at-arms—सशस्त्र परिचारक
Simple Closure—साधारण सम्पुट
Speech from the Throne—सम्राट् का भाषण
Stage—सोपान, प्रक्रम
Supplementary Demand—पूरक माँग
Supplementary Question—पूरक प्रश्न
Vote on Account—व्यय की अग्रिम स्वीकृति

८. राजनैतिक दलों सम्बन्धी

Ancillary Organizations—सम्बन्धित संगठन
Aristocratic Class—उच्च वर्ग
Caucus system—काकस प्रथा, जमात प्रथा
Central office of the Party—दल का केन्द्रीय कार्यालय
Conference—सम्मेलन
Conservative Party—अनुदार दल
Constitutional Methods—वैधानिक उपाय या ढंग
Extra-Constitutional—अतिरिक्त-वैधानिक
Faction—गुट, गुटबन्दी
Free Trade—उन्मुक्त व्यापार
His Majesty's Opposition—सम्राट् का विपक्षी दल
Imperialist—साम्राज्यवादी
Labour Party—मजदूर दल
Leader—नेता
Liberal Party—उदार दल
Lower Middle Class—निम्न मध्य-वर्ग
Membership—सदस्यता, सदस्य समूह
Membership fee—सदस्यता शुल्क
Multiple Party System—अनेक दलीय पद्धति
Nationalization—राष्ट्रीकरण
Nationalized Industries—राष्ट्रीकृत उद्योग
Party—दल
Party Organization outside Parliament—दल का पार्लमेंट के बाहर का संगठन
Parliamentary Party—संसदीय दल
Parliamentary Organization of the Parties—दलों का संसदीय संगठन
Party Funds—दलों के द्रव्य-कोष
Propaganda—प्रचार
Protectionist Policy—संरक्षण नीति
Rank and File—अनुवर्ती सदस्य, साधारण सदस्य, निकृष्ट सदस्य
Shadow Cabinet—छाया मन्त्रि-मंडल

Socialist—समाजवादी, समष्टिवादी
Socialism—समाजवाद
Summer Schools—ग्रीष्म शालायें
Unionist Party—एकतावादी दल
Whips—सचेतक

९. न्याय और न्यायालयों सम्बन्धी

Accused—अभियुक्त
Accuse—अभियोग लगाना
Administrative Justice—प्रशासनीय न्याय
Admiralty—समुद्रीय अपराधों का न्यायालय
Appeal—अपील, पुनर्विचार-प्रार्थना
Appellate jurisdiction—अपील सम्बन्धी क्षेत्राधिकार, पुनर्विचार सम्बन्धी क्षेत्राधिकार
Charge—अभियोग, अभियोग लगाना
Civil courts—दीवानी न्यायालय
Common law—लोक-विधि, कामन लॉ
Complainant—अभियोग लगाने वाला
Criminal courts—फौजदारी न्यायालय
Conscience—विवेक
Circuit courts—दौरा-न्यायालय
Commit for trial—विचार सुपुर्द करना
Defendant—प्रतिवादी
Divorce—तलाक
Equity—नैसर्गिक न्याय विधान, इक्विटी
Facts—तथ्य, तथ्य की बातें
Interpretation—व्याख्या, टीका
Judicial Committee of the Privy Council—प्रिवी काउंसिल की न्याय-समिति
Jurist—विधान-शास्त्री, विधान शास्त्रज्ञ
Jurisdiction—अधिकार-क्षेत्र, क्षेत्राधिकार
Jury—जूरी, पंच
Judicial review of legislation—कानूनों का न्यायिक निरीक्षण
Justice of Peace—जस्टिस आफ पीस, शन्तिरक्षक न्यायिक
Keeper of the King's conscience—सम्राट् का विवेक-रक्षक
Original Jurisdiction—प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार
Probate—उत्तराधिकार सम्बन्धी न्यायालय
Procedure—प्रक्रिया, कार्य-पद्धति
Plaintiff—वादी
Question of Fact—तथ्य सम्बन्धी प्रश्न या समस्या
Statute law—पार्लमेंट द्वारा निर्मित
Trustee—प्रन्यासी
Trusteeship—प्रन्यास

१०. स्थानीय शासन सम्बन्धी

Administrative County—प्रशासन काउण्टी
Borough—बरो, नगर
By-law—उपनियम
Central Control—केन्द्रीय नियंत्रण

Central Government—केन्द्रीय सरकार
Chairman—अध्यक्ष
Corporation—संघ, नियम
Council—काउन्सिल, सभा
Councillor—सभा का सदस्य
Committee—समिति
County—काउण्टी
During the Pleasure of the Council—काउन्सिल की इच्छानुसार, काउन्सिल की इच्छा काल में
Ex officio—पदेन, पदाधिकार से
Finance Committee—अर्थ समिति
Grants-in-aid—आर्थिक सहायता
Inspection—निरीक्षण
Joint Committee—संयुक्त समिति
Local Areas—स्थानीय शासन-क्षेत्र
Local Authorities—स्थानीय अधिकारी
Local Government—स्थानीय शासन
Local Government Boundaries Commission—स्थानीय शासन सीमा आयोग
Mayor—मेयर
Municipality—नगरपालिका, नगर सभा
Oligarchic—अल्प सत्तात्मक
Parish—पैरिस, ग्राम
Pressure—दबाव
Separation of Powers—अधिकार पृथकता
Statutory Committee—अनिवार्य समिति
Supersession—अतिक्रमण
Training ground for democracy—प्रजातन्त्र की शिक्षा-भूमि
Transfer—स्थानान्तर, स्थान-परिवर्तन

११. राष्ट्रमंडल और साम्राज्य-सम्बन्धी

Autonomy—स्वाधीनता, स्वायत्तता
Colony—उपनिवेश
Colony Conference—औपनिवेशिक सम्मेलन
Colonial Office—औपनिवेशिक विभाग
Commonwealth of Nations—राष्ट्र-मण्डल
Commonwealth Relations Office—राष्ट्रमंडल-सम्बन्धी विभाग
Crown Colonies—राजकीय उपनिवेश
Dominions—स्वाधीन उपनिवेश
Dominion Status—स्वाधीन उपनिवेश-पद
Empire—साम्राज्य
Imperial Conference—साम्राज्य सम्मेलन
Imperialism—साम्राज्यवाद
Protectorates—संरक्षित देश
Statute of Westminster—वेस्टमिन्स्टर का कानून
Symbolical head—प्रतीक रूप प्रमुख
Trusteeship Territory—प्रन्यस्त भू-भाग

सहायक ग्रन्थ सूची

Adams, G. B.—Constitutional History of England.

Amery, L. S.—Thoughts on the Constitution.

Anson—The Law and Customs of the Constitution.

Bryce, Lord—Studies in History and Jurisprudence.

Critchley—The Civil Service Today.

Diecy, A. V.—Introduction to the Study of the Law of the Constitution.

Finer, H.—The Theory and Practice of Modern Government.

" " Governments of Greater European Powers.

Gooch.—The Source Book of English Government.

Hewart, Lord—The New Despotism.

Jennings, W. I.—Cabinet Government.

Jenks, E.—Government of the British Empire.

Keith, A. B.—The King and the Imperial Crown.

" " The Dominions as Sovereign States.

Laski, H.—Parliamentary Government in England.

Lowell—The Government of England. 2 Vols.

Low, S.—Governance of England.

Morrison, H.—Government and Parliament, A Survey from Within.

Munro, W. B.—Governments of Europe.

" " —The Government of European Cities.

Muir, R.—How Britain is Governed.

Ogg, F. W.—English Government and Politics.

Ogg and Zink—Modern Foreign Governments.

Parliamentary Affairs (Journal of the Hansard Society).

वर्णानुक्रमणिका

ल

व

श

स